ऐसा चाहूँ राज मैं . .
सन्त सिपाही रैदास

भाग 1

भाग 2

☀ समर्पित ☀

सादर समर्पित

आदरणीय श्री ललई सिंह यादव,

(अशोक पुस्तकालय **झींझक, कानपुर**) को

जिन्होंने बाबा साहिब का मुक्ति संदेश घर घर को पहुंचाने के लिए

अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया.

प्रस्तावना

दलित समाज ने भारत माता को अनेकों सपूत दिए हैं. यह कहना भी गलत नहीं होगा कि भारत माता के 99 प्रतिशत सपूत मात्र दलित समाज सें पैदा हुए हैं. भारत के इन्हीं सपूतों में सें दलित सन्तों का नाम सबसें अग्रणी है जिन्होंने भारतीय समाज को सही मार्गदर्शन कराया है. कहने को तो तुलसी, सूरदास को भी सन्त कहा जाता है लेकिन वास्तव में ऐसे लोग कवि मात्र थे. उनकी रचनाओं में कहीं नैतिकता की बात नहीं है. तुलसी कहता है जो राम को नहीं भजता उसे परम दुश्मन माना जाना चाहिए चाहे वह कितना भी भला आदमी क्यों न हो. सुरदास कहता है जो कृष्ण का भक्त नहीं वह आदमी ही नहीं है. नैतिकता की शिक्षा अगर किसी ने दी है तो वे दलित समाज के सन्त ही हैं. जितने भी सन्त पैदा हुए दलित समाज में सें ही हुए. द्विजों में सें तो तुलसी जैसे पैदा हुए हैं जिन्होंने अपनी माँ तक के लिए कह दिया : नारी ताड़न की अधिकारी.

भारत की सन्त परम्परा अर्थात श्रमण संस्कृति भगवन बुद्ध सें शुरू हुई, महात्मा रावण द्वारा परवान चढ़ी तथा सतगुरू रैदास, कबीर, चोखामेला, बुल्लेशाह, नानक आदि सन्तों द्वारा आगे बढ़ाई गई. हमें यह कहने में कतई कोई झिझक नहीं है कि हम भारतियों में जो भी नैतिकता और सच्चाई आज विद्यमान है वह सिर्फ और सिर्फ दलित सन्तों के प्रयास का ही फल है अन्यथा ब्राह्मणधर्म के ग्रन्थों – गीता, वेद, पुराण और ब्राह्मणवाद के नायकों – तुलसी, मनु, नारद, याज्ञवल्क्य या दयानन्द जैसों ने तो हमें अनैतिकता और कर्मकांडों के मायाजाल में ही फंसाया है. ऐसे लोगों के लिए जूए में छोटे भाई की पत्नि को दांव पर लगाने वाला धूर्त आज भी "धर्मपुत्र" है. जूए में हारे धन के लिए भाईयों सें लड़ना "धर्म युद्ध" है. दयानन्द गैर–पुरुष सें व्यभिचार करके सन्तान पैदा करने यानि 'नियोग' को धर्म बताता है. वह कहता है नियोग का विरोध करना ही पाप है. दलित सन्तों ने हम भारतीयों को सही धर्म की राह दिखाई है. अतः सही कहा गया है ''**दलित सन्त न होते जगत में तो जल मरता संसार**''

दलित समाज के महान सन्तों में सें दो नाम सूरज और चांद की तरह सदा सें चमकते आ रहे हैं. वे दो नाम हैं सतगुरु कबीर और सतगुरु रैदास. हमारे ऐसे सन्त–सिपाहियों के प्रति ब्राह्मणवादी लेखकों ने कई प्रकार की ऊल जलूल बातें फैला रखी हैं. इन्हीं बातों का निवारण करने के लिए हमने कुछ बरस पहले पंजाब सें छपने वाले अखबार "जनतक लहर" में सतगुरु रैदास पर कुछेक लेख लिखे थे. समाज ने उन लेखों को बहुत सराहा था. तब कुछ लोगों ने यह राय भी दी कि इन लेखों को पुस्तक की शक्ल दी जानी चाहिए.

इस पुस्तक में लीक सें हट कर हमने कुछ तथ्यों को उजागर किया है. जबसें हमने दलित सन्तों की बाणी पढ़ी है, कुछ प्रश्नों ने हमारे विवेक पर बार बार दस्तक दी है. जैसे कि :

1- क्या हमारे सन्तों को वास्तव में "हिन्दू" अर्थात ब्राह्मणिक हिन्दू कहा जा सकता है?

2- क्या उनका कार्यक्षेत्र मात्र धार्मिकता तक ही सीमित है?

3- क्या उनकी शिक्षाओं का दायरा मात्र दलित वर्ग तक ही सीमित है?

4- हमारे सन्तों को "अपनी" जाति मात्र तक किसने और क्यों सीमित किया?

5- एक बात जिसने हमें सबसें ज्यादा हैरान किया वह यह है कि रैदास साहेब ने क्यों कहा :

"अछूत राज बिछड़े दुख पाया" तथा

"ऐसा चाहूं राज मैं, मिलै सभी को अन्न,
छोटे बड़े सम बसैं रैदास रहै प्रसन्न."

हमारे विचार में अब तक जितनी भी पुस्तकें गुरू रैदास पर लिखी गईं हैं उनमें किसी भी लेखक ने उनके राजनीतिक ज्ञान पर चर्चा की ***ही*** नहीं है. सभी लेखकों ने उन्हें मात्र एक समाज सुधारक अथवा धर्म सुधारक के रूप में ही पेश किया है. राधास्वामी डेरे जैसे प्रकाशकों ने तो उनमें मात्र भगवान की भक्ति ही ढूंढी है जबकि वास्तविकता यह है कि **गुरू रैदास ने दलित राज की प्राप्ति का न केवल आहवान किया बल्कि इस अहम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपने प्राणों का बलिदान भी दिया.** कुछेक पढ़े लिखे विद्वान कहे जाने वाले लेखकों ने भी उनके **"अछूत राज"** मांगने और **"बेगमपुरा"** बसाने के आहवान तक को भगवान की भक्ति सें जोड़ दिया है. यह बेहद अफसोस की बात है!

दो शब्द दलित विद्वानों सें : हमें ऐसा लगता है कि अधिकतर दलित विद्वानों ने भी उनके विचारों को सही अर्थों में समझने की कोशिश ही नहीं की है. जो कुछ शुक्लाओं, चतुर्वेदीयों और शर्मों ने पढ़ा दिया, उन्होंने उसे ही तोते की तरह रट कर सुना दिया. यह अत्यंत दुख की बात है. जब हमने पहले पहल इस पद को पढ़ा तो हमें यकीन ही नहीं हुआ कि आज तक भारत के हजारों दलित प्रोफैसर भी इसका सही अर्थ नहीं कर पाए हैं. बाबा साहिब का पहला आदेश ही यही है कि **शिक्षित बनो**. क्या इसका अर्थ मात्र यह है कि हम ए बी सी पढ़ जाएं, क ख ग पढ़ जाएं. क्या हमारे गुरूओं ने जो कुछ कहा, उसे सही भाव सें समझना शिक्षित होना नहीं है! बाबा साहिब ने कहा : गुलाम को यह बता दो कि वह गुलाम है तो वह आजादी के लिए बगावत कर देगा! इस का अर्थ यह नहीं है कि हम गुलाम ढूंढनें जाएं और उन्हें बताएं कि वे गुलाम है. उनके इस आदेश को सीधा सा अर्थ है कि दलित समाज के लोग दिमागी तौर पर ब्राह्मणवाद के गुलाम है. उन्हें आजाद करो. उदाहरणतः राम ने दलितों के पूर्वज सन्त शम्बूक की हत्या इस बात पर कर दी थी कि उन्होंने शिक्षा प्राप्त करने का "अपराध" किया था. दलितों के शिक्षा के अधिकार को कुचलने वाले हत्यारे को अगर दलित "भगवान" मानें तो यह उनकी दिमागी गुलामी की ही निशानी है.

अतः दलित समाज में जो पढें लिखे लोग हैं उनका फर्ज बनता है कि अपने समाज को इस गुलामी का एहसास करवाएं. विशेषकर दलित अध्यापकों का यह पुण्य कर्तव्य है कि वे इस आदेश का पूर्णतया पालन करें. पढ़ लिख कर भी अगर हमें हमारी गुलामी का एहसास नहीं होता तो ऐसी पढ़ाई को शिक्षित होना तो बिल्कुल नहीं कहा जा सकता. आज भी सैंकड़ों दलित अध्यापक ऐसे हैं जो गांधी, विवेकानन्द दयानन्द जैसों के गुण गाते हैं. उनकी शिक्षाओं को अनिवार्य मानते हैं. जिन लोगों ने दलितों को कुचलने के नियमों को धर्म बताया, उनकी शिक्षाओं को अनिवार्य बताना, निश्चित रूप में हमारी दिमागी गुलामी की ही निशानी है.

भारत की तो बात ही छोड़ो, दुनिया की ऐसी कोई समस्या नहीं है जिसका हल अम्बेडकरवाद में नहीं है. फिर भी हम गांधीओं, दयानन्दों या विवेकानन्दों को सिर पर लादे घूमते हैं तो इसका एक ही कारण है कि हम शिक्षित नहीं हुए हैं. यह बिल्कुल वैसा ही है जैसे हम गुरू रैदास के "ऐसा चाहूं राज" को धार्मिक श्लोक बता देते हैं तथा उनके **बेगमपुरा** बसाने के सपने को अलौकिक कल्पना मान लेते हैं.!! ऐसे में लाखों हजारों दलितों का पढ़ा लिखा होना हमें व्यर्थ लगा.

इस बात ने हमारे दिल और दिमाग दोनों को झंझकोर दिया कि **सन्त होते हुए भी उन्होंने "राज" क्यों मांगा.** हमारे विचार में उन्होंने यह बातें यूं ही नहीं कहीं हैं. इस श्लोक के पीछे उनकी गहन सोच तथा संदेश छिपे हैं. जिस जमाने में दलितों का मुख्य मार्ग पर आना भी पाप समझा जाता था उस समय उनके द्वारा राज मांगना, एक चौंकाने वाली बात है. उनके ऐसे श्लोकों पर सभी विद्वानों विशेषकर दलित लेखकों को अवश्य विचार करना चाहिए.

गुरू रैदास अन्य दलित सन्तों सें दो बातों सें भिन्न हैं: पहली तो यह कि उन्होंने दलितों सें आहवान किया कि वे अपना खोया हुआ "राज" फिर सें प्राप्त करें और बेगमपुरा बसायें. दूसरी बात यह कि उनकी हत्या की गई. सन्त कबीर उनके समकालीन तथा समविचारों वाले उनके धर्म भाई थे. उन्होंने अपनी वाणी में ब्राह्मणवाद पर गुरू रैदास सें कहीं अधिक तीखे प्रहार किये मगर गुरू रैदास की ही हत्या की गई. यह विचारने का विषय है कि उन्होंने ऐसा क्या कहा या क्या किया कि ब्राह्मणों को उनकी हत्या करके ही संतोष हुआ. ऐसा क्यों हुआ, इस विषय पर दलित विचारकों को अवश्य खोज करनी चाहिए.

हमारे विचार में उनकी हत्या करने के दो करण हैं : पहला यह कि उन्होंने क्षत्राणी मीरा को दीक्षा दी. मीरा को दीक्षा देकर उन्होंने वह किया जिसके लिए सदियों सें दलित वंचित कर दिए गए थे यानि विद्या पढ़ने और पढ़ाने का अधिकार. जहां उन्होंने मीरा को दीक्षा देकर ब्राह्मणों के "सर्वश्रेष्ठ" होने के दावे को नष्ट किया, वहीं उनकी कमाई पर भी आघात किया. एक पल के लिए उस समय की कल्पना करें जब दलित का स्कूल के पास सें गुजरना भी अपराध था, उस समय उन्होंने एक क्षत्राणी मीरा को दीक्षा देने की हिम्मत की. उनका यह काम किसी

भी क्रांति सें कम नहीं था. उनका यह कदम सुभाष चन्द्र बोस द्वारा आजाद हिन्द फौज का गठन या सरदार भगत सिंह द्वारा अंग्रेज असैम्बली में बम फैंकने के कदम सें बढ़कर क्रांतिकारी था. दूसरा कारण उनके द्वारा राज या सत्ता मांगने का आहवान है. जिस समय दलित को शहर या गांव के अन्दर रहने का अधिकार नहीं था उस समय अपना राज मांगना सचमुच हिम्म्त का काम था.

गुरू रैदास जानते थे कि दलितों का कल्याण केवल दो बातों सें हो सकता है पहला ज्ञान प्राप्ति और दूसरा राजनीतिक शक्ति. बाबा साहिब द्वारा दलितों को अपनी आजादी के लिए दिया मन्त्र : शिक्षित बनो, संगठित बनो और संघर्ष करो, वास्तव में गुरू रैदास का ही दिया हुआ आदेश है. **बाबा साहिब ने दलितों को तथाकथित ऊंची जाति वालों के बराबर वोट का अधिकार दिलवा कर गुरू रैदास के उस सपने को साकार करने की नींव रखी है जिसमें उन्होंने दलित राज लेकर बेगमपुरा बसाने की बात की है. दलितों की संख्या तथाकथित ऊंची जाति वालों से बहुत बहुत अधिक है. जब दलितों की संख्या अधिक है तो उनके वोट भी अधिक हैं. अतः शीघ्र ही सत्ता उनके पास फिर सें लौट कर आने वाली है. इसे कोई भी रोक नहीं सकता!! यह नियति है!! सब को यह जान लेना चाहिए.**

हमारी यह पुस्तक उनके इन्हीं आदेशों को दलितों तक पहुंचाने का एक छोटा सा प्रयास है. और शायद ऐसा कहना भी गलत नहीं होगा कि इस दिशा में हमारा प्रयास सर्वप्रथम है.

किसी भी क्रांति को दबाने हेतु ब्राह्मणधर्मियों ने सदा अपनी साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति को अपनाया है. ऋषि दधीचि सें लेकर गांधी तक उनकी यह नीति अनवरत चली आ रही है. यही नीति अपना कर उन्होंने अनेकों बुद्ध, शंबर, रावण, एकलव्य, अशोक, रैदास और अम्बेडकर मिटाये हैं. अतः यह हैरानी की बात नहीं है कि दलितों के आदि पुरुषों का हत्यारा होने के बावजूद राम आज भी असंख्य दलितों का भगवान माना जाता है. अंग्रेजों के लिए प्रथम विश्व युद्ध में भारतीय वीरों को बलि चढ़ाने वाला गांधी, 1942 में तभी अपने आकाओं को देश छोड़ने के लिए कहता है जब बाबा साहिब को श्रम मन्त्री बनाया गया. आज उसी गांधी को दलित उद्धारक बताया जाता है.

ब्राह्मणवादी लेखकों ने गुरू रैदास व अन्य दलित सन्तों के बारे में ऊलजलूल बातें फैला रखी हैं ताकि लोग उनकी असल शिक्षाओं को भूल कर इन बेकार की बातों में उलझे रहें. प्रचार तन्त्र पर उनका कब्जा है सो अपनी बात लोगों तक पहुंचाने में उन्हें कोई रुकावट नहीं आती. हमने प्रस्तुत पुस्तक में सन्त रैदास के व्यक्तित्व के चारों ओर ब्राह्मणवादियों द्वारा उगाए झाड़ झंखाड़ को हटाने का प्रयत्न किया है. भारत में दलित विद्वानों की कमी नहीं है. हमारा पूर्ण विश्वास है कि सदियों सें जिस बात को ब्राह्मणवादी धूर्त लेखकों ने छुपाई है उसे वे जरूर उधाड़ेंगे. दलित सन्तों के ज्ञान का सूर्य अधिक दिनों तक ब्राह्मणवादियों के आडम्बर के बादलों के पीछे छुपाया नहीं जा सकेगा.

हमें पूर्ण विश्वास है कि सतगुरु रैदास का बलिदान व्यर्थ नहीं जाएगा. जैसे देवों द्वारा एक रक्षक (राक्षस) शहीद करने पर उसके खून सें सैंकड़ों रक्षक पैदा हो जाते थे वैसा ही आज गुरू रैदास के खून सें लाखों सिपाही पैदा हो रहे हैं. अब उनके सिपाही अंतिम विजय की ओर अग्रसर हैं. इस विजय को कोई नहीं रोक सकता!! दलितों का राज फिर सें आएगा!!

नमो बुद्धाय! जय भीम!!

कुलदीप कुमार
राज कुमार

अध्याय 1

1.1 सन्त परम्परा

भारत में दो विचारधारएं अथवा दो संस्कृतियां सदियों सें चली आ रहीं हैं. एक ब्राह्मणिक विचारधारा जिसके प्रणेता ब्राह्मण ऋषि और देव थे और दूसरी श्रमण संस्कृति जिसके सृजक गौतम बुद्ध थे. ऋग्वेद काल यानि सत्ययुग सें शुरू हुई ब्राह्मणिक संस्कृति का मुख्य नारा था – खाओ, पीओ और ऐश करो. ब्राह्मण ऋषि और देव उस जमाने में यज्ञों में खूब शराब (सोम) पीते थे, यज्ञ अग्नि में पशु भून कर खाते थे और स्त्रियों सें व्यभिचार करते

थे. ब्राह्मण ऋषि इसी कर्मकांड को सनातन धर्म का नाम देते थे. उनके ग्रन्थ ऐसी घटनाओं अथवा कर्मकांडों सें भरे पड़े हैं. श्रमण गौतम बुद्ध तथा महावीर जैन ने इस ब्राह्मणिक अनाचार के विरुद्ध सफलता पूर्वक आवाज उठाई. उन्होंने ब्राह्मणिक अनाचार के विपरीत श्रमण संस्कृति का झण्डा बुलंद किया जिसमें नैतिकता और सदाचार को ही जीवन का आधार माना जाता है. उन्होंने मात्र नैतिक आचरण को ही धर्म माना. यज्ञ, बलि, तीर्थ स्नान, जाति भेद आदि को उन्होंने अधर्म कहा. लोग ब्राह्मणिक सनातन धर्म को छोड़ कर उनकी शरण में आए. सम्राट अशोक के समय पूरा भारत ही नहीं बल्कि पूरा ऐशिया बौद्ध धर्मी हो गया था.

तब पहली सदी ईसा पूर्व यानि अब सें लगभग 2200 साल पहले, जब ब्राह्मणवाद अपनी अंतिम सांसें गिन रहा था, तब ब्राह्मणिक सनातन धर्म के ब्राह्मणों ने साजिश रची. उन्होंने हत्यारे ब्राह्मण पुष्यमित्र के साथ मिल कर गिरोह बनाया और धोखे सें सम्राट अशोक के पौत्र सम्राट वृहदर्थ का कत्ल कर दिया. राजसत्ता पर काबिज होने के बाद ब्राह्मणों के इस गिरोह ने पुनः अपने सनातन धर्म की स्थापना करने की कोशिश की. हत्यारा ब्राह्मण पुष्यमित्र राजा बना दिया गया. उसने गद्दी पर बैठते ही बौद्धों को कत्ल करने का फरमान जारी कर दिया. अधिकतर बौद्ध जान बचा कर जंगलों पहाड़ों पर जाकर बस गए. आज जंगल में रहने वाली जनजातियों के लोग उन्हीं बौद्धों के वंशज हैं. इस कत्लेआम के बावजूद वह हत्यारा लोगों के व्यवहार में रच बस चुके बौद्ध धर्म को समाप्त नहीं कर सका. उदाहरणतः गौतम बुद्ध ने पीपल के पेड़ के नीचे ज्ञान प्राप्त किया था. बौद्धों के लिए पीपल अति पवित्र पेड़ है. किसी भी ब्राह्मण ग्रन्थ में पीपल की पूजा का वर्णन नहीं है. वे केवल शमशान घट में ही पीपल उगाते हैं. फिर भी आज पूरे भारत के लोग पीपल की पूजा करते हैं और पीपल के पेड़ को काटना उतना ही पाप समझते हैं जितना कि गाय को काटना. यह बात इस तथ्य को दर्शाती है कि हम भारतीयों में अभी तक बुद्ध धर्म का अन्त नहीं हुआ है.

हमारे संस्कारों में यह श्रमण संस्कृति के ही अंश हैं कि हम पीपल को पवित्र मानते हैं. गाय को पवित्र मानते हैं वर्ना आज भी महाभारत में तो 2000 गायें रोजाना काट कर ब्राह्मणों को खिलाने वाले रन्तिदेव को महादानी कहा जाता है! आदि काल सें लेकर आज तक इन दो संस्कृतियों के बीच संघर्ष चला आ रहा है. बाबा साहिब ने बिल्कुल सत्य और सटीक कहा है कि भारत का इतिहास बौद्ध (श्रमण) और बाह्मणिक (सनातन) संस्कृतियों के संघर्ष का इतिहास मात्र है. इस संघर्ष की कड़ी गौतम बुद्ध सें लेकर बाबा साहिब अम्बेडकर तक चली आई है. बीच में महात्मा रावण, सम्राट अशोक, सन्त कबीर, सन्त रैदास, महात्मा ज्योतिबा फूले आदि अनेकों क्रांतिकारियों ने सत्य अहिंसा की इस मशाल को आगे बढ़ाया है. हर बार साम दाम दण्ड भेद की नीति का सहारा लेकर ब्राह्मण उस मशाल को धीमा करने में सफल रहे हैं परन्तु अब बाबा साहिब द्वारा प्रज्जवलित मशाल कभी धीमी नहीं होगी. और वह दिन दूर नहीं जब सन्त सिपाही रैदास का सपना पूरा होगाः

"ऐसा चाहूं राज मैं, मिलै सभी को अन्न!
छोटे बड़े सम बसैं, रैदास रहै प्रसन्न!!

1.2 जीवनी

जीवन यात्रा : उनका जन्म बनारस के पास मंडूआ डीह नामक एक गांव में हुआ. उनके पिता का नाम रघुराम तथा माता का नाम करमा देवी था. उनका जन्म माघ सुदी पन्द्रह विक्रम संवत 1460 में हुआ यानि अब सें लगभग 600 साल पहले उनका जन्म हुआ. उनके पिता जाति के आधार पर दलित समाज की वीर जाति "चमार" सें सम्बंधित थे. गुरू रैदास ने स्वयं को ढेड, कुट बाढला कहा है तथा गर्व सें कहा है.

उनकी पत्नि का नाम लोना देवी था. वे तन और मन सें अति सुन्दर थीं. उनके नाम का मन्त्र "दुहाई लोना माई की – छू" आज भी उत्तर भारत के घरों में बच्चों की नजर उतारने के लिए बोला जाता है. जैसे माता लोई ने सन्त कबीर का साथ दिया और माता रमादेवी ने बाबा साहिब का साथ दिया वैसे ही माता लोना ने गुरू रैदास का हर कदम साथ दिया. उनके एक पुत्र भी थे जिनका नाम विजयदास था.

होश संभालते ही उन्हें अपने समाज के साथ हो रहे अन्याय सें दो चार होना पड़ा. उनको भी वे सब कष्ट सहने पड़े जो एक शूद्र अथवा अछूत को सहने पड़ते हैं. इन्हीं अन्यायों ने उनके भीतर आजादी की चिंगारी प्रज्जवलित की. उसी समय में उन्हें काशी में ही सतगुरु कबीर का साथ मिल गया. कहते हैं कि एक और एक ग्यारह होते हैं लेकिन आजादी के परवाने एक और एक मिल कर ग्यारह सौ के समान हो जाते हैं. दोनों सन्तों ने मिल कर दलित समाज में आजादी की लहर जगाई.

उनके द्वारा चलाई गई आजादी की लहर पूरे भारत में फैल गई. भारत के कोने कोने सें दलित सन्तों ने ब्राह्मणवाद के विरुद्ध आजादी का बिगुल बजा दिया. धर्म के नाम पर किए जा रहे अनाचार को ब्राह्मणों को छोड़ना पड़ा. **आज 'हिन्दू धर्म' के नाम पर जो कुछ मिलता है उसमें ब्राह्मणिक सनातन धर्म का कुछ भी अंश शेष नहीं है. दलित सन्तों द्वारा की गई क्रांति का ही नतीजा है कि आज के हिन्दू धर्म में यज्ञ बलि, खुले व्यभिचार, नियोग, शराबखोरी का नामोनिशान भी नहीं बचा है. लेकिन ब्राह्मणों ने अपनी सनातन साम दाम की नीति अपनाते हुए इस धर्म पर भी अपना कब्जा कायम रखा है.** अतः राम जैसे हत्यारे तथा कृष्ण जैसे व्यभिचारी भी भगवान बना दिए गए है.

कहते हैं गुरू रैदास सौ साल सें ज्यादा उम्र तक जीए. इतने बरसों तक उन्होंने अपने धर्म का प्रचार किया. ब्राह्मण धर्म के अनाचार के विरुद्ध खुल कर बोले. संकराचार्य तक उनके तर्क के आगे टिक नहीं पाया. कथा है कि उसने गुरू रैदास और गुरू कबीर सें धर्म पर बहस की. अंत में वह हार गया उसने जमीन पर लम्बे लेट कर यानि दण्डवत होकर दोनों दलित सन्तों के आगे माथा रगड़ा. गुरू रैदास को एक श्लोक इस घटना का साक्षी है. उन्होंने कहा : **अब विप्र प्रधान तिहि करै दंडवति, तोरे नाम सरणाइ रैदासा!!**

ब्राह्मण वैसे तो उनसें जीत नहीं पाए. अतः अन्त में उन्होंने अपने साम दाम दण्ड भेद के फार्मूले में सें दण्ड का सहारा लेते हुए लाठी डण्डों सें हमला करके उनकी हत्या कर दी. दलित आजादी की एक और मशाल कातिलों ने बुझा दी मगर उनकी आवाज को वे दबा नहीं पाए. आज भी उनकी आवाज गुरू ग्रन्थ साहिब की बाणी के रूप में गूंज रही है.

1.3 नाम – रैदास या रविदास

उन्हें दो नामों सें जाना जाता है : रविदास और रैदास. ब्राह्मण ग्रन्थों भविष्य पुराण आदि में उन्हें रविदास कहा गया है. अन्य सभी ग्रन्थों में उन्हें रैदास ही कहा गया है. सिखों के गुरू ग्रन्थ साहिब में उन्हें "रविदास" आदरपूर्वक कहा गया है क्योंकि पंजाबी में रैदास कहना अटपटा और बुरा लगता है. ब्राह्मणिक ग्रन्थों में उन्हें रविदास धोखा देने के लिए कहा गया है क्योंकि ब्राह्मणवादी लेखक रविदास का अर्थ रवि का दास यानि ब्राह्मणों के सूर्य नामक देव का उपासक बता कर करते हैं. उन्हें ''रविदास'' कह कर ब्राह्मणवादी लोग एक साथ तीन शिकार करते हैं :

1. पहला यह कि वे दिखावा करते हैं कि उनके मन में एक दलित गुरू के प्रति आदर की भावना है जिसके कारण वे उन्हें रैदास कहने की बजाए आदर सें रविदास कहते है. उनके अनुसार 'रैदास' तो 'रविदास' का बिगड़ा हुआ रूप है. अतः आम दलित 'बुद्ध राम' को 'बुधु' कहने वाले यह दिखावा करते हैं कि वे आदर सें 'रैदास' को 'रविदास' कहते हैं.

2. दूसरा यह कि उन्हे 'रवि दास' बता कर वे यह अर्थ करते हैं कि 'रविदास' का अर्थ है 'रवि का दास'. तब वे दावा करते हैं कि गुरू रैदास उनके रवि यानि सूर्य नामक देव के उपासक थे **जबकि सच्चाई यही है कि गुरू रैदास ने कभी भी किसी भी हिन्दू देवता की पूजा तो छोड़ो, नाम भी नहीं लिया.** ऐसे अर्थ करके वे यह प्रचार करते हैं कि जैसे गुरू रैदास सूर्य के दास थे उनके मानने वाले दलितों को भी चाहिए कि वे ब्राह्मणिक देव सूर्य की पूजा करें. लेकिन वही 'विद्वान' लक्षमण का अर्थ लक्ष + मण अर्थात "लाख मण वजन वाला", विश्वामित्र का अर्थ विश्व+अमित्र अर्थात दुनिया भर का दुश्मन नहीं करते और न ही विष्णु का अर्थ विष + अणु अर्थात "कण कण में जहर वाला" नहीं करते. वैसे भी गुरू रैदास जैसे सद्‌चरित्र सन्त उस सूर्य के दास हो ही नहीं सकते जिसने बलात्कार करके कुंआरी कुन्ती के कर्ण पैदा किया और न ही उस सूर्य के दास हो सकते हैं जिसे एक बन्दर का बच्चा निगल गया था.

3. तीसरा यह कि वे लोग उन्हें रविदास यानि उनके सूर्य का दास बता कर यह प्रचार करते हैं कि गुरू रैदास "हिन्दू" थे. लेकिन सच्चाई सही है कि उन्होंने बाबा साहिब की तरह पूर्ण रूप सें ब्राह्मणधर्म का त्याग कर दिया था. उन्होंने अपनी वाणी में समस्त ब्राह्मणिक देवों और उनके ग्रन्थों की धज्जियां उड़ा दी हैं. उन्होंने स्पष्ट कहा :

रैदास हमारे रामजी दसरथ के सुत नाहीं,
राम रम रह्‌यो हमीं में, बसै कुटुम्ब माहीं!!

अर्थात मैं जिस राम का नाम लेता हूँ वह दशरथ का बेटा राम नहीं है. मेरा राम तो मेरे रोम रोम में बसा हुआ है तथा पूरी दुनिया में समाया हुआ है.

उन्होंने अपनी बाणी में स्वयं को "रैदास" ही कहा है. इसलिए हमने उनका नाम गुरू रैदास ही माना है और हमारा मानना है कि हम सब के लिए यही बेहतर है कि उन्हें गुरू रैदास ही कहें ताकि सुन्दर नाम के चक्कर में हम उनका असली रूप ही न गंवा दें.

1.4 गृहस्थी सन्त

भगवन बुद्ध ने जब अपना नया धर्म चलाया तो उन्होंने धर्म प्रचार के लिए एक नई संस्था का शुभारंभ किया. उन्होंने भिक्षु संघ की स्थापना की. इससें पहले भारत में धर्म का प्रचार करने वाले भिक्षु नहीं होते थे. भिक्षु यानि वे लोग जो धर्म का प्रचार करने के लिए अपना पारिवारिक जीवन छोड़ देते थे. वे जंगलों में नहीं जाते थे बल्कि गांवों शहरों में रह कर वहीं लोगों में सदाचार का प्रचार करते थे. वे लोग कमाई का धन्धा नहीं करते थे. अतः अपना पेट भरने व तन ढकने के लिए वहीं गृहस्थ लोगों सें खाना कपड़ा आदि भीख में मांगते थे. भीख मांगने के कारण उन्हें भिक्षु कहा जाता था. उनके लिए दो नियम बहुत सख्त थे पहला तो यह कि वे मात्र उतना ही खाते थे जितना उन्हें पहले घर सें भिक्षा में मिल जाता था. एक घर सें कम मिलने पर वे अगले घर और अधिक खाना मांगने नहीं जा सकते थे और न ही खाना अगले वक्त के लिए जमा करके रख सकते थे. दूसरा नियम यह था कि वे कोई सम्पत्ति जमा नहीं कर सकते थे. कपड़े भी अधिक सें अधिक दो जोड़ी रख सकते थे. **वे ब्राह्मणिक 'सन्तों' की तरह आलीशान कारों में नहीं घूम सकते और न ही महलनुमा आश्रमों में रह सकते हैं.**

इस तरह भगवन के धर्म को मानने वाले दो प्रकार के लोग थे. एक गृहस्थ जो परिवार के साथ रहते हुए सदाचार का जीवन बिताते थे. दूसरे भिक्षु जो अपने परिवार को छोड़ कर लोगों में सद्धर्म का प्रचार करते थे. जहां गृहस्थ स्वयं कमा कर खाते थे, भिक्षु उनसें भीख मांग कर जीवन बिताते थे. केवल भिक्षु ही बौद्ध संघ के सदस्य होते थे. भिक्षुओं का मुख्य काम लोगों में गांव गांव घूम कर सदाचार का प्रचार करना होता था. दोनों ही प्रकार के बौद्ध सदाचार का जीवन बिताने में एक समान होते थे. भिक्षुओं को क्योंकि संघ में रहना पड़ता था अतः उन्हें सदाचार के नियमों का अधिक सख्ती सें पालन करना होता था.

गुरू रैदास तथा अन्य दलित सन्तों ने भगवन बुद्ध द्वारा बनाए नियम में कुछ परिवर्तन किया. उन्होंने भिक्षु और गृहस्थ को एक जगह इक्कठा कर दिया. उन्होंने पूरी तरह आदर्श बौद्ध गृहस्थ की तरह जीवन बिताया मगर धर्म प्रचार भिक्षुओं की तरह किया. वे पारिवारिक जीवन का त्याग किए बिना भिक्षुओं की तरह सद्धर्म के प्रचार में लगे रहे और भिक्षु रहते हुए भी गृहस्थ की तरह सदाचार की कमाई सें अपना तथा परिवार का पेट पालते रहे. आधुनिक भाषा में कहें तो सभी दलित सन्त गृहस्थ–भिक्षु थे या भिक्षुक–गृहस्थ थे यानि 'एक में दोनों' थे.

कुछ लोग उनके जीवन की तुलना ब्राह्मण धर्म के प्रचारक ब्राह्मण ऋषियों सें भी करते हैं तथा उन्हें ऋषि तक कह देते हैं. लेकिन दलित सन्तों को ऋषि कहना उनका अपमान करने के समान है क्योंकि ऋषियों की जीवन शैली और सन्तों के जीवन शैली में उतना ही अन्तर है जितना अन्तर रात और दिन में है तथा जितना अन्तर धर्म और अधर्म में है.. हमारे दावे को सही सिद्ध करने के लिए आगे हम ब्राह्मणिक ऋषियों और सन्तों की जीवनशैली का तुलनात्मक स्वरूप दे रहे हैं.

1. सबसें मुख्य अन्तर तो उनमें यही है कि ब्राह्मण ऋषि अनाचारी और ऐयाश होते थे. ब्राह्मणों के हजारों ऋषियों में ढूंढने सें भी ऐसा एक ऋषि ऐसा नहीं मिलता जिसने दलित सन्तों की तरह सदाचार पूर्ण जीवन व्यतीत किया हो. ब्राह्मण ग्रन्थ स्वयं गवाह हैं कि ब्राह्मण ऋषियों का मुख्य काम यज्ञ में पशु मार कर खाना, सोम नामक शराब पीना और नियोग (व्यभिचार) द्वारा को धर्मपुत्र पैदा करना ही था. उनमें सें अनेकों ऋषि हथियार सप्लाई करने का काम भी करते थे.

2. ब्राह्मण ऋषियों ने कभी भी मेहनत करके रोजी रोटी नहीं कमाई. हमेशा ही वे राजाओं के दान पर पलते रहे. उनके लिए दान "भिक्षा" नहीं थी बल्कि दान उनका अधिकार था. जो राजा उन्हें मूंह मांगा दान नहीं देता था उनकी हिंसा तक का शिकार होता था. राजा हरीषचन्द्र की कहानी तो सभी जानते हैं कि ब्राह्मण ऋषि को दान देने के लिए उसे क्या कुछ करना पड़ा था.

3. ब्राह्मण ऋषि या तो फार्म हाऊस जैसे आश्रमों में रहते थे या फिर राजाओं के दरबार में महामन्त्री अथवा अमात्य होते थे और सारी सत्ता उनके हाथों में होती थी. उन्होंने कभी भी दलित गुरूओं की तरह सन्यासी वाला जीवन नहीं बिताया.

4. जितने भी ब्राह्मण ऋषि हुए वे सभी कर्मकांडों को ही धर्म बता कर लागों को गुमराह करते रहे. किसी भी ब्राह्मण ऋषि ने कभी भी सदाचार की बात नहीं की. यज्ञ में कौन सा मन्त्र बोलना है कौन सा नहीं, बलि वाले पशु

को कौन सा मन्त्र पढ़ कर काटना है, नियोग करते समय शरीर पर तेल मलना है या नहीं, ऐसी बातों को ही वे धर्म बताते थे. उनकी नजर में युद्धिष्ठर जैसा प्राणी "धर्मात्मा" था तो सन्तों की नजर में ऐसा आदमी लज्जाहीन जुआरी था.

5. लगभग सभी ब्राह्मण ऋषि वेद को भगवान की किताब मानते थे मगर सभी दलित सन्तों ने वेदों को व्यर्थ की किताबें बताया. सतगुरू कबीर ने तो यहां तक कह दिया **"अधर्म को धर्म बतावै वेद"**. गुरू रैदास ने कहा **चारों वेद किए खण्डोति, जन रैदास करे डण्डोति!**

6. मांस खाना, शराब पीना और पराई स्त्रियों सें व्यभिचार करना ब्राह्मण ऋषियों का मुख्य धन्धा था. आनन्द रामायण की बात पर यकीन कर लें तो दण्डक वन में रहने वाले ब्राह्मण ऋषि तो राम का सुन्दर शरीर भी भोगने के लिए तैयार हो गए थे. यह तो राम को मौके पर उक्ति सूझ गई और उसने उन ब्राह्मण ऋषियों को अगले जन्म के लिए बुक कर लिया. अगले जन्म में राम तो कृष्ण बन गया और वे ऋषि गोपियां बन गईं. कृष्ण ने गोपियों के साथ क्या गुल खिलाए, सभी जानते हैं. ऐसे ही होते थे ब्राह्मण ऋषि. शायद ही कोई ऐसा ब्राह्मण ऋषि होगा जिसने कुकर्म न किए हों. इसके विपरीत दलित सन्तों ने अपने जीवन का हर पल सदाचार में बिताया. उन्होंने कभी भी ऐसा कुछ नहीं किया जैसा ब्राह्मण ऋषि किया करते थे.

सतगुरु कबीर की एक साखी है जो ब्राह्मण ऋषियों के जीवन पर सटीक बैठती है

"साधो पण्डे निपुण कसाई,
बकरी मार भेड़ को धाये, दिल में दरद न आई!
करे अस्नान तिलक लगाए, विधि सों देव पुजाई,
आतम मार पलक में बिनसे, रूधिर की नदी बहाई!
अति पुनीत ऊँचे कुल कहिए, सभा में अधिकाई,
इनसै दीक्षा हर कोई मांगै, हंसी मोहे आवै भाई!
पाप कटन की कथा सुनावै, करम करावै नीचा,
डूबत दोऊ परस्पर दीखा, गहे बांहि जम खींचा!

अर्थात यज्ञ करने वाले यानि बलि देने वाले ब्राह्मण पूरे कसाई हैं. बकरी भेड़ गाय आदि को यज्ञ में काटते उनके दिल में जरा सी भी दया नहीं उपजती. उनके खून की नदियां बहा देते हैं. वे नहाते तो शास्त्रों में लिखी विधि के अनुसार ही है तथा वैसे ही देव पूजा करते हैं. यानि उन शास्त्रों में नहाने और पूजा करने की तो विधि है लेकिन जीवों पर दया करने की विधि नहीं है. वे अपनी अन्तर्तात्मा को एक पल में मार कर कर भूल जाते हैं. वे स्वयं को ऊंचा और पवित्र कुल का बताते हैं तथा लोगों के सामने बड़ा होने का दावा करते हैं लेकिन उनके काम बहुत नीच हैं. उनसें लोग धर्म की दीक्षा मांगते हैं तो मुझे हंसी आती है क्योंकि वे बातें तो पाप काटने की करते हैं लेकिन काम अधर्म वाले कराते हैं. अतः जो ऐसे काम करने वाले लोग तथा उनका सहारा लेने वाले दोनों साथ ही डूबेंगे.

जो कुछ कबीर साहिब ने उपरोक्त साखी में कहा है वह अक्षरशः ब्राह्मण ऋषियों पर सही बैठता है. महाभारत और अन्य ब्राह्मण ग्रन्थ इस बात का सबूत है कि उन्होंने इतनी संख्या में गाएं खाईं हैं कि अगर जांच की जाए तो आज के समय में भी शुद्ध ब्राह्मण के खून में गाय के खून के अंश अवश्य मिलेंगे. महाभारत में रंतिदेव नामक राजा की कहानी है जो 2000 गाएं रोजाना काट कर ब्राह्मणों को खिलाता था. कभी कभी तो बीस हजार गाएं तक एक दिन में काट कर ब्राह्मणों को खिला देता था. वहां गायों की हड्डियों और खालों का इतना बड़ा पहाड़नुमा ढेर लग गया कि उनसें रिसने वाला खून नदी की तरह बहने लग गया. इस नदी का नाम चर्मवती (चमड़े वाली) नदी पड़ गया. आज कल इसे चम्बल नदी के नाम सें जाना जाता है. **दलित समाज का कोई भी सन्त ऐसे ब्राह्मण ऋषियों जैसा निर्दयी और अनाचारी नहीं था. अतः दलित सन्तों की तुलना किसी भी ब्राह्मण ऋषि सें करना उन सन्तों का अपमान करने के समान है.**

1.5 धर्म प्रचार और दीक्षा

श्रमण संस्कृति के लोगों में सदा सें ही सत्संग करने की प्रथा रही है. भगवन बुद्ध को जिस घर भी बुलाया जाता था वहां भोजन करने के बाद वे धर्म का उपदेश देते थे . शाम को सभी भिक्षु व गृहस्थ मिल बैठते थे तथा सदाचार क्या है धर्म क्या है ऐसी बातों पर विचार किया करते थे. समय के साथ यही परिपाटी सत्संग कही जाने

लगी. उन्हीं की परम्परा का निर्वहन करते हुए सतगुरु कबीर और सतगुरु रैदास सत्संग किया करते थे. भगवन बुद्ध की तरह वे इन सत्संगों में वे नैतिकता और सदाचार का प्रचार करते थे. ब्राह्मण धर्म के किसी भी ग्रन्थ में सत्संग करने का प्रावधान नहीं है. उनके ग्रन्थ केवल यज्ञ करने, तीर्थ नहाने और ब्राह्मणों को दान करने के कर्मकांडों को ही धर्म बताते हैं. गुरू रैदास अपनी सत्संगों में ब्राह्मणधर्म के ग्रन्थों और कर्मकांडों को त्यागने तथा भगवन बुद्ध के नैतिकता, सदाचार और निर्वाण के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते थे.

यह आश्चर्य की बात है कि भगवन बुद्ध के बाद केवल सतगुरू रैदास ने ही अन्य लोगों को धर्म दीक्षा देकर अपना शिष्य बनाया है. बुद्ध की तरह उन्होंने भी लोगों सें ब्राह्मणवाद छुड़वाया और अपने धर्म की दीक्षा दी. उस समय यह कार्य ब्राह्मणों के लिए सीधी चुनौती थी क्योंकि सदियों सें केवल ब्राह्मण ही धर्म पर कब्जा किए बैठे थे. जैसे भगवन बुद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए अनेक स्थानों पर गए वैसे ही गुरू रैदास भी भारत के अनेकों स्थानों पर अपना धर्म प्रचार करने गए. यहां तक कि हैदराबाद स्थित ऐलोरा में एक "सन्त रैदास कुण्ड" भी पाया जाता है तथा तिरुपति मंदिर के पास भी इनके नाम का कुण्ड बना हुआ है. (गुरू रैदास : रा.स्वामी 36)

उन्होंने उत्तर भारत में अनेकों स्थानों विशेषतः यूपी बिहार पंजाब राजस्थान आदि में धर्म प्रचार किया. आजकल उनके अधिकतर शिष्य इन्हीं स्थानों में अधिक संख्या में पाये जाते हैं. राजस्थान के चितौड़ की रानी झाली बाई तथा मीरा बाई ने भी उनके धर्म में दीक्षा ली. रानी झाली बाई ने तो उनका धर्म स्वयं तक सीमित रखा लेकिन मीरा बाई रैदास–धर्म का प्रचार करने पर उतर आई. परिणामस्वरूप उसे भी अपने गुरू की तरह ब्राह्मणों के हाथों अपनी जान गंवानी पड़ी.

उनका धर्म प्रचार अथवा सत्संग मुख्यतः दो विषयों पर केन्द्रित होता था : पहला यह कि सदाचार, नैतिकता वाला धर्म अपनाओ तथा दूसरा यह कि अनाचार अनैतिक ब्राह्मण धर्म का त्याग करो. बाबा साहिब अम्बेडकर ने भी गुरू रैदास वाली शैली अपनाई थी. उन्होंने भी ब्राह्मणवाद की बखिया उधेड़ दीं तथा साथ में बुद्ध धर्म के नैतिक आचरण का प्रचार भी किया.

उनका सबसें **मुख्य प्रचार** होता था कि :

* **लोग ब्राह्मणधर्म को छोड़ें. जाति प्रथा की ऊंच नीच को छोड़ें.**
* **गंगा स्नान, मोक्ष, श्राद्ध, यज्ञ, वेद पुराण आदि सभी बेकार की चीजें हैं. इनसें दूर रहना चाहिए.**
* **लोग श्रमण धर्म अपनाएं तथा निर्वाण प्राप्त करें.**
* **लोग हर प्रकार की अनाचार पूर्ण रीति रिवाजों, कर्म कांडों को त्याग दें.**
* **राजनीतिक सत्ता के बिना बाकी सारी शक्तियां बेकार हैं. दलितों को वास्तविक मुक्ति तभी मिलेगी जब वे अपना छिना हुआ राज फिर सें प्राप्त करेंगे तथा बेगमपुरा बसाएंगे.**

ब्राह्मण धर्म : गुरू रैदास लोगों सें ब्राह्मणधर्म छोड़ने के लिए कहते थे. ब्राह्मण धर्म का अर्थ है वह धर्म जहां ब्राह्मण जाति में पैदा होने वाला प्राणी ऊंचा या महान समझा जाता है चाहे वह गुणों के नाम पर शून्य हो. यज्ञ करना, बलि देना, वेदों में विश्वास करना, राम कृष्ण आदि को भगवान मानना, मोक्ष प्राप्ति के लिए तीर्थों पर नहाना और पण्डों को दान देना, कथा सुनना आदि ब्राह्मणधर्म के मुख्य कर्मकांड हैं. गुरू रैदास और गुरू कबीर ने खुल कर इन बातों का खण्डण किया. उन्होंने लोगों सें आहवान किया कि वे ऐसे धर्म को छोड़ दें. सतगुरू कबीर ने कहा :

अंजन ब्रह्मा संकर इंद्र, अंजन गोपियों संग गोबिंद!
कहै कबीर कोई बिरला जागै, अंजन छोड़ निरंजन लागै!!

अर्थात ब्रह्मा, शिव तथा उनका राजा इन्द्र तथा कृष्ण व गोपियां सभी आंखों से दिखने वाले आम प्राणी हैं. इन्हें भगवान नहीं कहा जा सकता. वही ज्ञानी है जो इन्हें छोड़ कर आंखों सें दिखाई न देने वाले सदाचार रूपी भगवान के पीछे लगता है.

उन्होंने लोगों सें आहवान किया कि वे अनैतिक कार्य छोड़ें, उन लोगों को त्यागें जिन्होंने अनाचार पूर्ण काम किए हैं. उन्होंनें लोगों सें नैतिक काम करने और उन लोगों का अनुसरण करने को कहा जिन्होंने सदाचारी जीवन जीया है. ब्राह्मणवाद अथवा वैदिक धर्म अथवा सनातन धर्म में नैतिकता के लिए कोई जगह नहीं है. वहां छिप कर लोगों को मारने वाला मर्यादा पुरुष कहा जाता है, जूए में अपने छोटे भाई की पत्नि को दांव पर लगाने वाला वहां धर्मात्मा कहा जाता है, 2000 गाएं रोजाना काट कर ब्राह्मणों को खिलाने वाला वहां पर महादानी कहा जाता है, जूए

के धन के लिए लड़ने मरने को प्रेरित करने वाले अपदेशों की पुस्तक उनका सबसें महान धर्म ग्रन्थ है, गुणों की बजाए जन्म के कारण वहां आदमी ऊंचा या नीचा गिना जाता है. सतगुरू रैदास और उनके धर्म भाई सतगुरु कबीर ने ब्राह्मणवाद के इन सिद्धांतों की सदा निंदा की है, खण्डन किया है. अतः जो लोग इन सन्तों के शिष्य हैं उन्हें ब्राह्मण धर्म के यह सब ढकोसले छोड़ देना चाहिए.

श्रमण धर्म : उन्होंने लोगों सें आहवान किया कि वे श्रमण धर्म यानि सन्तों का मार्ग अपनाएं. उन्होंने स्पष्ट शब्दों में भगवन बुद्ध के धर्म अर्थात निर्वाण प्राप्ति का आहवान किया. **'निरंजन' भगवन बुद्ध** के लिए प्रयोग किया जाता है क्योंकि उनका धर्म अर्थात सदाचार आंखों सें देखने की बजाए मन सें करने का काम है. दलित सन्तों ने वही कुछ करने को कहा जो भगवन बुद्ध ने बताया था. बुद्ध धर्म में निर्वाण को सर्वोत्तम स्थिति माना गया है. दलित सन्तों ने भी भगवन बुद्ध के निर्वाण के सिद्धांत को परम पद बताया. उन्होंने कहाः

रैदास सोई साधु भला, जिस मन मांहि नहीं अभिमान!
हर्ष, शोक जाने नहीं, जाने सुख दुख एक समान!!
कहे रैदास सुनो रे सन्तो, यह पद है निर्वाण,
यह रहस्य कोउ खौजै बूझै, सोइ सन्त सुजान!!
घृत कारण दधि मथै सयाण! जीवत मुक्त सदा निर्वाण!!

अर्थात गुरू रैदास के अनुसार उसे ही साधु कहा जा सकता है जिसके मन में अभिमान नहीं है. ऐसे साधु खुशी गमी सुख दुख को एक समान अपनाते हैं. यही निर्वाण की स्थिति है. रैदास जी सभी सन्तों को आहवान करते हैं कि उस निर्वाण को प्राप्त करें जिसे सन्त सुजान अर्थात भगवन बुद्ध ने खोजा है. जैसे दही को मथ कर घी निकाला जाता है वैसे ही भगवन बुद्ध ने निर्वाण का रास्ता खोजा है. जो सन्त **जीते जी मुक्त होने को रास्ता ढूंढ लेता है वही ज्ञानी सन्त है.** अतः जो निर्वाण का पद नहीं ढूंढता वह मात्र भगवाधारी है साधु या सन्त कहलवाने के योग्य नहीं है.

कुल मिला कर सन्तों का धर्म वही है जिसे श्रमण धर्म कहा जाता है. भगवन बुद्ध द्वारा बताए गए सदाचार, निर्वाण तथा मध्य मार्ग के अध्ययन के लिए ही असंख्य विदेशी यात्री भारत आए. **आज तक जितने भी विदेशी यात्री भारत में शिक्षा ग्रहण करने आए हैं, वे सब के सब मात्र उनके श्रमण धर्म का अध्ययन करने ही आए हैं. आज तक किसी विदेशी यात्री ने भारत में आकर गीता पुराण या वेद नहीं पढ़ा और न ही अपने साथ इनमें सें किसी किताब को अपने साथ लेकर गया है.** सभी विदेशी यात्री अपने साथ **दलितों द्वारा रचित त्रिपिटक** की पुस्तकें ही पढ़ने आए तथा इन्हीं को अपने साथ लेकर गए है.

श्रमण धर्म नैतिकता, सदाचार और सच्चाई का रास्ता है. असहाय की सहायता करना, दुखियों के दुख बांटना, पशुओं पर दया करना, बड़ों का आदर करना आदि सभी नैतिक बाते श्रमण धर्म द्वारा ही सिखाई गईं हैं.

सन्तों का निष्काम करम : गुरू रैदास ने बिना लालच किए गए काम को ही धर्म बताते हुए कहा :

सौ बरस रहो जगत में, जीवत रह कर करो काम!
रैदास करम ही धरम है, करम करो निष्काम!!

अर्थात आदमी चाहे सौ साल जीए लेकिन उसे जीते जी काम करना चाहिए क्योंकि करम ही धर्म है. जहां तक निष्काम करम करने की बात है **गुरू रैदास के अनुसार जो काम लालाच की भावना के बिना किए जाते हैं, वही निष्काम करम कहलाते हैं.** जाति और वर्ण के बंधन सें परे हट कर किए गए कार्य भी निष्काम करम है. अगर एक दलित शिक्षा ग्रहण करता है तो यह निष्काम करम है. ब्राह्मण अगर नाली साफ करने का काम करता है तो यह उसका निष्काम करम है. अतः जितने भी दलित सरकारी नौकरी में हैं, गुरू रैदास के अनुसार, सभी के सभी निष्काम करम कर रहे हैं. ब्राह्मणधर्म द्वारा बनाई गई जाति प्रथा और उनके निर्धारित कामों सें बाहर काम करना ही निष्काम करम है. ब्राह्मणधर्म के अनुसार अपनी जाति के निर्धारित काम करना ही धर्म है.

बातें बनाई जाती हैं कि गीता में बिना फल की इच्छा के कर्म करने की शिक्षा दी गई है. कथावाचक टीवी रेड़ियो पर गला फाड़ फाड़ कर चिल्लाते हैं कि कृष्ण ने निश्काम कर्म करने की सलाह दी है. लेकिन सच्चाई इसके विपरीत है. वह तो अर्जुन को जूए में हारे धन के लिए उसके दादा, मामा, नाना व गुरू को मारने की बातें कहता है. साथ में यह भी कहता है कि अगर वह लड़ाई में जीत गया तो राज्य मिलेगा और अगर मर गया तो स्वर्ग में सीट मिलेगी. अतः वह अर्जुन को भी बिना फल की इच्छा के काम करने को नहीं कहता. अतः जो लोग गीता में निश्काम कर्म करने अथवा बिना फल की इच्छा के काम करने की बातें करते हैं वे निश्चित रूप में या तो धूर्त हैं या मूर्ख हैं.

वैसे भी यह सच्चाई है कि दुनिया का कोई भी काम बिना फल के विचारे नहीं किया जाता. गीता का पाठ करने आने वाला ब्राह्मण भी पहले अपनी दक्षिणा तय करके घर सें चलता है. आदमी सांस भी लेता है तो स्वयं को जिन्दा रखने के लिए लेता है.

1.6 उनकी हत्या की गई ! क्यों ?

द्विजों के हाथों दलितों का कत्ल होना कोई नई बात नहीं है लेकिन कई सदियों के बाद ऐसा हुआ कि ब्राह्मणों ने किसी दलित नायक की हत्या की हो. आम दलित तो नित्य ही उनकी हिंसा और शोषण का शिकार होता आ रहा है मगर कई बरसों बाद ऐसा हुआ कि उनके नायक की नृशंस हत्या की गई हो. सदियों पहले राम ने महात्मा रावण और सन्त शम्बूक की हत्या की थी. उनकी हत्या करने के पीछे उसका उद्देश्य था भारत में आर्यों की अनैतिक, अश्लील यज्ञिक संस्कृति के प्रसार में आने वाली रुकावटों को दूर करना. फिर कई सदियों बाद सम्राट अशोक के वंशज सम्राट वृहदर्थ की हत्या की गई. कारण था भारत सें बुद्ध धर्म को हटा कर ब्राह्मण धर्म की पुनः स्थापना करना.

उपरोक्त दोनों हत्याओं ने भारत के इतिहास का रुख ही बदल कर रख दिया था. महाराज रावण की हत्या न होती तो भारत सें ब्राह्मणिक दुराचार कभी का समाप्त हो गया होता. आज ब्राह्मण धर्म बीते जमाने की बात हो गया होता. भारत सें ब्राह्मणों का ढकोसला, धोखाधड़ी कभी के समाप्त हो चुके होते. महात्मा रावण ने भारत सें अनाचारी ब्राह्मण धर्म का लगभग सफाया कर दिया था. उनकी हत्या के बाद ब्राह्मणवाद फिर सें जीवित हो उठा.

ऐसे ही सम्राट अशोक के शासन काल में जब ब्राह्मण धर्म अपनी अंतिम सांसें गिन रहा था तब हत्यारे पुष्यमित्र की अगुवाई में ब्राह्मणों ने उनके पोते सम्राट वृहदर्थ की हत्या कर दी. उनकी हत्या करने के बाद ब्राह्मणों ने भारत में बौद्धों को कत्लेआम किया. उन्होंने भारत सें बुद्ध धर्म का नाम लगभग समाप्त कर दिया था. उस समय ब्राह्मणों ने गया में उस पीपल के पेड़ को भी जला कर नष्ट कर दिया जिसके नीचे बैठ कर भगवन बुद्ध ने नया धर्म खोजा था. ब्राह्मणों द्वारा पूरे भारत में बुद्ध विहार भी नष्ट कर दिए गए.

आज पूरे भारत में ब्राह्मणों द्वारा नष्ट किए गए बौद्ध मठों के अवशेष मिलते हैं. हरियाणा में भी अनेक स्थानों पर ऐसे अवशेष मिलते हैं. ऐसा ही एक स्थान अग्रोहा है. वहां बुद्ध स्तूप के अवषेष मिले हैं लेकिन क्योंकि मीडिया यानि प्रचार के साधनों पर ब्राह्मणधर्मियों का कब्जा है, इसलिए उन्होंने इस झूठ का प्रचार कर रखा है कि यह स्थान किसी अग्रसेन नामक बनिये राजा की नगरी थी. यह राजा कब हुआ कहां हुआ कोई सबूत किसी के पास नहीं है. लेकिन प्रचार के साधन उनके पास होने के कारण उन्होंने झूठ को सच बना रखा है और सच (बुद्ध स्तूप) को झूठ (अगसेन की नगरी) बना रखा है.

सम्राट वृहदर्थ की हत्या के लगभग पन्द्रह सौ साल बाद गुरू रैदास की हत्या की गई. गुरू रैदास की हत्या करने के पीछे भी कोई साधारण कारण नहीं थे. ब्राह्मणों ने सोची समझी रणनीति के अनुरूप ही उनकी हत्या की. उनकी हत्या करने के पीछे मुख्य कारण इस प्रकार सें थे :

पहला कारण यह था कि गुरू रैदास ने ब्राह्मण धर्म को असाधारण चुनौती दी थी. उन्होंने सतगुरु कबीर के साथ मिल कर वेदों, पुराणों, गीता, राम, कृष्ण आदि का खण्डण किया. यज्ञ, श्राद्ध, मंदिरों में पूजा पाठ आदि हर ब्राह्मणिक कर्मकांड का उन्होंने तर्क के साथ खण्डन किया. यज्ञ बलि, गंगा स्नान, तीर्थ यात्रा, पिण्ड दान आदि हर कर्म कांड को उन्होंने अधर्म बताया. उनके द्वारा ब्राह्मणवाद के विरुद्ध चलाया गया आंदोलन जंगल की आग की तरह पूरे भारत में फैल गया. पाकिस्तानी पंजाब सें चल कर गुरू नानक तक उनसें मिलने काशी तक गए और उनकी बाणी लेकर लौटे. आज उनके आंदोलन को 'भक्ति लहर' कह कर छोटा कर दिया जाता है. ब्राह्मणवाद के विरुद्ध उनका आंदोलन सरदार भगत सिंह जैसे रण बांकुरों द्वारा चलाए गए आजादी आंदोलन सें कम नहीं था.

मनु सें लेकर संकर तक हर ब्राह्मण नेता गला फाड़ कर चिल्लाता आ रहा है कि वेद धर्म का मूल हैं. वेद धर्म की जड़ हैं. वेद नहीं तो ब्राह्मणधर्म भी नहीं रह सकता. दयानन्द भी चिल्लाता रहा कि वेद काल में लौट चलो. आज हर ब्राह्मणिक टीवी चैनल वेदों का ज्ञान बघार रहा है. लेकिन वेदों की सच्चाई बाबा साहिब ने एक लाईन में बयान की है. उन्होंने कहा : वेदों में मूर्खता के सिवाय कुछ नहीं है. हमारे विचार में बाबा साहिब ने ऐसा कह कर वेदों का कुछ लिहाज किया है क्योंकि वास्तविकता यह है कि वेदों में सिवाय अश्लीलता के कुछ नहीं है. इसलिएं सतगुरु कबीर ने कहा : **अधर्म को धर्म बताएं वेद!** उनके धर्म भाई रैदास जी ने कहाः **चारों वेद किए खण्डोति जन रैदास करे डण्डोति!**

ब्राह्मणों के धर्म पर चोट सीधे सीधे उनके धन्धे पर चोट थी. अतः गुरू रैदास का जिन्दा रहना उनके धन्धे यानि धर्म के लिए खतरा था. अतः उन्होंने वही किया जो गुण्डों का गिरोह अपना धन्धा बचाने के लिए करता है. उन गुण्डानुमा ब्राह्मणों ने उनका कत्ल कर दिया.

प्रश्न उठता है कि गुरू कबीर ने तो ब्राह्मणों पर गुरू रैदास सें कहीं ज्यादा तेज हमले करते थे, उन्होंने तो ब्राह्मणों को 'कसाई' तक कह दिया था लेकिन उन पर ब्राह्मणों ने हमला नहीं किया. इसका एक ही कारण है कि इतिहास गवाह है कि ब्राह्मणों ने हमेशा कमजोर को लताड़ा है तथा बलवान के तलवे चाटे हैं. सतगुरू कबीर 'मुस्लिम' मां बाप की औलाद थे तथा उस समय भारत पर मुसलमानों की हकूमत थी. 'मुस्लिम' कबीर पर हमला करने का परिणाम ब्राह्मण अच्छी तरह जानते थे. अतः उन्होंने सिर्फ 'कमजोर' दलित पर ही हमला करने की बहादुरी दिखाई.

दूसरा कारण : उनको शहीद करने का दूसरा कारण यह था कि **उन्होंने दलितों को शिक्षा देना शुरू किया था. उन्होंने 34 अक्षरों की गुरुमुखी लिपि बनाई तथा उसी लिपि में अपनी बाणी की रचना की.** भारत के अधिकतर सन्तों ने भी अपनी बाणी की रचना करने के लिए इसी लिपि को अपनाया. देवनागरी त्याग कर उन्होंने इसी लिपि में दलितों को शिक्षा दी. सदियों बाद दलितों के घर में ज्ञान का प्रकाश हुआ. दलितों के घर में ज्ञान का प्रकाश ब्राह्मणों को असहनीय था. उन्हें पता था कि दलित अगर पढ़ लिख गए तो उन्हें गुलाम बनाए रखना संभव नहीं होगा.

गुरू रैदास द्वारा दलितों को शिक्षा देना ब्राह्मणधर्म पर दोहरा आघात था. एक तो उनके सारे धर्म ग्रन्थ, वेद सें लेकर सत्यार्थ प्रकाश तक, एक सुर में चिल्लाते हैं कि दलितों को शिक्षा नहीं दी जानी चाहिए. दूसरे उनके सारे धर्म ग्रन्थ संस्कृत में लिखे गए हैं. सारे ब्राह्मण नेता दावा करते हैं कि संस्कृत पवित्र भाषा है, देवताओं की भाषा है. गुरुमुखी में दलितों को शिक्षा देकर उन्होंने न केवल ब्राह्मण ग्रन्थों की धज्जियां उड़ा दी बल्कि उनकी 'पवित्र संस्कृत' भाषा की इज्जत को भी नष्ट कर दिया. संस्कृत ऐसी भाषा है जिसका पेटैंट हुए बिना भी यह आदि काल सें केवल ब्राह्मणों की भाषा है. आज तक उनका धन्धा इसी भाषा में हो रहा है. लिखने को तो तुलसी ने भी रामचरित देसी भाषा में लिखा था मगर वह ब्राह्मण था. अतः ब्राह्मणों ने अपने भाई को तो बख्शा दिया मगर एक दलित को ही शहीद कर दिया.

तीसरा कारण : उनकी हत्या करने का तीसरा तथा मुख्य कारण था कि उन्होंने सतगुरु कबीर के साथ मिल कर **लोगों सें ब्राह्मणधर्म छोड़ने और श्रमण धर्म अपनाने का आहवान किया.** जब दलित समाज के लोगों ने उनसें शिक्षा लेकर ब्राह्मणधर्म को त्यागा और श्रमण धर्म को अपनाया तो ब्राह्मणों को यह असहनीय लगा. मगर जैसे ही गुरू रैदास ने **क्षत्राणी मीरा को अपने धर्म में शामिल किया** तो ब्राह्मणों को अपना किला हिलता नजर आया. दलितों को तो ब्राह्मणधर्म वैसे ही पराया समझता था मगर क्षत्रिय तो उनकी आमदन का मुख्य साधन थे. अगर क्षत्रिय क्षत्राणियां ही दलित सन्तों की शरण में चले जाते तो ब्राह्मणों का तो शक्ति संतुलन ही बिगड़ जाता. अतः मात्र दो क्षत्राणियों के धर्म परिवर्तन करते ही उन्होंने गुरू रैदास की हत्या कर दी.

ब्राह्मण जानते थे कि क्षत्रियों सें बढ़ कर 'वफादार' उन्हें कोई नहीं मिल सकेगा. ब्राह्मण जाति के अवतार परशु ने अपने जमाने में क्षत्रियों का बच्चा बच्चा अपने फरसे सें काट डाला था. उसने तो क्षत्राणियों के गर्भ में पल रहे बच्चे तक काट डाले थे. समस्त नर क्षत्रियों के मारे जाने के बाद विधवा क्षत्राणियां नियोग करवाने के लिए ब्राह्मणों के आगे हाथ जोड़े खड़ी रहती थीं. महाभारत की कथा के अनुसार तब ब्राह्मणों सें गर्भवती होकर क्षत्राणियों ने क्षत्रिय कुल को आगे बढ़ाया. अपने पूर्वजों की ऐसी दुर्गति करने पर भी आज तक क्षत्रिय ब्राह्मणों के भक्त बने हुए हैं तो उन सें बढ़ कर और कौन वफादार हो सकता है.

दलित और क्षत्रिय चाहे अपना इतिहास भूल चुके हैं मगर ब्राह्मणों को पूरा इतिहास याद था. उन्हें पता था कि गुरू रैदास ने अगर क्षत्रियों को उनका इतिहास बता दिया तो उन्हें बचाने वाला कोई नहीं मिलेगा. उन्हें यह भी पता था कि गुरू रैदास अगर सम्राट अशोक की तरह बुद्ध धर्म फैलाने में कामयाब हो गए तो कोई उनके धर्म को कोड़ियों के भाव भी नहीं पूछेगा. अतः उन्होंने वही किया जो लगभग 1500 साल पहले उन्होंने सम्राट वृहदर्थ के साथ किया था. उन्होंने गुरू रैदास की भी हत्या कर दी.

चौथा कारण : गुरू रैदास ने सतगुरु कबीर के साथ मिल कर दलितों को शिक्षा दी तथा लोगों में श्रमण धर्म का प्रचार प्रसार भी किया लेकिन एक काम में वे सतगुरु कबीर सें भी दो कदम आगे निकल गए. उन्होंने दलित समाज को चेताया कि केवल दलित समाज के लोग ही असल मे भारत के शासक रहे हैं. सिन्धु सभ्यता अर्थात दलित सभ्यता सें लेकर मौर्य काल तक भारत पर केवल और केवल दलितों का शासन रहा है. सम्राट वृहदर्थ

की हत्या के बाद उनका राज छीन लिया गया और उन्हें गुलाम बना दिया गया. गुरू रैदास यह ऐतिहासिक सच्चाई जानते थे. अतः उन्होंने दलितों को उनके इतिहास सें परिचित करवाया.

- **उन्होंने कहा कि दलित भारत के असली शासक हैं. भारत पर सदैव दलित कही जाने वाली जातियों का राज रहा है.**

  उन्होंने कहाः

  नरपत एक सिंहासन सोया, सपने भया भिखारी!
  अछूत राज बिछड़े दुख पाया, सोई दसा भई हमारी!!

- **अब ब्राह्मणों ने दलितों को गुलाम बना रखा है. दलित अपने दीन अर्थात धर्म सें दूर हो गए हैं. ब्राह्मणधर्म उनका धर्म नहीं है. वे बोले :**

  पराधीन का दीन क्या, पराधीन बेदीन!
  रैदास दास पराधीन को सब ही समझें हीन!!

- **दलितों की मुक्ति का एक ही रास्ता है कि वे अपने गले सें गुलामी का फंदा उतारें तथा अपना छिना हुआ राज फिर सें प्राप्त करें तथा अपना बेगमपुरा बसायें. उन्होंने कहा :**

  पराधीनता पाप है जान लेवो रे मीत!
  रैदास दास पराधीन को कौन करे है परीत!!
  ऐसा चाहूं राज मैं मिलै सबन को अन्न!
  छोटे बड़े सम बसैं, रैदास रहै प्रसन्न!!

दलितों को शिक्षा देने और राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने का आहवान करना, ऐसी बातें थीं जो ब्राह्मणवाद का किला फिर सें ध्वस्त कर सकती थीं. अतः ब्राह्मणों ने उनकी बातों का अधिक प्रचार होने सें पहले ही उनकी हत्या कर दी. उनकी चिता में उनकी बाणी भी जला दी गई. आज उनके नाम पर मिल रही बाणी में अधिकतर उनके द्वारा रचित नहीं है. उदाहरणतः उन्होंने स्पष्ट रूप में राम पुत्र दसरथ को अपना राम नहीं माना फिर भी उनके नाम सें ऐसे पद पाए जाते हैं जो उस राम की तारीफ में घढ़े गए हैं. ऐसे पद उनकी हत्या के बाद उनकी बाणी में घुसेड़ दिए गए ताकि उनके आंदोलन को समाप्त किया जा सके.

ब्राह्मण अपनी इस घिनौनी चाल में सफल होते दिखाई दे रहे हैं. आज कोई भी दलित हमें उनकी राजनीतिक सूझबूझ पर चर्चा करता हुआ नहीं मिलता. यह अज्ञानता दलित समाज के लिए घातक हो सकती है. . अतः दलितों का यह पावन कर्तव्य है कि वे गुरू रैदास के संघर्ष तथा बलिदान को व्यर्थ न जाने दें.

अध्याय 2

रैदास कौन

2.1 रैदास : गुरू या भक्त

एक प्रश्न हमें बार बार कचोटता है कि दलित सन्तों के नाम के आगे "भक्त" की ही उपाधि क्यों लगाई जाती है. ऐसा क्यों है कि उन्हें भक्त रैदास, भक्त कबीर, भक्त नामदेव, भक्त चोखामेला आदि ही कहा जाता है. जबकि तुलसी को सन्त शिरोमणी, संकराचार्य को जगदगुरू आदि की उपाधियां प्रदान की जाती हैं चाहे गुणों और सदाचार में यह लोग गुरू रैदास या सतगुरू कबीर के आगे शून्य सें भी कमत्तर थे.

कुछ कथावाचक यह तर्क देते हैं कि भक्त तो भगवान सें भी बढ़ कर होता है. इसलिए इन सन्तों के नाम के आगे भक्त लगाने सें उनका सम्मान बढ़ता है. उन्हें भक्त कहने पर उन्हें भगवान सें भी बड़ा बताया जाता है. कुछ लोग यह भी तर्क देते हैं कि उन्होंने भगवान की भक्ति की थी. अतः उन्हें भक्त कहा जाता है.

यह सब खोखले और शरारत पूर्ण तर्क हैं. दलित सन्तों को भक्त कहने वाले उन्हें इसलिए भक्त नहीं कहते कि वे दलित सन्तों को भगवान सें बढ़कर मानते है बल्कि वे उन्हें इसलिए भक्त कहते हैं क्योंकि "भक्त" शब्द छोटेपन का द्योतक है. उन्हे भक्त कहने वाले यह सोच ही नहीं सकते अथवा सहन ही नहीं कर सकते कि एक 'दलित' को 'गुरू' भी कहा जाए क्योंकि दलित समाज सें पैदा होने के कारण हमारे सन्त चाहे कितने भी गुणी क्यों न हों, वे लोग उन्हें ढेढ ही समझते हैं. अगर दलित सन्तों को भक्त कहने वाले उन्हें भगवान सें बढ़कर समझते तो

आज मंदिरों में मात्र दलित सन्तों की मूर्तियां होती, उनके अनाचारी देवों और भगवानों की नहीं! सीधी सी बात है जो बड़ा हो उसी की मूर्ति लगनी चाहिए. अगर भक्त बड़ा होता है तो उसी की मूर्ति लगनी चाहिए. लेकिन ऐसा कहीं नहीं है. ब्राह्मणों के किसी भी मंदिर में किसी भी दलित सन्त की मूर्ति नहीं लगी है.

एक बात और भी है अगर भक्त का अर्थ भगवान सें बढ़कर है तो ब्राह्मणवादी अपने लोगों के आगे भक्त क्यों नहीं लगाते. क्यों वे संकराचार्य को भक्त संकराचार्य नहीं कहते. उसे तो जगद्गुरू कहा जाता है. क्यों भक्त दयानन्द, भक्त विवेकानन्द, भक्त राम, भक्त कृष्ण, भक्त द्रोण आदि नहीं कहा जाता. सीधी सी बात है "भक्त" छोटेपन का द्योतक है तथा जो लोग दलित सन्तों को भक्त कहते हैं वे धूर्तता पूर्वक उन्हें ऐसा कहते हैं अथवा उस मानसिक रोग की वजह सें कहते है जो उन्हें यह बताता है कि दलित "नीच" होते हैं. सो उन्हें गुरू नहीं कहा जाना चाहिए.

सिखों के दस गुरू हुए. उनमें गुरू नानक तो काशी भी आए तथा सतगुरु कबीर और सतगुरू रैदास सें मिले भी थे. काशी में इन तीनों गुरूओं ने मिलकर ब्राह्मणवादी ढकोसलों के विरुद्ध आवाज उठाई थी. गुरू गोबिन्द सिंह ने तो **सतगुरु कबीर के शब्द "सूरा सोई सहारिये जो लड़ै दीन के हेत, पुरजा पुरजा होय भोईं रहै कबहु न छोडे खेत"** को अपने जीवन में पूरी तरह उतार लिया था. इसी सिद्धांत के आधार पर उन्होंने 'खालसा पन्थ' की स्थापना की अर्थात ऐसे लोगों की फौज बनाई जो अधर्म और अन्याय के विरुद्ध तब तक जूझते रहे जब तक उनका रोम रोम शहीद नहीं हो गया. उनकी इसी खालसा फौज में अनेकों दलित वीरों ने गुरू कबीर के आदेश को सच कर दिखाया था.

सतगुरु कबीर के शब्द सें प्रेरणा लेकर भारत का नक्शा बदल देने वाले दशम पिता गुरू गोबिंद सिंह को आज कोई भी आदमी 'भक्त' कहने की हिम्मत या हिमाकत नहीं कर सकता. क्यों? क्योंकि किसी को भी भक्त बताना उसे छोटा बताना या उसकी बेइज्जती करने के समान माना जाता है. और क्योंकि ब्राह्मण धर्म दलितों को कुत्ते, बिल्ली आदि सें ज्यादा नहीं मानता अतः ब्राह्मणवादी लोग दलितों के गुरूओं को "गुरू" मान ही नहीं सकते और न ही उन्हें गुरू बुला सकते है. इसलिए वे उन्हें मात्र भक्त कह कर बुलाते हैं.

दशम गुरू गोबिंद सिंह ने अपने कार्यकाल में समस्त भारत के सन्तों की बाणी को संकलित किया और उनको 'गुरू ग्रन्थ साहिब' में शामिल किया. उन्होंने लगभग हर दलित सन्त : रैदास, कबीर, नामदेव, बुल्लेशाह, फरीद आदि की बाणी को गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज किया. उन्होंने यह भी आदेश दिया कि उनके बाद ग्रन्थ साहिब को ही गुरू माना जाएगा. उन्होंने आदेश दिया : **सब सिखों को हुक्म है, गुरू मान्यो ग्रन्थ. इस तरह उन्होंने उन सभी सन्तों गुरू बना दिया जिनकी बाणी गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज है.** अतः जब सिख धर्म के नेता इन सन्तों को भक्त कह कर सम्बोधित करते हैं तो वे न केवल गुरू गोबिंद सिंह के आदेश की उल्लंघना करते हैं बल्कि गुरू गन्थ साहिब की भी बेअदबी करते हैं क्योंकि वे सन्तों की बाणी को तो गुरू मान कर माथा टेकते हैं लेकिन उसी बाणी के रचनाकारों को छोटा बताते हुए उन्हें 'भक्त' कह कर सम्बोधित करते हैं.

यहां एक बात और भी ध्यान देने योग्य है कि सिख धर्म के संस्थापक गुरू नानक देव भी गुरू रैदास की बाणी को भी गाया करते थे. (राधा स्वामी डेरा कृत : गुरू रैदास 25) जो लोग रैदास जी की बाणी गाने वाले प्रथम पातशाह नानक देव को तो गुरू कह कर बुलाते हैं और वही लोग रैदास जी को जब 'भक्त' कह कर बुलाते हैं तो अपने दिमागी पक्षपात का सबूत देते हैं.

दलित सन्तों को 'बड़ेपन' में भक्त कहने का तर्क बिलकुल गांधियाना तर्क है. जैसे गांधी ने अछूतों को मूर्ख बनाने के लिए 'हरिजन' (भगवान की औलाद) नाम दिया, वैसे ही वे लोग हैं जो दलित सन्तों को "बड़ा" बताने के लिए उन्हें 'भक्त' कहते हैं. जैसे कोई भी ब्राह्मण या गांधवादी स्वयं को हरिजन कहलवाना सहन नहीं करता वैसे ही कोई भी व्यक्ति जो दलित सन्तों को भक्त कहता है अपने सन्तों, ऋषियों, देवों को भक्त कहलवाना सहन नहीं करता. सीधी सी बात है 'भक्त' वैसा ही शब्द है जैसा शब्द 'हरिजन' है. जैसे हरिजन का अर्थ शूद्र या अछूत यानि 'नीच' है वैसे ही भक्त का अर्थ भी 'टुच्चा सा साधु' है.

ब्राह्मणधर्म में भगवान कहे जाने वाला, जगदगुरू कहे जाने वाला या ऋषि महर्षि आदि कहे जाने वाला कोई भी प्राणी दलित सन्तों जैसा चरित्रवान और ज्ञानवान नहीं है. दलित समाज के सन्त उनके भगवानों, देवों आदि सें ज्ञान, कर्म, चरित्र आदि हर लिहाज में उनसें बढ़ कर हैं. अतः ऐसे महान सन्तों को जो भक्त कहता है वह निश्चित रूप सें उन्हें छोटा बताता है, नीच बताता है और उन्हें गाली देता है. दलित समाज द्वारा इसे सहन नहीं किया जाना चाहिए कि कोई भी उनके सन्तों को गाली दे.

चरित्र में, चिन्तन में, करमों में राम कृष्ण जैसा कोई भी ब्राह्मणिक प्राणी दलित सन्तों के बराबर नहीं है लेकिन कोई उनकी सच्चाई भी बता दे तो ब्राह्मणवादी हंगामा मचा देते हैं. दलितों को भी चाहिए कि अपने गुरुओं के प्रति अनादर को सहन नहीं करें. वे अपने गुरुओं को गुरू ही बोलें तथा दूसरों को भी उन्हें आदर के साथ गुरू कहने को लिए प्रेरित करें.

2.2 सन्त–सिपाही

श्रमण संस्कृति के प्रणेता गौतम बुद्ध के समकालीन महावीर स्वामी जैन थे. उन्होंने अहिंसा को परम धर्म कहा. वे अनजाने में भी किसी जीव को मारना पाप समझते थे. बुद्ध भी अहिंसा प्रिय थे लेकिन उन्होंने स्वयं की रक्षा के लिए तथा देश एवम समाज की रक्षा के लिए हिंसा के उत्तर में "हिंसा" करना पाप नहीं माना. उनके अनुसार अपनी तथा अन्य प्राणियों की जान बचाने के लिए हमलावर को चोट पहुंचाना पाप नहीं है.

उनसें दो कदम आगे जाकर उन्हीं के शिष्य महाराज रावण ने निरीह पशुओं को यज्ञों में कत्ल करने वाले ऋषियों को भी मारना पाप नहीं समझा. महाराजा रावण तथा उनके अनुयायी यज्ञों में उन्हीं ब्राह्मण ऋषियों की बलि चढ़ा देते थे जो वहां गाय, हिरण जैसे मासूम पशुओं की बलि देते थे. ऐसे हिंसामयी यज्ञों को **"छिद्र वाले यज्ञ"** कहा जाता था. भगवन वाल्मिकी ने भी अपनी रामायण में ऐसे यज्ञों को रक्षकों द्वारा नष्ट किये जाने की बात कही है. दशरथ ने राम को पैदा करने के लिए किए गए यज्ञों को महाराज रावण के रक्षकों सें बचाने के लिए विशेष प्रबंध किए थे.

समाज में क्योंकि मात्र ब्राह्मण ही पढ़े लिखे हो सकते थे. अतः दलितों की अनपढ़ता का उन्होंने पूरा फायदा उठाया. उन्होंने इतिहास को पूरी तरह तोड़ मरोड़ कर पेश किया. राक्षसों वाले सारे काम स्वयं ब्राह्मण ऋषियों और उनके देवों ने किये लेकिन ब्राह्मणिक लेखकों द्वारा महात्मा रावण और उनकी रक्ष सेना को बदनाम कर दिया गया. इसी श्रमण संस्कृति के प्रवाह में सन्त रैदास हुए. उन्होंने इस बात को समझा कि **बिना राजनीतिक शक्ति के शेष सभी शक्तियां बेकार है**. इसीलिए उन्होंने यह कहा :

ऐसा चाहूं राज मैं, मिलै सभी को अन्न,
छोटे बड़े सम बसैं, रैदास रहै प्रसन्न!!

गुरू रैदास ने अपने सपनों के राज्य को बेगमपुरा का नाम दिया. बेगमपुरा अर्थात ऐसा राज्य जहां ऊंच नीच, शोषण आदि का कोई गम नहीं होगा. सन्त रैदास की वाणी पढ़ कर ऐसा आभास होता है कि उन्होंने इस बात को जान लिया था कि भारत पर सदा सें शूद्रों (आज के जमाने में जिन्हें अनुसूचित जाति, जनजाति व पिछड़ा वर्ग कहा जाता है.) का राज रहा है और जैसे ही यह सत्ता उनसें छिनी उनका सब कुछ छिन गया. उन्होंने बड़े मार्मिक ढंग सें कहा है :

"नरपत एक सिंहासन सोया, सपने भया भिखारी!
अछूत राज बिछड़े दुख पाया, सोई दशा भई हमारी!!

अर्थात दलितों की हालत उस राजा जैसी हो रही है जो सिंहासन पर बैठे बैठे सो गया हो तथा सपने में भिखारी बन गया हो. जैसे राजा असलीयत में चाहे राजा ही है लेकिन सपने में भिखारी बन कर दुखी होता है वैसा ही दलितों के साथ हो रहा है. अपना अछूत राज बिछड़ जाने पर वे दुखी हो रहे हैं. जैसे नींद सें जागते ही राजा के दुख का अन्त हो जाएगा वैसे ही अपना अछूत राज्य प्राप्त करते ही दलितों का दुख दूर हो जाएगा.

इस संघर्ष में गुरू कबीर ने उनका पूरा साथ दिया. इन दलित सन्तों द्वारा किए गए संघर्ष का ब्यौरा आज उपलब्ध नहीं है लेकिन उनकी बाणी इस बात का सबूत है कि उनके नेतृत्व में दलितों ने एकजुट होकर संघर्ष किया था. उनके कुछेक पद इस बात के साक्षी हैं कि यह संघर्ष आमने सामने की टक्कर जैसा था. तभी उय समय उन्होंने दलितों को जागने और संघर्ष करने का आहवान किया. गुरू रैदास बोले :

पराधीन का दीन क्या, पराधीन बेदीन!
रैदास दास पराधीन को, सब ही समझें हीन!!

पराधीनता पाप है जान लेवो रे मीत!
रैदास दास पराधीन सें कौन करै है परीत!!

सन्त सिपाही कबीर साहेब ने दलितों को ललकारा. वे बोले :

गगन दमामा बाजया, पड़या निशानै घाव,
खेत बुहारै सूरमा, मुझ मरने का चाव!!
सूरा सोई सराहिये, जो लड़ै दीन के हेत!
पुरजा पुरजा कट भोंय गिरे, तबहु न छोडे खेत!!

अर्थात संघर्ष का नगाड़ा बज चुका है. निशाने पर चोट हो चुकी है. आज वही सूरमा कहलाएगा जो रणक्षेत्र में अपना कौशल दिखाएगा. वीर शूरवीर वही कहलाने के योग्य है जो अन्त समय तक संघर्ष करेगा. शरीर के टुकड़े टुकड़े हो जाने पर भी जो मैदान में डटा रहेगा वही वीर सराहनीय है!!

इस प्रकार का आहवान पहाड़ की कंदराओं में मोक्ष के लिए तपस्या करने वाला ऋषि नहीं कर सकता. ऐसा आहवान मात्र आजादी के परवाने, आजादी के सिपाही ही कर सकते हैं. इस तरह का आहवान करके दलित गुरुओं ने सन्त होने के साथ साथ सिपाही होने का प्रमाण भी दे दिया है. उन्होंने गुरू गोबिंद सिंह की तरह चाहे शस्त्र नहीं उठाए मगर छः सदियों पहले जब दलित का मुख्य सड़क पर आना भी पाप था उस समय उन दलित सन्त–सिपाहियों द्वारा दलित राज प्राप्ति का आहवान कम साहसिक कदम नहीं था.

इस आजादी के आहवान का नतीजा यह हुआ कि जब वे धर्म प्रचार के लिए राजस्थान के नगर चितौड़ आए हुए थे तो वहां के ब्राह्मणों ने लाठ़ियों सें उन पर हमला कर दिया और उन्हें महात्मा रावण की तरह शहीद कर दिया. जैसे ब्राह्मणवादी राम के गुर्गों ने लंका को जला कर नष्ट कर दिया था वैसे ही उन ब्राह्मणों ने सन्त सिपाही रैदास के साथ उनकी वाणी को भी आग की भेंट चढ़ा दिया. जैसे जलियांवाला बाग में अंग्रेजों ने निहत्थे भारतीयों को घेर कर कत्ल किया था वैसे ही उन ब्राह्मणों ने सौ साला वृद्ध गुरू रैदास को घेर कर शहीद कर दिया.

2.3 क्रांतिकारी रैदास

गुरू रैदास पर अनेकों पुस्तके लिखी गई हैं. लगभग सभी लेखकों ने उन्हें मात्र एक धार्मिक सन्त की तरह पेश किया है. शायद एकाध ने उन्हें समाज सुधारक भी कह दिया है. उन पर किताबें लिखने वाले कालेजों विश्वविद्यालयों के प्रोफैसर तक भी हैं मगर उन प्रोफैसरों ने भी अधिकतर ने भी पूर्वाग्रह अथवा बन्द दिमाग सें उन पर किताबें लिखी हैं. उन्होंने रैदास को मात्र "सन्त" अथवा "धार्मिक गुरू" माना है. उन्होंने गुरू रैदास के अन्दर झांक कर देखने की कोशिश की ही नहीं है. पता नहीं क्यों उन लेखकों ने उनके इन आहवानों को अनदेखा कर दिया :

ऐसा चाहूं राज मैं......
पराधीनता पाप है........
अछूत राज बिछड़े दुख पाया .... तथा
बेगमपुरा शहर को नाम .. . . .

धार्मिक क्रांतिकारी : निश्चित रूप में गुरू रैदास धार्मिक गुरू थे लेकिन वे "ढकोसले करने वाले गुरू" नहीं थे. उन्होंने कभी भी भगवा कपड़े पहनने, माला पहनने, तिलक लगाने, कमण्डल उठाने आदि के ढकोसले नहीं किए. उन्होंने तथा सतगुरू कबीर ने मिल कर धर्म के नाम पर किए जा रहे अनाचार के विरुद्ध आवाज उठाई. उन्होंने इस बात का भरपूर प्रचार किया कि ब्राह्मण जिस चीज को धर्म बता रहे हैं वह असल में अधर्म है. ब्राह्मणधर्म के मुख्य स्तम्भ थे :

* वेद सबसें बड़ी धर्म और ज्ञान की पुस्तकें हैं.
* कितने भी पाप करो गंगा तथा दूसरी नदियों में नहाने सें सभी पाप धुल जाते हैं.
* जाति प्रथा भगवान की बनाई हुई है. अतः भगवान ने ही ब्राह्मणों को ऊंचा और शेष सभी को नीचा बनाया है.
* यज्ञ करना, बलि देना धर्म है.
* ब्राह्मण को दान देना अनिवार्य है. श्राद्ध आदि कार्यों में ब्राह्मणों को भोजन खिलाने सें पुण्य मिलता है.

* गुरू धारण करना : ब्राह्मण धर्म में हरेक आदमी के लिए गुरू धारण करना जरूरी था. ब्राह्मण ने स्वयं को जन्मजात गुरू घोषित किया हुआ था
* हर आदमी में एक आत्मा होती है. उसे मोक्ष तभी मिलेगा जब ब्राह्मणों को वैतरणी पार करने के लिए गाय दान दी जाएगी आदि.

गुरू रैदास ने ब्राह्मणों के सभी ढकोसलों का विरोध किया. तर्क और कारण देकर उन्होंने यह सिद्ध किया कि ब्राह्मण जिस काम को धर्म बता रहे हैं वास्तव में वह अधर्म है. वह मात्र उनकी रोजी रोटी कमाने का साधन है. उनका धर्म लोगों को गुमराह करने बेवकूफ बनाने का जरिया है. उन्होंने मेहनत करके रोजी रोटी कमाने और सदाचारी जीवन जीने को ही धर्म माना. उन्होंने कहाः

रैदास निज हाथ में, राखो रांबी आर!
सुकिरती मेरा धर्म है, तारेगा पार!!

धर्म का असली रूप बताते हुए सन्त रैदास ने जो कुछ कहा उसे विस्तार सें अध्याय 7 में दिया जा रहा है. संक्षेप में गुरू रैदास ने नैतिकता, मेहनत, सुकरिती, सदाचार को ही धर्म माना. गंगा स्नान, श्राद्ध, यज्ञ, वेद, गीता आदि सभी को उन्होंने पूरी तरह सें नकार दिया. ऐसे ढकोसलों को उन्होंने **'अधर्म'** बताया. **उन्होंने श्रमण धर्म को ही अपना धर्म माना तथा उसके निर्वाण के मार्ग को ही जीवन का लक्ष्य माना.**

सामाजिक क्रांतिकारी : वास्तव में धर्म क्या है, यह बताने के साथ साथ उन्होंने यह भी मार्ग दर्शन किया कि हमारा समाज कैसा होना चाहिए और हमारा सामाजिक जीवन कैसा होना चाहिए. उनके समय में ब्राह्मणों ने समाज में निम्न मुख्य कुरीतियां फैला रखीं थी :

⇒ जाति प्रथा और छूआछूत : दलितों के साथ पशुओं सें भी बदतर बर्ताव किया जाता था.

⇒ स्त्री को नरक का द्वार बताया जाता था. तुलसी जैसे ब्राह्मण लेखक सरेआम उन्हें मात्र "ताड़न की अधिकारी" घोषित कर रहे थे. यह प्रथा आज भी "भजन" के रूप में ब्राह्मणिक मंदिरों में गाई जाती हैं कि स्त्री को भेद नहीं बताए जाने चाहिए.

⇒ शुभ अशुभ घड़ी तथा मुहुर्त आदि का विचार करना.

⇒ गुरू धारण करना. व्रत पूजा आदि करना.

गुरू रैदास ने उपरोक्त सभी बातों का खण्डन किया. उन्होंने जाति की बजाए गुणों के आधार पर ही किसी को छोटा या बड़ा माननें का आदेश दिया. वे बोले :

रैदास जन्म के कारणे, होता न कोई नीच!
नर को नीच कर डाले है, ओछे करमों की कीच!!

ब्राह्मणों के तथाकथित बड़ेपन को चुनौती देते हुए गुरू रैदास ने कहा :

रैदास बामण ना पूजिए जो होवै गुणहीन!
पूजिए चरण चण्डाल के जो होवै गुण प्रवीण!!

गुरू कबीर तो कुछ ज्यादा ही स्पष्ट कह गए. वे बोले :

जो तू बामण बामणी जाया तो आण बाट क्यों नहीं आया!

अर्थात तू अगर बामणी के पैदा होने के कारण ही ब्राह्मण होने का दावा करता है तो तुझे आम आदमी की तरह माँ के गर्भ सें पैदा नहीं होना चाहिए था बल्कि किसी अन्य रास्ते सें पैदा होना चाहिए था.

इन सन्तों की यह बातें उस ब्राह्मणवादी सामाजिक व्यवस्था के बिलकुल विपरीत थीं जो यह आदेश देती है कि 10 साल का ब्राह्मण सौ साल के क्षत्रिय सें भी "बड़ा" है. अतः सौ साल के बुजुर्ग क्षत्रिय को भी दस साल के ब्राह्मण बच्चे के आगे दण्डवत होना चाहिए. जब क्षत्रिय की यह हालत थी तो आम दलित तथा वैश्य की हालत का तो सहज अंदाजा लगाया जा सकता है. आज इक्कीसवीं सदी में भी, चाहे अनगिनत कानून उनके पक्ष में हैं परन्तु दलित जब इस व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठाते हैं तो उन्हें खून देकर कीमत चुकानी पड़ती है. ऐसी व्यवस्था के विरुद्ध छः सौ साल पहले आवाज उठाना, किसी "क्रांति" सें कम नहीं था.

भारत में भगवन बुद्ध पहले सन्त थे जिन्होंने स्त्री को धर्म में दीक्षा दी थी वर्ना उनसें पहले तो ब्राह्मणवाद में "स्त्री" (रम्भा, मेनका, उर्वशी, तिलोतमा) मात्र गद्दी बचाने के लिए स्पलाई करने की वस्तुएं होती थीं. ब्राह्मण गन्थ ऐसे

किस्सों सें भरे पड़े हैं जहां ब्राह्मणों के भगवानों के राजा इन्द्र ने अपनी गद्दी बचाने के लिए ऋषियों को स्त्रियां स्पलाई कीं. यहां तक कि राम ने यति, ब्रह्मचारी कहलाने वाले हनुमान तक को लड़कियां सप्लाई की.

इस व्यवस्था को पलटते हुए भगवन बुद्ध ने स्त्री को माँ का दर्जा दिया. अम्बपाली का किस्सा सभी जानते हैं कि उस बेहद सुन्दर लड़की को आर्य समाज द्वारा जबरन सर्व–भोग्या यानि "वेश्या" बनाया गया था. आर्य समाज के लोग सुन्दर स्त्री पाने के लिए कुत्तों की तरह लड़ते थे. अतः आर्य समाज के ठेकेदरों ने इस लड़ाई सें बचने के लिए अम्बपाली को "एक पति" को सौंपने की बजाए आर्य समाज के सारे नरों को सौंप दिया. जो जब चाहे उससें यौन सम्बंध बना सकता था. ऐसी शर्मनाक घटना दुनिया में और कहीं भी नहीं मिलती.

आर्य समाज द्वारा जबरन वेश्यावृति की आग में झोंकी गई अम्बपाली को भगवन बुद्ध ने बुद्ध धर्म में दीक्षा देकर भिक्षु संघ में शामिल किया. उन्होंने आर्यों द्वारा वेश्या बनाई गई अम्बपाली को "अम्बा माँ" बनाया. उन्होंने एक सर्व भोग्या "वेश्या" को सर्व पूजनीय "माँ" का दर्जा दिया. उन्हीं की परम्परा को निभाते हुए गुरू रैदास ने "अभागी विधवा" मीरा को "सौभाग्यवती साधवी" बनाया. **मीरा की धर्म दीक्षा भगवन बुद्ध सें लगभग 2000 साल बाद भारत में किसी स्त्री को दी गई दीक्षा थी. जिस समय तुलसी जैसा ब्राह्मण सरेआम पूरी स्त्री जाति को गालियां दे रहा था, उस समय एक स्त्री, वह भी क्षत्राणी विधवा, को धर्म दीक्षा देना किसी क्रांति सें कम नहीं था. जैसे अम्बपाली भिक्षुणी बन कर धर्म प्रचार में जुट गईं वैसे ही मीरा भी श्रमण धर्म के प्रचार में जुट गईं. गुरू शिष्या की यह ब्राह्मणधर्म को खुली चुनौती थी जिसकी कीमत दोनों को अपने प्राणों की बलि देकर चुकानी पड़ी.**

गुरू रैदास ने जिस जमाने में विधवा मीरा को दीक्षा दी, उस समय भारत भर में और खासकर राजस्थान में विधवा को पति की लाश के साथ जिन्दा जला दिया जाता था. इस सामाजिक कुरीति को ब्राह्मणधर्म का पूरा समर्थन हासिल था. उस जमाने में विधवा हो जाना सबसें बड़ा गुनाह था. चाहे इसमें बेचारी पत्नि का कोई दोष नहीं होता था. तब विधवा के लिए दो ही रास्ते होते थे. पहला पति की लाश के साथ जिन्दा जल मरना. दूसरा सिर मुंडवा कर सफेद वस्त्र पहन कर घर के अंधेरे कोने में पड़े रहना. एक तीसरा रास्ता भी था. किसी तीर्थ स्थान परे चले जाना तथा पण्डों की हवस का शिकार होना. ऐसे हालातों में विधवा स्त्री को श्रमण धर्म में शामिल कर धर्म प्रचार में लगाना एक नई क्रांति का सूत्रपात करने जैसा था.

अपने दीपक आप बनो : जैसे भगवन बुद्ध ने कोई गुरू नहीं बनाया वैसे ही रैदास जी ने भी किसी को अपना गुरू नहीं बनाया. उन्होंने बुद्ध के "**अतः दीपो भवः**" अर्थात अपना दीपक आप बनो, के सिद्धांत को अपनाया. जैसे आज ब्राह्मणवादी विचारधारा वाले अनेकों गुरू अपनी अपनी दुकानें खोल कर बैठे हैं जहां थोक में लोगों को नाम दान दिया जाता है. वैसा ही भगवन बुद्ध तथा गुरू रैदास के समय पर भी होता था. इस अवांछनीय परम्परा के विपरीत बुद्ध अथवा उनके श्रमण धर्म के सन्तों ने कभी किसी को अपना गुरू बनाना उचित नहीं समझा. उन्होंने न किसी को गुरू बनाया और न ही किसी के "गुरू" बने.

सभी श्रमण सन्तों ने लोगों को सदाचार की राह दिखाई. उन्होंने लोगों सें अपना "नाम" नहीं रटवाया. बुद्ध ने स्पष्ट कहा कि वे मार्गदाता हैं मुक्तिदाता नहीं हैं. उन्होंने बिना लाग लपेट के कहा कि वे नाव चलाना बता सकते हैं जिसने पार जाना हो उसे नाव स्वयं चलाना पड़ेगी. यह लोकोक्ति कि 'स्वर्ग जाने के लिए स्वयं मरना पड़ता है' बुद्ध धर्म के अनुरूप है. इसके विपरीत ब्राह्मणधर्म में बिना गुरू धारण किए मुक्ति सम्भव नहीं है. वहां ब्राह्मण तो जन्मजात गुरू है ही! राम के परिवार ने तो ब्राह्मण गुरू वशिष्ठ को घर पर ही पाल रखा था. इसी की तर्ज पर संकराचार्य ने चार मठ बनाए. आज भारत के हर गली मौहल्ले में "डेरे" खुले हुए हैं जो मात्र नाम लेते ही मोक्ष की गारन्टी देते हैं. गुरू रैदास ने ऐसे लोगों सें बच कर रहने का आहवान किया और सदाचार का रास्ता स्वयं तय करने की बात कही.

राजनीतिक क्रांतिकारी : गुरू रैदास की हत्या की गई. **अगर गुरू रैदास *मात्र धार्मिक सन्त* होते** तो ब्राह्मणों को उनकी हत्या करने की "आवश्यकता" नहीं पड़ती. इतिहास साक्षी है कि सतगुरु कबीर और सतगुरु रैदास ने हर काम कंधे सें कंधा मिला कर किया. सतगुरु कबीर ने तो ब्राह्मणों की भण्डी करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी. उन्होंने अपनी बाणी में ब्राह्मणों की मिट्टी पलीद कर दी थी. उन्होंने तो यहां तक कह दिया था : अगर तू बामण बामणी जाया तो आण बाट क्यों नहीं आया. अर्थात अगर तू बामणी के जन्म लेने मात्र सें अपने आप को ब्राह्मण (ब्रह्मा का अंग) कहलाता है तो तुझे जन्म भी माँ के गर्भ की बजाए किसी अन्य रास्ते सें लेना चाहिए था.

रैदास साहिब ने तो फिर भी इस लहजे सें ब्राह्मणों को नहीं दुत्कारा. अतः यह विचारने की बात है कि ऐसा क्या कारण था कि कम तीखा बोलने वाले पर भी उन पर जानलेवा हमला हुआ! इस हमले में वे शहीद हो गए. फिर जब उनकी चिता जली तो उनकी बाणी भी साथ में जला दी गई.

इसका एक कारण यही है कि गुरू रैदास ने दलितों सें आहवान किया था कि वे अपने खोया हुआ राज फिर सें प्राप्त करें. उन्हें पता था कि राजनीतिक शक्ति के बिना शेष सारी शक्तियां बेकार हो जाती हैं. उन्होंने दलितों को आदर्श राज्य यानि बेगमपुरा बसाने का आहवान भी किया. उन्होंने जिस बेगमपुरा नामक आदर्श राज्य की रूपरेखा दी है वह उनके विशुद्ध राजनीतिक ज्ञान की परिपक्वता को दर्शाती है. बेगमपुरा में राजा सें लेकर प्रजा तक के अधिकारों व कर्तव्यों का वर्णन उन्होंने किया है.

बेगमपुरा उनकी कल्पना मात्र नहीं थी बल्कि एक हकीकत थी. उन्होंने दलितों को समझाया कि वे कभी भारत के शासक होते थे. अब वे गुलाम बना लिये गए हैं. अतः वे अपनी पराधीनता सें छुटकारा पायें तथा अपना दलित राज्य यानि बेगमपुरा बसायें. उन्होंने दलितों को चेतायाः

राजा एक सिंहासन पर सोया, सपने में हुआ भिखारी!
अछूत राज बिछड़ने पर दुख पाया, ऐसी दशा हुई हमारी!!
पराधीनता पाप है, जान लेवो रे मीत!
रैदास दास पराधीन सें कौन करे प्रीत!!

दलितों को राजनीतिक ज्ञान देना और उनसें अपना खोया हुआ राज फिर सें प्राप्त करने को कहना, ब्राह्मणों की असली रग पर चोट थी. सम्राट वृहदर्थ की हत्या करने के बाद ब्राह्मण भारत की सत्ता पर काबिज हुए थे. गुरु रैदास सें 1500 साल पहले ब्राह्मणों के एक गिरोह ने हत्यारे पुष्यमित्र की अगुवाई में दलितों सें राजसत्ता छीनी थी. ब्राह्मण सदियों सें सत्ता सुख भोगते आ रहे थे. वे किसी भी कीमत पर सत्ता सें हटना नहीं चाहते थे. **जब गुरू रैदास ने दलितों सें अपना अछूत राज स्थापित करने का आहवान किया तो यह ब्राह्मणों के लिए खतरे की घंटी थी**. और एक दलित उन की सत्ता को चुनौती दे यह तो वे कदापि सहन नहीं कर सकते थे. अतः अपनी दण्ड की रणनीति के अनुरूप उन्होंने गुरू रैदास की हत्या कर दी.

ब्राह्मणों के लिए गुरू रैदास की हत्या कोई पहली हत्या नही थी. उन्होंने अपने दुश्मन को समाप्त करने के लिए चार प्रकार के नुस्खे बना रखे हैं. 1. साम 2. दाम 3. दण्ड 4. भेद. इन सभी नुस्खों को हमने अपनी पुस्तक "थू ब्राह्मणवाद" में विस्तार सें वर्णित किया है. यहां इनका अर्थ हम संक्षेप में दे रहे हैं.

1. **साम** : कहावत है कि अगर दुश्मन गुड़ दिये मर जाए तो जहर देने की जरूरत नहीं होती. साम ब्राह्मण धर्म की कुछ ऐसी ही नीति है. साम का अर्थ है बराबरी करना, तारीफ करना या उसके साथ मिल जाना. जहां उन्हें दुश्मन स्वयं सें अधिक बलशाली मिलता है तो इस नीति के अनुरूप वे साम का सहारा लेते हैं. वे उससें दोस्ती कर लेते हैं, यहां तक कि उसके तलवे भी चाट लेते हैं. राम ने इसी नीति का सहारा लेते हुए अपनी खोई पत्नि को प्राप्त करने के लिए वानर जाति के लोगों सें भी "समानता" कर ली. अंग्रेज तकड़े निकले तो उनके तलवे चाट लिये. अकबर कुछ अधिक ताकतवर निकला तो उसे अपनी बेटियां तक सौंप दीं.

आर एस एस ग्रुप वाली पार्टियां जब अपने मंच पर बाबा साहिब का चित्र लगाती हैं तो वे भी इसी नीति का सहारा लेती हैं. उनके मन में दलितों के प्रति चाहे वही जहर भरा होता है जो उनके धर्म ग्रन्थ सिखाते हैं मगर वोट पाने के लिए वे बाबा साहिब का चित्र अपने लीडरों के 'बराबर' लगा लेते हैं. इसी नीति के तहत सबसें घातक काम वे यह करते हैं कि वे अपने "दुश्मन" के अंदर घुस जाते हैं और फिर जैसे ही मौका मिलता है उसे नष्ट कर देते हैं. ब्राह्मण कुमारिल भट्ट, नागार्जुन आदि अनेकों ब्राह्मणवादियों ने बुद्ध धर्म को नष्ट करने के लिए इसी नीति का सहारा लिया था. साम नीति के तहत वे पहले तो बौद्ध "बन" गए. जैसे ही उन्हें मौका मिला उन्होंने बुद्ध धर्म में ब्राह्मणवाद का जहर फैलाना शूरू कर दिया. उन्होंने बुद्ध को बलात्कारी विष्णु का अवतार बताना शुरू कर दिया. अपने धर्म वाले कर्मकांड बुद्ध धर्म में भी घुसेड़ दिए. नतीजा यह रहा कि ब्राह्मणधर्म को सबसें अधिक जोरदार टक्कर देने वाला धर्म स्वयं ब्राह्मणवादी कर्मकांडों में उलझ गया. आज अनेकों बौद्ध मठों में भिक्षु वही कर्मकांड करते मिल जाएंगे जिनका भगवन बुद्ध ने विरोध किया था. इसी नीति के तहत ब्राह्मणिक लेखकों ने दलित सन्तों कबीर रैदास आदि को "ब्राह्मण" बताना शुरू कर दिया है.

2. **दाम** : उनकी दूसरी नीति है दाम. सीधे सपाट शब्दों में इसका अर्थ है रिश्वत खोरी. पैसा देकर या पैसा लेकर अपना काम सिद्ध करना. जब ब्राह्मण नरसिम्हाराव ने अपनी गद्दी बचाने के लिए विरोधी दल के नेताओं को दाम देकर वोट खरीदे तो उसंने इसी ब्राह्मणवादी नुस्खे को आजमाया था. शेष ब्राह्मणधर्म में तो ब्राह्मण को दाम देकर किसी भी देवता को खुश कराया जा सकता है, किसी भी ग्रह को शांत करवाया जा सकता है. दाम की खातिर तो गंगू ब्राह्मण ने गुरू गोबिंद सिंह के दो साहिबजादों को जिन्दा दीवार में चिनवा दिया था. दाम की खातिर ही ब्राह्मण ऋषि अजीगर्त स्वयं अपने हाथों सें अपने ही बेटे को यज्ञ में काटने को तैयार हो गया था. दाम

की नीति के तहत ही तो बहुतेरे दलित एम पी, एम एल ए को ब्राह्मणवादी दलों ने बिकाउ माल बना दिया है. दाम लेकर ही तो शरीर शिवाजी को ब्राह्मणों ने उसे छत्रपति क्षत्रिय घोषित कर दिया था. दाम ऐसी चीज है ब्राह्मणों के लिए!!

3. **दण्ड** : दण्ड का अर्थ है सजा देना, मारना पीटना. ब्राह्मणों ने यह नुस्खा सबसें अधिक दलितों पर अपनाया है. दलितों को अपने नीचे दबाए रखने के लिए ब्राह्मणों ने दण्ड की नीति का ही सहारा लिया है. महाराष्ट्र के पेशवाओं ने दलितों को दण्डित करने के लिए उन्हें आदेश दिया कि वे जब भी बाजार में आएं तो अपने गले में हांडी तथा कमर में झाडू लटका कर आएं ताकि थूकना हो तो हांडी में थूकें और झाडू सें पैरों के निशान मिटाते चलें. मालाबार के इलाके में दलित स्त्रियों को बाजार में आते समय कमर सें ऊपर का बदन नंगा ही रखना पड़ता था. बाहर वालों पर शायद ही किसी ब्राह्मण ने ऐसा दण्ड का नुस्खा अपनाने की हिम्मत की हो. बाहरी आक्रमणकारियों के या तो उन्होंने तलवे चाटे या फिर दाम लेकर देश सें गद्दारी की. मनुस्मृति व अन्य ब्राह्मणिक ग्रन्थ दलितों को दण्ड देने का कुविधान ही तो हैं.

4. **भेद** : भारत का इतिहास जब भी स्कूलों कॉलिजों में पढ़ाया जाता है तो बार बार यही बात दोहराई जाती है कि अंग्रेजों ने भारत पर शासन करने के लिए अपनी "फूट डालो और राज करो" की नीति का सहारा लिया. अगर ब्राह्मण धर्म के इतिहास पर नजर डालें तो ब्राह्मणों ने **भेद अर्थात "फूट डालो और राज करो"** की नीति को उस समय अपने धर्म का हिस्सा बना लिया था जब अंग्रेज पैदा भी नहीं हुए थे. अगर वेदों की रचना के बारे में दयानन्द की बात को सत्य मान लें तो ब्राह्मणों की भेद की नीति उसी दिन बन गई थी जिस दिन दुनिया बनी क्योंकि दयानन्द के अनुसार ब्रह्मा ने वेद और दुनिया एक ही दिन बनाये थे. और यह भी एक सच्चाई है कि ऋग्वेद में ही आदमी सें आदमी का भेद करने वाली वर्ण भेद का आदेश दिया गया है. उसी वेद में अपना धर्म नहीं मानने वालों को मार देने की प्रार्थना भी की गई है.

राम ने तो "फूट डालो और राज करो" की नीति अपनाते हुए सबसें पहले सुग्रीव को बाली सें तोड़ा.विभीषण को महात्मा रावण सें तोड़ा. कृष्ण ने इसी नीति के तहत कौरवों और पांडवों को एक नहीं होने दिया. ब्राह्मणों की इस "फूट डालो और राज करो" की नीति का सबसें बड़ा उदाहरण तो हमारे समाज में व्याप्त जाति प्रथा है. आज आबादी का 90 प्रतिशत होते हुए भी दलित 15 प्रतिशत का आरक्षण पाने को भी तरस रहे हैं. ब्राह्मण दो एक प्रतिशत होते हुए भी पूरे भारत पर कब्जा जमाए बैठे हैं क्योंकि दलितों की हजारों जातियां आपस में लड़ रही हैं और ब्राह्मण दलितों को कुचलने में 'एक' हैं.

ब्राह्मणों ने गुरू रैदास पर साम दाम दण्ड भेद चारों नीतियां अपनाई हैं. साम की नीति के तहत उन्होंने गुरू रैदास को पिछले जन्म में अपने जैसा ब्राह्मण बताया है. उनके राम (सदाचार) को अपना राम पुत्र दसरथ बताया है. दाम तो उनके धर्म का मुख्य आधार ही है. "चमार" को अपने जैसा ब्राह्मण बताने का कारण यही है कि जो लोग सन्तों – रैदास, कबीर, नानक आदि की बाणी सुन कर ब्राह्मणवाद सें दूर चले गए हैं, उनको फिर सें अपने घेरे में लिया जाए ताकि उनसें हो रही कमाई बन्द न हो. आज ऐसे लाखों लोग मिल जाएंगे जो स्वयं को कबीरपन्थी या रैदासिये कहलाते हैं मगर कर्मकांड वे सारे वही करते हैं जिनके विरुद्ध इन दोनों सन्तों ने अपना सारा जीवन लगा दिया. आज दलितों के घरों दुकानों पर गुरू रैदास, बाबा साहिब अम्बेडकर आदि के कलैण्डर लगे मिल जाएंगे जिन पर वे नित्य धूप बत्ती भी करते हैं मगर साथ की साथ वे राम की मूर्ति के आगे भी माथा रगड़ लेते हैं जिसके लिए गुरू रैदास ने कहा : **रैदास हमारे रामजी, दसरथ का सुत नांही**. . . . " अपने मृतकों की अस्थियां हरिद्वार, काशी या प्रयाग भी ले जाते हैं जिनके विरुद्ध सभी सन्तों विषेषकर सतगुरु कबीर ने हमेशा प्रचार किया.

दण्ड की नीति अपनाते हुए उन्होंने गुरू रैदास की हत्या की. उनकी हत्या सें पहले सें ही सहमें हुए दलितों का हौसला बिल्कुल ही पस्त हो गया. और नतीजा यह हुआ कि उनकी हत्या के पाँच सौ सालों बाद तक किसी दलित ने ब्राह्मणों के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत नहीं की. उनके बाद उन्नीसवीं सदी में सिर्फ महात्मा ज्योतिबा फूले ने ब्राह्मणों के अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत की.

भेद की नीति के तहत उन्होंने मात्र गुरू रैदास और कबीर को ही "ब्राह्मण" बताया है किसी अन्य सन्त को नहीं. इससें कई दलित ऐसे हैं जो गुरू रैदास को अन्य दलित सन्तों सें भिन्न और ऊंचा मानते हैं. इसी नीति के तहत उन्होने प्रचार करके दलितों को यह मनवा दिया है कि रैदास तो मात्र चमारों के गुरू हैं. कबीर जुलाहों के, नामदेव छीपियों के तथा बाल्मिकी मात्र भंगियों के गुरू है. यहां तक कि बाबा साहिब को भी मात्र चमारों का नेता बना दिया गया था. इस भेद नीति को समय रहते ही भेदा श्री कांशी राम ने. उन्होंने इतिहास में पहली बार ऐसा किया जो पहले कभी नहीं हुआ था. उन्होंने दलित समाज के सभी सन्तों और नायकों को पूरे दलित समाज की

अमानत बनाया. इतिहास में शायद पहली बार ऐसा हुआ कि भगवान वाल्मिकी और गुरू रैदास की जयंति मनाने के लिए सभी दलित जातियों के लोग इक्कठा हुए. उनके इस उपकार को दलित समाज कभी नहीं भुला पाएगा.

ब्राह्मणों की भेद की नीति का एक हास्यस्पद उदाहरण अभी देखने को मिला. 'द हिन्दू' की 4मार्च 2007 की खबर के मुताबिक दक्षिण भारत के मंदिर में एक विदेशी नागरिक ने प्रवेश कर लिया. वहां बैठे पुजारियों ने हो हल्ला मचा दिया कि मंदिर अपवित्र हो गया है. नतीजन उन ब्राह्मण पुरोहितों ने कई कविंटल प्रसाद गढों में फैंक दिया. उनकी यह कार्य यह दर्शाता है कि ब्राह्मणों और अन्य लोगों में भेद होता है. ब्राह्मण श्रेष्ठ होते हैं ऊंचे होते हैं, केवल वे ही पुरोहित होने के कारण उस प्रसाद को देख सकते हैं, बना सकते हैं. यही नीति वे दलितों के साथ अपनाते आए हैं. सदियों सें यही नीति होने के कारण अब दलित भी यह मानने लग गए हैं कि केवल ब्राह्मण पुरोहिताई करने के सक्षम है, योग्य है. इस तरह भेद नीति के हथकण्डों के कारण वे सर्वोच्चता के शिखर पर स्वयं को टिकाए हुए हैं.

अध्याय 3
ब्राह्मणवादी चालें

ब्राह्मणों ने अपनी साम दाम दण्ड भेद की नीति अनुरूप ब्राह्मणों ने दलित सन्तों विशेषतः गुरू रैदास और गुरू कबीर का असली स्वरूप समाप्त करने के लिए अनेक चालें चली हैं. आज के समय में गुरू रैदास शारीरिक रूप में हमारे साथ नहीं हैं. केवल उनसें जुड़ी घटनाएं और उनकी बाणी ही हमारे पास मौजूद हैं. अतः अपनी उपरोक्त नीति के अनुरूप ब्राह्मण उन्हें शहीद करने के बाद अब उनकी बाणी व शिक्षाओं को समाप्त करने की कोशिश में हैं. इस रणनीति के तहत उन्होंने कुछ किस्से कहानियां घढ़ ली हैं ताकि वे गुरू रैदास को हर तरह सें समाप्त कर दें.

3.1 पिछले जन्म में ब्राह्मण होने की कथा

सबसें पहला किस्सा तो उनके जन्म के साथ ही जोड़ा गया है कि पिछले जन्म मे गुरू रैदास ब्राह्मण थे. रामानन्द उनका गुरू था. अन्नतदास कृत रैदास प्रचई की कथा के अनुसार एक बार उन्होंने माँस खा लिया था. अतः रामानन्द ने उन्हें श्राप दे दिया कि वे चमार के घर पैदा हो जाएं. अतः वे चमार के घर पैदा हो गए. एक अन्य कथा भगतमाल के अनुसार भी वे पिछले जन्म में ब्राह्मण थे. एक बार उन्होंने चमार के घर सें भिक्षा लाकर रामानन्द को खिला दी जिससें रामानन्द का ध्यान नहीं लग पाया. अतः उसने गुस्से में गुरू रैदास को अगले जन्म में चमार के घर पैदा होने का श्राप दे दिया. अतः वे इस जन्म में चमार के घर पैदा हो गए.

आगे कथा है कि चमार के घर पैदा होने पर भी उन्हें अपने पिछले जन्म में ब्राह्मण होना याद रहा. अतः जन्म लेने के बाद उन्होंने अपनी "चमार" माँ का दूध नहीं पीया. अंततः रामानन्द आया और उसने बालक रैदास के माता पिता के पिछले पाप माफ कर दिए. तब शुद्ध किए जाने के बाद बालक रैदास ने अपनी जन्मदायी माँ का दूध पी लिया.

इस कथा की सत्यता पर टिप्पणी करने सें पहले हम यह कहना चाहेंगे कि जिस किसी ने भी यह किस्सा घढ़ा है वह महाधूर्त है, कमीना है, हरामी है. कुछ लोगों को इन शब्दों के प्रयोग पर आपत्ति हो सकती है लेकिन सच्चाई यही है. कोई भी सीधा सादा आदमी ऐसा किस्सा बना ही नहीं सकता. ऐसे किस्से महाधूर्तों और हरामियों के दिमाग में ही उपजते हैं.

सीधे साफ शब्दों में **गुरू रैदास को इससें बड़ी गाली दी ही नहीं जा सकती कि वे इतने कृत्घन थे कि उन्होंने अपनी उस माँ का दूध नहीं पीया जिसने नौ महीने उन्हें अपने गर्भ में पाला.** इस तथ्य को सभी जानते हैं कि गर्भ में बच्चा खाना नहीं खाता बल्कि माँ के खून पर ही जिन्दा रहता है. माँ के खून सें ही बच्चे का अंग अंग बनता है. कितनी अनहोनी बात है कि उन्होंने माँ के गर्भ में रह कर नौ महीने तक माँ का "खून तो पीया" मगर उसी माँ का दूध नहीं पीया. ऐसे अहसानफरामोश, ऐसे कृतघन नहीं थे सन्त रैदास!!

जहां तक इस कथा में कही गई बातों की सच्चाई की बात है तो इस कथा में **तीन बातें** कही गई हैं.

1. **पहली** यह कि गुरू रैदास पिछले जन्म में ब्राह्मण थे और अपने "पाप" के कारण चमार के घर पैदा हुए थे.

2. **दूसरी** यह कि रामानन्द नाम का ब्राह्मण गुरू रैदास का गुरू था और वह इतना महान था कि वह श्राप भी दे सकता था और पाप माफ भी कर सकता था और

3. **तीसरी** यह कि आदमी का पुनर्जन्म होता है.

इन बातों की सच्चाई पर ही इन कथाओं की सच्चाई निर्भर करती है. अतः इनका विवेचन आवश्यक है. सबसें पहले इस बात को लेते हैं कि वे पिछले जन्म में ब्राह्मण थे और मांस खाने का पाप करने के कारण चमार के घर पैदा हुए थे.

पहली बात : पहली कथा के अनुसार गुरू रैदास ने एक बार माँस खा लिया था. इस कारण उन्हें ब्राह्मण सें चमार बनना पड़ा. अगर एक बार ही मांस खाने सें "ब्राह्मण" अगले जन्म में चमार बन जाता है तो आज के समय में भारत में कोई ब्राह्मण बचना ही नहीं चाहिए था क्योंकि वेद काल सें लेकर अब तक ब्राह्मणों ने इतने अधिक जानवर मार कर खाए हैं कि उनमें सें कोई भी "चमार" बनने सें बच नहीं सकता था. मांस खाने सें ही अगर ब्राह्मण चमार बन जाते तो सतयुग में ही ब्राह्मणों का बीजनाश हो जाना चाहिए था क्योंकि तमाम पुराने ब्राह्मण गन्थ इस बात का सबूत हैं कि सतयुग में सभी मांस खाया करते थे. यहां तक कि गाय भी खाया करते थे. आज के जमाने में पैदा हुए वेद भक्त दयानन्द को भी यह मानना पड़ा कि सतयुग में लोग यज्ञ में बूढ़ी गाय मार कर खाते थे.

इसलिए अगर यह कथा सच होती तो अब तक तो सारे "ब्राह्मण" कभी के "चर्मकार" बन चुके होते. आज पूरे भारत के सभी मन्दिरों पर सिर्फ चमार ही पुरोहित होने चाहिए थे क्योंकि मांस खाकर 'ब्राह्मण' तो बचना नहीं चाहिए था. अतः मंदिरों पर सिर्फ पिछले जन्म के ब्राह्मणों यानि इस जन्म के चमारों का ही राज होना चाहिए था. इस कथा के अनुसार वे ही असल में पुराने ब्राह्मण हैं. वास्तव में ऐसा कुछ भी नहीं है अतः यह कथा झूठ के सिवाय कुछ भी नहीं है.

एक बात और भी है कि अगर मांस खाने सें ब्राह्मण अगले जन्म में चमार बन जाता हैं तो क्या कोई बता सकता है कि जवाहर लाल नेहरू, इन्दिरा गांधी, राजीव गांधी किस चमार के यहां पैदा हुए हैं. इन्द्र अग्नि आदि देव क्षत्रिय माने जाते हैं. इन्द्र तो एक बार में बीस (गाय) बैल खा जाता था. अग्नि तो सर्वभक्षी था. राम लक्ष्मण ने तो पशु मार कर जंगल ही खाली कर दिए थे, भीम तो टोकरे भर भर कर मांस खाता था. कोई बता सकता है कि वे सब मर कर किस जूणी में पैदा हुए हैं. ब्राह्मणिक जाति व्यवस्था के अनुसार यह सब क्षत्रिय थे यानि ब्राह्मण सें नीची जात वाले. अतः जब "ब्राह्मण" मांस खाने पर "चमार" बन जाता है तो यह तो जाति व्यवस्था में चमार सें भी नीची सीढ़ी यानि चण्डाल या शवपाक के घर पैदा हुए होंगे.

एक बात और भी है अगर ब्राह्मण मांस खाने सें चर्मकार बनता है तो बनिया तो मांस खाकर पशु ही बनता होगा. सो गांधी किस पशु के रूप में पैदा हुआ कोई ब्राह्मण बता सकता है क्योंकि वह स्वयं अपनी आत्मकथा में लिखता है कि जब वह इंगलैंड पढ़ने के लिए गया तो वहां उसने दारू पी, मांस खाया और रण्डीबाजी की! वैसे गांधी को तो बहुत ज्यादा अन्तर नहीं पड़ा होगा क्योंकि इस जन्म में भी वह दलितों के लिए अपने कामों में "शैतान" सें कम नहीं था. अगर वह नहीं होता तो आज दलित भारत के शासक होते!!

एक बात और भी ध्यान देने योग्य है कि इस कथा के अनुसार गुरू रैदास को **एक बार** ही मांस खाने के कारण ब्राह्मण सें चमार बनना पड़ा. तब तो जो ब्राह्मण नित्य ही मांस खाते थे उनका क्या बना होगा? अश्वमेध यज्ञ तो कई महीनों तक चलते थे. वहां ब्राह्मण ऋषि यज्ञ में काटे गए पशु का मांस प्राप्त करने के लिए कुत्तों की तरह लड़ते थे तथा पूरे यज्ञ के दौरान सैंकड़ों पशु काट कर खा जाते थे. इस तरह कुत्तों की तरह नित्य मांस खाने वाले ब्राह्मण ऋषि किस जूणी में पैदा हुए कोई नहीं बताता. गुरू रैदास के साथ ही यह पक्षपात क्यों?

दलित इस कथा को सत्य मान सकते हैं अगर ब्राह्मण ग्रन्थों में यह कथाएं भी हों कि इन्द्र, अग्नि, राम, विश्वामित्र वशिष्ठ आदि मांस खाने के बाद फलां फलां चण्डाल के घर पैदा हुए. अगर इनकी कथाएं नहीं बनी है तो गुरू रैदास पर कथा बनाना धूर्त और कमीने लोगों का काम है.

दूसरी कथा है कि गुरू रैदास ने चमार के घर सें भिक्षा लाकर रामानन्द को खिला दी थी जिससें उसका ध्यान नहीं लगा. सो उसने श्राप देकर उन्हें चमार के घर पैदा कर दिया.

जिस किसी ने यह कथा बनाई उसने पूरे चर्मकार समाज (चमार, मोची, जटिया, रैगर आदि) को "पापी" घोषित किया है. वास्तव में ऐसी कथा बनाने का उद्देश्य मात्र दलित समाज को नीचा दिखाना होता है. ऐसी कथा रचने वाले यह दर्शाते हैं कि दलित समाज के लोग पाप की पैदावार हैं. यह किस्सा पूरे दलित समाज और विशेषतः चर्मकार समाज को एक गाली है कि चर्मकार इतने घटिया होते हैं कि उनका अन्न खाकर कोई भगवान की भक्ति भी नहीं कर सकता. अगर कोई अनजाने में भी उनका अन्न खा ले तो वह भी ध्यान लगाने लायक नहीं रहता. और

अगर कोई ब्राह्मण दलित सें भिक्षा भी ले ले तो वह भी अपने रुतबे सें गिरकर चार वर्णों सें बाहर सीधा अछूत ही बन जाता है.

इस कथा में सबसें बड़ा झूठ तो यही है कि रामानन्द इतना महान था कि वह किसी को श्राप भी दे सकता था. जिस आदमी का मन किसी जाति विशेष का अन्न खाने सें ही डोल जाता हो वह निश्चित रूप सें सन्त तो नहीं हो सकता. अगर दलित के अन्न में ही दोष होता तो गुरू रैदास इतने बड़े सन्त कैसे बन पाये. रामानन्द तो चमार का अन्न खाकर एक बार में ही अपनी भक्ति खो बैठा. रैदास जी ने सारी उम्र चमार का भोजन किया उनकी भक्ति क्यों नहीं गई. सो खोट अन्न में नहीं था खोट रामानन्द में था.

इस कथा को सत्य मानें तो बाबू जगजीवन राम के यहां खाना खा चुके नेहरू, पटेल, गांधी आदि का पता नहीं क्या बना होगा.

असल सन्त तो भगवन बुद्ध थे जिनके सम्पर्क में आकर आम्रपाली ने वेश्यावृति छोड़ दी, अंगुलिमाल ने डाकुगिरी छोड़ दी. अगर "चमार" का खाना खाते ही किसी की सन्तगिरी चली जाए तो ऐसे आदमी को तो सन्त कहा ही नहीं जा सकता. अतः जो सन्त नहीं है वह श्राप तो क्या किसी को आर्शीवाद देने के योग्य भी नहीं होता. और **जिसकी सन्तगिरी चमार की रोटी खाने सें चली जाए उसमें चमारों के पाप माफ करने की शक्ति तो हो ही नहीं सकती.**

एक बात यह भी सोचने की है कि जब उसने "ब्राह्मण रैदास" को "चमार रैदास" बना ही दिया था तो वह उनके जन्म लेने के बाद उनके घर क्या लेने गया? वह रैदास जी का मामा तो लगता नहीं था कि बहन के बेटा होने पर भात/छूछक लेकर वहां जाना पड़ा. जब उसने स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी "ब्राह्मण रैदास" का तो "पाप" माफ नहीं किया तो चमार रैदास के पिता जी सें उसकी क्या रिश्तेदारी थी कि वह उनके भी पाप माफ करने चला आया.

जहां तक गुरू रैदास के चमार होने की बात है तो इसके लिए उनकी अपनी बाणी सें बढ़ कर और सबूत नहीं है. गुरू रैदास ने स्वयं को तो चमार कहा ही है बल्कि अपनी सातों पीढ़ियों को चमार बताया है. अगर वे पिछले जन्म में ब्राह्मण होते तो वे अपने पूर्वजों को भी चमार क्यों बताते. अगर ऐसा होता तो वे अपनी बाणी में जरूर यह लिखते कि वे इस जन्म में तो चमार हैं मगर पिछले जन्म में ब्राह्मण थे. लेकिन वे गर्व सें कहते हैं कि उनकी और उनके पूर्वजों की विख्यात जाति चमार है.

सतगुरु रैदास अपनी बाणी में अपने बारे में इस प्रकार सें कहते हैः

- नागर जना मेरी जाति विख्यात चमारा !
- मेरी जाति कुट बांढला, ढोर ढोवंता नितहि बनारस आसा पासा!
- कह रैदास खालस चमारा, जो हमसहरी सो मीत हमारा !
- जाति ओछी, पाति ओछी, ओछा काम हमारा
राजा राम की सेवा न कीन्ही, कह रैदास चमारा!
- चमरटा गांठ न जाने लोग गठावैं पनहिं!
- जाके कुटुंब के ढेढ सब ढोर ढुवंते
- मेरे रमइये रंग मजीठ का, कह रैदास चमार!
- तुम सरण राजा राम चन्द कह रैदास चमार!

इन श्लोकों में गुरू रैदास बिना लाग लपेट के अपने को खालिस चमार बता रहे हैं जिनके खानदान के सभी लोग बनारस के आसपास सें मरे हुए पशु ढोते थे. वे अपने आप को चमरटा और ढेढ कहने सें भी संकोच नहीं करते! अतः यह ब्राह्मणवादियों का दुश्प्रचार ही है कि वे ब्राह्मण थे. वे यह भी दुश्प्रचार करते हैं कि सतगुरु कबीर भी रामानन्द की कृपा सें विधवा ब्राह्मणी के पैदा हुए थे. अतः वे भी ब्राह्मण ही हैं. अगर ऐसी कथा घढ़ने वाले ब्राह्मण इन सन्तों को सचमुच ब्राह्मण मानते हैं तब तो उन्हें गुरू रैदास और गुरू कबीर की मूर्तियां हर मन्दिर में लगानी चाहिए क्योंकि उनसे बढ़कर तो कोई ब्राह्मण सन्त हुआ ही नहीं है. मूर्ति लगाने के समय तो यह सन्त दलित करार दे दिये जाते हैं लेकिन उनके नाम पर कमाई करनी हो, उनके मंदिरों पर कब्जा करना हो तो उन्हें ब्राह्मण घोषित कर दिया जाता है.

दूसरी बात : कौन रामानन्द

दूसरा बात यह कि गुरू रैदास कभी भी किसी रामानन्द नामक ब्राह्मण के शिष्य नहीं रहे. यह मनघढ़ंत किस्सा है कि सतगुरू रैदास या सतगुरु कबीर ने रामानन्द की शिष्यता ग्रहण की है. अगर आज विश्व हिन्दू परिषद या आर एस एस वाले बाबा साहिब का चित्र अपने दफतरों में लगा लेते हैं तो इसका अर्थ यह नहीं है कि बाबा साहिब उनके साथ काम करते थे. वैसे ही किस्सा बनाने मात्र सें कोई किसी का गुरू नहीं बन जाता. रामानन्द में इतना गुण, इतनी अक्ल, इतना चरित्र अवश्य होना चाहिए था कि वह सतगुरु कबीर रैदास जैसे महापुरुषों का गुरू बन सकता. जिस आदमी ने कभी नदी न देखी हो वह किसी को तैरना क्या सिखायेगा! जो चमार की रोटी खाने सें ही अपना ज्ञान ध्यान गंवा बैठे वह विद्वान चमार को क्या ज्ञान ध्यान दे पायेगा!!

रामानन्द ने स्वयं अपनी एक साखी में यह माना है कि सतगुरु कबीर ने उसे सही राह दिखाई और वह उनके बताए रास्ते पर चल रहा है. **उसने अपनी साखी में सतगुरु कबीर को अपना गुरू अपना माग्दर्शक माना है.** और तो और सतगुरु कबीर सें दीक्षा लेकर रामानन्द गुरू रैदास के चरणों में भी लेट गया था. स्वयं गुरू रैदास ने अपनी बाणी में इस बात का खुलासा किया है. उन्होंने कहा है :

अब विप्र प्रधान तिहि करै दंडवति, तोरे नाम सरणाइ रैदासा!!

अर्थात अब ब्राह्मणों का प्रधान (रामानन्द) रैदास जी की शरण में आया है तथा उनके पैरों लोट रहा है इस विषय पर विस्तार सें चर्चा हमने अध्याय 5 (गुरू कौन रामानन्द या रैदास) में की है.

तीसरी बात : पुनर्जन्म का सिद्धांत

इन किस्सों कहानियों में जो सबसें घातक बात कही गई है वह यह है कि आदमी का पुनर्जन्म होता है तथा जैसे काम उसने पिछले जन्म में किए हैं उसी आधार पर उसका यह जन्म होता है. जो इस जन्म में गरीब, दलित, बीमार है उसने पिछले जन्म में "बुरे कर्म" किए हैं. जो अमीर हैं तथा ऊंची जाति के हैं उन्होंने पिछले जन्म में "मोती दान किए" हैं.65

ब्राह्मणधर्म का यह सिद्धांत गीता के अध्याय 2 श्लोक 22 में दिया गया है जहां कृष्ण ने अर्जुन सें कहा, "हे अर्जुन, तू जूए में हारी सम्पत्ति वापिस पाने के लिए अपने भाई, बन्धु, गुरू, चाचा, ताया, दादा, नाना, मामा आदि सबको मार दे क्योंकि कि आत्मा एक शरीर सें दूसरे शरीर में वैसे ही चली जाती है जैसे मनुष्य फटे पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र पहन लेता है. इसलिए तेरे द्वारा मारे जाने पर भी वे मरेंगे नहीं क्योंकि उनकी आत्माएं दूसरा शरीर प्राप्त कर लेंगी.

मनु स्मृति व अन्य स्मृतियों में अनेकों श्लोक हैं जो यह कहते हैं कि जिन्होंने शूद्र (वे जातियां जो जनेऊ धारण नहीं करती) वर्ण में जन्म लिया है उन्होंने पिछले जन्म में बुरे कर्म किये हैं अर्थात शास्त्रों के अनुसार कर्म नहीं किए हैं, ब्राह्मणों को गोदान नहीं किया है आदि. **इन सभी नियमों की सबसें मुख्य बात यह है कि यह नियम ब्राह्मण पर लागू नहीं होते. ब्राह्मण चाहे कुछ भी करे उसे पाप नहीं लगता. जैसे आग सब कुछ भक्ष करके भी पवित्र रहती है वैसे ही ब्राह्मण कुछ भी खाकर तथा कुछ भी करके पवित्र रहता है.** वह कुछ भी करे उसे अगले जन्म में या तो स्वर्ग मिलेगा या फिर सें ब्राह्मण का जन्म मिलेगा. यह छूट मात्र पुरोहिताई करने वाले ब्राह्मणों को ही नहीं मिलती बल्कि हर उस प्राणी को मिलती है जिसने ब्राह्मण वर्ण में जन्म लिया हो.

ब्राह्मणधर्म के पुनर्जन्म का सिद्धांत तभी खरा माना जा सकता है अगर वह तीन कसौटियों पर खरा उतरे. वे तीन कसौटियां हैं :

1. सबसें अहम या मुख्य बात यह है कि क्या सचमुच में पुनर्जन्म होता है? अगर पुनर्जन्म होता है तो वह किस चीज का होता है? यानि आदमी का होता है या आत्मा का होता अथवा किसी अन्य वस्तु का होता है.

2. दूसरा मुद्दा है कि क्या कोई बता सकता है कि किस आदमी का कहां पुनर्जन्म हुआ है?

3. और तीसरा मुद्दा है कि क्या कोई बता सकता है कि कौन कौन से काम करने पर आदमी अगले जन्म किस रूप में होता है?

1. **पुनर्जन्म** : सदियों सें ब्राह्मणवादी लोग आत्मा और उसके पुनर्जन्म का प्रचार करते आ रहे हैं. उनके द्वारा हर रेड़ियो, हर अखबार, हर स्टेज पर इस सिद्धांत का इतना अधिक प्रचार किया गया है कि यह बात लोगों के दिलो दिमाग में इस कदर रच बस गई है कि कोई जल्दी सें सोचने को भी तैयार नहीं होता है कि क्या वास्तव में पुनर्जन्म होता है या ब्राह्मणधर्मी लोग उन्हें गुमराह कर रहे हैं.

भगवन बुद्ध के समय भी लोग आत्मा और पुनर्जन्म के मसले पर उनसें मार्ग दर्शन के लिए आते थे. तब आत्मा के अस्तित्व सें इंकार करते हुए उन्होंने कहा कि इस धरती पर चार महाभूत अर्थात महातत्व हैं – पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु. हमारा शरीर इन्हीं चार तत्वों सें बना है : पृथ्वी यानि हमारे शरीर का मांस हड्डियां आदि, जल यानि खून मूत्र आदि, अग्नि यानि शरीर की गर्मी और वायु यानि हमारी सांसें. कोई एक तत्व भी अगर हम में सें कम हो जाए तो जीवन का अन्त हो जाता है. **भगवन बुद्ध ने स्पष्ट रूप में कहा कि इन चार तत्वों के अतिरिक्त हमारे शरीर में कोई आत्मा नाम की कोई चीज नहीं होती है. महावीर स्वामी ने भी शरीर में आत्मा या परम आत्मा होने को खण्डन किया.**

भगवन बुद्ध ने कहा कि जब आदमी की मृत्यु होती है तो यह चारो तत्व अपने अपने महातत्वों में मिल जाते हैं और प्राणी का अन्त या समापन्न हो जाता है. श्रमण संस्कृति के एक और महाकर्णधार सतगुरु कबीर ने भगवन बुद्ध की इसी बात को अपने अन्दाज में इस प्रकार सें कहा हैः

जल में कुम्भ है, कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी!
फूटा कुम्भ जल में जल समाया, यह सत कहैं ज्ञानी!!

इस साखी में सतगुरु कबीर ने आम जीवन की उदाहरण ली है. जैसे नदी सें पानी भरते समय जब मटका पानी में डूबोते हैं तो ऐसी स्थिति हो जाती है कि मटका पानी सें भर जाता है तथा साथ ही मटका पानी के अन्दर ही होता है. यानि "पानी मटके के अंदर और मटका पानी के अंदर" वाली स्थिति हो जाती है. यही स्थिति संसार में प्राणी और चार महातत्वों की है. प्राणी के अन्दर चारों तत्व है और वह चारों तत्वों सें घिरा हुआ है. जैसे घड़ा फूटते ही उसके अन्दर का पानी नदी के पानी में समा जाता है वैसे ही प्राणी के मरते ही उसके तत्व भी इन महातत्वों में समा जाते हैं. वे आगे बोले :

माटी में माटी मिली, मिली पौन सें पौन!
मैं तोहे बूझों पंडता, दोनों में मरा कौन!!

अर्थात आदमी के मरने पर उसका शरीर मिट्टी में मिल जाता है तथा सांसें हवा में मिल जाती हैं. वे ब्राह्मणों को चुनौती देते हुए पूछते हैं कि बताओ दोनों में सें कौन मरा. अर्थात कोई 'समाप्त' नहीं हुआ. मात्र आदमी के तत्व अपने महातत्वों में समा गए जिसे हम मत्यु कहते हैं.

यह साखी आत्मा के अस्तित्व को नकारती है क्योंकि आत्मा के बारे में ब्राह्मणधर्म की सर्वोच्च पुस्तक गीता का कहना है कि आत्मा पर किसी चीज का असर नहीं होता. वह वैसे की वैसे रहती है. अतः वह न किसी में समाती है और न ही कोई उसमें समाता है. प्राणी के शरीर के चार तत्व अपने महातत्वों में वैसे ही समा जाते हैं जैसे कबीर साहब ने कहा कि जल में जल समाता है गुरू रैदास ने भी अपनी पूरी बाणी में कहीं भी आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया है.

सतगुरु कबीर तथा सतगुरु रैदास ने मानव शरीर में ऐसी आत्मा के होने को नहीं माना जो कपड़ों की तरह शरीर बदल लेती है. वे मानते हैं कि अच्छे बुरे, गलत सही का ज्ञान करवाने वाली हमारा जमीर यानि अन्तरात्मा होती है. अन्तरात्मा और आत्मा बिल्कुल अलग अलग चीजें हैं. ब्राह्मणधर्म में तो मात्र आत्मा होती है जो एक शरीर को छोड़ कर दूसरे में चली जाती है. सन्तों की केवल अन्तरात्मा होती है जो उन्हें बिना भेदभाव के सरबत (पूरे संसार) का भला करने को प्रेरित करती है. ब्राह्मणवादियों के अन्तरात्मा नहीं होती. अगर उनके अंदर अन्तरात्मा होती तो धर्मपुत्र कहे जाने वाला युधिश्ठर अपने छोटे भाई की बीवी को जूए के दांव पर नहीं लगाता, राम पूरे दिनों की गर्भवती सीता को मरने के लिए जंगल में नहीं फिंकवाता, विष्णु अपने दुश्मन को हराने के लिए उनकी पत्नि वृंदा सें बलात्कार न करता, शिव यज्ञ में हिस्सा न दिए जाने पर अपने ससुर को न मरवाता. इन अन्तरात्मा–विहीन ऋशियों, भगवानों, नायकों ने ऐसे असंख्य कुकर्म किए हैं!!

एक आश्चर्य जनक बात भगवन बुद्ध ने कही है. वे कहते हैं कि "पुनर्जन्म" होता है. उनके अनुसार यह पुनर्जन्म किसी आत्मा का नहीं होता बल्कि संस्कारों का होता है. अक्सर हम पाते हैं कि बच्चा अपने पिता या दादा जैसा होता है. जैसे संस्कार (गुण या अवगुण) उसके बाप दादा में होते हैं वैसे बहुतेरे या कुछेक संस्कार बच्चे में भी होते हैं. बुद्ध कहते हैं यह उस आदमी के संस्कारों का पुनर्जन्म है. भिक्षु नागसेन ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा कि जैसे एक दीपक सें दूसरा दीपक जलाते हैं तो पहले दीपक के प्रकाश का दूसरे दीपक में पुनर्जन्म हो जाता है.

बुद्ध या रैदास जैसे सन्तों के पुनर्जन्म के सिद्धांत में आत्मा की आवश्यकता नहीं होती. न मोक्ष की और न ही कर्मकांडों की जरूरत होती है. अतः यह कहना सरासर झूठ है कि गुरू रैदास पिछले जन्म में रामानन्द के चेले थे और रामानन्द के श्राप देने पर वे चमार के घर पैदा हो गए.

ब्राह्मणिक पुनर्जन्म के सिद्धांत के अनुसार मरने पर आदमी के शरीर सें आत्मा निकल जाती है एक नए शरीर में चली जाती है. अतः इस सिद्धांत के अनुसार आत्मा का ही पुनर्जन्म होता है शरीर का नहीं. वैसे भी यह सच्चाई है कि हम मृतक शरीर को जला देते हैं. अतः शरीर तो पुनर्जन्म ले ही नहीं सकता. आत्मा और पुनर्जन्म के सिद्धांत पर गीता सबसें ऊंची पुस्तक बताई जाती है. उसके अनुसार आत्मा के मुख्य गुण इस प्रकार सें हैं:

1. आत्मा पूरे शरीर में व्याप्त है.
2. आत्मा न मरती है न जन्म लेती है.
3. आत्मा को आग, पानी, हथियार आदि नष्ट नहीं कर सकते.
4. जैसे आदमी पुराने कपड़े उतार कर नए धारण कर लेता है वैसे ही आत्मा बूढा शरीर त्याग कर नया शरीर धारण कर लेती है.
5. मृत्यु होने पर आत्मा शरीर सें निकल जाती है. अतः शरीर नष्ट हो जाता है आत्मा नहीं.

इस सिद्धांत पर एक सीधा सा प्रश्न तो यही है कि मरने पर शरीर तो यहीं जला दिया जाता है और आत्मा पर किसी चीज का असर नहीं होता है तो पाप या पुण्य का फल कौन भोगता है. एक पल के लिए अगर हम गुरू रैदास की पुनर्जन्म की कहानी को सत्य मान लें तो मांस खाने का पाप तो उनके पिछले ब्राह्मण शरीर ने किया था जो उनकी मृत्यु होने पर नष्ट हो गया. आत्मा पर तो किसी चीज का असर होता नहीं सो इस जन्म में सजा तो नए शरीर को मिली जिसका कोई कसूर ही नही था!! तो ब्राह्मण रैदास को मांस खाने की सजा कहां मिली? सजा तो चमार रैदास को मिली जिन्होंने कोई पाप किया ही नहीं था.

आत्मा को मानने वाले सभी लोग गीता की इस बात सें सहमत होंगे कि मात्र जीवित शरीर में ही आत्मा होती है मृत शरीर अथवा निर्जीव वस्तु में आत्मा नहीं होती. यह भी मानने की बात है कि मात्र जीवित चीजें हीं जन्म लेतीं, बढ़ती हैं, अपने जैसे पैदा करती हैं और मरती हैं. मृत चीजें न तो पैदा होती हैं न बढ़ती हैं न अपने जैसी और पैदा करती हैं तथा न ही मरती हैं. यह भी एक तथ्य है कि निर्जीव वस्तु कभी भी जीवित नहीं होती लेकिन जीवित प्राणी कभी न कभी मरता अवश्य है.

इस पूरे सिद्धांत में सबसें अहम सच्चाई है कि **आज तक यह कोई नहीं बता पाया कि किसी भी प्राणी के शरीर में आत्मा आती कैसे है. उदाहरणतः यह कोई नहीं बताता कि ब्राह्मण रैदास के शरीर सें आत्मा निकल कर कैसे चमार रैदास के शरीर में आई अथवा कैसे कृशण, राम, संकराचार्य या हम सब के शरीर में आई.**

हम इस बात का खुलासा करते हैं. यह सभी का मान्य तथ्य है कि हर आदमी की शुरुआत गर्भ सें होती है. गर्भ की शुरुआत नर के शुक्राणु और मादा के डिम्ब के मिलने सें होती है. अगर शुक्राणु और डिम्ब में सें कोई भी मृत हो तो गर्भ की शुरुआत नहीं होती. कोई ब्राह्मण ग्रन्थ, कोई ब्राह्मण विद्वान यह नहीं बता पाता कि आत्मा आदमी के शुक्राणु सें आती है या डिम्ब सें आती है. अगर आत्मा शुक्राणु सें आती है तो गर्भ की शुरुआत बिना मादा के ही हो जानी चाहिए अथवा मृत डिम्ब सें भी हो जानी चाहिए. अगर आत्मा मादा के डिम्ब सें आती है तो बिना नर के शुक्राणु सें ही गर्भ की शुरुआत हो जानी चाहिए. अथवा मृत शुक्राणु सें भी गर्भ की शुरुआत हो जानी चाहिए. मगर ऐसा नहीं होता. हम सभी और तमाम अपने पूर्वज जिन्दा शुक्राणु और जिन्दा डिम्ब के मिलने सें ही पैदा हुए हैं.

अगर वे दोनों ही जीवित हैं तो इसका सीधा सा अर्थ हुआ कि दोनों में आत्मा है क्योंकि बिना आत्मा के कोई जिन्दा नहीं रह सकता. और अगर कोई कहे कि जिन्दा रहने के लिए आत्मा की जरूरत नहीं है तो गीता के 700 श्लोकों की बातें व्यर्थ की लफाजी है. अगर हम बिना आत्मा के जीवित शुक्राणु या डिम्ब सें पैदा हुए हैं तो तो हमें जिन्दा रहने के लिए भी आत्मा की जरूरत नहीं है. अगर डिम्ब और शुक्राणु दोनों में आत्मा है तो आदमी में दो आत्माएं होनी चाहिए क्योंकि गीता के अनुसार आत्मा पर किसी चीज का असर नहीं होता तो दो आत्माएं एक दूसरे में घुसकर एक नहीं हो सकतीं. इस तरह सें प्राणी के शरीर में आत्मा के प्रवेश का कोई रास्ता कोई साधन नहीं है. अतः आत्मा का सिद्धांत कोरी धोखाधड़ी है जिसके बल पर ब्राह्मण सदियों सें लोगों को उल्लू बनाते आ रहे हैं.

आत्मा और पुनर्जन्म के बारे में कुछेक अन्य प्रश्न भी हैं जिनका कोई उत्तर नहीं दे पाया. उदाहरणतः

♦ अगर आत्मा पूरे शरीर में व्याप्त है तो जब दुर्घटना में आदमी का हाथ पैर कट जाता है तो क्या आत्मा भी लूली लंगड़ी हो जाती है. अगर नहीं होती तो इतने हिस्से की आत्मा कहां चली जाती है.

♦ अगर आत्मा पूरे शरीर में व्याप्त है तो ऐसा क्यों हैं कि गला कटने सें ही आदमी क्यों मरता है हाथ पैर कटने सें क्यों नहीं मरता. जब आत्मा पर किसी चीज का असर नहीं होता तो शरीर में बिजली का करंट लगने सें आत्मा को क्या परेशानी होती है कि वह शरीर को त्याग देती है.

♦ आदमी सांस लेते समय आक्सीजन अंदर खेंचता है और कार्बन डाइ आक्साइड बाहर निकालता है. आक्सीजन भी हवा है और कार्बन डाइ आक्साइड भी हवा है. आक्सीजन मिलने पर आत्मा शरीर नहीं त्यागती लेकिन कार्बन डाइ आक्साइड सें आदमी की मृत्यु हो जाती है अर्थात आत्मा शरीर त्याग देती है. ऐसा क्यों है जबकि आत्मा पर तो किसी चीज का असर नहीं होता.

♦ एक बार के वीर्यपात में करोड़ों जीवित शुक्राणु होते हैं. उनमें सें मात्र एक ही शुक्राणु काम आता है शेष सभी मर जाते हैं. अब क्योंकि हरेक जीवित वस्तु में आत्मा है तो उन सभी शुक्राणुओं में भी आत्मा है. ब्राह्मणों के कर्म के सिद्धांत के अनुसार हर प्राणी यानि आत्मा का जन्म उसके पिछले जन्म के कर्मों पर निर्भर करता है. तो ऐसे केस में ये शुक्राणु बिना कुछ कर्म किए मर जाते हैं तब अगले जन्म में इन शुक्रओं की आत्माओं का कौन सी जूणी में जन्म होता है, क्या कोई भी गीता ज्ञानी बता सकता है!!

♦ जब आदमी मरता है तो उसकी लाश का दाह संस्कार कर दिया जाता है. आत्मा पर किसी चीज का असर नहीं होता तो पुनर्जन्म में पिछले जन्म के फल भोगने के लिए तो बचता ही नहीं है. सो फल किसको मिलता है. अगले जन्म वाले शरीर का तो कोई कसूर ही नहीं होता, उसे सजा पिछले शरीर के कामों की क्यों मिलती है?

♦ गीता कहती है कि जीर्ण होने पर जैसे हम नए कपड़े धारण करते हैं वैसे ही बचपन के बाद जवानी और बुढ़ापा आने पर शरीर जीर्ण होने पर आत्मा नया शरीर धारण कर लेती है. गीता में कहीं भी बचपन या भरी जवानी में मरने की बात नहीं कही गई है. केवल शरीर जीर्ण होने पर ही आत्मा द्वारा शरीर त्याग करने तथा नया शरीर धारण करने की बात कही गई है. अगर ऐसा होता तो लोग भरी जवानी में ही क्यों मरते हैं, कई तो बचपन में ही मर जाते हैं जब उनके शरीर को खरोंच भी नहीं आई होती. ऐसा क्यों है!!

♦ ब्राह्मणों के भगवान मनु का कहना है कि जो ब्राह्मण श्राद्ध में माँस नहीं खाता वह मरकर 21 बार पशु की जूणी में जन्म लेता है. (मनु 5.25) भगतमाल कहता है कि मांस खाने सें ब्राह्मण अगले जन्म में चमार बन जाता है. आजकल ब्राह्मण श्राद्ध में मांस नहीं खाते. इस तरह तो सारे के सारे ब्राह्मण या तो पशु बन का जन्म लेते या फिर चमार बन कर जन्म लेते. ऐसे में ब्राह्मण तो कोई बचना ही नहीं चाहिए था. लेकिन ब्राह्मण तो आज भी पैदा हो रहे हैं. तब झूठ कौन बोल रहा है मनु या भगतमाल!!

हम में सें कोई भी गीता की यह बात मान कर कि शरीर मरता है आत्मा नहीं मरती, अपने भाई बन्धुओं को पैसे के लिए नहीं मार सकता. असल में तो कृष्ण चाहता था कि अर्जुन अपने भाई बंधुओं को मार दे, बस और कुछ नहीं. इसीलिए उसने गीता के माध्यम सें अर्जुन पर अलग अलग पैंतरे आजमाए थे कि वह किसी तरह सें लड़ने मरने को तैयार हो जाए. आज ब्राह्मणों ने उसकी आग लगाउ बातों को ज्ञान का सागर बना रखा है.

2. क्या कोई बता सकता है . . . .

पुनर्जन्म के सिद्धांत को खरा या खोटा सिद्ध करने के लिए दूसरी कसौटी है कि क्या कोई सबूत के साथ बता सकता है कि कौन आदमी मरने के बाद कहां पैदा हुआ. जितने भी पुनर्जन्म के किस्से कहानियां हैं उन सभी में आदमी भारत में मरने के बाद भारत में ही पैदा हो गया. गुरू रैदास के किस्से में तो वे पिछले जन्म में भी बनारस में रहते थे. इस जन्म में वे फिर सें बनारस में ही पैदा हो गए. और तो और उनका गुरू भी नहीं बदला!!

कितनी हैरानी की बात है कि एक "चमार" का तो उन्हें पता लग गया कि उन्होंने पुनर्जन्म कहां लिया है लेकिन आज तक किसी संकराचार्य, किसी ब्राह्मण ऋषि, किसी देव, किसी भगवान, किसी अवतार का कभी कोई जिक्र नहीं आता कि वे किस दलित के यहां पुनर्जन्म लिए बैठे हैं. ब्राह्मणों को कम सें कम अपने संकराचार्यों को तो रिकार्ड रखना ही चाहिए था. दयानन्द विवेकानन्द गांधी जैसे उनके "महान" नेता हुए हैं कम सें कम उनका तो पता करना चाहिए था कि वे किस जूणी में चले गए. ब्राह्मणों के तो भैंस और गधे भी ज्ञान बघारते हैं. उनके नेता कहीं भी, किसी भी जूणी में पैदा हुए होते, कम सें उनका ज्ञान तो पुनः सुननें को मिल जाता!!

अगर कोई यह कहे कि इन लोगों को मोक्ष मिल गया है तो वे निश्चित रूप में झूठ बोल रहे हैं. 21 बार तो उनका सृष्टि पालक ही पैदा हो लिया. अभी तो उसने गीता में वादा कर रखा है कि वह जन्म लेने को तैयार बैठा

है बस उसे धर्म की हानि होने की प्रतीक्षा है. देखो अब कब युधिश्ठर अपने छोटे भाई की बीवी को फिर सें कब दांव पर लगाता है कब जूए में अपना हारा राज्य वापिस मांगता है कब फिर जुआरियों की लड़ाई होती हैं तब कहीं जाकर धर्म की हानि होगी. तब उनके भगवान को फिर सें जन्म लेना पड़ेगा. तब तक तो उनके भगवान को भी मोक्ष नहीं है. जब उसे ही मोक्ष नहीं मिला है तो इन गरीबों को कहां सें मोक्ष मिल पाएगा.

सबसें हैरानी की बात तो यह है कि भगतमाल जैसे टुच्चे से किस्सेकारों को तो गुरू रैदास के पुनर्जन्म का पता चल गया मगर गुरू रैदास स्वयं इससें अन्जान रहे. उन्होंने अपनी बाणी में अपने पुनर्जन्म की कहीं कभी कोई बात नहीं की है. अगर उनका पुनर्जन्म हुआ होता तो वे भी जरूर इसका अपनी बाणी में उल्लेख करते. गुरू रैदास ने अपनी बाणी में अनेकों स्थानों पर अपनी जाति का उल्लेख किया है. अपने साथी सतगुरु कबीर का वर्णन किया है जब वे अपनी बाणी में इनका उल्लेख कर सकते हैं तो, अगर सच होता तो, अपने "पुनर्जन्म" का भी जरूर वर्णन करते. इनका जिक्र न होना यह दर्शाता है कि यह मनघड़न्त किस्सा है.

असल में पुनर्जन्म और मोक्ष केवल ब्राह्मणों की आमदन का साधन है. इससें अधिक और कुछ नहीं. वे आत्मा और मोक्ष के नाम पर सदियों सें लोगों को बेवकूफ बनाते आ रहे हैं और अभी तक बना रहे हैं. इसका हल केवल एक है जैसा बाबा साहिब ने बताया है कि सभी धर्म ग्रन्थों को पवित्र मानना बन्द किया जाए. सभी ग्रन्थों पर पब्लिक में बहस होनी चाहिए. जो ग्रन्थ सच्चाई नैतिकता तर्क पर खरे न उतरें उन्हें गहरे समुद्र में दफन कर दिया जाना चाहिए.

3. किस काम सें कौन सा जन्म

पुनर्जन्म के सिद्धांत को परखने की सबसें अहम कसौटी है कि क्या कोई बता सकता है कि कौन सा काम अर्थात कर्म करने पर आदमी क्या बन कर पुनर्जन्म लेता है. ब्राह्मण ग्रन्थों में इस बारे में अनेकों नियम दिये गये हैं. अतः गुरू रैदास के बारे में पुनर्जन्म के किस्से को उन्हीं नियमों के अन्तर्गत परखना पड़ेगा.

सबसें पहला नियम है कि ब्राह्मण कुछ भी खा ले कुछ भी कर ले उसे पाप नहीं लगता. (मनु 9.318) अतः जब उसे पाप ही नहीं लगता तो उसे सजा भी नहीं दी जा सकती. सो जिस आदमी के खाते में "पाप" ही नहीं रहे तो या तो वह मोक्ष प्राप्त करेगा या फिर स्वर्ग में रहेगा. गुरू रैदास क्योंकि "पिछले जन्म" में ब्राह्मण थे उन्हें तो मोक्ष या स्वर्ग सें कोई रोक ही नहीं सकता था. अगर उन्हें स्वर्ग मिला और वे स्वर्ग में एक "पल" भी रहते तो कई हजारों सालों बाद धरती पर पैदा होते क्योंकि स्वर्ग में तो ब्रह्मा की घड़ी चलती है जिसके अनुसार हमारी धरती के 1 करोड़ 19 लाख 80 हजार साल का वहां एक दिन होता है. और अगर उनका मोक्ष ही हो गया तो पुनर्जन्म का सवाल ही पैदा नहीं होता. सो या तो मनु झूठा है या भगतमाल जैसे किस्साकार.

दूसरा नियम है कि ब्राह्मण को मांस खिलाने सें हर प्रकार के पर भिन्न भिन्न पुण्य मिलते हैं तथा भिन्न भिन्न समय तक मिलते हैं. मांसों और उनसें मिलने वाले पुण्यों की सूचि इस प्रकार सें है. (मनु 3.267–272)

सूअर = 10 मास	पक्षी = 5 मास	बकरी = 6 मास	कांटे वाली मछली = अनंत काल
मछली = 2 मास	बकरा = 12 मास	चित्र मृग = 7 मास	गेंडा = अनंत काल
हिरण = 3 मास	खरगोश = 11 मास	काला मृग = 8 मास	लाल बकरा = अनंत काल
मेढा = 4 मास	कछुआ = 11 मास	रूरू मृग = 9 मास	भैंसा = 12 मास

मनु के अतिरिक्त पुराणकारों ने देवियों की सूचि भी दी है जो कछुए सें लेकर आदमी तक का मांस खाने सें एक महीने सें लेकर एक लाख साल तक खुश रहते हैं. जब मांस खाने सें उनके देवी, देवता और भगवान खुश होते हैं तो ऐसे में तो "ब्राह्मण" रैदास को सजा हो ही नहीं सकती.

उपरोक्त सभी केसों में ऐसा कहीं प्रावधान नहीं है कि ब्राह्मण मांस खाकर चमार के घर पुनर्जन्म लेगा. अतः जिसने भी यह कहानी बनाई मनगढ़ंत बनाई है तथा धूर्तता पूर्वक बनाई है. दलितों को ऐसे लोगों सें सावधान रहना चाहिए तथा जहां भी ऐसी कथाएं की जाती हों उनका डटकर विरोध करना चाहिए.

अगर आदमी अच्छे काम या पुण्य कर्म करने पर अगले जन्म में ब्राह्मण बनता है तथा बुरे काम या पाप कर्म करने पर शूद्र बनता है तो बाबा साहिब अम्बेडकर, बाबू जगजीवन, रामबिलास पासवान, बूटा सिंह आदि शूद्र पैदा होकर भी क्यों इतने ऊंचे ओहदों तक पहुंचे कि बड़े बड़े ब्राह्मण अधिकारियों भी उनके सामने सिर झुकाना पडता था. ज्ञानी जैल सिंह और श्रेद्धय के. आर. नारायणन दलित समाज में पैदा होकर भी कैसे भारत के सर्वोच्च आसन अर्थात राष्ट्रपति के पद तक पहुंच पाए जिन्हें ब्राह्मण सेनापति भी सल्यूट मारते थे. क्यों आज भारत के मुख्य न्यायधीष के पद को एक दलित महापुरुष सुषोभित कर रहे हैं जिनका कहा एक एक शब्द भारत का सर्वोच्च कानून

है. अगर पाप की सजा के तौर पर ही आदमी "नीच" जाति में पैदा होता है तो यह सब लोग इतने उच्च पदों तक क्यों पहुंचे. पुण्य कर्म करने सें ही अगर कोई विप्र के घर पैदा होता है तो आज असंख्य ब्राह्मण क्यों अपाहिज हैं, क्यों वे भीख मांग का जिन्दा है!! अतः कुल मिला कर पुनर्जन्म का सिद्धांत कोरी बकवास है जो धूर्त ब्राह्मणधर्मियों ने धार्मिक कहे जाने वाले ग्रन्थों में घुसेड़ रखी है ताकि उनकी रोजी रोटी चलती रहे!

स्वयं ब्राह्मण ग्रन्थों में ऐसी अनेकों उदाहरण हैं जो यह सिद्ध करती हैं कि ब्राह्मणों ने "पुनर्जन्म" का सिद्धांत अपनी करतूतों अथवा कुकर्मों को छिपाने के लिए घढ़ा है. उदाहरण के लिए कृष्ण और गोपियों के पुनर्जन्म की कथाओं को ही लें. उनके पिछले जन्म की कथा कुछ इस प्रकार सें है. जब राम वन में गया तो वहां के ब्राह्मण ऋषि उसका सुन्दर शरीर "पाने" के लिए उद्धत हो उठे. तब राम ने उन्हें कहा कि वह उनकी इच्छा अगले जन्म में कृष्ण बनकर पूरी करेगा. अगले जन्म में राम पुनर्जन्म लेकर कृष्ण बना गया और ब्राह्मण ऋषियों ने गोपियों के रूप में पुनर्जन्म लिया. कृष्ण ने गोपियों के साथ क्या किया सभी को पता है. अतः ब्राह्मण ऋषि किस प्रकार सें राम का सुन्दर शरीर "पाना" चाहते थे यह बात बताने की जरूरत नहीं है.

ब्राह्मणों ने कृष्ण और गोपियों के पुनर्जन्म की कथा इसलिए घढ़ी ताकि उनके अवैध सम्बंधों पर पर्दा डाला जा सके वर्ना "क्षत्रिय भगवान" को "शूद्र भगवान" बनने का कोई कारण नहीं है तथा ब्राह्मण ऋषियों को भी शूद्र गोपियां बन कर पुनर्जन्म लेने का कोई कारण नहीं है. भगवान और ब्राह्मण तो पाप, पुण्य, पुनर्जन्म के सिद्धांत सें परे हैं फिर वे क्यों "नीच" वर्ण में पैदा हुए. वे तो सभी ब्राह्मण बन कर भी ऐश कर सकते थे.

ऐसा ही कुछ किस्सा हनुमान का रामायण के उत्तरकांड में दिया गया है. हनुमान की माँ का नाम अंजनी था. वह केसरी की ब्याहता पत्नि थी. एक दिन वह नहा धो कर घर सें निकली. उसे पवन नामक देव ने देख लिया. पवन उसकी सुन्दरता पर रीझ गया. उसने अंजनी सें संभोग याचना की. अंजनी इस शर्त पर उससें शारीरिक सम्बंध बनाने के लिए राजी हुई कि वह उसके अपने जैसा बलशाली पुत्र पैदा करेगा. तब उन दोनों ने वह किया जो भारतीय समाज में भा. दण्ड संहिता के अधीन व्यभिचार कहा जाता है. कहते हैं कि वह शिव का अवतार यानि पुनर्जन्म है. यहां भी यही प्रश्न उठता है कि अगर हनुमान शिव का पुनर्जन्म ही था तो वह वैध माँ–बाप के सम्बंधों सें पैदा क्यों नहीं हुआ. वह व्यभिचार सें ही पैदा क्यों हुआ. क्या पवन की पत्नि बांझ थी या केसरी नपुंसक था जो इन दो को अवैध जोड़ा बनाना पड़ा!! अतः यह पुनर्जन्म की कहानियां बनाने का एकोएक उद्देष्य अपने देवों की करतूतें ढांपना और लोंगों को बेवकूफ बनाना मात्र है!!

ऐसे ही राम का किस्सा है जो कि विष्णु का पुनर्जन्म है. वह भी नपुंसक दशरथ की पत्नियों के ब्राह्मण ऋषि ऋष्यश्रृंग द्वारा पैदा किया गया. (समु रतन लाल बंसल) ऋष्यश्रृंग रिश्ते में दशरथ का जवाईं या जमाता भी है. इसी बात पर कबीर साहिब ने चुटकी ली. वे बोले :

देखो लोगो राम की सगाई,
हम बहनोई, राम हमारा साला,
हमहि बाप, राम पुत हमारा

आर्थात हे लोगो, राम का सगापन देखो, मैं राम का बहनोई हूँ और राम मेरा साला लगता है. मैं ही राम का बाप भी हूँ तथा राम मेरा पुत्र भी है. यह बात उन्होंने ऋष्यश्रृंग की ओर सें कही है क्योंकि वह रिश्ते में राम का जीजा भी लगता था. अगर इस श्लोक के आधार पर कोई यह कहानी घढ़ ले कि पिछले जन्म में सतगुरु कबीर ऋष्यश्रृंग थे तथा उन्होंने ही राम को पैदा किया था, तो निश्चित रूप में यह उसका दीमागी दिवालियापन ही होगा!!

बाबा साहिब के अनुसार भारत में क्रांति न होने का कारण यही पुनर्जन्म और कर्म का सिद्धांत है. ब्राह्मणों ने यह प्रचार कर रखा है कि हमारा यह जन्म हमारे पिछले जन्मों के कर्मों का फल है. इस जन्म में हमें जो सुख दुख मिल रहे हैं वे सभी हमारे पिछले जन्मों के कारण है.

अतः इस सिद्धांत के कारण ही जो गरीब, दलित, मजदूर आदि शोषित समाज है उसने यह मान लिया है कि उन्होंने पिछले जन्म में बुरे काम अथवा पाप कर्म किए थे इसलिए इस जन्म में में वे उसकी सजा भुगत रहे हैं. इसलिए उन्होंने कभी भी अपने साथ हो रहे अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने की कोशिश नहीं की. ब्राह्मणवाद ने उनमें क्रांति तो दूर संघर्ष करने का माद्दा भी समाप्त कर दिया. इसका एक परिणाम यह भी हुआ कि शोषित समाज न तो ब्राह्मणों के अन्याय के विरुद्ध बोला और न ही तब बोला जब विदेशी आक्रमणकारियों ने भारत और भारतीयों को रौंद डाला. नतीजा यह हुआ कि भारतीय लोग 2000 साल तक विदेशियों की गुलामी चुपचाप अपनी नीयति मान कर सहते रहे.

3.2 पारस या सोने की मुहरें देने वाला भगवान कौन

गुरू रैदास के बारे में ब्राह्मणवादियों ने जो दूसरा किस्सा बना रखा है वह है कि भगवान ने उनकी गरीबी पर तरस खाकर उन्हें पारस पत्थर देना चाहा ताकि वे जितनी इच्छा हो उतना सोना बना लें और अपनी गरीबी दूर कर लें. लेकिन गुरू रैदास ने सिर्फ मेहनत करके की खाने बात कही और पारस पत्थर नहीं लिया. तब भगवान रोजाना आता और उनके छप्पर में पांच या सात सोने की मुहरें रख जाता जिससें गुरू रैदास का गुजारा हो जाता था.

सर्वप्रथम तो जिस किसी ने भी यह किस्सा बनाया है वह या तो महाधूर्त है क्योंकि यह कहानी भी गुड़ में जहर छिपा कर देने के समान है. इस कहानी के माध्यम सें उसने एक तीर सें दो शिकार किए हैं. पहला तो उसने यह बात फैलाने की कोशिश की है कि गुरु रैदास ब्राह्मण ऋषियों की तरह मुफ्त की खाने वाले थे. दूसरा यह कि वे किसी ब्राह्मणिक भगवान को अपना भगवान मानते थे. यह दोनों बातें ही गुरू रैदास के चरित्र पर सीधा आघात हैं.

सभी जानते हैं कि सतगुरु कबीर और उनके हमसहरी सतगुरु रैदास ने भगवन बुद्ध द्वारा बताए गए गृहस्थ और भिक्षु के जीवन का समावेष एक ही जगह कर दिया था. सन्त कबीर और सन्त रैदास पहले सन्त थे जो कमा कर खाते थे और पहले गृहस्थ थे जो भिक्षु वाला सादा जीवन बिताते थे. यह कथा उनके उसी स्वरूप को नष्ट करने के लिए बनाई गई है.

इस कथा की सत्यता को इन दो कसौटियों पर परखा जा सकता है.

- क्या सचमुच कोई पारस नामक वस्तु होती है जिसके छूने मात्र सें लोहा भी सोना बन जाता है.
- ब्राह्मणों को कौन सा भगवान उन्हें रोजाना सोने की मुहरें देकर जाता था.

पारस पत्थर की असत्यता : सबसें पहले तो यही झूठ है कि कोई पारस नाम का पत्थर भी होता है जिसके छूने मात्र सें लोहा सोने में बदल जाता है. दुनिया के किसी भी कोने में पारस पत्थर नहीं पाया जाता. ऐसा पत्थर न कभी था और न है. ऐसे पत्थर की कहानी सबसें पहले अरब देशों "अलफ लैला" नामक कहानी संग्रह में पनपी. जब वहां सें मुगल व अन्य हमलावर भारत आए तो उनके साथ यह कहानियां भी भारत आ गईं. भारत में किस्से कहानियों का प्रचलन है. पुराण महाभारत किस्से ही तो हैं. सो किसी धूर्त ने यह किस्सा गुरू रैदास के साथ जोड़ दिया कि ब्राह्मणों को कोई भगवान उन्हें पारस देने आया लेकिन जब वे पारस लेने के लिए राजी न हुए तो उन्हें मुहरें देनी आरम्भ कर दीं.

यहां एक बात ध्यान देने योग्य है कि किसी भी पुराण महाभारत के किस्से में पारस का उल्लेख नहीं है तथा कहीं भी सोने की मुहरों का जिक्र भी नहीं है. अतः यह कथाएं उनके साथ तब जोड़ी गईं जब विदेश सें विदेशी हमलावरों के साथ भारत आई. .

वैज्ञानिक नजरिये सें देखें तो ऐसी घटना होना संभव ही नहीं है कि किसी चीज के छूने मात्र सें लोहा सोने में बदल जाए क्योंकि लोहा और सोना मूलभूत रूप में अलग अलग धातुएं हैं. किसी भी ढंग सें लोहे को सोने में तबदील नहीं किया जा सकता. आज जापान अमरीका और भारत दुनिया में सबसें अधिक विज्ञान प्रगति वाले देश हैं मगर इन देशों में किसी भी वैज्ञानिक ने लोहे सें सोना बनाने का प्रयास करना तो दूर की बात है किसी ने ऐसा करने की कभी बात भी नहीं की है. यह सिद्ध करता है कि ऐसा होना संभव ही नहीं है.

आज के समय में बच्चा बच्चा जानता है कि इस ब्रह्माण्ड में पाई जाने वाली हर वस्तु परमाणुओं सें बनी हुई है. प्रत्येक परमाणु में प्रोटोन और इलैक्ट्रोन होते हैं. किसी परमाणु में इन दोनों की विशेष संख्या उस की प्रकृति निर्धारित करती है. उदाहरणतः अगर किसी परमाणु में दोनों की संख्या एक एक है तो वह हाइड्रोजन का परमाणु है अगर उसमें 47–47 हैं तो वह चांदी का परमाणु है. सोने में इनकी संख्या 79–79 है तथा लोहे में 26–26 हैं. यानि अगर लोहे को सोना बनाना हो तो उसके प्रत्येक परमाणु में 53–53 प्रोटोन और इलैक्ट्रोन और मिलाने पड़ेंगे. और तो और लोहे और सोने के परमाणुओं के साइज और भार में भी अंतर होता है. अतः लोहे को सोने में बदलना किसी भी हालत में संभव नहीं है.

वैसे भी एक ग्राम साने अथवा लोहे में करोड़ों परमाणु होते हैं. एक एक परमाणु को आगे तोड़ना और फिर उनके प्रोटोन और इलैक्ट्रोन को बदलना कतई संभव नहीं है. अगर ऐसा संभव होता तो किसी भी देश को विदेशों

सें कर्जा लेने की जरूरत ही नहीं थी. बस वह दो चार ऐसी प्रयोगशालाएं बना लेता और लोहे को सोना बनाये जाता. मगर ऐसा करना कहीं भी सम्भव नहीं है. न पहले था और न आज है. अतः विज्ञान की दृष्टि सें लोहे को सोने में बदलना कोरी गप्प है.

अब दूसरी तथा अधिक महत्वपूर्ण बात कि कौन सा ब्राह्मणिक भगवान गुरू रैदास को पारस देने आया था या कौन सा भगवान उनके झोंपड़े के छप्पर में सोने की मुहरें रख जाता था. ब्राह्मणधर्म में तो करोड़ों भगवान हैं. मुख्य भगवान उनके पाँच हैं – त्रिदेव यानि ब्रह्मा, विष्णु और महेश तथा राम और कृष्ण. इसके अतिरिक्त इन्द्र, अरुण वरुण आदि भी थे लेकिन उनको तो ब्राह्मण ही दफन कर चुके हैं. सो मुहरें देने में उनका हाथ होना संभव ही नहीं है. अतः बाकी पाँच की जांच कर लेते हैं.

1. **ब्रह्मा** : वह मुहरें नहीं दे सकता क्योंकि उसका यह रिकार्ड रहा है कि जितने भी उसके वरदान देने के किस्से बने हैं उनमें हर जगह उसका वरदान खण्डित हुआ है. उसने हमेशा वरदान देने में भी ठगी की है. हरिण्यकशिपु हो या महात्मा रावण हों या कोई और हो इनके बारे में जितने भी किस्से बने हैं उसका दिया वरदान भी कभी पूरा नहीं हुआ. इसलिए जो आदमी अपनी दी हुई जुबान ही पूरी नहीं सकता तो उससें यह उम्मीद करना ही निराधार है कि वह बिना मांगे किसी को कुछ दे देगा. साथ में यह भी तथ्य है कि गुरू रैदास ने ब्रह्मा के अस्तित्व को ही नकार दिया है. उन्होंने उसे मात्र कल्पित नाम माना है. अतः अस्तित्वहीन ब्रह्मा तो मुहरें देने वाला भगवान नहीं हो सकता.

2. **विष्णु** : विष्णु का रिकार्ड है कि उसने हमेशा सिर्फ ब्राह्मणों को ही धन दिया है. चाहे बौना बन कर सम्राट बलि को मारा हो या माता वृंदा सें बलात्कार करके सम्राट जालंधर की हत्या की हो. उसने हमेशा ही ब्राह्मण विरोधियों सें धन छीना है तथा ब्राह्मणों को दिया है. सो वह गुरू रैदास को तो मुहरें दे ही नहीं सकता जिन्होंने ब्राह्मणों और ब्राह्मणधर्म की मिट्टी पलीद कर दी थी. विष्णु तो गुरू रैदास को मांगने पर भी मुहरें नहीं दे सकता जिन्होंने सारी उम्र ब्राह्मणों के विरुद्ध संघर्ष किया है, बिना मांगे देने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता.

3. **महेश** : महेश अथवा शिव को उसके ससुर दक्ष ने यज्ञ में सें हिस्सा नहीं दिया यानि यज्ञ में जो चढ़ावा आया दक्ष ने शिव को उसमें सें हिस्सा नहीं दिया. सो शिव ने उसे मरवा दिया. बिल्कुल वैसे ही जैसे आजकल गुण्डे हफता न मिलने पर मारकाट मचा देते हैं वैसे ही शिव के आदमियों ने दक्ष के यज्ञ में मारकाट मचा दी. सो जो आदमी हिस्सा न मिलने पर ससुर को ही मार देता हो उससें यह उम्मीद भी नहीं की जा सकती कि वह किसी गैर को रोजाना सोने की मुहरें दे देगा.

4. **राम** : सभी जानते हैं कि राम हत्यारा था. उसने बिना वजह शूद्र सन्त शम्भूक की हत्या की थी जिस समय वे साधना में लीन थे. उनका कसूर मात्र इतना था कि वे शूद्र वर्ण सें सम्बंध रखते थे. जब राम यह बात ही सहन नहीं कर सकता था कि कोई दलित व्यक्ति सन्त बनकर साधना कर सके, वही राम सन्त शम्बूक के वंशज गुरू रैदास को सोने की मुहरें दे देगा, ऐसा सोचना भी मूर्खता है. राम द्वारा सन्त शम्बूक की हत्या किए जाने पर ही गुरू रैदास ने ललकार कर कह दिया था, "**रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांही**". यह बात भी सभी जानते हैं कि राम सोने के मृग बने मारीच को मारने भाग लिया था. अगर उसके पास सोना ही होता तो वह सीता को वहीं सोने का मृग बना कर दे देता. न वह मृग के पीछे भागता, न सीता गायब होती और न रामायण का लफड़ा हुआ होता. भगवान बाल्मिकी ने साफ लिखा है कि राम शूद्रों और वैश्यों सें धन लेकर ब्राह्मणों को देता था. अतः ऐसे प्राणी सें उम्मीद ही नहीं की जा सकती कि वह गुरू रैदास को सोना दे देगा.

5. **कृष्ण** : रैदास प्रचई में कथा है कि कृष्ण यह मुहरें रैदास साहेब के छप्पर में रखता था. यह बड़ी अजीब सी बात है गुरू रैदास ने कृष्ण को इस लायक ही नहीं समझा कि उस पर अपनी पूरी बाणी में एक अक्षर भी लिखें, उसी कृष्ण की कथा बन गई कि वह रैदास साहेब को मुहरें देता था. सोचने की बात है कि रैदास साहेब ने कृष्ण पर एक अक्षर भी क्यों नहीं लिखा. उसका कारण है कृष्ण की चरित्रहीनता. उसने नित्य अपनी मामी राधा सें व्यभिचार किया, अपनी बहन सुभद्रा को अपने दोस्त अर्जुन के हाथों उठवा दिया, महाभारत का रुका रुकाया युद्ध फिर सें करवा दिया. जिन्दगी भर अश्लील हरकतें कीं. इसलिए गुरू रैदास ने उसे इस काबिल ही नहीं समझा कि उस पर कुछ लिखते.

हां, उनके हमसहरी सतगुरु कबीर ने जरूर ऐसा कहाः

लोग कहें तुझे गोबरधनधारी, ताकौ मोहे अचम्भो भारी!
अष्टकुल परबत जाके पग की रैंना, सातों सागर अंजन नैना!!

अर्थात जब लोग कृष्ण को गोवर्धन नामक पहाड़ को उठा लेने के किस्से के कारण भगवान कहते हैं तो मुझे अचम्भा होता है क्योंकि भगवान तो वह है जिसके आगे पूरी धरती के पर्वत पैर की धूल के कण के समान हैं तथा सातों समुद्रों का पानी उसकी आँख के काजल में आ जाता है.

जहां तक इस बात का सम्बंध है कि कृष्ण ने रैदास जी को मुहरें सप्लाई की तो यह कोरी बकवास है क्योंकि सर्वप्रथम तो कृष्ण एक कहानी का पात्र मात्र है. वह न कभी हुआ और न कभी होने का है. अगर उसे सत्य मान भी लें तो भी वह सैंकड़ों साल पहले मारा जा चुका था. दूसरे अगर उसके पास पारस ही होता तो वह पांडवों को दे देता जिससें वे मनचाहा सोना बना लेते और उन्हें जूआ खेलने के लिए द्रोपदी को दांव पर लगाने की जरूरत ही नहीं पड़ती. बेचारे पांडवों को धन की खातिर अपना पूरा कुनबा तो न मारना पड़ता. वैसे भी अगर पांडवों ने जूआ खेलने का धर्म कमाना ही था तो भी जितना सोना या धन वे हारते उतना और बना लेते. युधिष्ठर को कम सें कम उसकी बहन द्रोपदी को तो जूए के दांव पर न लगाना पड़ता. उसने द्रोपदी को तभी दांव पर लगाया था जब उसके पास दांव पर लगाने के लिए धन नहीं बचा था. अगर कृष्ण के पास पारस या सोना ही होता तो वह कम सें कम अपनी बहन को तो बचा ही सकता था. रैदास जी को मुहरें देने की बजाए पांडवों को दे देता. वैसे भी अगर वह पारस युधिष्ठर को दे देता तो ब्राह्मणों का धर्मपुत्र सारी उम्र जूआ खेलने का धर्म कमाता रहता और ब्राह्मणधर्म आसमान की ऊंच्चाइयां छू लेता!!

यह भी सोचने की बात है कि जब "ब्राह्मण" रैदास पाप करने पर "चमार" रैदास बना दिए गए थे तो ब्राह्मणों का भगवान एक "पापी" को पारस अथवा मुहरें देने क्यों आया.

और क्या ब्राह्मणों के भगवान को यह पता नहीं था कि ब्राह्मणधर्म के अनुसार कोई भी दलित अपने पास धन नहीं रख सकता. उनके धर्म ग्रन्थ कहते हैं कि दलित के पास धन नहीं रहने दिया जाए. अगर दलित के पास धन रहेगा तो वह ब्राह्मण को तंग करेगा. ब्राह्मण तंग होगा तो ब्राह्मणधर्म की हानि होगी. ब्राह्मणधर्म की हानि होगी तो उनके भगवान को आना पड़ेगा. सो एक ओर तो वह ब्राह्मणधर्म को बचाने की बातें कर रहा है तथा दूसरी ओर स्वयं ही उनके धर्म की हानि करने पर तुला हुआ है!! बड़ी अजीब बात है!!

अर्जुन ने उसके कहने पर अपना पूरा कुनबा मार दिया, गुरू को भी मार दिया, अवैध ही सही बड़े भाई कर्ण को भी मार दिया. पूरे खाण्डव वन के स्त्री पुरुष बच्चे जला कर मार दिए तो भी कृष्ण ने उसे पारस नहीं दिया और न ही मुहरें दीं. (हां, अपनी बहन जरूर उसे उठवा दी) लेकिन गुरू रैदास ने उसे नाम लेने लायक भी नहीं समझा तो भी वह उन्हें मुहरें देने आ गया, वह भी मरने के बाद. ऐसा करने में कृष्ण की क्या मजबूरी थी इसका कोई उत्तर नहीं दे पाता.

ए सी पी और संकराचार्य जैसे ब्राह्मण चौबीसों घण्टे उसका जाप करते रहते हैं, राधा अपने पति को नपुंसक बना कर उसके साथ रहने लग गई, ऐसे एसीपीओं और राधाओं को तो वह कभी पारस या मुहरें देने नहीं आया, दलित रैदास जी सें उसकी ऐसी क्या रिश्तेदारी थी कि उन्हें पारस ही देने आ गया. ऐसी कथा बनाने वाले ने बिलकुल ही अपने दिमागी दिवालियापन का सबूत दे दिया. या पंजाबी में कहें तो बेशर्मी दी हद ही लाहती! लानत है ऐसी कथा बनाने वाले पर!!

3.3 गंगा में पत्थर का सालिगराम तैराने की कथा

गुरू रैदास के बारे में एक अन्य कथा है कि गुरू रैदास किसी सालिगराम की पूजा कर रहे थे तो ब्राह्मणों ने इस बात पर एतराज किया. उनमें झगड़ा हुआ और मामला राजा तक पहुंच गया. राजा ने फैसला किया कि दोनों पक्ष सालिगराम को गंगा में तैरायेंगे जिसका सालिगराम पानी में तैर गया वही सालिगराम का सच्चा पुजारी कहलाएगा. दोनों पक्षों ने गंगा में बारी बारी सें सालिगराम को छोड़ा. ब्राह्मणों का सालिगराम डूब गया मगर रैदास साहेब का तैर कर उनकी गोद में आकर बैठ गया.

यह कहानी भी किसी धूर्त और धोखेबाज आदमी की बनाई हुई है. विज्ञान के आधार पर ठोस पत्थर को कोई भी पानी में डाले वह डूबेगा ही. आज चाहे कितने भी रैदासिये, कितने ही ब्राह्मण कितना भी जोर लगा लें, पत्थर को कोई नहीं तैरा सकता. ठोस पत्थर की मूर्ति चाहे सालिगराम की हो, चाहे भगवन बुद्ध की हो, वह पानी पर तैर सकती ही नहीं. ठोस पत्थर न कभी तैरा है और न कभी कोई तैरा सकता है.

धर्म या जाति का भी पत्थर के तैरने या डूबने सें कोई सम्बंध नहीं है. नैतिकता अनैतिकता का भी इस बात सें कोई सम्बंध नहीं है. पत्थर चाहे कोई चमार डाले, चाहे ब्राह्मण डाले, चाहे संकराचार्य डाले या कबीर साहेब डालें, अथवा कोई भिक्षु डाले, चोर डाले या सिपाही, पानी में ठोस पत्थर डूबेगा ही. धर्म या जाति, नैतिकता अनैतिकता को पत्थर के तैरने डूबने के साथ जोड़ना धूर्त या पागल आदमियों का काम है.

जहां तक इस कहानी का सम्बंध है तो इस कहानी को झूठ साबित करने के लिए गुरू रैदास की बाणी ही सबसें बड़ा साक्ष्य है. वे कहते हैं :

तोड़ूं न पाती, पूजूं न देवा!
बिन पाथर, करूं हरि सहज सेवा!!

अर्थात मैं न तो कभी फूल पतियां तोड़ कर किसी देव की पूजा करता हूं और न ही किसी पत्थर के भगवान की पूजा करता हूं. मैं तो उस भगवान की सहज सेवा करता हूं. सहज सेवा का अर्थ है सत्य कर्म करना. सभी सन्त मानते हैं कि सभी आदमियों का जन्म इसीलिए हुआ है वे संसार में प्रेम भाईचारे और नैतिकता का संदेश फैला सकें. यही हरि की सहज सेवा है.

चरण पाताल सीस आसमाना!
सो ठाकुर कैसे मूर्ति समाना!!

उसके पैर पाताल तक तो सिर आसमान तक समाया हुआ है अर्थात भगवान इस धरती के कोने कोने में समाया हुआ है. इतना बड़ा भगवान छोटे से पत्थर में कैसे समा सकता है.

जहां तक सालिगराम का सम्बंध है, हमें नहीं मालूम वह कौन सा भगवान है. पंजाब में तो सालिगराम पत्नि के भाई को कहते हैं. अब कहानीकार ने रैदास साहेब सें उनका कौन सा सालिगराम पुजवाया है, वही जाने! हां, रैदास साहेब ने बिल्कुल स्पष्ट रूप में कह दिया है कि वे किसी भी भगवान को नहीं पूजते. उन्होंने तो सदा मूर्ति पूजा, गंगा स्नान आदि पाखण्डों का विरोध किया था. उन्होंने कहाः

पाती तोड़ै पूज रचावै, तारन तरन कहै रे!
मूरत में बसै परमेसर, पानी में काहे न तरै रे!!
झूठी माया, जग डहकाया, तीन ताप दहै रे!!

अर्थात ब्राह्मण फूल पत्ते तोड़ कर तथाकथित भगवान की पूजा का ढोंग रचाते हैं. उस भगवान को भव सागर पार कराने वाला बताते हैं. **अगर भव सागर सें पार लगाने वाला भगवान पत्थर की मूर्ति में बसता है तो वह मूर्ति पानी में क्यों नहीं तैरती. पत्थर की मूर्ति पानी में क्यों डूब जाती है. इन ब्राह्मणों ने झूठ पाखण्ड का जाल फैला रखा है और दुनिया को ठग रहे हैं. ये लोग तीनों प्रकार (मन, वचन और कर्म) की आग में जल रहे हैं.** अर्थात मूर्ति में दुनिया के तैराने वाले भगवान को बता कर ये लोग मन सें धोखा कर रहे हैं, वचन सें झूठ बोल रहे हैं तथा कर्म सें पाप कर रहे हैं.

जब गुरू रैदास स्वयं मूर्ति और मूर्ति–पूजा दोनों का खण्डन करते हैं तथा मूर्ति पूजा करवाने वालों को मन वचन तथा कर्म सें पापी बताते हैं तो जो लोग गुरू रैदास को मूर्ति पूजक बताते हैं वे भी कम पापी नहीं हैं. गुरू रैदास को मूर्ति पूजक बताने वाले उतने ही धूर्त हैं जितने धूर्त वे लोग हैं जो भगवन बुद्ध और बाबा साहिब को हिन्दू बताते हैं.

अतः यह बिल्कुल धूर्त लोगों का प्रचार है कि गुरू रैदास कभी गंगा स्नान को गए अथवा किसी सालिगराम को पूजते थे. उन्होंने कभी भी ब्राह्मणधर्मी कर्मकांड नहीं किए. वे तो लोागें को भी रोकते थे कि ऐसे पाखण्डों सें बच कर रहें. आज वही पाप उनके सिर मढना धूर्त आदमियों के काम हैं.

3.4 गंगा द्वारा सुपारी लेने तथा कंगन देने की कथा

ऐसे ही उनके बारे में एक अन्य कथा बनाई गई है कि एक बार एक ब्राह्मण गंगा तीर्थ को जा रहा था. वह गुरू रैदास सें मिलने को आया तो उन्होंने एक सुपारी गंगा में अर्पित करने को उसे दी लेकिन साथ में यह भी कहा कि सुपारी गंगा में तभी अर्पण करना अगर गंगा स्वयं अपने हाथ सें सुपारी ले. ब्राह्मण ने वैसा ही किया. गंगा ने हाथ बढ़ा कर सुपारी ले ली और बदले में रैदास जी को देने के लिए उसे एक कंगन दिया. ब्राह्मण के मन में बेइमानी जाग उठी. उसने धन पाने के लालच में वह कंगन राजा को दे दिया. रानी को कंगन बहुत पसंद आया. उसने ब्राह्मण सें वैसा ही दूसरा कंगन लाने को कहा. तब वह ब्राह्मण गुरू रैदास के पास आया और माफी मांगी. रैदास जी ने तरस खाकर अपनी चमड़ा भिगोने की कूण्डी अथवा कठौती को उघाड़ा तो गंगा वहां प्रकट हुई और उसने वैसा ही एक और कंगन उन्हें दे दिया. ब्राह्मण ने वह कंगन रानी को देकर अपनी जान बचाई.

यह कथा भी मनगढ़ंत है. अगर किसी ने रैदास जी को "महान" बताने के लिए ऐसी कथा घढ़ी है तो वह कथाकार सचमुच दिमाग सें पागल है. अगर किसी ने यह कथा गुरू रैदास को गंगा पूजक बताने के लिए लिखी है तो वह आदमी सचमुच धूर्त है. कुछ पढ़े लिखे अथवा विद्वान दलितों को हमारे द्वारा ऐसे शब्द प्रयोग करने पर

शायद कुछ आपत्ति हो सकती है लेकिन हमने जो कुछ भी कहा है वह शत प्रतिशत सही है. ऐसी कहानियां ऐसे धूर्त ही बनाते हैं तथा उनका मकसद लोगों को गुमराह करना ही होता है. हमारे विचार में लोगों को गुमराह करने वाला धूर्त ही कहलाता है.

जहां तक इस किस्से की सत्यता का प्रश्न है तो इस किस्से के पहले शब्द सें लेकर अन्त तक झूठ ही झूठ साफ झलक रहा है. सबसें **पहला झूठ** तो यह है कि कोई ब्राह्मण दलित के घर गया. आज के जमाने में भी कोई ब्राह्मण पण्डा बिना मजबूरी के किसी दलित के घर नहीं जाता है. जहां तक हमें ज्ञान है गुरू रैदास का विवाह दलित परिवार में ही हुआ था. अतः वह ब्राह्मण उनका साला या ससुर तो लगता नहीं था कि गंगा जाते हुए उनसें मिलने आ गया हो. सो पहला झूठ तो यही है कि वह ब्राह्मण गुरू रैदास सें मिलने आया. जिस जमाने में रामानन्द जैसा ब्राह्मण भी पर्दे की ओट करके दलितों सें बात करता था ताकि वह दलित को देखने मात्र सें अपवित्र न हो जाए. उस जमाने में कोई ब्राह्मण बिना कारण किसी दलित के घर चला जाए ऐसा सोचना भी असंभव है. कोई कथाकार यह जिक्र नहीं करता कि उस ब्राह्मण को ऐसी क्या मजबूरी थी कि वह दलित बस्ती में रैदास जी के घर गया तथा ऐसी बस्ती में गया जहां मुर्दा पशु ढोने वाले लोग रहते थे.

दूसरा झूठ यह है कि रैदास जी ने गंगा में अर्पित करने के लिए उस ब्राह्मण को सुपारी दी. यह एक सच्चाई है कि जिस तरह सें बाबा साहिब ने सारी उम्र ब्राह्मणधर्म और गांधीवाद के विरुद्ध संघर्ष किया वैसे ही रैदास जी और कबीर साहेब ने अपने जमाने में ब्राह्मणधर्म सें टक्कर ली थी. उनके हर पाखण्ड के विरुद्ध लोगों को जागृत किया था. सो रैदास जी द्वारा गंगा में अर्पित करने के लिए सुपारी देना उतना बड़ा झूठ है जितना कोई यह कहे कि बाबा साहिब नित्य गंगा में स्नान करते थे. गुरू रैदास ने अपनी पूरी बाणी में हमेशा गंगा स्नान, मूर्ति पूजा व अन्य कर्मकांडों का विरोध किया था. अतः आज कोई वही कर्मकांड उनके मत्थे मढ़े तो यह तो उसकी धूर्तता ही है.

तीसरा झूठ यह है कि उस ब्राह्मण को पता था कि गुरू रैदास अछूत हैं तथा उनके द्वारा छूई गई सुपारी लेना भी उसके धर्म में महापाप है. फिर भी वह उनके घर सुपारी लेने गया, बड़ी अनहोनी बात है. आज इक्कीसवीं सदी में भी जब दलित हरिद्वार में अस्थि विर्सर्जन के लिए जाते हैं तो ब्राह्मण पण्डे उनके द्वारा दिए गए पैसे गंगा के पानी में धोकर ही अपनी अंटी में डालते हैं. अतः जिस जमाने में ब्राह्मण तुलसी सरेआम घोषणा कर रहा था कि दलितों को मारना पीटना चाहिए उस जमाने में कोई ब्राह्मण उनके घर सुपारी लेने चला जाए यह तो हो ही नहीं सकता. अतः यह असंभव बात है कि इतना कुछ होने पर भी वह ब्राह्मण न केवल उनके घर आया बल्कि उनके हाथ सें सुपारी भी ले ली!! यह उतनी ही असम्भव बात है जितनी अनहोनी बात यह है कि सूरी, गांधी अडवानी या वाजपेई दलित आरक्षण के लिए मरण व्रत पर बैठ जाए.

यहां बात भी विचारणीय है कि कौन से राजा को उस ब्राह्मण ने कंगन भेंट किया. ब्राह्मण ग्रन्थ इस बात की मनाही करते हैं ब्राह्मण सें तोहफा या टैक्स लिया जाए. अतः कोई भी हिन्दू राजा तो इतनी हिम्मत कर नहीं सकता था कि वह "भूदेव" यानि धरती के मालिक ब्राह्मण सें कंगन ले ले. अगर किसी राजा ने कंगन लेने की हिम्मत कर भी ली तो भी वह ब्राह्मण को "सजा" की धमकी नहीं नहीं दे सकता था कि वह उसे उसके साथ का दूसरा कंगन और लाकर दे. किसी मुस्लिम यानि 'मलेच्छ' राजा को कंगन तो क्या असली ब्राह्मण कोई चीज दे नहीं सकता था. अतः जिस किसी भी पागल या धूर्त ने यह किस्सा घढ़ा वह 'ब्राह्मण' नामक प्राणी के कायदे कानूनों सें परिचत नहीं था. सो ऐसा किस्सेकार झूठे किस्से ही बनाएगा.

चौथा झूठ यह है कि गंगा एक नदी है कोई औरत नहीं है जिसके कि हाथ पांव हों. यह बात रैदास जी को भी पता थी. अतः यह कहना कि उन्होंने सुपारी इस शर्त पर दी कि गंगा स्वयं हाथ बढ़ा कर ले तभी देना, भी असोचनीय है. यह तो और भी बड़ा झूठ है कि गंगा ने अपने हाथ सें सुपारी ली और अपने हाथ सें ही कंगन दिया. आज भी भारत गंगापूजक ब्राह्मणों और गैर ब्राह्मणों सें भरा पड़ा है. उनमें सें कोई हाथ की तो बात ही छोड़ो कोई गंगा का नाखून भी नहीं दिखला सकता. गंगा नदी के न पहले कभी कोई हाथ थे न अब हैं और न ही कभी हो सकते हैं.

अगर गंगा के हाथ ही होते तो कम सें कम वह इतना तो कर ही सकती थी या कर भी सकती है कि जो लोग उसमें डूब कर मर जाते हैं उन्हें तो बचा लेती. कम सें कम मासूमों को तो बचा ही सकती है. उन्हें तो उठा कर किनारे पर रख ही सकती है. लेकिन गंगा ने ऐसा कभी नहीं किया. अतः वह भी आम नदियों नालों की तरह पानी का दरिया है. अगर उसके हाथ ही होते तो वह अपने में पड़ने वाले कचरे को तो बाहर फैंक देती. रामायण में वर्णित सीता की मन्नत को सही मान लें तो हजारों सालों तक पण्डों ने उसमें मांस शराब की भेंट चढ़वाई है, गंगा

उसे तो सहन न करती. कम सें कम आजकल रोजाना टनों के हिसाब सें उसमें हड्डियां डाली जा रही हैं उन्हें तो बाहर फैंक दे.

जहां तक गंगा द्वारा रैदास जी के लिए कंगन देने की बात है तो यह भी बनावटी बात है क्योंकि हर स्त्री पुरुष जानता है कि कंगन कभी भी 'एक' नहीं पहना जाता. कानों के झुमकों या पैरों की पायल की तरह कंगन हमेशा जोड़े में होते हैं तथा दोनों हाथों में ही पहने जाते हैं. लेकिन कथाकार अगर यह किस्सा बनाता कि गंगा ने एक जोड़ी कंगन दे दिया तब तो किस्सा वहीं समाप्त हो जाता क्योंकि रानी को दूसरा कंगन मांगने की जरूरत ही नहीं पड़ती. अतः कहानी आगे बढ़ाने के लिए उसने ऐसा किस्सा बनाया कि गंगा ने एक ही कंगन दिया. गंगा द्वारा एक ही कंगन देना यह दर्शाता है कि कथाकार ने जानबूझ कर ऐसी झूठी कथा बनाई है.

इस कथा में **सबसें बड़ा झूठ** और धोखा यह है कि धूर्त कथाकार उन्हें गंगापूजक बताने की धूर्तता कर रहा है जबकि सच्चाई यह है कि गुरू रैदास ने कभी भी गंगा या गंगाजल को पवित्र नहीं माना. उसे अलौकिक नहीं माना. गंगा के बारे में गुरू रैदास का कहना है कि गंगाजल अगर शराब में मिलाया जाए तो वह उसका नशा समाप्त नहीं करता. गंगा का पानी अगर जहर में मिलाया जाए तो वह उसका घातकपन समाप्त नहीं करता. अतः जब गंगाजल जहर और शराब को ही बेअसर नहीं कर सकता तो वह किसी के पाप क्या कम करेगा!! वे बोलेः

सुरा अपवित्र तिनि गंगाजल आनिए, सुरसरि मिलत नहीं होत आन!
मादक अपवित्र कर मानिए जैसे कागदकर करत विचार

अर्थात जैसे शराब अपवित्र है वैसे ही गंगाजल है. जहर में मिलकर यह उसे बेअसर नहीं करता. अतः इसे नशीला और अपवित्र माना जाना चाहिए. ग्रन्थ लिखने वालों को इस पर विचारना चाहिए. यानि गंगा को पवित्र बताने की कहानियां बनाने वालों को इस तथ्य पर विचार करना चाहिए.

जैसे वेदों के समय में ब्राह्मण यज्ञों में पशु मार कर खाते थे वैसे ही गुरू रैदास के जमाने में भी पण्डे सरेआम यज्ञों में पशुओं की बलि देते थे. कबीर साहेब की साखी इस बात की साक्षी है.

"पण्डे निपुण कसाई साधो पण्डे निपुण कसाई"
भेड मार बकरी को धावै मन में दया ना आई!
पण्डे निपुण कसाई साधो पण्डे निपुण कसाई"

प्राचीन काल यानि पहली सदी तथा उसके बाद तक ब्राह्मण यज्ञों में सोम नामक शराब भी पीते थे. वेद सें लेकर पुराण तक सोम की स्तुति करते नहीं थकते. हो सकता है रैदास कबीर साहेबान के जमाने में भी पण्डे सोम पीते हों तथा उसे गंगाजल में तैयार करते हों. इसीलिए गुरू रैदास ने गंगाजल को सुरा की तरह अपवित्र बताया हो. उनकी बाणी ब्राह्मणों ने जला दी थी. अतः इस विषय में उनकी और बाणी उपलब्ध नहीं हैं.

जहां तक रैदास जी द्वारा अपनी कठौती में गंगा बहाने की बात है तो यह भी बनावटी बात है ताकि गुरू रैदास को गंगापूजक सिद्ध किया जा सके. अपना कमाई का धन्धा जारी रखने के लिए ब्राह्मण यहां तक "गिर" सकते हैं कि वे अपनी पवित्रतम कहे जाने वाली गंगा को भी चमार की चमड़ा व पुराने जूते भिगोने की कूंडी में होने की कथा बना सकते हैं. अगर कठौती में ही गंगा है तो क्या कोई ब्राह्मण चमार की कठौती का पानी वैसे ही पी सकता है जैसे वह गंगाजल पीता है. अगर गुरू रैदास की कठौती में ही गंगा होती तो वे ब्राह्मण को गंगा में डालने के लिए सुपारी क्यों देते. वे वहीं अपनी कठौती में सुपारी डाल लेते और कंगन निकाल लेते.

और यह भी सोचने की बात है कि ब्राह्मण मनु का आदेश है कि दलितों के पास धन नहीं रहने दिया जाए. अगर किसी के पास धन आ भी जाए तो राजा उससें सोना छीन ले. अपने भगवान के आदेशों की उल्लंघन करते हुए गंगा ने रैदास जी के लिए सोने के कंगन दे दिए! आश्चर्य की बात है!! हां, उस ब्राह्मण ने अपने पूर्वजों के नियमों का पूरा पालन किया और कंगन रैदास जी को देने की बजाए राजा को ही दे दिया.

अतः कुल मिला कर यह कहानी कथाकार की धूर्तता के साथ साथ उसके दिमागी दिवालियेपन का भी दर्शाती है. इस झूठी कथा सें रैदास जी तो गंगापूजक साबित नहीं होते अन्यथा कथाकार की धूर्तता और पागलपन जरूर साबित होते हैं. जैसे एक झूठ को छिपाने के लिए हजार झूठ और बोलने पड़ते है वैसे ही कथाकार ने एक झूठ को सच बनाने के लिए बार बार कहानी में झूठ पर झूठ का सहारा लिया है.

इस कथा का सत्य : इस कथा में अगर कोई सत्य है तो इतना कि ब्राह्मण धन पाने के लिए अपने धर्म सें भी दगा कर सकता है. अपने धर्मग्रन्थों की अवमानना कर सकता है. **अमानत में खयानत कर सकता है.**

गंगा हमारी माँ : यह अटल सत्य है कि गंगा नदी भारतवासियों की माँ है. जैसे माँ अपना दूध पिला कर बच्चों को पालती है गंगा ने हमें सदियों सें अपना पानी पिला कर पाला है. हमारे खेतों को पानी दिया है. अन्न उपजाया है. अगर भारत में गंगा नदी न होती तो आज भारत का आधा भाग रेगिस्तान होता. गंगा ने हमें जीवन दिया है. इसलिए वह हमारी माँ है. भारत की जितनी भी नदियां हैं वे सब हमारी माँ हैं. उन्हीं की बदौलत हम भारतीय जिन्दा हैं, आबाद हैं. अगर भारत में नदियां न होतीं तो आज भारत और सहारा रेगिस्तान में कोई अंतर नहीं होता.

गंगा के पानी को लेकर एक वहम यह फैलाया गया है कि गंगा का पानी पवित्र है क्योंकि यह बरसों तक सड़ता नहीं है. गंगा के पानी के न सड़ने का कारण इसकी पवित्रता नहीं बल्कि उसके पानी में मिली गंधक की मात्रा है. किसी भी पानी में गंधक मिलाने सें वह सड़ता नहीं है. यह बिलकुल वैसा ही है जैसे आजकल डिब्बा बंद खाद्य पदार्थ मिलते हैं. घर पर सुबह बनाई गई सब्जी रात तक बास जाती है लेकिन उसी सब्जी में जब गंधक जैसे तत्व मिला दिए जाते हैं तो वह भी महीनों खराब नहीं होती. यही कारण गंगा के पानी के साथ है. आम लोगों को इसका पता नहीं सो ब्राह्मणों ने कथा बना ली कि गंगा पवित्र है तथा स्वर्ग सें आई है.

कितने शर्म और दुख की बात है कि नदियों के प्रति हमारे इस अहसान को भी ब्राह्मणों ने कमाई का साधन बना लिया है. हम नदियों को माँ कहते हैं क्योंकि वे हमें जीवनदायी जल देती है और ब्राह्मणों को देखो वे इतने नीच हैं कि हमारी इस आस्था को ही अपनी कमाई का साधन बनाए बैठे हैं. जगह जगह तीर्थ बना रखे हैं. उन तीर्थ स्थानों का नदी सें कोई लेना देना नहीं फिर भी प्रचार करके वहां कमाई के अड्डे खोल रखे हैं. अब इलाहाबाद में गंगा और जमना बहती हुई आपस में मिल गईं तो इसमें अनोखा क्या हो गया. पानी है ढलान में बहेगा ही. जमीन में नहीं तो समुद्र में तो सब ने मिल ही जाना है. लेकिन ब्राह्मणों ने ढकोसला बना दिया कि यह सबसें पवित्र तीर्थ है. चाहे किसी ने जिन्दगी भर कितने भी पाप किए हों जो यहां मर जाएगा वह सीधा स्वर्ग जाएगा!! चालाक दुकानदार की तरह ब्राह्मण अपने तीर्थ स्थान भी सोच समझ कर बनाते हैं. गंगा जमना के मिलने पर तो तीर्थ बना लिया लेकिन समुद्र में कोई तीर्थ नहीं बनाया जहां सब की सब नदियां आकर मिल जाती हैं. उन्हें पता है समुद्र पर तीर्थ यात्रियों का आना दुश्कर है.

3.5 अपनी छाती में जनेऊ दिखाना

ऐसे ही उनके बारे में एक अन्य किस्सा है कि गुरू रैदास आम ब्राह्मणों की तरह पूजा पाठ आदि करने लग गए तो ब्राह्मणों ने उन्हें सें रोका. मामला राजा के दरबार तक पहुंचा. ब्राह्मणों ने वेद विधि अनुसार धारण किए गए अपने जनेऊ सबूत के तौर पर दिखाए कि वे ब्राह्मण हैं अतः ब्राह्मण शास्त्रों अनुसार सिर्फ वे ही पूजा पाठ का सकते हैं और रैदास जी क्योंकि शूद्र हैं इसलिए वे पूजा पाठ नहीं कर सकते. तब गुरू रैदास ने स्वयं को ब्राह्मण सिद्ध करने के लिए अपनी छाती चीर कर उसमें छिपे सात रंग के जनेऊ दिखाए. ब्राह्मण हार गए और रैदास जी को कर्मकांड करने की अनुमति मिल गई.

यह किस्सा भी दो कारणों सें झूठा है. पहला तो इस बात सें कि किसी भी आदमी के शरीर में जनेऊ नाम की चीज होती ही नहीं है. कोई कितना भी बड़ा ब्राह्मण हो, सन्त हो अथवा देवता हो किसी में भी शारीरिक रूप जनेऊ नहीं होते. भगवान ने किसी भी प्राणी के शरीर के अंदर जनेऊ नहीं बनाए हैं. अतः कोई भी आदमी अपने शरीर में सें निकाल कर जनेऊ दिखा ही नहीं सकता. जनेऊ ब्राह्मणों का बनाया हुआ पाखण्ड मात्र है.

दूसरा झूठ यह है कि गुरू रैदास ने सदा ब्राह्मणिक कर्मकांड की निन्दा की है. **उन्होंने हमेशा जनेऊ और जनेऊ धारकों की निंदा की है.** उन्होंने कभी भी जनेऊ, तिलक अथवा ऐसे किसी भी ब्राह्मणिक पाखण्ड को नहीं अपनाया. अतः यह सवाल ही पैदा नहीं होता कि वे किसी को अपना सीना चीर कर जनेऊ दिखाएं. उन्होंने झूठी ब्राह्मणिक शान का अन्त करते हुए कहाः

रैदास बामण और चण्डाल में नाहिं अन्तर जान!
दोनों में एक ही रक्त मांस है दोनो एक समान!!

उन्होंने जाति की बजाए आदमी के गुणों पर बल देते हुए कहा :

रैदास बामण ना पूजिए जो होवै शील गुण हीन!
पूजो चरण चण्डाल के, जो होवै गुण परवीण!!

ब्राह्मणिक आडम्बरों की बजाए उन्होंने नैतिक कार्य करने पर बल दिया. वे बोले :

रैदास जन्म के कारणे होत न कोउ नीच!
नर को नीच करे डारे है ओछे करमों की कीच!!

वास्तव में इन कथाओं का एक ही मकसद है कि दलितों में इस हीन भावना को बनाए रखा जाए कि वे तुच्छ प्राणी है तथा उनमें कोई विद्वान हो ही नहीं सकता. वे यही मानते रहें कि विद्वान, सन्त, गुरू आदि सिर्फ और सिर्फ ब्राह्मणों में ही पैदा हो सकते हैं. अगर कोई इस जन्म में दलित के घर पैदा हो भी गया तो वह जरूर पिछले जन्म में ब्राह्मण रहा होगा. **इसी रणनीति के आधार पर आज ब्राह्मणवादी आरक्षण के विरुद्ध आवाज उठा रहें हैं. उनका मानना है कि दलित अयोग्य होते हैं. जबकि सच्चाई यही है कि आज तक भारत में जितने भी सन्त हुए हैं, जितने भी सिपाही हुए हैं, जितने भी वैज्ञानिक हुए हैं, जितने भी सम्राट हुए हैं, सबके सब दलित जातियों सें थे!!**

इन कहानियों में चाहे ब्राह्मण 'हार गए' हों लेकिन वास्तविकता में वे जीत गए हैं. वे अपने मकसद में कामयाब हो गए हैं. उनका लक्ष्य दलितों को अपने मायाजाल में फंसाए रखना है जिसमें वे सफल हो गए हैं. उनका मकसद दलितों को उनके सन्त सिपाहियों की बाणी सें दूर करना था जिसमें भी वे कामयाब हो गए हैं इसका सबूत यह है कि कई शहरों में रैदास–मंदिर बनाए गए हैं जहां नित्य राम कृष्ण की आरतियां गाईं जाती हैं. कई मंदिरों वाले तो स्पैशल हरिद्वार तक की यात्रा निकालते हैं. गुरू रैदास के साथ इससें बड़ा अन्याय और क्या होगा कि जिन पाखण्डों का उन्होंने विरोध किया वही पाखण्ड दलित लोग उन्हीं का नाम लेकर कर रहे हैं.

लगभग सभी दलितों ने अपने घरों में ऐसी ही तस्वीरें टांग रखी हैं जहां गुरू रैदास गंगा किनारे बैठे हैं, कठौती में सें कंगन निकाल कर ब्राह्मण को दे रहे हैं या फिर अपना सीना चीर कर ब्राह्मण होने का सबूत जनेऊ दिखा रहे हैं. किसी भी तस्वीर में **उनका यह आदेश नहीं छपा होता "ऐसा चाहूं राज मैं . . ." जो कि उनका असली संदेश है.**

कुछेक तस्वीरों में कृष्ण की फोटो भी छाप रखी होती है जबकि सच्चाई यह है कि कृष्ण जैसा चरित्रहीन और धोखेबाज आदमी गुरू रैदास जैसे महान सन्त के लिए कभी पूजनीय नहीं रहा. रैदास जी के मन में कृष्ण की 'कद्र' इतनी थी कि अपनी पूरी बाणी में कहीं भी उन्होंने उसका नाम लेना भी गवारा नहीं किया. अतः जो लोग गुरू रैदास के साथ कृष्ण की तस्वीर छापते हैं वे निश्चित रूप में महाधूर्त हैं दलितों के दुश्मन हैं क्योंकि वे उन्हें गुमराह कर रहे हैं.

दलितों को इन झूठे फंदों सें बचना चाहिए. जो व्यक्ति खुद को दलित कहता है उसे समझना चाहिए कि **दलित सन्तों सिपाहियों ने उन्हें दो ही काम बताए हैंः पहला नेकी और सच्चाई की राह पर चलो. दूसरा अपना खोया हुआ राज फिर सें प्राप्त करो. राजनीतिक सत्ता के बिना दलितों की हालत नहीं सुधर सकती.** गुरू रैदास के इसी मूल मन्त्र को **बाबा साहिब** ने इस प्रकार सें कहा है :

शिक्षित बनो, संघर्ष करो, संगठित बनो तथा संसद पर कब्जा करो!!

सभी सन्तों ने धर्म के बारे में कुछ सांझी बातें कही और मानी हैं :

* उन्होंनें चमत्कार दिखाने वालों का न केवल खण्डण किया बल्कि उनका विरोध भी किया.
* सभी सन्त न तो मूर्ति पूजक थे न गंगा पूजक थे. उन्होनें मूर्ति पूजा करवाने वालों को मन, वचन कर्म सें जलने वाले (पापी) बताया.
* सभी सन्तों ने "राम" का नाम लिया **और** सभी ने स्पष्ट कहा कि राम पुत्र दसरथ उनका राम **नहीं** है.
* उन्होंने गंगा जल को कभी भी पवित्र नहीं माना और न ही गंगा में स्नान करने में धर्म माना.
* उन्होंने धर्म के नाम पर किए जा रहे सब प्रकार के कर्म कांडों और पाखंडों का विरोध किया.
* उन्होंने वेद, पुराण, गीता, ब्रह्मा, विष्णु महेश आदि सभी का खण्डन किया. अतः जब कुछेक तस्वीर छापने वाले दलित सन्तों की तस्वीर के साथ जानबूझ कर कृष्ण आदि की तस्वीर भी बना देते हैं, तो ऐसा करने वाले लोग सचमुच धूर्त हैं.
* **सभी सन्त गैर–ब्राह्मण या दलित थे. क्या यह हैरानी की बात नहीं है कि एक भी सन्त ब्राह्मण नहीं था.** फिर भी ब्राह्मण तमाम धर्म स्थलों पर कब्जा किए बैठे हैं!
* **सभी सन्तों ने भगवन बुद्ध का मार्ग अपनाते हुए सदाचार को ही "ईश्वर" का दर्जा दिया. सभी सन्तों ने किसी सृष्टिर्ता, सृष्टिपालक और सृष्टिविनाशक ईश्वर के अस्तित्व सें इंकार किया.**

अतः जो भी लोग दलित सन्तों के साथ ब्राह्मणिक भगवान जोड़ते हैं अथवा ब्राह्मणिक कर्मकांड जोड़ते हैं ऐसे लोग पूरी मानवता तथ खाासकर दलित समाज के दोषी हैं. ऐसे धूर्त लोग दलित समाज द्वारा सजा देने के योग्य हैं.

अध्याय 4

रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहीं

ब्राह्मणों ने किस्से कहानियों में ही गुरू रैदास को ब्राह्मणधर्मी नहीं बताया है बल्कि उनके मिशन में भी घात लगाई है. रैदास जी की बाणी पढ़ कर साफ दिखता है कि उन्होंने ब्राह्मणों के सभी ग्रन्थ : वेद, पुराण, गीता, उपनिषद, रामायण, महाभारत आदि पढ़ लिए थे. उन्होंने सभी ब्राह्मणिक देवी देवों भगवानों की करतूतें जान लीं थीं. इसलिए जहां भी उन्होंने इनका जिक्र किया है वहां इनका खण्डन ही किया है. इस विषय पर इस पुस्तक में आवश्यकता अनुसार उनकी बाणी दी गई है.

आजकल बाजारों में जो तस्वीरें अथवा किताबें आ रहीं हैं उसमें सभी दलित गुरूओं के साथ खिलवाड़ किया गया है. उदाहरणतः जहां भी भगवान वाल्मिकी का चित्र छापा जाता है वहां उनके सामने एक किताब खुली होती है जिस पर वे लिख रहे होते हैं "रघुकुल रीत सदा चली आई, प्राण जाएं वचन न जाई" जबकि सच्चाई यह है कि उन्होंने कभी भी रघुकुल को सच्चा नहीं बताया. उन्होंने तो अपनी रामायण में यह सच्चाई बताई है कि रघुकुल में किसी ने भी कभी भी अपने वचनों का पालन नहीं किया है और अपना वचन तोड़ कर कभी किसी रघुकुलिये के प्राण नहीं गए हैं. चाहे वह दसरथ हो जिसने कैकेई के बाप को यह वचन दिया था कि केवल कैकेई के गर्भ सें जन्मा पुत्र ही गद्दी का वारिस होगा लेकिन जब गद्दी देने का वक्त आया तो कैकेई के पुत्र भरत को ननिहाल भेज दिया गया और राम को गद्दी सौंप दी गई. चाहे वह राम हो जिसने वन में जाते हुए वचन दिया था कि वह वन में जीव हत्या नहीं करेगा, मांस नहीं खाएगा लेकिन उसने जंगल में इतने निरीह जीव मारे कि जिधर सें वह निकलता था जंगल के जानवरों में त्राहि त्राहि मच जाती थी.

ऐसे ही सतगुरु कबीर के साथ किया गया है. उनकी हर तस्वीर में उनके माथे पर कृष्ण मार्का मोरपंख बनाया गया होता है जबकि उन्होंने कृष्ण की हर जगह भण्डी की है. आजकल तो एक चित्र और जोड़ दिया गया है. ब्राह्मणों का एक भैंस रंभाने जैसा बेकार का शब्द है "ओं". जब ओं को लम्बा करके बोला जाता है तो ऐसा लगता है जैसे भैंस रंभा रही हो. इस ओं का कोई अर्थ नहीं है लेकिन दुनिया को बेवकूफ बनाने के लिए ब्राह्मणिक 'विद्वानों' ने इस पर पोथे लिख मारे हैं. आजकल उन्होंने सतगुरु कबीर को भी इसकी चपेट में ले लिया है. उनके चित्र के साथ बड़े ऊ की शक्ल बनाई गई होती है जिसमें सें किरणे निकल कर कबीर साहेब पर पड़ रही होती है जबकि सच्चाई यह है कि उन्होंने हर प्रकार के ब्राह्मणिक देवी, देवता, भगवान, यज्ञ, तिलक, ओम जैसे पाखण्ड की धज्जियां उड़ा दी थीं. **यह सतगुरु कबीर ही थे जिनके चरणों में आकर रामानन्द जैसे घमण्डी ब्राह्मण ने अपना माथा टेक दिया था और उसने कबीर साहेब को अपना गुरू मानकर सब ब्राह्मणिक पाखण्ड छोड़ दिए थे.**

समस्त ब्राह्मणिक भगवानों का खण्डन करते हुए कबीर साहेब बोले :

ईश्वर, नारायण, हरि, राम, कृष्ण, घनश्याम!
ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सब माया कल्पित नाम!!

ऐसे ही गुरू रैदास सें धोखा किया गया है. जहां सन्त कबीर ने खुल्लम खुला वेदों पुराणों तथा ब्राह्मणिक पाखण्डों की आलोचना की, उनके ही हमसहरी सन्त सिपाही रैदास ने **अछूत राज** की मांग करके ब्राह्मणों की नींद उड़ा दी थी. ब्राह्मणिक विद्वान सदा सें ही राम राज्य का राग अलापते रहे हैं जहां सिर्फ और सिर्फ ब्राह्मणों का ही वर्चस्व होता है. जहां राजा को अश्वमेध यज्ञ करने होते थे और अपनी पत्नि तक ब्राह्मणों को संभोग के लिए सौंपनी पड़ती थी!! धन माल अलग सें देना होता था. इसलिए गुरू रैदास ने अपने हमसहरी कबीर साहेब के साथ मिल कर उन्होंने राम पुत्र दसरथ का खण्डन किया. **यह एक तथ्य है कि सभी सन्तों ने राम का नाम लिया है लेकिन किसी भी सन्त ने राम पुत्र दसरथ को अपना राम नहीं माना है.**

कबीर साहेब ने कहा :

राम जगत में चार हैं!
एक राम दसरथ का बेटा!
एक राम घट घट में थेटा!

एक राम का सकल पसारा!
सन्तों का राम है सब सें न्यारा!!

अर्थात लोग चार प्रकार के रामों को मानते हैं. एक राम वह है जो दसरथ का बेटा बताया जाता है. एक राम वह है जो नैतिकता कहलाता है और जब कोई गलत काम करता है तो कहा जाता है कि उसका तो राम ही निकल गया. एक राम हमारा धरती आकाश है जिसके बिना कोई जिन्दा नहीं रह सकता. और सन्तों को राम इन सबसें बढ़ कर है. उनका राम निर्वाण का परम पद है जिसे प्राप्त करके आदमी को सारी दुनिया एक लगती है. कोई ऊँचा नहीं कोई नीचा नहीं. **इस तरह सें सन्तों का राम वह राम नहीं जिसे दसरथ का बेटा कहा जाता है.**

उन्होंने आगे फिर कहा : **राम कबीरा एक हैं, कहन सुनन में दोय!**

गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज है : **राम गयो रावण गयो जाको जग में नाम** अर्थात दसरथ का बेटा राम भी मर गया है और (महात्मा) रावण भी मर गए है जिनका दुनिया भर में नाम है.

गुरू रैदास ने हर प्रकार की अटकलों को विराम देते हुए स्पष्ट कहा :

रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहीं!
राम रम रह्यो हमीं में, बसै कुटुम्ब मांहीं!!

अर्थात हम सन्तों के रामजी वह राम नहीं है जो दसरथ का बेटा कहा जाता है. सन्तों के राम तो उन्हीं के अंदर रच बस रहे हैं. उनका राम उनसें अलग नहीं हैं. उनका राम न केवल उनमें बसा हुआ है बल्कि पूरी दुनिया में समाया हुआ है.

इस तरह राम पुत्र दसरथ को किसी भी सन्त ने अपना राम नहीं माना. केवल तुलसी ने राम पुत्र दसरथ को अपना राम माना था क्योंकि जैसे राम ने सीता और सरूपनखा पर अत्याचार किए वैसे ही तुलसी ने पूरी स्त्री जाति को गाली दी. तुलसी बोला : नारी ताड़न की अधिकारी अर्थात स्त्री केवल मारपीट करने सें ही ठीक रहती है. नारी चाहे तुलसी की माँ हो, बहन हो अथवा पत्नि हो, तुलसी के अनुसार वे मारपीट करने सें ही काबू में रहती हैं! राम ने सरूपनखा के तो नाक कान कटवाए और पूरे दिनों की गर्भवती सीता को जंगल में फिंकवा दिया. उसके भक्त तुलसी ने पूरी नारी जाति को गाली दे दीं! अब ऐसे नीच को कोई सन्त कहे तो यह उसकी धूर्तता की निशानी ही है.

तुलसी यहीं चुप नहीं रहा. वह आगे बोला :

भ्राता, पिता, पुत्र उरगारी, पुरुष मनोहर निरखत नारी!
होइ विकल मनहिं न रोकी, जिमि रविमनि द्रव रबिहि बिलोकी!!

तुलसी कहता है कि नारी पुरुष की सुन्दरता देखते ही उस पर मोहित हो जाती है चाहे वह उसका भाई, पिता अथवा **पेट सें जन्मा पुत्र** ही क्यों न हो. जैसे सूर्य की गर्मी में मक्खन पिघल जाता है वैसे ही सुन्दर नर को देखते ही नारी का मन तड़प उठता है.

उसने यह भी कहा :

नारी सुभाव सत्य सब कहहिं, अवगुण सदा आठ उर रहहिं!
साहस अनृत चपलता माया, भय अविवेक असोच अदाया!!

अर्थात सभी ब्राह्मण विद्वानों ने सत्य कहा है कि नारी के आठ गुण हैं जो सदा उसके पेट में रहते हैं – हिम्मत, झूठ, चंचलता छल, डर, मूर्खता, अपवित्रता और निर्दयता.

तुलसी के वारिसों सें पूछा जा सकता है कि क्या ब्राह्मणों की देवियां भी ऐसी ही हैं! एक सीता के बारे में तो हम दावे सें कह सकते हैं कि वह ऐसी नहीं थी. बाकी देव पत्नियां, ऋषि पत्नियां, हो सकता है तुलसी के कहे अनुसार अनाचार करने की हिम्मत रखती हों, झूठ बोलती हों, एक जगह टिकती न हों, अपने पतियों सें बेवफाई करती हों या मित्रों को धोखा देती हों, डरपोक हों, मूर्ख हों, राधा की तरह अपना पति छोड़ कर भांजे कृष्ण सें अपवित्र सम्बंध बनाती हों, या काली दुर्गा आदि की तरह मानव खून पीने वाली निर्दयी हों. लेकिन कुछेक ऐसी डायनों की वजह सें पूरी नारी जाति को गाली देना तो ठीक नहीं है.

ऐसा लगता है तुलसी के परिवार में नारियां ऐसी ही होती थीं. वहां ब्राह्मणिक सत्ययुग की तरह ब्रह्मा वाला हाल होता होगा. जैसे ब्रह्मा ने अपनी बेटी पर नीयत खराब कर ली वैसे ही लगता है तुलसी के परिवार में किसी स्त्री ने अपने बेटे पर नीयत खराब कर ली होगी! तभी तुलसी ने माँ बेटे के पवित्र रिश्ते पर भी छींटाकशी की है.

अपने खानदान की कुछेक ओछी नारियों की वजह सें पूरी नारी जाति को बदनाम करने वाला तुलसी अन्धे कूएं में डालने योग्य है.

जहां तक गुरू रैदास का सम्बंध है उनके साथ ब्राह्मणधर्मियों ने हर प्रकार सें धोखा किया है. उनकी शिक्षाओं को समाप्त करने के लिए झूठे किस्से तो बनाए ही अब उनके चित्र के साथ भी धोखा किया जा रहा है. एक तो उनकी तस्वीर में उनका जो चित्र बनाया होता है उनके हाथ में एक चिट पकड़ाई होती है जिस पर "राम" लिखा होता है दूसरे उनकी कुटिया में कृष्ण का चित्र बनाया होता है. अतः जो लोग गुरू रैदास को नमन करते हैं उन्हें मजबूरन कृष्ण और राम को भी नमन करना पड़ जाता है. अतः यह जानना जरूरी है कि राम और कृष्ण कैसे चरित्र के प्राणी थे और दलित सन्त उनके बारे में कैसी राय रखते थे.

पहले कृष्ण को लेते हैं. संक्षेप में उसके करनामें इस प्रकार सें हैंः

* कृष्ण को अगर वासना का पुतला कहें तो कोई बड़ी बात नहीं होगी. महाभारत, भागवत, ब्रह्मावैवर्त पुराण आदि पढ़ कर लगता है कि उसने अपनी जन्म देने वाली माँ के सिवाय किसी भी औरत सें शारीरिक सम्बंध बनाने सें नहीं चूका. इन ग्रन्थों के अनुसार राधा यशोदा के सगे भाई रायण की पत्नि थी. अतः रिश्ते में कृष्ण की मामी लगती थी क्योंकि वह यशोदा का दूध पीकर ही बड़ा हुआ था. दोनों ने नित्य संभोग करने के लिए रायण को नपुंसक बना दिया था. (ब्रह्मावैवर्त पुराण)

* जहां भी कृष्ण रहा उसने वहां की स्त्रियों सें अनैतिक सम्बंध बनाए. गोपियां अपने दूध पीते बच्चों, सोये हुए पतियों को छोड़ कर उसके साथ रमण करने आ जातीं थीं. कुछ तो इतनी आवारा थीं कि घर वालों के रोकने सें भी नहीं रुकती थीं.

* ऐसा नहीं कि उसने गैरों की बहन बेटियों के साथ ही ऐसा किया. जब दांव लगा तो उसने अपनी बहन सुभद्रा को भी नहीं बख्शा. वह कहीं और शादी कर रही थी जो कृष्ण को मंजूर नहीं थी. अतः उसने एन शादी के वक्त अर्जुन के हाथों अपनी बहन उठवा दी. अर्जुन को अपनी चमचागिरी का इससें अच्छा फल और क्या मिल सकता था!!

* उसके वासनामयी कथाओं में नहाती हुई गोपियों के कपड़े उठाने की कथा शामिल है. इस कथा को कथावाचक पूरे आनन्द के साथ सुनाते हैं कि जब कृष्ण ने उन गोपियों के कपड़े उठा लिए तो वे कैसे थोड़ा थोड़ा करके पानी सें बाहर आईं और कैसे उनके सारे अंग कृष्ण ने देखे. पूछा जा सकता है कि अगर कोई उनकी बहन बेटी के साथ ऐसा करे तो !!तो क्या वे उसे भगवान मान लेंगे और अपनी बहन बेटी के नंगे होने की कथा भी ऐसे ही मजे लेकर सुनाएंगे.

* कौरव और पांडव, खासकर युधिष्ठर नीचतम किस्म का जुआरी था. उसने जूए के दांव में न केवल धन दौलत हारी बल्कि अपने छोटे भाई की पत्नि तक दांव पर लगा दी. ऐसे बेगैरत को धर्मराज कहा जाता है. आज कोई ऐसा काम कर ले तो लोग ही उसका मूंह काला करके गधे पर बैठा कर इतने जूते मारें कि उसकी सारी जूआगिरी निकल जाए. खैर कौरवों ने द्रोपदी तो लौटा दी मगर धन वापिस नहीं किया. दोनों पक्षों में झगड़ा हो गया. नौबत मरने मारने की आ गई. अर्जुन बोला मैं (जूए में हारे हुए) धन के लिए अपने गुरू दादा नाना मामा भाईओं को नहीं मारूंगा लेकिन कृष्ण ने उसे गीता की ऐसी पट्टी पढ़ाई कि उनका सारा खानदान ही तबाह करवा दिया. अगर गीता में कही उसकी बातें दुनिया वाले मान लें तो प्यार प्रेम सें किसी भी झगड़े का निपटारा कोई न करे और कुछेक दिनों में सारी दुनिया कौरव पांडवों की तरह लड़ मरें!!

* कृष्ण ने गीता में कहा कि वह पाप करने वालों को वैश्य और शूद्र जूणी में पैदा करता है. अगर ऐसा है तो वह स्वयं शूद्र क्यों पैदा हुआ. अगर वैश्य और शूद्र पाप योनि हैं तो बिड़ला जैसे वैश्य करोड़पति क्यों हैं, अगर उन्होंने पाप ही किये हैं तो वे इतने बड़े कारखानों के मालिक क्यो हैं. जहां अनेकों ब्राह्मण उनकी चाकरी करते हैं. शूद्र अगर पापयोनि हैं तो बाबा साहिब सब ब्राह्मणों सें अधिक पढ़े लिखे विद्वान क्यों हैं, बाबू जगजीवन राम उप प्रधान मन्त्री तक क्यों बन पाये, श्रद्धेय के आर नारायणन राष्ट्रपति अर्थात तीनों सेनाओं के चीफ कमांडर क्यों बन पाए जहां ब्राह्मण सेनापति को भी उन्हें सल्यूट मारना पड़ता था. मान्यवर बालाकृष्णन भारत के सर्वोच्च न्यायधीष क्यों बने जिनका एक एक शब्द कानून होता है!! अतः गीता में कोरी बकवास है और कुछ नहीं!!!

* कृष्ण का ढिंढोरा पीटा जाता है कि उसने गीता में आत्मा का ज्ञान दिया है. उसके अनुसार आत्मा पर हवा, पानी, आग, तीर, तलवार आदि किसी चीज का असर नहीं होता है. पूछा जा सकता है कि मरने पर हम

शरीर तो यहीं जला देते हैं आत्मा पर किसी चीज का असर नहीं है तो पाप की सजा कौन पाता है? अगर सजा अगले जन्म के शरीर को मिलती है तो उस बेचारे का क्या कसूर है? आचार्य चतुरसेन ने सही कहा है कि जिस किसी ने भी गीता रची है उसने ब्राह्मणों के लिए सारी उम्र की रोजी रोटी का प्रबन्ध कर दिया है.

* उसने अर्जुन के साथ मिल कर खांडव वन में रहने वाले हजारों नर, नारियों बच्चों बूढ़ों को आग में जिन्दा जला दिया. जो बच्चे या जवान आग सें बचकर बाहर निकले उन्हें भी पकड़ कर उन दोनों ने वापिस आग में फैंक दिया. आज कोई ऐसा करता तो निश्चित रूप में फांसी पर लटका दिया गया होता!!

कृष्ण की इन्हीं करतूतों के कारण गुरू रैदास और उनके हमसहरी गुरू कबीर ने अपनी पूरी बाणी में कृष्ण का नाम भी नहीं लिया है. उन्होंने उसे इस लायक भी नहीं समझा कि उसकी भण्डी तो करते. केवल एक श्लोक में कबीर साहेब ने अन्य ब्राह्मणिक देवों के साथ उसे भी कल्पित पात्र बता दिया है. बस कृष्ण की इतनी ही अहमीयत थी इन सन्तों की नजर में. अतः उनकी तस्वीर के साथ कृष्ण का चित्र बनाने वाले धूर्त हैं. वे लोगों को विशेषकर दलितों को गुमराह करते हैं कि दलित सन्तों का कृष्ण जैसे ओछे प्राणी सें भी सम्बंध था. अतः ऐसी कल्पना करना भी अपराध है कि इन सन्तों ने कृष्ण को भगवान माना.

जहां तक राम का सम्बंध है उसमें और कृष्ण में इतना ही अंतर है कि जहां कृष्ण ने किसी की भी बहन बेटी नहीं छोड़ी राम जड़ सें ही नपुंसक बाप की नपुंसक औलाद था. साढे सताइस साल सीता के साथ रह कर वह बाप की तरह **बांझ** ही रहा. वह न केवल तन सें बांझ था बल्कि मन सें भी नपुंसक था. उसके मन में दया, प्रेम, वफा आदि का नामोनिशान भी नहीं था. उसने जंगलों के निरीह प्राणी इस कदर मारे कि जिधर सें भी वह गुजरता था उधर के पशुओं में भगदड़ मच जाती थी. सीता के साथ जिस निर्दयता सें उसने व्यवहार किया उसकी मिसाल दुनिया में दूसरी नहीं मिलती! सही कहा गया है :

जिनके हिरदै नहीं प्रेम रस, करते नहीं सद्काम!
कबीरा ऐसे पुरुष संसार में जन्में मरे बेकाम!!

सर्वप्रथम यह एक तथ्य है कि भगवान वाल्मिकी ने सबसें पहले रामायण लिखी थी. उनके बाद अनेकों लोगों ने रामकहानी लिखी. उनकी रामयण में बहुत छेड़छाड़ की गई है. जहां उन्होंने राम को मात्र एक आम आदमी की तरह चित्रित किया था बाद में उनकी रामायण में अन्य अध्याय भी जोड़ दिए गए. साधारण से प्राणी राम को अवतार बताने की कोशिश की गई. वाल्मिकी रामायण में राम तुच्छ सा प्राणी है जो अपनी पत्नि के खो जाने पर जोर जोर सें रोता है, हिरण को सोने का समझ कर उसके पीछे भागता है जबकि बच्चा भी यह जानता है कि कोई भी जीवित प्राणी धातु का नहीं हो सकता!

रामायण में राम का चरित्र देखें तो हम राम को शारीरिक, मानसिक व नैतिक रूप में एक घटिया प्राणी पाते हैं. इसीलिए भगवान वाल्मिकी ने जहां पग पग पर महाराजा रावण को महात्मा, महातेजस्वी बताया है राम को कभी ऐसा नहीं कहा. यहां तक कि सीता के मुख सें भी राम को पुरुष के भेष में स्त्री (नामर्द) कहलवाया है. राम के जीवन के मुख्य कारनामें इस प्रकार सें हैं.

हरामी जन्म : ब्राह्मणिक ग्रन्थों के अनुसार राम का जन्म कौशल्या और दशरथ के मिलन सें नहीं हुआ बल्कि ब्राह्मण ऋषि ऋष्यश्रृंग और कौशल्या के मिलन सें हुआ है. राम के जन्म के समय दशरथ तो बिल्कुल बूढ़ा हो चुका था. कहा जा सकता है अगर राम का जन्म ब्राह्मण ऋषि ऋष्यश्रृंग और कौशल्या के नाजायज सम्बंधों से हुआ है तो इसमें पैदा होने वाले बच्चे यानि राम का क्या दोष है. इसमें राम का दोष यह है कि उसे विष्णु का अवतार बताया जाता है तथा उसने पूरी योजना बना कर जन्म लिया था कि धरती पर पैदा होकर उसने महात्मा रावण की हत्या करनी है. जब वह योजना बना कर ही पैदा हुआ था तो कम सें कम बाप तो मर्द चुनता ताकि उसकी माँ को उसे पैदा करने के लिए गैरों सें सम्बंध न बनाने पड़ते. और उसकी माँ ने सम्बंध भी किससें बनाए – ऋष्यश्रृंग सें जो रिष्ते में दसरथ का जंवाई था!!

कबीर साहेब ने राम के जन्म पर चुटकी ली. वे बोले :

देखो लोगो राम की सगाई,
हम बहनोई, राम हमारा साला,
हमहि बाप, राम पुत हमारा

अर्थात राम का (सगापन) रिश्ता देखो. ऋष्यश्रृंग राम का जीजा लगता है तथा राम उसका साला लगता है. फिर वही उसका बाप बना है तथा राम उसका जन्म दिया बेटा है. ऐसा सगापन है राम की रिश्तेदारी में!!

ऐसे नाजायज रिश्ते वाले को कौन सन्त अपना राम मानेगा!!

राम जन्म की कथा रामायण के बालकाण्ड में वर्णित है. शादी के बहुत साल बीत जाने पर भी दसरथ बाप नहीं बन पाता. तब वह अश्वमेध तथा पुत्रेष्टि तथा अश्वमेध यज्ञ करता है. रामायण में बिलकुल स्पष्ट लिखा है कि इन यज्ञों में तमाम शास्त्र विधियां की गई तथा कोई भी विधि भूले सें भी नहीं छूटी!!

यजुर्वेद में अश्वमेध यज्ञ करने की विधि दी गई है जो कि बेहद अश्लील है. हम आगे इसे यथासंभव शालीनता सें बताने की कोशिश कर रहे हैं. अश्वमेध यज्ञ में एक घोड़ा छोड़ा जाता है. वह कई जगहों पर घूम कर जब वापिस आता है तो उसे यज्ञ वेदी पर काट कर भूना जाता है तथा सोम नामक शराब के साथ खाया जाता है. सबके सब ऋषि, यजमान व रानियां अपना अपना हिस्सा खाते हैं. उस समय यजमान के कहने पर पटरानी तथा मुख्य ऋत्विक सबके सामने शारीरिक सम्बंध बनाते हैं. यजमान मुख्य ऋत्विक सें कहता है कि मेरी रानी की टांगे उठाओ और उसकी योनि में अपना लिंग ठूंसो. तब पटरानी कहती है कि कोई उससें संभोग नहीं करता तो जवाब में अन्य रानियां कहती है कि उसकी योनि तो वीर्य सें भरी पड़ी है फिर भी वह क्यों दुखराती है. उसके बाद अन्य रानियों के साथ भी ऐसा ही कुछ होता है. इस यज्ञ में पटरानी कौशल्या थी, मुख्य ऋत्विक ऋष्यश्रृंग था तथा यजमान दशरथ था. बाद में एक लाल मूंहा प्राणी रानियों को पयस देता है. रानियां पयस "ग्रहण" करते ही "अचिरेण" गर्भवती हो गईं. पयस का अर्थ वीर्य भी होता है तथा खीर भी होता है. "अचिरेण" का अर्थ है बिना देरी के. पूरे यज्ञ में यजमान को ब्रह्मचार्य का पालन करना होता था. अतः राम व भाईयों के गर्भ में आने में दशरथ का कहीं कोई योगदान नहीं है.

बाबा साहिब ने राम के जन्म को अवैध माना है. सरिता मुक्ता के संपादक श्रद्धेय विष्वनाथ ने उसके जन्म को ऋष्यश्रृंग और कौशल्या के नियोग की उपज माना है. उनके अनुसार अगर साधारण यज्ञ ही करवाना था तो बूढ़े ऋषि को भी तो बुलाया जा सकता था. हट्टे कट्टे ऋष्यश्रृंग को ही क्यों बुलाया गया. और उसे जंगल सें लाने के लिए वेश्याएं भेजी गईं. जिस ऋषि को वेश्याएं लेकर आएं वह क्या गुल खिलाएगा सहज कल्पना की जा सकती है.

अवैध जीवन : राम का जन्म ही अवैध नहीं था उसके जीवन भर के काम भी अवैध थे. पंजाबी भाषा में कहा जाए तो उसके काम हरामीपन वाले थे. हिन्दोस्तानी भाषा में उसका आवा और खताना दोनों ऊत थे. उसने जो कारनामें किए वे इस प्रकार सें हैं:

1 ताड़का की हत्या : प्राचीन समय में ब्राह्मण ऋषि वैसे ही यज्ञ किया करते थे जैसा राम के जन्म के समय अष्वमेध यज्ञ किया गया था. यानि ब्राह्मण ऋषि और उनके देव यज्ञ की आग में मांस भून कर खाते थे, शराब पीते थे तथा यजमान पत्नि या अन्य औरतों सें वहीं यज्ञ स्थल पर व्यभिचार करते थे.

महाराजा रावण ने पूरे भारतीय प्रायद्वीप (भारत, पाक, अफगानिस्तान, बर्मा लंका कंबोडिया आदि) पर शासन स्थापित कर रखा था. आर्यों के लगभग सभी देवता कहे जाने वाले राजा उनके अधीन थे या उनकी कैद मे थे. महाराजा रावण ने "रक्ष संस्कृति" की स्थापना की थी जिसका लक्ष्य था वनों, जानवरों तथा मानव सदाचार की रक्षा करना. इसलिए उन्होंने पूरे भारत में ऐसे वीभत्स और अश्लील यज्ञों पर पाबंदी लगा रखी थी. ऐसे यज्ञों को वे **छिद्र वाले यज्ञ** कहते थे. जहां कहीं भी कोई उन्हें छिद्र वाले यज्ञ करता मिल जाता था उनके सिपाही उस ब्राह्मण ऋषि तथा यजमान को उसी यज्ञ की आग में झोंक देते थे जहां वे पशु की बलि चढ़ाते थे. इससें ब्राह्मण ऋषियों का खाना पीना और ऐयाशी बंद हो गई थी.

ताड़का महाराजा रावण की छोटी बहन थीं तथा अयोध्या तथा मिथिला के आसपास के एरिया की इन्चार्ज थीं. उन्होंने वहां सें अगस्त्य व विश्वामित्र जैसे अनाचारी ऋषियों को खदेड़ दिया था. तब विश्वामित्र दशरथ के पास सहायता मांगने आया. दशरथ ने राम को उसके साथ भेज दिया. सनातन ब्राह्मणधर्मियों की नजर में औरत का कभी कोई महत्व नहीं था. अतः जैसे ही राम को ताड़का दिखाई दीं उसने उनकी तीर मार कर हत्या कर दी. फिर उनकी लाश के साथ वह किया जो एक दरिंदा भी करता हुआ झिझकता है. उसने उनके स्तन काटे और फिर उनके गुप्तांग में तलवार घुसेड़ कर उनका शरीर चीर दिया. ऐसा दरिंदा था राम!! ऐसे राम का नाम गुरू रैदास लें, ऐसा सोचना भी पाप है.

2 भरत सें भाई–घात : रामायण में राम खुद बताता है कि दशरथ ने कैकेई के बाप को वचन दिया था कि कैकेई की कोख सें जन्मा पुत्र ही अयोध्या का वारिस बनाया जाएगा. राम ने फिर भी अपने जुड़वां भाई सें घात किया और अपने बाप के साथ मिल कर भरत की गैर मौजूदगी में अयोध्या की गद्दी हथिया ली. यह तो ऐन मौके पर मन्थरा ने कैकेई को चेता दिया वर्ना रामायण की कहानी कुछ और ही बन जाती. भरत इतना भाई भक्त था कि

वह राम को गद्दी देने के लिए उसे वापिस लाने के लिए जंगल में भी गया. राम ऐसा नीच कि उसने ऐसे भाई के पीठ में छुरा घोंपा.!!

3 **बालि की हत्या** : अपना काम निकालने के लिए ब्राह्मणधर्मी किस हद तक गिर सकते हैं इस का उदाहरण राम द्वारा कुनियोजित ढंग सें की गई बालि की हत्या है. जब राम ने छिप कर बालि की हत्या की तब तक दोनों एक दूसरे को जानते भी न थे. योजना बना कर, अन्जान बालि को धोखे सें मारना, बाबा साहिब के अनुसार (cold blooded murder) यानि ठण्डे दिमाग सें सोझ समझ कर किया गया कत्ल था. राम अगर बालि के सामने आकर लड़ता तो शायद रामायण की कहानी का वहीं अंत हो जाना था.

4 **सन्त शम्बूक की हत्या** : राम जब वन सें वापिस आया तो अपने बाप द्वारा दिए गए वचन कि भरत ही गद्दी का वारिस होगा, को दरनिकार करते हुए वह तुरंत गद्दी पर काबिज हो गया. तब ब्राह्मणों ने उसे बताया कि एक शूद्र साधना कर रहा है. शूद्र को सनातन ब्राह्मणिक धर्म में पढ़ने लिखने व भक्ति करने का अधिकार नहीं है. राम ने अपनी हत्यारी तलवार निकाली और चुपके सें जाकर साधना में लीन सन्त शम्बूक की हत्या कर दी. ऐसे दलित हत्यारे को गुरू रैदास या गुरू कबीर कभी भी अपना "राम" नहीं मान सकते!

5 **सीता की हत्या** : सारी रामायण में अगर आर्य पक्ष में एक भी सच्चा पात्र है तो वह सीता है. वह शुरू सें लेकर अन्त तक राम के प्रति वफादार रही है. सीता के समय में आर्य नारियां कुतियों की तरह आवारा होती थीं. कृष्ण राधा और गोपियों का चरित्र इसका प्रमाण है. कुन्ती, द्रोपदी आदि अन्य उदाहरणें हैं. उस समय में सीता का अपने तन और मन सें नपुंसक पति की ओर शुद्ध वफादारी दिखाना सीता के चरित्र की महानता को दर्शाता है. उसके समस्त जीवन में मात्र एक घटना है जहां उस पर लांछन लग सकता है. जब महाराजा रावण ब्राह्मण का वेश धारण करके उसे लेने आए तब उन्होंने सीता के अंग अंग की ऐसे तारीफ की जैसे एक पति अपनी पत्नि की कर सकता है. इस पर सीता ने कोई आपत्ति नहीं की. लेकिन सीता का यह दोष माफ किया जा सकता है क्योंकि इसमें गलती सीता की नहीं थी बल्कि उस समय में ब्राह्मण को अधिकार ही इतने अधिक थे कि वह किसी की भी बहन, बेटी, पत्नि को कुछ भी कह सकता था तथा उसके साथ कुछ भी कर सकता था. ब्राह्मणों के धार्मिक कहे जाने वाले ग्रन्थों में यहां तक आदेश दिए गए हैं कि जब भी कोई ब्राह्मण किसी के यहां मेहमान बन कर आए तो उसे रात को स्त्री पेश की जाए.

ऐसी वफादार पत्नि को राम ने मरने के लिए तब वन में फिंकवा दिया जब वह गर्भवती थी. उसने मात्र कुछ ही दिनों बाद लव कुश को जन्म दिया था. रोजाना पशु काटने वाला कसाई भी गर्भवती भेड़ बकरी आदि को नहीं मारता. गांवों में ही नहीं शहरों में भी अगर आज भी घर के आसपास कुतिया या बिल्ली बच्चे दे दे तो पूरे मौहल्ले वाले उसे भोजन देना अपना धर्म समझते हैं. राजस्थान गुजरात आदि में अगर बच्चे देने के लिए कुतिया किसी के घर में घुरी खोद ले तो घर वाले उसे हटाते नहीं हैं बल्कि उसे बरकत मानते हैं. और राम ऐसा निर्दयी कि उसने पूरे दिनों की अपनी पत्नि को जंगल में फिंकवा दिया.

लक्ष्मण ने जब उसे बताया कि वह राम के आदेश पर उसे जंगल में छोड़ने आया है तो सीता यह सुन कर बेहोश हो गई. लक्ष्मण ने उसकी ओर देखा भी नहीं और उसे बेहोश छोड़ कर वापिस आ गया. उसके बाद राम ने कभी भी सीता के बारे में नहीं सोचा. उसने यह मान लिया कि वह तो मर खप गई. सिर्फ जब अष्वमेध यज्ञ का घोड़ा पकड़ने की घटना हुई तभी राम को पता चला कि सीता जिन्दा है. उसने अपनी ओर सें कभी भी सीता की खबर नहीं ली. अन्त में सीता ने राम के दुखों सें तंग आकर आत्महत्या ही करली!!

ऐसे घटिया चरित्र वाले राम को रैदास साहेब तो क्या कोई भी सन्त अपना भगवान नहीं मान सकता. ऐसों को तो उसके जैसे ही भगवान मान सकते हैं जो कहें : नारी ताड़न की अधिकारी. गुरू रैदास ने जहां जहां राम का नाम लिया है उनकी बाणी इस प्रकार सें है.

❖ **जाति ओछी पाति ओछी, ओछा जन्म हमारा!**
राजा राम की सेवा न कीन्ही, कहै रैदास चमारा!!

अर्थात चाहे मेरी जाति घटिया बताई जाती है मेरा काम घटिया बताया जाता है तो भी मैं रैदास घोषणा करता हूँ कि मैंने राम पुत्र दसरथ की सेवा नहीं की है अथवा नहीं करनी है. जब रैदास साहेब ऐसी घोषणा करते हैं तो ऐसा लगता है जैसे सन्त शम्बूक बोल रहे हों कि ओ राम चाहे तू मुझे मार दे फिर भी मैं तेरी सत्ता स्वीकार नहीं करूंगा!

❖ **राम न जानूं , न भगत कहाउं, सेवा करूं न दासा!**
योग, यज्ञ, गुण, कुछ न जानूं, ताते रहूं उजासा!!

अर्थात मैं राम पुत्र दसरथ को नहीं जानता और न ही जानना चाहता हूं. मैं उसका भक्त भी नहीं कहलवाना चाहता, मैं उसकी सेवा भी नहीं करना चाहता, न ही मैं उसका दास हूं. मैं ब्राह्मणधर्म के छः दर्शनों (मीमांसा,योग,न्याय,विषेषक,सांख्य,वेदांत,) को नहीं मानता, यज्ञ जैसे कर्मकांड को नहीं मानता, त्रिगुण को नहीं मानता. इसलिए मेरे में उल्हास है, खुशी है ज्ञान का प्रकाश है.

❖ **रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहीं!**
राम रम रह्यो हमीं मैं बसै कुटुम्ब मांहीं!!

इस श्लोक का अर्थ ऊपर किया जा चुका है. रैदास जी ने बिना लाग लपेट के सीधा कह दिया है कि राम पुत्र दसरथ उनका रामजी नहीं है. उनका राम तो उनकी अन्तरआत्मा है जो उन्हे सदमार्ग पर ले जाती है और जिसके कारण सारी दुनिया टिकी हुई है.

❖ **रैदास हमारा राम जोइ, सोइ है रहमान!**
काबा कासी जाने यही दोऊ समान!!

अर्थात रैदास जी के राम तो रहमान है यानि सबसें बड़ा दयालु हैं. राम पुत्र दसरथ का दया रहम सें कहीं दूर दूर का भी नाता नहीं था. उनके राम के लिए काबा और कासी एक जैसे हैं अर्थात वह सभी लोगों को एक समान समझता है चाहे वे किसी भी धर्म, नस्ल, जाति सें हों. आदमी का ऐसा राम उसकी अन्तरआत्मा ही होती है. राजस्थान व आसपास के इलाके में आज भी अनैतिक काम करने वाले को यही कहा जाता है कि उसका तो राम ही निकल गया. अतः राम का अर्थ नैतिकता सदाचार है जिसका राम पुत्र दसरथ सें कोई लेना देना नहीं है.

❖ **रैदास हमारा राम तो सकल रह्यो भरपूर**
रोम रोम मै रम रह्यो, राम मसूक न दूर!!

अर्थात रैदास जी का राम तो पूरी कायनात में व्याप्त है और उनके रोम रोम में भी रच बस रहा है. राम उनसें रत्ती भर भी दूर नहीं है. राम पुत्र दसरथ तो दलितों के नजदीक भी नहीं आ सकता. अगर आएगा तो सिर्फ उन्हें कत्ल करने आएगा जैसे उसने सन्त शम्बूक को कत्ल किया या फिर उसके चेलों ने गुरू रैदास का कत्ल किया. **ऐसा राम पुत्र दसरथ दलित के रोम रोम में बसने कभी नहीं आएगा और न ही कोई दलित ऐसे राम को अपने रोम रोम में बसने देगा.**

रैदास जी का राम कौनः गुरू रैदास तथा अन्य सभी दलित सन्तों ने "राम" का नाम लिया है लेकिन उनका "राम" ब्राह्मणिक राम नहीं हैं. स्वाभाविक है कि कुछ लोग यह पूछें कि तब इन सन्तों का राम कौन है. रैदास जी कहते हैं :

कहै रैदास मैं ताही को पूजूं,, जाकै गांव, ठांव, नांव नहीं कोई!
मन ही पूजा, मन ही धूप, मन ही सहज सरूप,!
पूजा अर्चना न जानूं राम तोरी, कह रैदास यह गति मोरी!!

अर्थात मैं उस राम को पूजता हूँ जो किसी एक गांव में नहीं रहता जिसका कहीं एक जगह ठिकाना नहीं है तथा जिसका एक नाम नहीं है. सदाचार के रास्ते पर सधा हुआ मन ही सन्तों का 'राम' होता है. जब आदमी का मन सद्मार्ग पर लग जाए तो उसे पूजा अर्चना की जरूरत नहीं रहती. रैदास साहेब तो स्पष्ट कहते हैं कि वे राम पुत्र दशरथ की पूजा अर्चना तो बिलकुल नहीं करते हैं. यही उनकी गति है, नीति है.

सन्तों के राम को लोग सदाचार, नैतिकता, अन्तरआत्मा, अन्तःकरण, सच्चाई आदि नामों सें जानते हैं. जैसे ही आदमी गलत काम करने को तैयार होता है वह "राम" उसे रोक देता है या टोक देता है. अगर कहीं गलती हो भी जाए तो गलती करने के बाद वह उसमें पश्चाताप की भावना भी पैदा कर देता है. यही सन्तों का राम है. यह वही 'राम' है जिसे लोग अनैतिक काम करने पर कहते हैं 'इसका तो राम निकल गया'.

इसके विपरीत राम पुत्र दसरथ का गांव अयोध्या है ठिकाना उसका घर है और उसका एक ही नाम राम है. पश्चाताप की तो बात ही छोड़ो ब्राह्मणिक राम तो निर्दोष सन्त शम्बूक का गला काट कर हाथ भी नहीं धोता! बालि को छिप कर तीर मारने के बाद बालि की इतनी ताड़ना सुनने पर भी उसके मन में कहीं मलाल नहीं होता! सीता जैसे पवित्र नारी को और वह भी पूरे दिनों की गर्भवती को वन में फिंकवाते समय उसके मन में कहीं भी दया नहीं उपजती! राक्षसों के बहुत से किस्से हैं मगर उनमें सें कोई ऐसा नही हुआ जिसने गर्भवती स्त्री को ऐसे मरने को मजबूर किया हो. न ही सन्तों का राम ब्राह्मणों के अवतार परशुराम की तरह होते हैं जो गर्भवती स्त्रियों के पेट फाड़

कर वहां पल रहे बच्चे अपने परशु सें काट डालता हो. इस किस्म के 'राम' ब्राह्मण धर्म में ही होते हैं, सन्तों के नहीं!

गुरू रैदास ने निम्न पद में अपने राम का पूर्ण खुलासा किया है. वे कहते हैं:

भाई रे, राम कहां मोहे बताओ!
सतराम ताके निकट न आओ!
राम कहत सब जग भुलाना, सो यह राम न होइ!
करम अकरम, शुभ अशुभ नांही, करता नांव सो कोइ!
जिस राम हो सब जग जानै, भरम भूले रे भाई!
आप आपन तो कोई न जानै, कहै कौन सो जाइ!
निरंजन निराकार निरलेपी निरविकार निसासी!
नस नाड़ी जस सो कह गावें, हर हर आवै हँसी!
अबरन बरन रूप नही जाकै, क्या कह करूं बड़ाई!
अलख राम जाको ठौर न कोइ, क्या न कहूं समझाई!
भन रैदास उदास ताहि ते, फिरता जग बिसराई!
केवल कर्ता एक सही सिर, सत्तराम तेहि नांई!!

इस साखी में गुरू रैदास ने **अपने राम** का स्वरूप तो बताया ही है साथ में अपने मन की पीड़ा को भी व्यक्त किया है. वे कहते हैं कि असली राम सत्य सदाचार है. जिस राम पुत्र दशरथ को राम बता कर लोगों को बेवकूफ बनाया जा रहा है उस राम को '**सत्य राम**' के साथ मत मिलाओ. **वह राम पुत्र दसरथ सन्तों का राम नहीं है**. जिस राम पुत्र दशरथ को शुभ और अशुभ, करणीय और अकरणीय कामों का पता नहीं है उसको ब्राह्मण धोखे सें जगत का राम बता रहे हैं. (राम के शुभ अशुभ काम ऊपर बताए जा चुके हैं.) जो काम करते समय अच्छे और बुरे का अंतर नहीं करता वह भला दुनिया का जानकार (भगवान) कैसे हो सकता है.

वे आगे सन्तों के राम के गुण बताते हैं कि उनका राम निरंजन निराकार आदि है. राम पुत्र दशरथ में यह गुण नहीं हैं. वे कहते हैं कि जब ब्राह्मण उसे राम बताते हैं तो उन्हें ठठा कर हँसी आती है तथा उन्हें उदासी भी होती है कि लोग असली राम को भूल गए है. सन्तों के राम में निम्न गुण होते हैं.

* **निरंजन** : अर्थात जो आंखों सें दिखाई न दे. सन्तों का राम आँख सें न दिखाई देने वाली वस्तु नहीं है. उसे केवल मन के भीतर महसूस किया जा सकता है. उसे **अलख यानि देखा न जा सकने वाला** भी कहते हैं. **भगवन बुद्ध को निरंजन कहा गया है जिन्होंने शराब ने पीने वालों (असुरों) को संगठित करके ब्राह्मणवाद का नाश किया था.**

* **निराकार** : सन्तों के राम को कोई आकार वाली वस्तु भी नहीं है. ब्राह्मणों ने जैसे राम और कृष्ण को आदमी का आकार दिया है वैसे ही उन्होंने अपने कई भगवानों को सूअर, मछली, कछुआ और अर्धपशु के आकार में भी बनाया हुआ है. सभी सन्त ऐसे आकार (असल में विकार) वाले लोगों को "भगवान" नहीं मानते. वे उन्हें आदर्श मानव तक नहीं मानते जिनके कामों का अनुकरण किया जाए. वे अपने राम का आकार वाला होने का खण्डन करते हैं क्योंकि सच्चाई और सदाचार किसी आकार के मोहताज नहीं होते.

* **निरलेपी** : सन्तों का राम मोह माया सें दूर होता है. उनका राम सदाचार और सच्चाई है. सदाचार और सच्चाई किसी सें भी लिप्त नहीं होते. सन्तों का राम दशरथ के पुत्र राम की तरह गद्दी में लिप्त नहीं होता. कृष्ण की तरह गोपियों में लिप्त नहीं होता. उसके द्वारा जो भी काम किए जाते हैं, वे बिना लालच, बिना डर बिना भेदभाव के किए जाते हैं. सन्त जिसे राम मानते हैं वह भगवन बुद्ध की तरह मोह माया काम वासना लोभ लालच डर अहंकार आदि सें निरलेप होता है. सन्तों के "राम" की तुलना अगर किसी शरीर धारी सें की जा सकती है तो दो ही मानव हैं एक तथागत बुद्ध और दूसरे महावीर स्वामी. उनका जीवन सब प्रकार के दोषों सें निरलेप था.

* **निरविकार** : यह ऐसा गुण है जो ब्राह्मणों के सारे के सारे भगवानों की मिट्टी पलीद कर देता है. सन्तों का राम बिना बुराईयों के होता है. सदाचार और सच्चाई कभी भी बुराई के साथ नहीं रह सकते. ब्राह्मणों के जितने भी भगवान हुए हैं उन्होंने एक सें बढ़ कर एक अनैतिक धन्धे किए हैं. ब्रह्मा ने अपनी बेटी और पोतियों सें दुराचार किया, विष्णु ने वृंदा सें बलात्कार करके उनकी हत्या की, शिव ने काम वासना में लिप्त होकर अपना लिंग पुजवाया, कृष्ण ने अपनी मामी राधा और अड़ोस पड़ोस की गोपियों के साथ खुलमखुला वासना का खेल खेला. राम की

करतूतें ऊपर दी ही जा चुकी हैं. शेष देवों और ऋषियों की करतूतें "थू ब्राह्मणवाद" नामक पुस्तक में विस्तार सें दी गई हैं. सन्तों की इस कसौटी पर मात्र बुद्ध और महावीर खरे उतरते हैं.

* **निसासी** : आम आदमी तब तक जिन्दा रहता है जब तक उसकी सांस चलती है. सन्तों के राम का जीवन सांस पर निर्भर नही करता. सच्चाई सदाचार हर जगह जीवित रहते हैं चाहे गहरा समुद्र हो या चांद हो जहां हवा नहीं होती. लेकिन ब्राह्मणिक राम तो सरयू में डूब कर मर गया था क्योंकि पानी में डूबने सें उसकी सांसें बन्द हो गईं थीं.

* **अबरण, अठौर** : सन्तों का राम किसी वर्ण या जाति विशेष में जन्मता या मरता नहीं है. वह कहीं एक (ठौर) जगह विशेष सें बंध कर भी नहीं रहता. राम पुत्र दसरथ का ठौर अयोध्या थी. उसकी जाति रघुकुल थी. वर्ण क्षत्रिय था. अतः वह सन्तों का राम नहीं हो सकता.

* **सत्तराम** : जैसा कि ऊपर बताया गया है कि रैदास जी के राम सदाचार और सच्चाई हैं. उन्होंने उसका नाम सत्तराम दिया है. सत्त यानि सदाचार, सच्चाई और वह हौसला जिससें आदमी सत्य पर अडिग रहता है. भारत के अनेक भागों में लोग सत्य पर अडिग रहने के लिए "सत्त" शब्द का प्रयोग ही करते हैं.

अतः कुल मिला कर राम पुत्र दशरथ किसी भी ढंग सें सन्तों का राम नहीं है. जब वह उनका राम नहीं है तो उन दलितों का राम भी नहीं है जिनके उद्धार के लिए इन सन्तों ने अपने प्राणों की बाजी तक लगा दी.

इस साखी की अंतिम पद **"भन रैदास उदास ताहि ते**. . . " में रैदास जी ने अपने मन की व्यथा/दर्द को बयान किया है. वे कहते हैं कि लोग असली सत्य राम को भूल कर झूठे राम पुत्र दसरथ को अपना राम मानने लगे है, इसलिए उनका मन उदास रहता है. ऐसा दर्द हर दलित महापुरुष ने झेला है जिन्होंने दलितों के हकों के लिए अपना जीवन न्यौछावर किया है. ब्राह्मणधर्म की साम दाम दण्ड भेद की नीति के आगे वे अकसर बेबस लाचार हो गए लगते हैं. महात्मा रावण सें लेकर महात्मा ज्योतिबा तथा बाबा साहिब अम्बेडकर तक सभी ने यह दुख झेला है. उनके बाद मान्यवर ललई सिंह यादव, बाबू जगजीवन राम, कांशी राम, उदित राज, वी टी राजशेखर, लालू प्रसाद यादव, कर्पुरी ठाकुर, राम विलास पासवान आदि सभी दलित नेताओं ने यह व्यथा झेली है या झेल रहे हैं.

यह व्यथा, बाबा साहिब के शब्दों में, गुलामी की है. दलितों की शारीरिक गुलामी के साथ साथ दिमागी गुलामी ने सभी दलित क्रंतिकारियों को व्यथित किया है. मान्यवर वी टी राजशेखर के "दलित वायस" का प्रत्येक अंक उनकी इस व्यथा का प्रकट करता है. **बाबा साहिब के अनुसार किसी भी सुधारक के लिए सबसें कठिन काम गुलाम लोगों को यह बताना है कि वे गुलाम हैं. दिमागी तौर पर गुलाम लोगों को उनकी गुलामी का एहसास करवाना और भी अधिक कठिन कार्य है. पढ़े लिखे दलित लोगों को भी यह समझाना दुष्कर है कि राम पुत्र दशरथ उनके पूर्वजों का कातिल है. वह उनका भगवान नहीं है. अगर आज दलित यह बात समझ लें कि राम पुत्र दशरथ उनका राम नहीं है तो अयोध्या का मसला सुलझने में 24 घण्टे भी नहीं लगेंगे क्योंकि आज तक ऐसा कभी नहीं हुआ कि किसी ब्राह्मण ने अपने धर्म की खातिर अपने प्राणों की बाजी लगाई हो. अगर दलित इस मसले सें दूर हो जाएं तो संघर्ष करने वाला कोई बचेगा ही नहीं.**

इन्हीं बातों सें सभी दलित सुधारक व्यथित हुए हैं क्योंकि दलितों ने हमेशा उस धर्म और उन तथाकथित भगवानों के लिए अपनी बलि दी है जिन्होंने सदियों सें उनको मारा, पीटा लूटा है. एक पल के लिए गुरू रैदास की व्यथा को महसूस करके देखें जब वे कहते हैं – **रैदास उदास ताहि ते, फिरता जग बिसराई.** कितना दर्द है उनकी बात में जब वे कहते हैं मैं उदास हूँ क्योंकि दलित अपना इतिहास भूल कर भटक गए हैं. अगर आदमी में आत्मा होती तो आज जरूर उनकी आत्मा दुखी हो रही होती कि हम दलित उस राम को भगवान मान रहे हैं जिसने हमारे पूर्वजों की हत्या की है उन सभी को दुख इस बात का है कि ब्राह्मण हमारे समाज में प्रहलाद और विभीषण पैदा कर ही लेते हैं.

इस व्यथा का कारण और हल

दलितों की शारीरिक और दिमागी गुलामी सें सभी सुधारक दुखी हुए हैं, भीतर तक व्यथित हुए हैं. फिर भी उन्होंने दलित आजादी के लिए संघर्ष किया है. अपने बिछड़े हुए अछूत राज को प्राप्त करने के लिए अपना खून तक बहाया है. दलित ऐसे क्यों हैं इस विषय में गुरू रैदास कहते हैं :

साधो, अविद्या अहित कीन!
ताते विवेक दीप भया मलीन!!

अर्थात अनपढ़ता ने हमारा बेहद अहित किया है, हानि की है. विद्या न मिलने पर हमारा विवेक कमजोर पड़ गया है और हम अच्छे बुरे, गलत सही, अपने पराये की पहचान करना भी भूल गए हैं.

बाबा साहिब ने अपनी पुस्तक "शूद्र कौन थे?" में सिद्ध किया है कि पहले केवल तीन वर्ण होते थे– ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य. वैश्य दुधारू गाय की तरह होते थे. ब्राह्मण जब चाहे उनसें धन ले लेते थे. उन्होंने कभी भी ब्राह्मणों की लूट खसोट का विरोध नहीं किया. क्षत्रिय लड़ाके तो होते ही थे साथ में वे हथियार भी रखते थे. अपने शारीरिक और हथियारों के बल पर वे सदा ब्राह्मणों को नीचा दिखाते रहते थे क्योंकि ब्राह्मण हथियार छूना भी पाप समझते थे.

तब परषुराम नामक ब्राह्मण ने हथियारों के महत्व को पहचाना. उसने हथियार धारण किए. सबसें पहले उसने अपनी माँ का कत्ल किया. उसके बाद धरती पर सें क्षत्रियों का बीजनाश कर दिया. वह इतना क्रूर और निर्दयी था कि उसने गर्भवती क्षत्राणियों की कोख फाड़ कर उसमें पल रहे बच्चे तक अपने फरसे सें काट डाले. इसी ब्राह्मण–क्षत्रिय संघर्ष के चलते ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का उपनयन संस्कार बंद कर दिया. प्राचीन काल में उपनयन संस्कार तब किया जाता था जब बच्चा विद्या प्राप्ति के लिए गुरूकुल में जाता था. उपनयन संस्कार में बच्चे के शरीर पर जनेऊ धारण करवाया जाता है. क्षत्रियों का उपनयन संस्कार बंद हो गया तो उनके लिए विद्या प्राप्ति का अधिकार भी समाप्त हो गया. अतः उन्हें समाज में चौथा वर्ण शूद्र बना दिया गया.

विद्या न मिलने सें क्या हुआ : शिक्षा या विद्या किसी भी समाज के जिन्दा रहने और प्रगति करने का मूलाधार है. दुनिया में जितनी भी परिवार हैं, जितनी भी जातियां हैं, जितने भी देश हैं उनमें सिर्फ वही प्रगति कर सके हैं जिन्होंने शिक्षा प्राप्त की है. **अंगूठा छाप परिवार कभी भी राज परिवार नहीं रह पाए हैं. अनपढ़ जातियां कभी भी राजसत्ता पर काबिज नहीं रह पाई हैं.**

भारत के इतिहास में आदि काल सें लेकर पहली सदी तक भारत पर केवल शूद्रों का राज रहा है. सम्राट अशोक के वंशज सम्राट वृहदर्थ को कत्ल करके ब्राह्मण पहली बार सत्ता पर काबिज हुए. सत्ता पर अपना कब्जा बनाए रखने के लिए उन्होंने दो काम किए :

पहला काम तो उन्होंने यह किया कि भारत का प्राचीन इतिहास जो कि असल में दलित इतिहास था, उन्होंने उसे नष्ट कर दिया. चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में यूनानी भारत में आकर बस गए थे. उन्होंने उनके बाद का कुछ इतिहास बचा लिया है वर्ना उससें पहले का दलितों का क्या इतिहास है कोई नहीं जानता.

दूसरा काम उन्होंने यह किया कि दलितों को शिक्षा देना बंद कर दिया. महावीर एकलव्य जैसे अगर किसी तरह कुछ हुनर सीख जाते थे तो उन्हें अपंग कर दिया जाता था. कोई अगर पढ़ना लिखना सीख जाता था तो उसे बेरहमी सें मार दिया जाता था. अगर कोई ब्राह्मण दया करके किसी दलित को पढ़ाने की गलती कर भी लेता था तो उस ब्राह्मण का भी बुरा हाल कर दिया जाता था.

शिक्षा न मिलने का नतीजा यह हुआ कि दलित अपना इतिहास भूल गए. बरसों के जुल्म सह सह कर वे स्वयं को लाचार, नीच और पाप योनि मानने लग गए. इसी बात पर गुरू रैदास ने अपनी उदासी व्यक्त की है. इसीलिए गुरू रैदास को कहना पड़ा : **विद्या अहित कीन, ताते विवेक दीप भया मलीन.** विद्या के द्वार बंद होने पर दलितों के साथ क्या हुआ, इसका सटीक चित्रण महात्मा ज्योतिबा फूले ने इस प्रकार सें किया है :

विद्या बिन गई मति,
मति बिन गई नीति,
नीति बिन गई गति,
गति बिन गया वित्त,
वित्त बिना चरमराये शूद्र,
एक अविद्या ने किए
इतने अनर्थ!!

अर्थात दलितों को विद्या देने पर पाबंदी के कारण उनकी मति यानि अक्ल, ज्ञान, समझ की समाप्ति हो गई. ज्ञान न रहने सें हमारी नीति यानि काम करने का ढंग, दुश्मन सें लड़ने का ढंग आदि सब कुछ समाप्त हो गया. जब दलित स्वयं को पालने और दुश्मन सें टक्कर लेने के योग्य नहीं रहे तो उनकी गति यानि तरक्की रुक गई. वे हर क्षेत्र में पिछड़ गए. गति न होने के कारण उनके पास धन सम्पत्ति नहीं रही. जब उनके पास पैसा ही नहीं रहा तो रोटी भी नहीं रही और दलित चरमरा गए, टूट गए. स्वयं को जिंदा रखने के लिए दलितों की कुछ जातियां चोरी चकारी पर उतर आईं कुछ वेश्यावृति पर तो कुछ दासता पर उतर आईं. धन न होने के कारण दलित ब्राह्मणों

द्वारा किए जा रहे जुल्मों के विरुद्ध संघर्ष करने के लायक भी नहीं रहे. एक अनपढ़ता ने हमारा इतना बड़ा अहित अनर्थ कर दिया है.

गुरू रैदास की व्यथा को जानकर महात्मा ज्योतिबा फूले ने दलितों का **प्रथम लक्ष्य विद्या प्राप्ति** बताया. **इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने भारत में पहला स्कूल खोला. लड़कियों के लिए भारत में पहला स्कूल उनकी धर्मपत्नि सावित्री फूले ने खोला था.** इन्हीं सतपुरुषों का अनुसरण करते हुए **बाबा साहिब** ने आदेश दिया : **शिक्षित बनो, संघर्ष करो और संगठित बनो!!**

अतः दलित समाज का यह पावन कर्तव्य बनता है कि अपने गुरुओं का बलिदान व्यर्थ न जाने दें. गुरू रैदास जैसे क्रांतिकारी जिन बातों सें व्यथित हैं, दलित उन्हें त्यागें. वे उस राम पुत्र दसरथ को त्यागें जिसे सन्तों ने त्याग दिया है. उस राम पुत्र दसरथ के धर्म को त्यागें जिसे सन्त तिलांजलि दे चुके हैं. वे सन्तों द्वारा अपनाए गए सत्य, न्याय, सदाचार पर आधारित श्रमण धर्म को अपनाएं.

अध्याय 5

गुरू कौन – रामनन्द या रैदास जी

एक बात का बहुत जोर शोर सें प्रचार किया जाता है कि रामनन्द नामक ब्राह्मण गुरू रैदास का गुरू था. किसी भी स्कूल की किताब हो, किसी अखबार में कोई लेख छपता हो, कोई नेता स्टेज पर खड़ा होकर रैदास जी को श्रद्धांजलि देता हो, हर जगह यह बात जरूर बताई जाती है कि रामानन्द नाम का ब्राह्मण उनका गुरू था. ऐसी जगहों में रैदास जी की बाणी में सें चाहे एक श्लोक न बताया जाए लेकिन यह जरूर बताया जाता है कि रामानन्द वैष्णव सम्प्रदाय सें था और वैष्णव सम्प्रदाय वाले विष्णु और उसके अवतारों को भगवान मानते हैं.

रामानन्द को रैदास जी का गुरू बताना इतना ही बड़ा **झूठ** है जितना यह कहना कि गांधी ने दलितों को आरक्षण दिलाने के लिए पूना की यरवदा जेल में आमरण अनशन किया था. रामानन्द के बारे में जो जानकारी मिलती है वह इस प्रकार सें है:

* कि वह बनारस का रहने वाला था.
* कि वह जाति सें ब्राह्मण था. ब्राह्मणों में सें कौन सा ब्राह्मण – गोस्वामी, पाण्डे, चितपावन, द्विवेदी, चतुर्वेदी आदि कौन सा था, इसका पता नहीं चला है.
* कि वह वैष्णव सम्प्रदाय का ब्राह्मण था जो विष्णु को सबसें बड़ा भगवान मानता है तथा शिव और ब्रह्मा को उससें छोटा मानता है. वह विष्णु के सारे अवतारों जैसे राम कृष्ण आदि को भगवान मानता था.
* **कि वह कट्टर ब्राह्मण था तथा अछूतों शूद्रों की छाया सें भी दूर रहता था.** शूद्र के दर्शन हो जाने पर फिर सें गंगा में स्नान करता था. अगर किसी शूद्र सें बात करनी पड़ भी जाए तो पर्दे की ओट में रह कर उस शूद्र सें बात करता था कि कहीं शूद्र दिखाई दे जाने पर उसकी आँख न "मैली" हो जाए!
* कि वह वेदों, पुराणों व अन्य ब्राह्मणिक शास्त्रों में पूरा विश्वास रखता था. गंगा स्नान जैसे पाखण्डों को मोक्ष दायक मानता था.
* कि तुलसी माला पहनना, माथे पर अंग्रेजी का यू **U** बनाना, हाथ में डण्डा पकड़ कर रखना आदि सारे आडम्बर करता था.

प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इस बात के क्या सबूत हो सकते हैं कि इस प्रकार का आचरण करने वाला ब्राह्मण रामानन्द सन्त रैदास का गुरू था. रामनन्द को गुरू मानने अथवा न मानने के लिए चार प्रकार के सबूतों का विश्लेषण आवश्यक है :

1. पहला सबूत स्वयं गुरू रैदास की बाणी है. अतः उसका विश्लेषण करना अवश्यक है कि वह इस विषय पर क्या कहती है.

2. दूसरा सबूत रामानन्द की बाणी है कि वह गुरू रैदास के बारे में क्या कहती है.
3. तीसरा सबूत यह है कि उस समय के सन्तों व अन्य लेखकों की बाणी तथा उस समय की अन्य लिखित सामग्री इस संदर्भ में क्या कहती है.
4. चौथा सबूत (circumstancial evidence) अर्थात हालात पर आधारित हो सकते हैं जो यह इंगित करते हों कि गुरू रैदास और रामानन्द में कैसा सम्बंध हो सकता है.

1. गुरू रैदास की बाणी में गुरू का वर्णन : नहीं है.

गुरू रैदास का गुरू कौन है इस बात का सबसें बड़ा और पक्का सबूत स्वयं उनकी बाणी सें बढ़ कर कोई अन्य नहीं हो सकता. गुरू ग्रन्थ साहिब में गुरू रैदास की बाणी उनके जीते जी शामिल कर ली गई थी तथा वहां उनकी बाणी लिखित रूप में संभाल कर रखी गई है. अतः उसमें किसी हेर फेर का सवाल नहीं उठता. गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज **उनकी पूरी बाणी में कहीं रामानन्द का नाम भी नहीं है.** जब राम पुत्र दसरथ को उन्होंने अपना राम नहीं माना तो उन्होंने सीना ठोक कर कहा : "रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांही". अगर रामनन्द उनका गुरू होता तो वे यह कहने में भी संकोच नहीं करते कि रामानन्द उनका गुरू है. उनकी बाणी में रामानन्द का नाम ही न होना यह दर्शाता है कि उनका आपस में कोई रिश्ता नहीं था.

अतः उनकी बाणी के आधार पर यह कहा जा सकता है कि रामानन्द सें उनका गुरू चेला तो क्या किसी प्रकार का भी रिश्ता नहीं था.

2. रामानन्द की बाणी में रैदास जी का नाम : कहीं नहीं है.

रामानन्द की कोई बाणी उपलब्ध नहीं है. उसका मात्र एक 'शब्द' गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज है. उसमें कहीं भी रैदास जी का नाम नहीं है. **रामानन्द सम्प्रदाय की एक अन्य पुस्तक "राम पटल" है. उसमें रामानन्द के 52 चेलों के नाम दिए गए हैं लेकिन उन 52 में गुरू रैदास का नाम नहीं है.** अतः इससें यह सिद्ध होता है कि रैदास जी उस ब्राह्मण रामानन्द के शिष्यों में शामिल नहीं थे. जैसे मीरा गुरू रैदास की चेली थी तो उसने अपनी बाणी में पूरे जोर शोर सें उन्हें अपना गुरू माना है. उसने कहाः

म्हारो मन लाग्यो सतगुरु में, अब न रहूंगी अटकी!
गुरू मिल्या रैदास म्हानै, दीनी ज्ञान की गुटकी!!

3. उस समय के सन्त :

गुरू रैदास के समय भारत में अनेकों सन्त हुए हैं. गुरू नानक देव तो उनसें रू–ब–रू यानि आमने सामने बैठ कर मिले भी थे तथा उनकी बाणी उनसें लेकर गए थे. सतगुरू कबीर तो उनके हमसहरी ही थे, मित्र थे, धर्म भाई या सही कहें तो मिशन भाई थे क्योंकि दोनों का मिशन एक ही था : ब्राह्मणधर्म का अन्त करना!! ब्राह्मणधर्म कुछेक कर्मकांडों और ढकोसलों के सिवाय कुछ नहीं है. दोनों सन्तों ने ब्राह्मणधर्म के समस्त कर्मकांडों और ढकोसलों का खण्डन किया. वे चाहते थे कि इनका अन्त हो. अगर ब्राह्मणवाद में सें कर्मकांडों और ढकोसलों का अन्त हो जाए तो उसमें सें शेष कुछ बचेगा ही नहीं.

उस समय जो अन्य सन्त हुए वे हैं : त्रिलोचन, धन्ना, बेणी, शेख भीकन, जय देव, परमानन्द, पीपा, सधना, सैन आदि. इन सभी सन्तों की बाणी गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज है तथा उसमें किसी ने भी यह नही कहा कि गुरू रैदास का किसी रामानन्द सें कोई सम्बंध था. अतः जिस समय गुरू रैदास भारत भूमि पर रहे उस समय के किसी भी व्यक्ति अर्थात स्वयं उन्होंने, रामनन्द ने तथा अन्स सन्तों ने यह नहीं कहा कि गुरू रैदास किसी रामानन्द नामक ब्राह्मण के चेले थे. अतः उन्हें रामानन्द का चेला बताना झूठ है, गलत बात है.

4. Circumstancial evidence अर्थात परिस्थिति मूलक साक्ष्य :

गुरू रैदास के तत्कालीन साक्ष्यों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि गुरू रैदास और रामानन्द में कोई किसी किस्म का रिश्ता नहीं था. परिस्थितियों के आधार पर विश्लेषण करने पर यह तथ्य सामने आता है कि अगस्त्य संहिता, भगतमाल और प्रियादास की टीका में गुरू रैदास को ब्राह्मण रामानन्द का चेला बताया गया है. वैसे तो सीधे सबूत होने पर परिस्थितिय साक्षों की कोई महत्व नहीं रह जाता परन्तु उनका विश्लेषण भी यही सिद्ध करता है कि गुरू रैदास और रामानन्द में इतना अंतर है कि उनका गुरू चेले का सम्बंध होना कल्पना में भी सम्भव नहीं है.

सर्वप्रथम इन ग्रन्थों में सें कोई भी गुरू रैदास का समकालीन नहीं है. अतः ऊपर दिए गए पक्षों के सामने इनका कोई मूल्य भी नहीं है. हिन्दी साहित्य के इतिहास के जाने माने विद्वानों आचार्य परषुरा चतुर्वेदी (उत्तरी भारत की सन्त परम्परा) डा. बद्री नारायण (रामानन्द समप्रदाय और हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव) ने भी यह सिद्ध किया है कि गुरू रैदास और रामनन्द में कोई रिश्ता नहीं था.

डा. युगेश्वर के अनुसार (कबीर समग्र पृ 153) रामानन्द सम्प्रदाय में दीक्षा का अधिकार केवल विरक्तों यानि घर बार छोड़ कर सन्यासी बनने वालों को ही था और रामानुज सम्प्रदाय में दीक्षा का अधिकार केवल गद्दीधारी ब्राह्मण को ही था. इसी तरह सेठी दम्पति (राधास्वामी ब्यास द्वारा प्रकाषित : संत कबीर) ने माना है कि रामानन्द आडम्बर और पाखण्ड पूर्ण जीवन जीता था मगर सतगुरु कबीर के सम्पर्क में अपने के बाद वह सही राह पर आ गया.

डा. युगेश्वर के कहे अनुसार गुरू रैदास दीक्षा के अधिकारी नहीं थे क्योंकि वे न तो विरक्त थे और न ही गद्दीधारी ब्राह्मण. सेठी दम्पति के अनुसार रामानन्द ने सतगुरू कबीर के कहे अनुसार अपना जीवन बदल लिया. फिर भी युगेश्वर और सेठी जैसे लेखक उन दोनों सन्तों को रामनन्द का चेला कहें तो यह उनकी धूर्तता ही है.

रामानन्द का एक चेला था अनन्त दास. उसने गुरू रैदास पर एक पुस्तक (रैदास प्रचई) लिखी. उसमें प्रसंग आया है कि चितोड़ की रानी ने पूरे भारतवर्ष में किसी ऐसे सन्त महापुरुष की तलाश की जो उसे मन की शांति दे सके तो चारों दिशाओं में ढूंढने पर उसे बनारस में दो सन्त मिले : एक चमार जाति के सन्त रैदास तथा दूसरे जुलाहा जाति के सन्त कबीर! रानी झाली बनारस आती है तथा सन्त रैदास सें मिलती है तथा उन्हें अपना गुरू धारण कर लेती है.

कितनी अजीब बात है कि रानी झाली को तो रामानन्द सन्त ही नजर नहीं आया और ब्राह्मणवादी लेखक उसे रैदास कबीर सरीखे महापुरुषों का गुरू बताने की घृष्टता करते हैं.

एक बात और भी विचारने योग्य है कि गुरू के होते चेला किसी को "नाम" यानि दीक्षा नहीं दे सकता. गुरु रैदास द्वारा मीरा और रानी झाली को दीक्षा देना यह सिद्ध करता है कि वे रामनन्द के चेले नहीं थे. अगर वे रामानन्द के चेले होते तो उन दोनों स्त्रियों को दीक्षा देने का अधिकार रामानन्द का बनता था और वही दीक्षा देता. गुरू रैदास द्वारा मीरा और रानी झाली को दीक्षा देना यह सिद्ध करता है कि गुरू रैदास रामानन्द के चेले नहीं थे.

विचारधारा : गुरू रैदास और रामनन्द की विचारधारा में दिन रात का अन्तर है. जैसे सन्त और पाखण्डी में अन्तर होता है वैसा ही अन्तर गुरू रैदास और रामनन्द में है.

- रामानन्द **कट्टर ब्राह्मण** था. शूद्र की शक्ल देखना भी उसके लिए पाप था. रैदास जी के लिए "एक नूर सें सब जग उपजा, कौन बामण कौन सूदा (शूद्र)" का नियम था. उन्होंने कहा :

  "रैदास जन्म के कारणे, होता नहीं कोइ नीच!
  नर को नीच कर डाले है, ओछे करमों की कीच!!

  रैदास ब्राह्मण न पूजिए जो होवे गुणहीन!
  पूजिए चरण चण्डाल के जो होवे गुण प्रवीण!!

  रामनन्द ओछे करम यानि धर्म के नाम पर पाखण्ड करने वाला प्राणी था. फिर भी वह अपनी जाति का "ऊंचे" होने का घमण्ड करता था. दोनों में कही कोई मेल ही नहीं! रामानन्द के विपरीत रैदास जी कहने वाले :

  रैदास बामण और चंडाल में ना ही अंतर जान!
  सब घट एक जोत है, सब में एक भगवान!!

  अगर ब्राह्मण रामानन्द उनका गुरू होता तो गुरू रैदास ब्राह्मणों के विरुद्ध इस प्रकार सें नहीं बोलते! सो या तो रामानन्द ब्राह्मण नही था या फिर वह गुरू रैदास का गुरू नहीं था.

- रामानन्द ब्राह्मणधर्म के वैशणव सम्प्रदाय सें सम्बंध रखता था. माथे पर अंगेजी भाशा के यू **"U"** आकार का तिलक लगाना उसके लिए अनिवार्य था. ब्राह्मणधर्म का दूसरा सम्प्रदाय शैव सम्प्रदाय था जो शिव को सबसें बड़ा भगवान मानता था और माथे पर तीन लकीरें लगाना धर्म समझता था. दोनों सम्प्रदाय आपस में वैसे ही लड़ते मरते थे जैसे एक गली के कुत्ते दूसरी गली के कुत्तों सें लड़ते हैं. गुरू रैदास के लिए सारी कायनात ही एक है. कोई किसी सम्प्रदाय का नहीं. उनके लिए सभी मनुष्य "मानव सम्प्रदाय" के हैं तथा मानवता ही सबका धर्म है!

- वह वेदों, पुराणों व अन्य ब्राह्मणिक शास्त्रों में पूरा विश्वास रखता था. गंगा स्नान को मोक्ष दायक मानता था. गुरू रैदास इन सब पाखण्डों सें न केवल दूर रहते थे बल्कि सब लोागें सें इन पाखण्डों सें बचने के लिए भी कहते थे. उनका कहना है :

  चारों वेद किए खंडोति, जन रैदास करै डंडोति!!

  अर्थात मैं रैदास चारों वेदों का खण्डन करता हूं तथा इस बात का ढिंढोरा पूरी दुनिया में पीटता हूँ. इस श्लोक का अर्थ ऐसा भी होता है कि चारों वेदों का खण्डन करने सें लोग इतने खुश है कि वे उनके सामने दण्डवत प्रणाम करते हैं. सन्त कबीर और रैदास जी के जमाने में पण्डे रोजाना सैंकड़ों भेड़, बकरियों और भैंसों की **बलि वेद–विधि अनुसार** देते थे. अतः जब रैदास जी ने वेदों का विरोध किया तो भले लोगों ने दण्डवत (जमीन पर छाती के बल लेट कर) प्रणाम करके उनका सत्कार किया.

- गुरू रैदास के लिए सादा, सच्चा, सदाचारी जीवन जीना धर्म है जिस में कोई लाग लपेट नहीं होती, कोई दिखावा कोई आडम्बर नहीं होता. रामानन्द के लिए तिलक लगाना, गंगा में विधि सें और मुहूर्त के हिसाब सें डुबकी लगाना, यज्ञ करना **ही** धर्म था. सादगी सच्चाई रामानन्द के ब्राह्मणिक धर्म का कभी हिस्सा नहीं रही.

- **बाणी** : गुरू रैदास, गुरू कबीर आदि सभी सन्तों ने अपनी अपनी बाणी की रचना की है जिसमें समाज को सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है. रामानन्द ने किसी ऐसी बाणी की रचना नहीं की जो यह कहे कि सदमार्ग पर चलना ही धर्म है.

गुरू रैदास और रामनन्द की शिक्षाओं और कार्यकलापों में हर कदम पर केवल अंतर ही नहीं हैं बल्कि विरोध भी है. नीचे दिया गया तुलनात्मक चार्ट इस बात को दर्शाता है : (कबीर समग्र पृ 154)

रामानन्द के कार्यकलाप व विचारधारा	गुरू रैदास के कार्यकलाप व विचारधारा
रामानन्द का वैरागी (लड़ाकू) संगठन है. जो भी उसका चेला बने उसे वैरागी बनना पड़ता है.	सन्तों के लिए अहिंसा ही धर्म है. सन्तों को लड़ाई सें क्या काम!! लड़ाई तो डाकुओं के लिए जरूरी है. या फिर गीता के अनुसार जुआरियों के लिए लड़ाई "धर्म" है.
उसका मन्त्र है "रां रामाय नमः" जिसका कि हर रामानन्दिये को जाप करना होता है.	गुरू रैदास ने कभी भी इस तरह के व्यर्थ शब्दों का जाप नहीं किया. राम पुत्र दशरथ को किसी भी सन्त ने अपना राम नहीं माना. गुरू रैदास ने तो स्पष्ट कहा : **रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहि!**
रामानंदियों के लिए तुलसी की माला पहनना तथा पूजा में शंख की पो पों करना जरूरी है.	गुरू रैदास ने ऐसे फिजूल के पाखण्डों को अधर्म माना है. उनके अनुसार बाहरी आडम्बर धन्धा करने वालों के लिए हैं.
सालिग्राम और गोमती चक्र धारण करना जरूरी है.	उनके अनुसार सदाचारी मानव के लिए किसी चक्र, गद्दा, फरसा आदि धारण करना जरूरी नहीं है.
मंदिर में विष्णु को दण्डवत प्रणाम करना तथा राम लक्ष्मण सीता हनुमान की पूजा करना जरूरी है. उसके सम्प्रदाय में सीता की श्री (लक्ष्मी) के रूप में पूजा की जाती है.	अपनी पूरी बाणी में विष्णु, हनुमान व सीता का कहीं नाम भी नहीं लिया. उनके लिए ऐसे लोगों को प्रणाम तो क्या नाम लेना भी दूर की बात है. राम के लिए स्पष्ट कहा कि राम पुत्र दसरथ उनका राम नहीं है.
किसी भी व्रत वाले दिन चौबीस घण्टे भूखा रहना जरूरी है.	भगवन बुद्ध की तरह भूखे रहने को बेवकूफ आदमी की निशानी माना.
माथे पर चन्द्र बिन्दु तथा तिलक लगाना जरूरी है तथा अंगेजी में यू आकार का निशान बनाना भी	गुरू रैदास सदा सादा जीवन जीए. उन्होंनें कभी भी थोबड़ा रंगने जैसे पाखण्ड नहीं किए और अपने

जरूरी है. जटा रखना तथा यज्ञ की भस्म लगाना जरूरी है.	शिष्यों सें भी आहवान किया कि ऐसे पाखण्ड करने सें गुरेज करें.
दण्डधारण करना, गेरुआ वस्त्र पहनना तथा वेद पाठ करना जरूरी है.	धर्म की निशानी के तौर पर कभी भी हाथ में दण्ड अर्थात डण्डा नहीं पकड़ा. हमेशा सादे वस्त्र पहने तथा भगवन बुद्ध की तरह वेदों का खण्डन किया.
धार्मिक शिक्षा उसी को दी जाती थी जो उससें दीक्षा लेता था. बिना चेले बने शिक्षा नहीं दी जाती थी. केवल द्विज ही उसके चेले बन सकते थे और शिक्षा ले सकते थे.	उन्होंने पूरी मानवता को सदाचार की शिक्षा दी. अपनी शिक्षाएं किसी जाति विशेष तक सीमित नहीं रखीं. किसी भी जाति का कोई भी प्राणी उनकी शिक्षाएं अपना सकता है.
रामानंदियों के लिए संस्कृत को पवित्र भाषा मानना जरूरी है. लोक भाषा में धर्म प्रचार करना उचित तथा जरूरी नहीं माना.	उन्होंने संस्कृत का विरोध किया तथा सदा भगवन बुद्ध की तरह आम बोल चाल की भाषा में अपनी बात कही व उसी में अपनी बाणी रची.
रामनन्दी कट्टर ब्राह्मणवादी वैष्णव संगठन है जो मुस्लिम को मलेच्छ (घटिया अपवित्र) समझता है. रामानन्द जैसे लोग अपने स्व–धर्म के लोगों को भी अछूत मान कर उनको देखना भी पाप समझते हैं. अतः मलेच्छों के रहीम को राम समान समझना उनके लिए संभव ही नहीं है.	रामानन्द के विपरीत रैदास जी रहमान (दयावान) और रामजी (सदाचार) को एक ही मानने वाले थे. व कहते थे : राम रहीम दोनों मेरे मन बसैं, कहीं खोजन न जाई! मंदर मसजिद एक हैं इन में अन्तर नाहिं! रैदास हमारा राम सोहि है रहमान! काबा कासी जानों दोनों एक समान!!

 सच्चाई 

वास्तव में सच्चाई, यह है कि रामानन्द सतगुरू कबीर का चेला था. बहुत से लोगों यह बात सुनने में शायद अटपटी लगे मगर सच्चाई यही है कि सतगुरु कबीर की शरण में आकर रामानन्द ने पूरा कार्यकलाप ही बदल लिया था. **रामानन्द का एक ही पद गुरू ग्रन्थ साहिब में है जिसमें उसने स्वयं यह माना है कि गुरू कबीर के सम्पर्क में आकर उसे जीवन की सही राह मिल गई है तथा वह अपने गुरू पर बलिहारी जाता है.**

राधास्वामी सत्संग के सेठी दम्पति व अन्य लेखकों ने इस बात को पूरी तरह स्वीकारा है कि रामानन्द झूठे आडम्बर तथा पाखण्ड पूर्ण कार्य किया करता था. शूद्रों को दूर सें देखना भी पाप समझता था. फिर एक दिन उसका सामना सतगुरू कबीर सें हो गया. किदवन्ती है कि कबीर साहेब गंगा घाट पर बैठे थे कि रामानन्द स्नान करके वापिस जा रहा था तो वह कबीर साहेब सें टकरा गया. जब उसे पता चला कि टकराने वाला तो शूद्र है तो उसने कबीर साहेब सें भली बुरी कही और वह ब्राह्मण शुद्ध होने के लिए वापिस नहाने चल दिया. तब उसका मान मर्दन करते हुए कबीर साहेब बोले : **अगर तू बामण बामणी जाया तो आन बाट क्यों नहीं आया!!**

इस बात पर खिन्न होकर रामानन्द ने सतगुरु कबीर सें बहस की. उसने ब्राह्मण जाति, वेद पुराण, यज्ञ, गंगा स्नान आदि आडम्बरों को महान बताते हुए सतगुरू कबीर सें बहस की. तब ब्राह्मणों का असली रूप बताते हुए कबीर साहेब बोले :

पण्डे निपुण कसाई,
साधो पाण्डे निपुण कसाई!
भेड़ मार बकरी को धावै, मन में दया न आई!

जैसे भगवन बुद्ध के सामने डाकू अंगुलिमाल की बोलती बंद हो गई थी वैसे ही सतगुरु कबीर के सामने रामानन्द की सारी हेकड़ी निकल गई. वह अपने खाली ढकोसलों और पाखण्ड पूर्ण आडम्बरों के दम पर अधिक देर तक उनके सामने टिक नहीं पाया. अन्त में रामनन्द हार गया और कबीर साहेब के चरणों में गिर पड़ा.

तब कबीर साहेब ने उसे धर्म का असली अर्थ समझाया. कबीर साहेब सें धर्म का वास्तविक अर्थ जान कर उसके मन सें ब्राह्मणपने की मैल दूर हो गई. उसने सतगुरू कबीर को अपना गुरू मान लिया. कहा जाता है कि

उनकी शरण में आकर रामानन्द ने सारे पाखण्ड आडम्बर छोड़ दिए. गुरू कबीर को अपना गुरू धारण करके उसने सतगुरु कबीर की स्तुति इन शब्दों में कीः

कत जाइए रे घर लागो रंगु, मेरा चित न चलै मन भयो पंगु!
एक दिवस मन भई उमंग, घिस चन्दन चोआ बहुत सुगंध!!
पूजा चाली ब्रह्म ठाईं, सो ब्रह्म बतायो गरु मन माहिं!
जहां जाइये तहां जल पखान, तू पूर रह्यो सभ समान!
वेद, पुराण सभ देखे जोई, वहां तो जाइये जो यहां न होई!
सतिगुरु मैं बलिहार तोर, जिन सकल भरम काटे मोर!
रामानन्द रमत ब्रह्म, गुरु का सबद काटे कोटि करम!!

अर्थात कहां जाऊं मेरा चित डोल रहा है तथा मन अपंग हो गया है. ऐसा क्यों हुआ इसका उत्तर देते हुए रामानन्द कहता है कि एक दिन मैंने, जैसे कि ब्राह्मण अक्सर करते हैं, माथे पर सुगंधित चन्दन लगा कर ब्रह्म को पूजने गया तो रास्ते में सतगुरु (कबीर) मिल गए. उन्होंने समझाया कि भगवान तो मन के भीतर ही है और वह पूरी दुनिया में व्याप्त है. वेद पुराण में भगवान नहीं है. सतगुरु सें सच्चा ज्ञान पाकर मैं बलिहारी जाता हूं जिन्होंने मेरे सारे भ्रम मिटा दिए है. गुरू के ज्ञान ने मेरे सारे संदेह मिटा दिए है.

रामानन्द को ज्ञान देने की घोषणा स्वयं सतगुरू कबीर ने भी की है. उन्होंने कहा : **कासी में हम प्रगट भए, रामानन्द चेताए! अर्थात काशी में मेरा जन्म हुआ है जहां मैंने रामानन्द को चेताया है अर्थात उसे ज्ञान दिया है.**

सतगुरू कबीर सें दीक्षा लेने के बाद रामनन्द का गुरू रैदास सें भी मिलना हुआ. उनसें भी धर्म की बातें सुनी. दोनों धर्म भाईयों में कोई अन्तर नहीं जान कर वह उनके आगे भी दण्डवत हो गया. गुरू रैदास के श्लोकों में इस बात का पता चलता है कि रामानन्द उनकी शरण भी आया था. वे कहते हैं :

मेरी जाति कुट बांढला, ढोर ढुवंता नित ही बनारस आसा पासा!
अब **विप्र प्रधान तिहि करै दंडवति**, तोरे नाम सरणाइ रैदासा!!

अर्थात मै रैदास नीची जाति का समझा जाता हूँ तथा मेरे जैसे लोग रोजाना बनारस के आसपास मरे हुए पशु ढोते हैं. अब देखो ब्राह्मणों का प्रधान मुझे दण्डवत प्रणाम कर रहा है और मेरी शरण में आता है.

रामानन्द के साथ साथ उसके दूसरे ब्राह्मण चेले भी गुरू रैदास की शरण में आए. रैदास जी कहते हैंः

जाके कुटुंब के ढेढ, सब ढोर ढुवंते फिरैं आज बनारस आसा पासा!
आचार सहित विप्र करें दण्डवति, तिन तनै रैदास दासान दासा!!

अर्थात मेरे परिवार के सभी लोग बनारस के आस पास मरे हुए पशु ढोते थे आज उसी अछूत के आगे सभी ब्राह्मण दण्डवत प्रणाम करते हैं.

गुरू रैदास की प्राचीनतम जीवनी "अथ कथा रैदास प्रचई" में भी वर्णन है कि रामनन्द ने गुरू रैदास सें धर्म के बारे में बहस की तथा उनसें हार गया तथा उन्हें अपना गुरू स्वीकार किया. (श्लोक 213)

अतः इस प्रकार रामानन्द ने सतगुरु कबीर और गुरू रैदास दोनों को अपना गुरू माना है.

रैदास जी का गुरू कौन?

यह प्रश्न उठना स्वभाविक ही है कि रैदास जी का वास्तव में गुरू कौन था! यह एक आश्चर्य अथवा सुखद हैरानी की बात है कि लगभग किसी भी दलित सन्त का कोई गुरू रहा ही नहीं. **भगवान वाल्मिकी सें लेकर बाबा साहिब अम्बेडकर तक किसी भी दलित सन्त ने गुरू धारण किया ही नहीं.** गुरू धारण करने की परम्परा मात्र ब्राह्मणों में विद्यमान थी. दलितों में गुरू नहीं बनाने की परम्परा को भगवन बुद्ध सें जोड़ा जा सकता है. जैसे भगवन बुद्ध ने किसी को अपना गुरू नहीं बनाया वैसे ही उन्हीं की श्रमण परम्परा के दलित सन्तों ने किसी को अपना गुरू नहीं बनाया. भगवन बुद्ध ने अपना धर्म प्रचार करते हुए कहा कि वे मार्ग दाता हैं मुक्ति दाता नहीं हैं. वैसे ही दलित सन्त समाज के मार्ग दर्शक बने. अतः उन्हें न तो मुक्तिदाता गुरू धारण करने की जरूरत थी और न ही किसी का मुक्तिदाता गुरू बनने की जरूरत थी.

जैसे भगवन बुद्ध ने सदाचार और सच्चाई को अपना मार्गदर्शक (गुरू) माना वैसे ही सतगुरु रैदास ने भी सदाचार और सच्चाई को अपना मिशन बनाया. वे बोलेः

- ➢ जन रैदास राम रंग राता, गुरू प्रसाद नरक नहीं जाता!

अर्थात मैंने सदाचार को अपना गुरू बना लिया है और मैं नेक काम करता हूं इसलिए अब मैं नरक नहीं जाऊंगा. सीधी सी बात है कि गुरू रैदास कभी पाखण्डों व आडम्बरों में नहीं पड़े. स्वर्ग नरक के चक्करों में न वे खुद पड़े और न ही किसी को डाला. उनके अनुसार बुरे कर्म करने वाले का जीवन यहीं नरक बन जाता है. अच्छे काम करने वाले के लिए यहीं स्वर्ग है. आप किसी को भी गुरू धारण कर लो, बुरे का फल बुरा और अच्छे का फल अच्छाई अवश्य मिलेगा.

- ➢ माधो गुरू, सब जग चेला
- ➢ नीच को ऊंच करै, मेरा गोविंद काहु ते न डरै!

अर्थात भगवान सबका गुरू है. वही बच्चे को दूध पीना बताता है. भूख लगने पर रोना सिखाता है. अन्धे को वही रास्ता सुझाता है. और सबसें बड़ी बात यह है कि वह नीच आदमी को भी सदबुद्धि देता है. अगर ऐसा नहीं होता तो नीच ताकतवर किसी को सताने सें नहीं झिझकता. वह भी सच्चाई सें डरता है. केवल भगवान ही किसी सें नहीं डरता क्यों कि वह सदमार्ग पर चलने तथा सभी चलाने वाला होता है.

सन्त रैदास के हमसहरी सतगुरु कबीर ने स्पष्ट कहा :

गुरू को मानस जो गिने, चरणमृत करे पान!
वे नर नरक में जाएंगे, जन्म जन्म होय स्वान!!

गुरू मानस करिजै, ते नर कहिए अंध!
होंय दुखी संसार में, आगे जम का फंद!!

सन्त कबीर ऐसे आदमी को फटकारते हैं जो "मनुष्य" को गुरू मानता है और उसके पैर धोए हुए पानी को पीता है. वे कहते हैं ऐसा आदमी निश्चित रूप सें नरक में जाने के लायक है तथा कुत्ते की जूणी में पैदा होना चाहिए. जो आदमी दूसरे आदमी को अपना गुरू मानता है उसे अन्धा समझा जाना चाहिए. ऐसे मूर्ख जीते जी दुखी रहते हैं तथा जल्द ही मौत के चंगुल में भी फंसते हैं.

कुछ लोग धूर्तता पूर्वक माधो या गोविंद का अर्थ ब्राह्मणों के कामी तथा लम्पट मगर भगवान कहा जाने वाला कृष्ण कर सकते हैं मगर सच्चाई यही है कि गुरू रैदास ने कृष्ण को उसकी करतूतों की वजह सें इस लायक ही नहीं समझा कि अपनी पूरी बाणी में उसका जिक्र भी करते!! रामानन्द के कर्म ऐसे नहीं थे कि वह गुरू रैदास का माधो या गोविंद यानि गुरू बन सकता हो!

अतः उपरोक्त तथ्यों सें यह स्पष्टतः सिद्ध होता है कि गुरू रैदास का कोई गुरू नहीं था. रामानन्द तो स्वयं उनकी शरण आया था. जैसे भगवन बुद्ध ने आत्म मंथन के जरिए बिना गुरू ज्ञान प्राप्त किया वैसे ही गुरू रैदास को ज्ञान मिला. जैसे बुद्ध ने घर घर जाकर शील, करुणा, सदाचार के ज्ञान का प्रचार किया गुरू रैदास ने भी घर घर जाकर शील, करुणा, सदाचार की जोत जलाई. वैसे भी सदाचार करुणा और शील का मार्ग अपनाने के लिए किसी आडम्बर किसी कर्मकांड की आवश्यकता नहीं होती. और जब आडम्बर और कर्मकांड की जरूरत नहीं तो "गुरू" की भी जरूरत नहीं होती. इस मार्ग पर जो सबसें बड़ा सदाचारी है वही सबका गुरू होता है.

अध्याय 6

मीरा के प्रभु : गिरिधर यानि गुरू रैदास

मीरा का नाम ध्यान में आते ही एक सूरत आँखों के सामने उभरती है : एक लावण्यमयी स्त्री, गोरा रंग, खुले बाल, गले में माला, हाथ में तानपुरा और तन पर गेरुआ या सफेद वस्त्र और मुख सें भजन गाती हुई. ब्राह्मणों ने कुछ ऐसी ही छवि मीरा की बना रखी है.

स्कूलों की किताबों में तथा अन्य जगह मीरा की जीवनी बताई जाती है कि जब वह 4–5 साल की थी तभी उसने कृष्ण को अपना पति मान लिया था. परन्तु बड़ी होने पर उसकी शादी कुख्यात राणा के भाई भोज राज सें कर दी जाती है. विवाह के पांच साल बाद ही वह विधवा हो जाती है और कृष्ण को पाने में जुट जाती है. राणा को यह सहन नहीं होता. वह उसे मारनें के प्रयास करता है मगर सफल नहीं हो पाता. इन बातों सें तंग आकर एक दिन वह घर सें भाग जाती है तथा भारत भर का भ्रमण करती हुई द्वारका पहुंच जाती है. राणा उसे लाने के लिए

ब्राह्मणों की टोली भेजता है. ब्राह्मण जाकर मीरा को मिलते हैं. अगले दिन ब्राह्मणों ने लागों को बताया कि मीरा तो कृष्ण की मूर्ति में समा गई है तथा मूर्ति के ऊपर मीरा की केवल ओढनी मिली है.

मीरा की हत्या की गई :

कोई भी समझदार आदमी इस कहानी को सत्य नहीं मान सकता. कोई किसी भी "भगवान" का कितना भी बड़ा भक्त क्यों न हो वह उसकी पत्थर की मूर्ति में किसी भी हालत में घुस ही नहीं सकता, समाने की बात तो बहुत दूर की है. आम आदमी की तो बात ही छोड़ो, ब्राह्मणों के चार संकराचार्य हैं जिनका रुतबा भगवान के बराबर माना जाता है, उनमें सें भी कोई पूरा तो क्या अपनी एक अंगुली भी किसी भी 'भगवान' की मूर्ति में घुसा कर नहीं दिखा सकता. इस कहानी का सीधा सा अर्थ है कि उन ब्राह्मणों ने मीरा की हत्या की, उसकी लाश को ठिकाने लगाया और उसकी ओढनी कृष्ण की मूर्ति पर डाल कर कहानी बना दी कि मीरा तो उसकी मूर्ति में समा गई है. अपने विरोधियों को इस तरह ठिकाने लगाना उनका सनातन नियम है, धर्म है. उनके धर्म ग्रन्थ ऐसी घटनाओं सें पटे पड़े हैं. उनका कोई भी भगवान ऐसा नहीं है जिसके हाथ में हथियार न हों और जिसने धोखे सें लोगों के कत्ल न किये हों. राम ने धोखे सें हत्याएं करके रामायण भर दी तो कृष्ण ने धोखे सें की गई हत्याओं सें महाभारत ही भर दी.

मीरा के कत्ल सें एक **अत्यंत अहम सवाल** पैदा होता है कि मीरा की हत्या क्यों की गई. अगर एक पल के लिए मान भी लें कि वह कृष्ण की पूजा करती थी तो यह उसकी हत्या का कारण नहीं बनता है क्योंकि हजारों राजपूतानियां कृष्ण की पूजा करती थीं. अगर कृष्ण पूजा ही उसकी हत्या का कारण होता तो इन राजपूतानियों को भी मीरा जैसी सजा मिलनी चाहिए थी. लेकिन मीरा के इलावा किसी अन्य को तो कत्ल नहीं किया गया. जैसे महात्मा रावण की हत्या करने के पीछे सीता हरण कोई कारण नहीं था क्योंकि उनकी हत्या की योजना सीता के जन्म सें बहुत पहले ही बना ली गई थी. वैसे ही मीरा की हत्या के पीछे भी उसका तथाकथित कृष्ण प्रेम भी कोई कारण नही था क्योंकि अगर मीरा घरबार छोड़ कर कृष्ण के गीत गाती थी तो इसमें तों ब्राह्मणों को तो फायदा ही था क्योंकि वह तो कृष्ण प्रचार करके उनके ग्राहक (भक्त) ही बढ़ा रही थी. राणा ने अगर मीरा को मरवाना होता तो वह गुंडे भेजता या अपने सिपाही भेजता. वह इस काम के लिए ब्राह्मणों को क्यों भेजता! अतः यह हत्या किन्हीं अन्य कारणों सें तथा ब्राह्मणों द्वारा की गई.

इस हत्या का एक मात्र कारण था : मीरा द्वारा गुरू रैदास सें दीक्षा लेना यानि उनका शिष्यत्व ग्रहण करना और उनकी चेली बनना. एक शूद्र द्वारा एक राजपूतानी, जिन्हें क्षत्रिय भी बताया जाता है, को शिक्षा दीक्षा देना ब्राह्मणों के लिए एक खुली चुनौती थी. यह चुनौती उनके ब्राह्मणधर्म और दान दक्षिणा दोनों को थी. अगर शूद्र ही ज्ञान देने बैठ जाएंगे तो फिर ब्राह्मणों को कौन पूछेगा, उन्हें दक्षिणा कहां सें मिलेगी. अगर ब्राह्मणधर्म की जड़ ब्राह्मण ही भूखों मर गए तो धर्म को कौन बचाएगा. अगर शूद्र ही ज्ञान बांटने लग गए तो वेद, पुराण, स्मृतियां, गीता आदि तो मात्र रद्दी का ढेर ही बन कर रह जाएंगे क्योंकि उनमें दर्ज शूद्र–प्रताड़ना के नियम तो बेकार हो जाएंगे. इसलिए ब्राह्मणों ने वही किया जो 1500 साल पहले दलित सम्राट अशोक के पौत्र सम्राट वृहदर्थ के साथ इनके बुजुर्गों ने किया था. उन्होनें गुरू रैदास और मीरा दोनों की हत्या कर दी ताकि लोगों को सबक मिले कि ब्राह्मणों की रोजी रोटी में रोड़े अटकाने वालों का क्या हश्र होता है.

एक कहावत है कि एक झूठ को अगर सौ बार सच बता कर प्रचार कर दिया जाए तो लोग उसे सचमुच सच मान लेते हैं. ब्राह्मणधर्म ने ऐसे सैंकड़ों झूठी बातों को सच्चाई बना रखा है. इसका ऐसा ही झूठ उन्होंने मीरा के बारे में फैला दिया है. जहां गुरू रैदास की हत्या करके उन्हे पिछले जन्म का ब्रह्मण घोषित कर दिया गया, वहीं मीरा की हत्या करके उसे कृष्ण की भक्त घोषित कर दिया गया. जबकि सच्चाई यह है कि गुरू रैदास अपनी सातों पीढ़ियों को दलित मानते हैं और **मीरा ने कृष्ण का कभी नाम भी नहीं लिया. अगर वह ब्राह्मणों के लम्पट भगवान का नाम ही लेती तो मारी नहीं जाती. उसने "रैदास चमार" का नाम लिया और मारी गई!**

कितने दुर्भाग्य और शर्म की बात है कि आज मीरा को उसी धर्म के एक भगवान की भक्त बताया जाता है जिसके विरुद्ध मीरा और उनके गुरू सन्त रैदास दोनों ने संघर्ष किया. वास्तव में यही ब्राह्मणों का सनातन धर्म रहा है कि उन्होंने सदा राजा को मार कर 'राजा अमर रहे' का नारा लगाया है. सम्राट हरिण्यकशिपु की हत्या करके उनके बेटे को प्रह्लाद को विष्णु का भक्त घोषित कर दिया गया जबकि उन्हीं के ग्रन्थ साक्षी हैं कि न केवल प्रह्लाद ने बल्कि उनके बेटों पोतों तक ने ब्राह्मणिक देवों सें टक्कर ली तथा अपनी मातृभूमि उनसें आजाद करवाई. उन्होंने गुरू रैदास की हत्या करके उन्हें पिछले जन्म का ब्राह्मण घोषित कर दिया. बिलकुल इसी नीति के तहत

दरबार साहिब अमृतसर के अकाल तख्त साहिब को ध्वस्त करके स्वयं उसका निर्माण करवा दिया ताकि आने वाले इतिहास में वे यह दर्ज करवा सकें कि दरबार साहिब उनके द्वारा बनया गया है.

इसी नीति के तहत हर ब्राह्मणिक लेखक यह तथ्य पूरी तरह सें छुपाता आया है कि मीरा ने सतगुरू रैदास सें दीक्षा ली थी. अगर हम वेद पुराणों में वर्णित मिथिहास को छोड़ दें तो शायद **गुरू रैदास पहले दलित सन्त थे जिन्होंने ब्राह्मणों के दीक्षा देने के एकाधिकार को न केवल चुनौती दी बल्कि उसे सफलता पूर्वक नष्ट भी किया.** सतगुरु कबीर ने अपने धर्म भाई रैदास जी का पूरा साथ दिया. दोनों दलित सन्तों ने एक नई क्रांति का सूत्रपात किया. सदियों पहले दलितों का स्कूल (आश्रम) की तरफ देखना भी अपराध घोषित कर दिया गया था. किसी भी दलित को किसी आश्रम में दाखिला नहीं मिलता था. अगर कोई कुछ विद्या अर्जित कर भी लेता था तो महावीर एकलव्य की तरह अपंग बना दिया जाता था. ब्राह्मणों ने सदा सें ही दलितों को दबा कर अपने चमच्चों को ऊपर उठाया है. महाभारत के अनुसार महावीर एकलव्य उस समय के सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर (धनुष बाण चलाने वाले) थे. लेकिन ब्राह्मण द्रोण अपने चमच्चे अर्जुन को सबसें बड़ा धनुर्धर घोषित करना चाहता था. महावीर एकलव्य के होते ऐसा करना सम्भव नहीं था. अतः उस धूर्त ब्राह्मण ने महावीर एकलव्य के दाएं हाथ का अंगूठा काट लिया!! ऐसा दलितों के साथ सदियों तक होता आया! उन्हे पढ़ने नहीं दिया गया और जो जैसे तैसे करके पढ़ पाया उसे महावीर एकलव्य की तरह नाकारा कर दिया गया या फिर सन्त शम्बूक की तरह मौत के घाट उतार दिया गया.

गुरू रैदास और गुरू कबीर ने इस अन्याय को समाप्त करने का बीड़ा उठाया. उन्होंने दलितों को ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रेरित किया तथा स्वयं भी ज्ञान बांटने के लिए आगे आए. उनसें पहले पिछले सैंकड़ों सालों सें ऐसा करने की हिम्मत कोई नहीं कर पाया था. उन्होंने दलितों को बताया कि **बिना ज्ञान के कुछ भी हासिल नहीं किया जा सकता.** गुरू रैदास द्वारा दलितों को शिक्षा देना और उससें बढ़ कर गैर दलितों को भी दीक्षा देना ब्राह्मणों के लिए खतरे की घंटी थी. अतः ब्राह्मणों ने अपनी सदियों की आजमाई साम दाम दण्ड भेद की नीति के तहत उनका कत्ल कर दिया.

आज क्योंकि सारे रेड़ियो, टी वी, अखबार, यहां तक कि न्यायलय भी ब्राह्मणिक कब्जे में हैं. अतः हर टीवी रेड़ियो, अखबार वाला गला फाड़ फाड़ कर चिल्ला रहा है कि मीरा तो कृष्ण की प्रेमिका थी. उसी के प्यार में दीवानी थी. वे सब के सब सच्चाई जानते हैं कि **मीरा के प्रभु गिरधर नागर गुरू रैदास के अलावा कोई नहीं है.** फिर भी वे झूठ पर झूठ बोले जा रहे हैं कि मीरा का कृष्ण सें सम्बंध था. गुरू रैदास का नाम लेते उनकी जीभ जलने लग जाती है. इस झूठ के खिलाफ अगर कोई न्यायलय में जाए तो ब्राह्मणवादी जॅज यही कहता है कि यह सब आस्था की बातें हैं और इन्हें तर्क पर नहीं तोला जा सकता. लेकिन अगर कोई उनके भगवानों की सच्चाई खोल दे तो यही जॅज उसे धार्मिक भावनाओं को ठेस बता कर सजा सुनाने में पीछे नहीं रहते! ब्राह्मणिक देवों के कुकृत्यों को धार्मिक माने जाओ तो यह आस्था है, कृष्ण के अपनी मामी राधा सें व्यभिचार के किस्सों को धार्मिक मानना आस्था है, राम द्वारा अपनी पूरे दिनों की गर्भवती पत्नि को जंगल में फिंकवाने के जालिमाना कुकृत्य को धार्मिक कहना आस्था है लेकिन जब कोई सच्चाई पर सें पर्दा उठाने की हिम्मत कर ले तो हंगामा हो जाता है.

अगर झूठ बोलना ब्राह्मण धर्म में 'आस्था' है तो यह दलितों की भी तो आस्था है कि उनके गुरूओं को अपमानित करने वालों को वे शीशा दिखाएं. अगर ब्राह्मण सतगुरू कबीर पर लांछन लगाए कि वह तो विधवा की नाजायज औलाद हैं तो दलितों भी हक है कि वे उनके भगवानों की सच्चाई बताएं. और वह सच्चाई बताएं जो उनके ग्रन्थों में मौजूद है. उदाहरणतः हनुमान की माँ अंजनि केसरी नामक व्यक्ति की पत्नि थी. केसरी की गैर मौजूदगी में अंजनि ने पवन नामक व्यक्ति सें व्यभिचार किया जिससें उसे गर्भ रह गया और उससें हनुमान पैदा हुआ. सभी जानते हैं कि दशरथ के बच्चे पैदा नहीं होते थे. उसने अपने जंवाईं सें यज्ञ करवाया और उससें कहा कि वह कौषल्या की टांगें फैला कर उसकी योनि में अपना लिंग डाले. यज्ञ के दौरान रानियां गर्भवती हुईं. इससें राम पैदा हो गया. ऐसी औलाद को हम भारतीय "हरामी" कहते हैं. ऐसे पैदा हुए ब्राह्मणिक भगवानों, ऋषियों आदि की गिनती असंख्य है.

अतः अब ब्राह्मणों को यह सीख लेना चाहिए कि शीशे के घरों में बैठ कर लोहे के घरों पर पत्थर नहीं मारे जा सकते. उन्हें यह सच्चाई भी स्वीकार कर लेनी चाहिए कि भारत में आज के दिन जो सत्य, सदाचार, नैतिकता बाकी है वह मात्र दलित सन्तों की वजह सें है और यह भी मान लेना चाहिए कि ब्राह्मणों ने आज तक किसी सन्त को पैदा नहीं किया है. मीरा क्योंकि सन्त थी इसलिए वह किसी ब्राह्मणिक सन्त अथवा ब्राह्मणिक भगवान की चेली हो ही नहीं सकती.

मीरा कोई बहुत महान सन्त नहीं थी. अतः उसका गुरू रैदास की शिष्या होना अपने आप में कोई अहम बात नहीं है लेकिन **अहम बात यह है** कि आज सें 500 साल पहले जब शूद्र का सड़क पर आना भी अपराध था, शूद्र द्वारा शिक्षा की बात करने पर उसकी जीभ काट दी जाती थी, शिक्षा के दो शब्द कान में पड़ते ही उसके कानों में खौलता हुआ तेल डाल दिया जाता था, किताबों की ओर देख लेने मात्र सें उनकी आंखें फोड़ दी जाती थीं. उस समय गुरू रैदास ने यह हिम्मत दिखाई कि उन्होंने न केवल दलितों को शिक्षा दी बल्कि एक राजपूतानी तक को दीक्षा दे डाली. आज आजादी के 60 साल बाद भी मीरा के राजस्थान में ही अनेकों गांवों में दलित दूल्हा घोड़ी पर बैठ कर गांव सें नहीं गुजर सकता. जरा सोचें 500 साल पहले दलितों की क्या हालत रही होगी. उस समय गुरू रैदास ने एक दलितों को ही नहीं राजपूतों तक को शिक्षा देने का महान कार्य किया. ऐसे थे गुरू रैदास!!

मीरा और रैदास जी के आपसी सम्बंध

मीरा गुरू रैदास सें रूबरू मिलने वाले कुछेक खुशनसीबों में सें एक थी. जैसे दूध में मिल कर पानी भी दूध बन जाता है वैसे ही मीरा गुरू रैदास सें मिलकर "रैदासी" ही बन गई. सन्त रैदास सें मिल कर मीरा की मानो सब इच्छाएं पूर्ण हो गईं. **मीरा की बाणी साक्षी है कि वह गुरू रैदास को अपना गुरू, भगवान, मित्र, भेदना सब कुछ मानती थी.** मीरा ने कहाः

खोजती फिरूं भेदना, घरको न कोई करै बखान!
सतगुरु मिलै रैदास म्हानै, दीन्ही सुरत सहदान!! (पंजाब सौरभ पृ. 14)

अर्थात मैं मीरा ऐसा मानव ढूंढ रही थी जिसे अपने मन के भेद बता सकूं. मेरे जानने वाले, घरवाले कोई भी ऐसा नहीं जिससें में अपने दिल की बात कह सकूं. अब मुझे सतगुरू रैदास मिल गए हैं जिन्होंने मुझे सही राह दिखाई है.

मीरा के उपरोक्त श्लोक में कुछ विशेष शब्दों का प्रयोग हुआ है – भेदना, घरको, बखानि, सुरत और सहदानि. इन राजस्थानी भाषा के इन शब्दों का खास अर्थ है.

भेदनाः वह प्राणी जिससें कोई अपने भेद छुपा नहीं सकता या छुपाना नहीं चाहता. ऐसा प्राणी एक ही होता है जिसे भगवान कहा जाता है. या फिर कुछ हद तक पति पत्नि में भेद सांझे होते हैं. मीरा के जमाने में ही साई बुल्ले शाह जैसे सूफी सन्त हुए थे जिन्होंने स्वयं को भगवान की पत्नि के रूप में मान कर भक्ति की थी. अतः मीरा ने जब गुरू रैदास को अपना भेदना कहा तो उन्हें अपना सब कुछ माना : वह भगवान जिससें वह अपने मन का दुःख कह सकती थी.

घरको : यानि कोई भी आम जानकार सें बढ़कर करीबी जानकार. राजस्थान में जब भी परिवार में किसी खास विषय पर कोई निर्णय लेना होता है तो पूरा परिवार (यानि दादा नाना मामा माँ बाप पति भाई बेटा आदि सब के सब) और जितने करीबी जानकार (पुरोहित, पड़ोसी, रिश्तेदार) होते हैं वे सब मिल बैठ कर फैसला करते हैं. ऐसे लोग "घरका" कहे जाते हैं. मीरा को घरकों में सें ऐसा कोई मिला जिससें वह अपने मन के दुःख खोल सके. उसे केवल सतगुरू रैदास ही ऐसे मिले जिससें उसने अपने मन की बात कही.

बखानि : किसी बात को पूरे विस्तार सें बताना. उदाहरणतः भगवान, धर्म जैसे शब्दों को लें. सभी अपने हिसाब सें जानते हैं कि धर्म क्या है, भगवान कौन है. ब्राह्मणों के अनुसार राम कृष्ण आदि भगवान हैं और उनके काम धर्म हैं. उनकी पूजा करना, दान देना आदमी का धर्म है. जब मन में ऐसे प्रश्न उठते हैं कि क्या राम कृष्ण जैसों ने जो कुकर्म किये उन्हें भगवान कहा जा सकता है या पत्थर के आगे घण्टी बजाने में धर्म कैसे है अथवा मंदिर के दान पर पण्डे ऐश करते है तो क्या यह धर्म का काम है? तब कोई ऐसा चाहिए जो इन प्रश्नों का सही और सटीक उत्तर दे सके. जो हर प्रकार का संदेह दूर कर सके. इसके लिए व्याखान चाहिए, बखानि चाहिए! गुरू रैदास ने मीरा को सत्य धर्म की शिक्षा दी यानि बखान किया.

सुरत : सुरत यानि होश. आदमी सुरत में दो चीजों के बाद आता है. एक तो नींद सें जागने के बाद तथा दूसरा बेहोशी के बाद. एक और ढंग सें भी सुरत आती है जिसे कहा जाता है सुरत ठिकाने लाना यानि बिगड़े हुए को सुधारना. गुरू रैदास ने मीरा की सुरत जगाई तथा ब्राह्मणों की सुरत ठिकाने लगाई जो धर्म के नाम पर ठगी कर रहे थे. रैदास जी के सम्पर्क में आ कर मीरा ने सब प्रकार के ब्राह्मणिक पाखण्ड छोड़ दिए. वह बोली :

मेरो मन लाग्यो सतगुरु सैं, अब ना रहूंगी अटकी!
गुरू मिल्या रैदासजी म्हानै, दीनी ज्ञान की गुटकी!!

सहदानि : किसी को कुछ देकर अपने जैसा बना लेना. जैसे गुरू रैदास ने मीरा को सुरत का दान दिया और अपने जैसा बना लिया. वे बोले : तोहि मोहि, मोहि तोहि अन्तर कैसा! कनक कटिक, जल तरंग के जैसा!! अर्थात तेरे मेरे और मेरे तेरे में वही अन्तर है जो सोने और गहने में तथा पानी और उसकी लहरों में होता है. ऐसा ही सहदान उन्होंने मीरा को दिया.

मीरा आगे बोली :

झंझा, पखावज, न वेण बजावत, झालर न झंकार!
कासी नगर कर चौक मैं, म्हानै मिल्या रैदास!!

अर्थात मीरा को गुरू रैदास काशी जिसे आजकल बनारस या वाराणसी भी कहा जाता है, में मिले. सबसें मुख्य बात यह थी कि उन्होंने कोई आडम्बर या पाखण्ड नहीं कर रखा था. ब्राह्मण ऋषि या पण्डे आदि जहां भी टिकते हैं वहां ढोल नगाड़े बजाना, शंख फूंकना और नाच गाने का पूरा शोर होता है. रैदास जी सच्चे सन्त थे. उन्हें ऐसे ढोल ढमाकों की जरूरत ही नहीं थी. वहां न डमरू था और न ही देवदासियों (धार्मिक वेश्याओं) के पायल की झंकार थी.

वैष्णों के मंदिर में जाना हो या किसी अन्य तीर्थ पर हर जगह लोग शोर मचाते हुए जाते हैं. सोचने की बात है कि अगर वैष्णों माँ है तो उसे मिलने के लिए उसके बेटों को इतना शोर शराबा करने की क्या जरूरत है. माँ सें मिलने के लिए बेटे को दुनिया को सुनाना कतई जरूरी नहीं होता. ऐसे ही गुरू को पिता माना गया है. औलाद को अपने पिता सें मिलने के लिए भी किसी आडम्बर की जरूरत नहीं होती. अतः मीरा को गुरू रैदास सें मिलने के लिए किसी ढोल नगारे अथवा शंख की पो पों करने की जरूरत नहीं पड़ी. शोर करने की जरूरत सिर्फ उन्हें होती है जो धर्म के नाम पर धन्धा करते हैं. वे शोर करके अपने ग्राहक बढ़ाते हैं बिलकुल वैसे ही जैसे टीवी पर विज्ञापन देकर व्यापारी अपने ग्राहक बढ़ाते हैं.

झंकार : मीरा द्वारा प्रयोग किए गए **झंकार** शब्द पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है. सभी जानते हैं कि स्त्रियों द्वारा पांवों में पहने जाने वाली पायल बजने की आवाज को झंकार कहा जाता है. ब्राह्मणों के अनेकों मंदिरों में देवदासियां नाचती हैं. सीधे साफ शब्दों में उनसें वेष्या वाले काम लिए जाते हैं. दक्षिण भारत में येलम्मा नामक स्त्री का मंदिर है. वहां के ब्राह्मणों ने अपनी वासना पूर्ति के लिए एक अफवाह या भ्रम फैला रखा है कि जो भी **दलित** वहां अपनी अव्यस्क कुंआरी लड़की उन्हें सौंपेगा उसकी मनोकामन पूरी होगी. वहां सिर्फ दलितों की बेटियां ही स्वीकार की जाती हैं. ब्राह्मण, राजपूत, बनिये आदि की लड़की वहां भेंट में स्वीकार नहीं की जाती.

जिस दिन ऐसी लड़की को पहली माहवारी आती है उसकी शादी मंदिर के भगवान सें कर दी जाती है. उस लड़की सें सुहागरात मनाने के लिए जमींदारों, पण्डों और रईसों में बोली लगती है. जो सबसें अधिक बोली "दान" देता है वही अपने "भगवान की पत्नि" सें सुहागरात मनाता है. उसके बाद जब तक वे जवान रहती हैं देवदासियां बन कर दिन में मंदिर में नाचती हैं तथा रात को पण्डों, तीर्थयात्रियों आदि की हवस पूर्ति करती हैं. उनके धन्धे की कमाई मंदिर की आमदन होती है.

जब नई जवान देवदासियां आ जाती हैं तो पुरानी बूढ़ी देवदासियों को उठा कर मंदिर सें बाहर फैंक दिया जाता है. तब वे खुले में वेश्यावृति करने पर मजबूर होती हैं. बस उन्हें इतना ही अन्तर पड़ता है कि अब उनकी आमदन मंदिर का हिस्सा नहीं होता!! अगर देवदासी के लड़की पैदा हो जाए तो वह भी देवदासी बनती है तथा फिर वही जमींदार और पण्डे उसकी भी बोली लगाते हैं. अतः संभव है कि बहुत बार "असल बाप" ने ही अपनी बेटी की बोली दी हो तथा ब्रह्मा की तरह अपने ही खून सें पैदा बेटी सें मूंह काला कर लिया हो!! यही ब्राह्मण धर्म है! इसीके विरुद्ध सभी सन्तों : रैदास, कबीर, मीरा, नामदेव, नानक, पीपा आदि ने आवाज उठाई थी.

ऐसी देवदासियां या मुफ्त की वेश्याएं जब नाचती हैं तो उनकी पायलों सें **झंकार** पैदा होती है. मीरा का कहना है कि उसे गुरू रैदास सें मिलने के लिए झंकार करने की जरूरत नहीं पड़ी. **गुरू सें मिलने के लिए बेटी बनना पड़ता है नाचने वाली वेश्या नहीं!!** कितने दुःख और शर्म की बात है कि आज उसी मीरा को ब्राह्मणों के एयाश कृष्ण की भक्तिनी बताया जाता है तथा किस्से कहानियां बना कर उसे कृष्ण के आगे नाचने वाली बताया जाता है. गुरू रैदास की चेली होने की सजा के तौर पर ब्राह्मणों ने उसे बदनाम करने के लिए ऐसी कहानियां बनाई हैं. मीरा राजपूतानी थी इसलिए उसकी लिहाज कर दी गई अगर कहीं वह अन्य जाति सें होती तो निश्चित रूप में देवदासी (वेश्या) घोषित कर दी गई होती!

मीरा ने आगे कहा :

बन परबत तीरथ देवला, ढूंढा चहुं दिस दौर!

मीरा श्री रैदास शरण बिन, भगवान और न ठोर!!

अर्थात मीरा ने भगवान को चारों दिशाओं के जंगलों, पहाड़ों तीर्थों मंदिरों में ढूंढा लेकिन उसे रैदास जी की शरण में आकर ही पता चला कि भगवान कहीं और नहीं है. साधारण सें दिखने वाले इस श्लोक में मीरा ने पूरे ब्राह्मणवाद का खण्डन कर दिया है.

वन : सभी जानते हैं कि वन, पर्वत, तीर्थ और देवालय ब्राह्मणधर्म के स्तम्भ हैं. ब्राह्मणों के सभी ऋषि वनों में रहते थे. सच्चाई यह है कि वे ऋषि वहां पर अपने आश्रमों यानि फार्म हाउसों में ऐयाशी करते थे. ब्राह्मणिक शास्त्रों के अनुसार 50 साल का हो जाने पर हर सनातनी को वन में जाना अनिवार्य है. वैसे आज तक एक भी आम ब्राह्मण वन में रहने नहीं गया क्योंकि उसे आज वहां वह ऐयाशी नहीं मिलती जो ऋषि अपने फार्म हाउसों पर करते थे. उदाहरणतः भरत जब अयोध्या वासियों को साथ लेकर राम सें मिलने गया तो रास्ते में ब्राह्मण ऋषि भारद्वाज का आश्रम यानि फार्म हाउस आया. वह वहां ठहर गया. वहां उस ऋषि ने भरत के साथ जाने वाले हर आदमी को सात सात वेश्याएं पेश की जो मर्दों की मालिश करने, उबटन लगाने और नहलाने में एक्सपर्ट थी! कोई भी उन्हें छोड़ कर राम को मिलने के लिए आगे जाने को तैयार नहीं हुआ. भरत उन्हें डरा धमका कर आगे अपने साथ लेकर गया. पूछा जा सकता है कि वह वशिष्ठ अगर साधू था तो उसके पास इतनी लड़कियां कहां सें आईं.

पर्वत : उनके सारे देव देवियां पहाड़ों पर रहते थे. वैष्णों चामुण्डा ज्वाला और पता नहीं कितनी ही देवियां हैं जिनके अड्डे पहाड़ों पर ही हैं. त्रिमूर्ति में सें एक शिव और उसकी बीवी पार्वती तो कैलाश नामक पहाड़ पर ही रहते हैं मगर उनके लिंग योनि नीचे मैदानों में पुजवाये जाते हैं. हनुमान और कृष्ण तो पहाड़ वैसे ही उठाए घूमते रहते थे जैसे आजकल लोग मोबाइल फोन लिए घूमते रहते हैं.

तीर्थ : तीर्थों का पाखण्ड तो ब्राह्मणधर्म की सांसें हैं. तीर्थों के बारे में बहुत सी अफवाह फैलाई हुई हैं कि प्रयाग में नहाने सें मोक्ष मिल जाता है, काशी में नहाने सें स्वर्ग मिलता है, हरिद्वार में नहाने सें भगवान मिल जाता है आदि. तीर्थों सें कमाई ने ही ब्राह्मणवाद को बचा रखा है. अगर तीर्थों की कमाई न होती तो ब्राह्मणवाद कभी का इतिहास बन चुका होता.

देवला : देवालय यानि मंदिर उनकी कमाई के अड्डे ही हैं. अगर पूरे भारत के मंदिरों की कमाई का टोटल लगाया जाए तो भारत सरकार की कुल आमदन सें कम नहीं बैठेगी!! दक्षिण के कई मंदिरों में तो आदमी की भक्ति और लग्न की बजाए उसकी जेब के आधार पर दर्शन की लाइनें लगती हैं. कुछ लाख रुपए देने वाला मूर्ति के पास जा सकता है, हजार देने वाला दूर सें माथा टेक सकता है सौ पचास देने वाला बस दूर सें चलते हुए उसे देख सकता है. ब्राह्मणों की शातिरता चालाकी देखो कि लोग फिर भी उस मूर्ति को माथा टेकने आते हैं जिसके पास उन्हें बिन पैसों के जाने ही नहीं दिया जाता.

ब्राह्मणिक तीर्थों का खण्डन करने के लिए ही सतगुरु कबीर अंतिम समय में मगहर चले गए थे जिसके बारे में कहा जाता था कि वहां मरने वाला नर्क में जाता है. कबीर बोले अच्छे या बुरे काम करने सें स्वर्ग या नरक यहीं मिल जाता है. उनकी तरह ही मीरा बोली इन कमाई और ऐयाशी के अड्डों यानि पर्वत, मंदिरों, तीर्थों पर भगवान नहीं है. वह बोली भगवान तो गुरू रैदास जैसे सच्चे सन्त के वचनों में है, कर्मों में है. उसने कहा कि ब्राह्मणिक आडम्बरों : वन में जाना, मंदिर की घंटियां बजाना, गंगा जमना में डुबकी लगाना, कथाएं करना, यज्ञ करना आदि सें मुक्ति नहीं मिलती. यह सब तो पाखण्ड है जो ब्राह्मणें ने अपनी रोजी रोटी चलाने के लिए बना रखे हैं.

गुरू रैदास की स्तुति में मीरा ने कहाः

मेरो मन लाग्यो सतगुरु सैं, अब ना रहूंगी अटकी
गुरू मिल्या रैदासजी म्हानै, दीनी ज्ञान की गुटकी
मीरा सतगुर देव की करै वंदना आस
जो चेतन आतम कर्‌या, धन भगवान रैदास!!

गुटकी : मीरा ने अपने उपरोक्त पदों में स्पष्ट किया है कि उसके **प्रभु गुरू रैदास ही हैं** अन्य कोई नहीं. पहले श्लोक में उसने कहा है कि उसका मन गुरू रैदास में रम गया है क्योंकि उन्होंने उसे ज्ञान की **गुटकी** दी है. अब ज्ञान मिलने पर वह कहीं पर अटकी नहीं रहेंगी. इस श्लोक में "गुटकी" शब्द विशेष महत्व रखता है. गुटकी या "घूंटी" नवजात बच्चे को दी जाती है.

ब्राह्मणिक परम्परा के अनुसार जब ऊंची जाति वाले जनेऊ धारण करते हैं तो उनका दूसरा जन्म होता है और वे "द्विज" कहलाते हैं. बौद्ध, श्रमण अथवा सन्त परम्परा के अनुसार जब कोई व्यक्ति भिक्षु बनता है तब उसका दूसरा जन्म होता है तथा उस दिन सें उसकी आयु गिनी जाती है. बाद में भिक्षु बनने वाला पहले वाले सें कम उम्र

का यानि छोटा माना जाता है चाहे वह किसी भी जाति का हो. ब्राह्मणिक परम्परा में ब्राह्मण का बच्चा चार साल का होने पर, क्षत्रिय का आठ साल तथा वैश्य का बारह साल का होने पर जनेऊ धारण करता है. अतः ब्राह्मण हर हाल में दूसरों सें ऊपर ही बना रहता है.

मीरा का कहना है कि सन्त रैदास ने उसको ज्ञान की घूंटी दी है अर्थात गुरू रैदास की चेली बनने पर उसका दूसरा जन्म हुआ है. आम लोग ऐसा मानते हैं कि जो व्यक्ति बच्चे को पहली घूंटी देता है बच्चे का स्वभाव वैसा ही बन जाता है. राजस्थान गुजरात के लोगों में तो बुरे स्वभाव वाले को ताना भी दिया जाता है कि उसे किसी बुरे आदमी ने घूंटी दी है. इसलिए घूंटी बहुत सोच समझ कर दिलवाई जाती है. अतः जब मीरा ने गुरू रैदास सें घूंटी ली तो चारों दिसाओं में पूरी छानबीन करने के बाद ही उसने ऐसा कदम उठाया.

आत्म आप : मीरा ने गुरू रैदास को भगवान माना है क्योंकि उन्होंने उसे आत्म ज्ञान दिया है. आत्म ज्ञान आत्मा का ज्ञान नहीं है बल्कि **यह भगवन बुद्ध का संदेश है** जिसे सन्तों ने आगे बढ़ाया है. भगवन बुद्ध ने कहा : **अत्त दीपो भवः** अर्थात अपना दीपक आप बनो. अपना भला बुरा खुद सोचो खुद अपना मार्ग चुनो. वे बोले कि आदमी और पशु में एक ही अंतर होता है कि आदमी नैतिक और अनैतिक कार्यों की पहचान कर सकता है पशु में ऐसा समझ नहीं होती. अतः आदमी को अपना नैतिक मार्ग स्वयं चुनना चाहिए. सन्त इसे "आत्म आप" जगाना कहते हैं. अतः जब मीरा कहती है कि गुरू रैदास ने उसमें आत्म आप जगाया है तो उसका कहना यही है कि अब वह अपना भला बुरा **स्वयं** सोच सकती है. गुरू रैदास ने उसे किसी आत्मा या भगवान के दर्शन नहीं करवाए.

रोचक अन्ध भयानक त्याग्यो, ज्ञान यथारथ पायोजी
मीरा प्रभु रैदास सरण लै, आतम आप जगायो जी!!

इस श्लोक में मीरा ने तीन चीजें तो त्यागने की बात की है तथा गुरू रैदास की शरण में जाकर आतम आप जगा कर सच्चा ज्ञान प्राप्त करने की बात भी कही है. यह **रोचक, अन्ध और भयानक** क्या हैं इसी के पीछे मीरा की सच्चाई छुपाई गई है.

रोचक, अन्ध और भयानक : मीरा ने कहा है कि गुरू रैदास की शरण में जाकर उसने इन तीन चीजों का त्याग कर दिया है. इन तीन को जानने के लिए यह जानना जरूरी है कि गुरू रैदास की शरण में आने सें पहले मीरा क्या करती थी जिसे उसने उनकी शरण में आने के बाद त्याग दिया. मीरा की कथा है कि बचपन में वह कृष्ण की भक्तिनी थी. शादी के कुछ ही साल बाद वह विधवा हो गई थी. ससुराल वालों ने तंग किया तो वह घरबार छोड़ कर निकल गई. ज्ञान और शांति की तलाष में घूमती हुई वह काशी आ गई जहां उसकी मुलाकात गुरू रैदास सें हो गई.

गुरू रैदास के सम्पर्क में आने के बाद मीरा का वही हाल हुआ जो जौहरी के सम्पर्क में आने पर कच्चे हीरे का होता है. गुरू रैदास ने उसे तराश कर उसमें छुपी सारी की सारी बुराईयां निकाल दीं, जितने प्रकार के रोचक, अन्ध और भयानक ब्राह्मणिक विचार उसमें थे सभी उसने त्याग दिए.

रोचक : ब्राह्मणवाद सदा सें ही अन्धविश्वास, अनाचार और अनैतिक नियमों का संग्रह रहा है. प्राचीन काल में यज्ञों में सब प्रकार के अनाचार होते थे. महाभारत काल में भी हर प्रकार के अनाचार हुए. छोटे भाई की पत्नि को जूए में हारने वाले को धर्म पुत्र कहा गया. रामायण में अपनी पूरे दिन की गर्भवती पत्नि को जंगल में फिंकवाने वाले को भगवान कहा गया. ऐसे ही कृष्ण के व्यभिचार की कथाओं को रोचक बना कर पेश किया गया.

ब्राह्मणधर्म में पाखण्ड के सिवाय कुछ भी नही है. उनके कुछ रोचक पाखण्ड इस प्रकार सें हैं :

* कि अगर ब्राह्मणों को दान दोगे तो स्वर्ग मिलेगा. स्वर्ग में चौबीसों घण्टे अप्सराओं (वेश्याओं) का नाच चलता रहता है. मुफ्त की (सोम) दारू मिलती है. माल पूए अलग सें मिलते हैं.
* श्राद्ध में जो कुछ खाने पहनने के लिए ब्राह्मण को दोग वही कुछ दानी के पितरों को मिलेगा.
* कृष्ण के राधा सें अनैतिक सम्बंधों को बड़े मनोहर ढंग सें पेश किया गया है. कृष्ण लीला पढ़ने वालों को हर प्रकार का आनन्द आता है. धर्म का धर्म हो जाता है तथा कामुकता का भी काम पूरा हो जाता है.

मीरा कहती है कि गुरू रैदास सें दीक्षा लेने के बाद उसने ब्राह्मणवाद के सभी रोचक पाखण्ड त्याग दिए हैं. उसने स्वर्ग नरक और कृष्ण की रोचक लीलाएं सभी त्याग दी हैं. स्वर्ग की कल्पना और कृष्ण की कामुक लीलाओं के अतिरिक्त ब्राह्मणधर्म में कुछ भी रोचक नहीं है.

अन्ध : अन्धविश्वास का ही दूसरा नाम ब्राह्मणवाद है. आदिकाल में ब्रह्मा द्वारा धरती बनाने के झूठ सें लेकर इक्कीसवीं सदी में मूर्तियों द्वारा दूध पीने तक ब्राह्मणों का इतिहास अन्धविश्वासके कामों सें ही भरा पड़ा है. गंगा में डुबकी लगाने सें पाप दूर होने की बात हो, यज्ञ में मारने वाले पशु का स्वर्ग में जाने की बात हो, श्राद्ध में ब्राह्मण को हलवा पूरी खिलाने की बात हो, मंदिर में घण्टी बजाने की बात हो. देवदासियों (वेश्याओं) का मंदिर में नाचना हो, सब अन्धविश्वास का ही फल हैं. यह सब न हो तो ब्राह्मणवाद ही नहीं रहेगा! गुरू रैदास की शरण में आकर मीरा ने सब पाखण्डपूर्ण अन्धविश्वास त्याग दिए थे.

भयानक : प्राचीन काल में कुछ देशों या सभ्यताओं में क्रूरता भी धर्म का अंग थी. आचार्य चतुरसेन ने अपनी पुस्तक "सोना और खून" में बिलकुल सही कहा है कि जितने लोग धर्म के नाम पर मारे गए है उतने लोग महामररियों सें भी नहीं मरे होंगे. ब्राह्मणों का प्राचीन इतिहास वेदों सें शुरू होता है तथा पुराणों पर समाप्त होता है. उनके हरेक ग्रन्थ में भयानक सें भयानक युद्धों, साजिशों और कत्लों का वर्णन है. कृष्ण द्वारा रुका रुकाया युद्ध पुनः भड़कवा कर लाखों नर नारियों का मरवाना क्या कम भयावह है. राम द्वारा पूरे दिनों की गर्भवती सीता को जंगल में फिंकवाना कम भयानक नहीं है. रन्तिदेव द्वारा रोजाना दो हजार गायें काट कर ब्राह्मणों को खिलाना किसे भयानक नहीं लगेगी. ऋग्वेद में तो मनुष्य की बलि देने के एक सें ज्यादा किस्से मौजूद हैं. यज्ञ में आदमी को काट कर उसका मांस भून कर खाना किसे भयावह नहीं लगेगा.

गुरू रैदास की शरण में आकर मीरा ने आत्म ज्ञान पाकर इन सब प्रकार के ब्राह्मणिक पाखण्डों को त्याग दिया. उनकी छत्रछाया में रह कर मीरा ने जीवन का यथार्थ जाना. धर्म क्या है इस बात को जाना. उसने जाना कि भजन गाना, ढोल पीटना, पायल बजाना, बलि देना – ये सब धर्म के नाम पर पाखण्ड हैं.

मीरा के गिरिधर नागर कौन : मीरा के कुछ भजन गाए जाते हैं जिसमें गिरिधर नागर का नाम आता है. ब्राह्मणिक लेखक उसका अर्थ करते हैं कि यह गिरिधर नागर ब्राह्मणों का कृष्ण नामक भगवान है क्योंकि गिरिधर उसी का नाम है.

यह बड़ा बेहुदा सा तर्क है. अगर नाम के मिलने मात्र सें ऐसा होने लग जाए तब तो बहुत गड़बड़ हो जाएगी. अगर नाम एक जैसे होने पर मीरा का गिरिधर कृष्ण है तो क्या भारत में आज के दिन जितने दशरथ नाम वाले आदमी हैं वे सभी राम के बाप हैं या जितने भी वासदेव हैं वे कृष्ण के बाप हैं. अगर इन नामों वाले लोग राम या कृष्ण के बाप नहीं हैं तो मीरा के गिरिधर नागर भी कृष्ण नहीं है. **सत्य और तथ्य यही है कि गुरू रैदास की शरण में आकर मीरा ने कभी किसी ब्राह्मणिक भगवान का नाम नहीं लिया. उसने ब्राह्मणधर्म और उसके सभी देवी देवता भगवान आडम्बर पूजा पाठ सभी त्याग दिए थे. अतः मीरा के गिरिधर नागर को कृष्ण बताना धूर्तता ही है.**

मीरा ने कहाः

मीरा नै गोबिंद मिल्या जी, मिल्या गुरू रैदास (गुरू रैदास राधा स्वामी डेरा 24)

अर्थात मीरा का कहना है कि जब उसे गुरू रैदास मिले तो उसे गोबिंद मिल गए. कृष्ण के कई नामों में सें एक नाम गोविंद भी है. दशम गुरू गोबिन्द सिंह का नाम भी गोबिन्द ही है लेकिन किसी सिख विद्वान ने आज तक यह नहीं कहा कि इस श्लोक में मीरा ने गुरू गोबिंद सिह का नाम लिया है. सिख सच्चाई कहना और सुनना अपना धर्म मानते हैं. लेकिन ब्राह्मण धर्म में तो धर्म पुत्र उसे कहते है जो झूठ बोल कर दूसरों की हत्या करता है. अतः ऐसे ही धूर्त 'धर्म पुत्रों' ने यह बात फैला रखी है कि मीरा के गिरिधर गुरू रैदास नहीं थे बल्कि कृष्ण था.

इस श्लोक में मीरा ने स्पष्ट रूप सें गुरू रैदास को अपना गोबिंद कहा है. अतः उसने जब भी अपने "गिरिधर नागर" कर स्मरण किया है तो उसने मात्र अपने गुरू रैदास को ही याद किया है जिन्हें वह गुटकी देने वाला भेदना मानती है.

मीरा के जीवन सें जुड़े कुछ किस्से

गुरू रैदास की तरह मीरा के साथ भी कुछ किस्सें जुड़े हुए हैं कि राणा ने उसे मारने के कई यत्न किए मगर वह हर बार बच गई. जहां स्वयं मीरा ने अपनी बाणी में गुरू रैदास को अपना प्राण रक्षक बताया वहीं ब्राह्मणों ने अपनी धूर्तता दिखाते हुए गुरू रैदास की जगह कृष्ण को उसका प्राण रक्षक बना दिया है. ब्राह्मणों ने इन घिटनाओं की सच्चाई को भी तोड़ मरोड़ कर रख दिया है.

राणा द्वारा जहर देने की कथा

मीरा के बारे में यह कथा आम प्रचलित है कि मीरा द्वारा रोज रोज की सत्संग व सन्तों के आने जाने सें तंग आकर उसके जेठ राणा ने उसे मारने के लिए उसके पास जहर का प्याला भेजा. मीरा ने जहर पी लिया मगर उसके शरीर में जहर का असर नहीं हुआ. ब्राह्मणों ने कथा जोड रखी है कि मीरा ने कृष्ण का नाम लेकर जहर का प्याला पी लिया. इसलिए उस पर जहर का असर नहीं हुआ.

इस कथा का सच झूठ जानने के लिए दो प्रकार के प्रमाण हो सकते हैं. पहला प्रत्यक्ष दूसरा मीरा की बाणी. प्रत्यक्ष में तो यह प्रमाण है कि आज के दिन भारत में लाखों कृष्ण भक्त हैं. लाखों राधाएं हैं. एक आदमी तो अभी कुछ दिन पहले पुलिस की नौकरी छोड़ कर राधा बना है. इनमें सें कोई एक भी कृष्ण का नाम लेकर घातक जहर पीकर दिखा दे. अगर वह जहर पीकर कृष्ण का नाम लेने सें बच सकता है तो माना जा सकता है कि मीरा भी उसका नाम लेकर बच गई. मीरा को हुए युग नहीं बीते हैं. वह भी कलियुग में पैदा हुई थी अब भी वही कलियुग है. अतः अगर तब चमत्कार हो सकता था तो अब भी होना चाहिए.

दूसरे प्रमाणों में स्वयं मीरा की बाणी सें बढ़ कर कोई सबूत नहीं हो सकता. इस घटना पर मीरा ने कहा :

मीरा म्हानै मारनै राणा रौप्यो जाल
बिस व्याप्यो न बापरो धन भगवान रैदास!

अर्थात मीरा का कहना है मुझे मारने के लिए राणा ने जाल बिछाया लेकिन भगवान रैदास की मैं धन्यवादी हूं कि उन्होंने जहर को मेरे में "बापरने" ही नहीं दिया.

इस श्लोक में दो शब्द ध्यान देने योग्य हैं. मीरा कहती है कि मैं बलिहारी जाती हूं भगवान रैदास के जिनकी वजह सें जहर "व्याप्या" तथा "बापुरा" नहीं. 'व्याप्या नहीं' का अर्थ है व्याप्त नहीं हुआ यानि फैला नहीं और बापुरा नहीं का अर्थ है आया नहीं या पूरा नहीं पड़ा. अतः इस श्लोक का अर्थ हुआ कि राणा ने तो जहर दे दिया था मगर गुरू रैदास की वजह सें जहर पूरा नहीं पड़ा या पूरे शरीर में व्याप्त नहीं हुआ अर्थात फैला नहीं.

ऐसा कैसे संभव हुआ, इसका उत्तर जानने के लिए भगवान बुद्ध के भिक्षु संघ को जानना जरूरी है. सभी जानते हैं कि भगवान बुद्ध ने भिक्षु संघ की स्थापना की. भिक्षुओं को धर्म प्रचार के लिए जंगलों नदियों पहाड़ों को पार करके गांव गांव घूमना पड़ता था. रास्ते में उन्हें हर प्रकार की बाधाएं पार करनी पड़ती थी. अतः शारीरिक रूप सें स्वस्थ रहने के लिए उन्हें योग सीखना पड़ता था तथा बीमारी सें बचने के लिए देसी जड़ी बूटियों का ज्ञान भी रखना पड़ता था. पैदल घूमने के कारण वे बहुत बार सांप बिछुओं का शिकार भी हो जाते थे. अतः उन्हें उनके जहर का इलाज करना भी सीखना पड़ता था.

गुरू रैदास भगवन बुद्ध की श्रमण संस्कृति के ही सन्त थे. वे भी अपना धर्म प्रचार करने गांव गांव घूमे थे. अतः वे भी जहर को बेअसर करने का इलाज जानते थे. जब राणा ने मीरा को जहर दिया तो गुरू रैदास ने अपने इलाज सें उस जहर को शरीर में फैलने यानि व्याप्त नहीं होने दिया. उन्हीं के इलाज की वजह सें जहर पूरे शरीर में बापुरा नहीं यानि पूरी तरह नहीं फैला और मीरा बच गई.

इस श्लोक में एक बात ध्यान देने योग्य है कि इसमें कहीं भी किसी चमत्कार की बात नहीं की गई है. गुरू रैदास ने जहर रोकने में कोई चमत्कार नहीं किया है. उन्होंने एक वैद्य की तरह जहर का इलाज किया है. गुरू रैदास स्वयं चमत्कारों आडम्बरों और पाखण्डों का खण्डन करते हैं तथा विरोध करते हैं. अतः अगर कोई ऐसा कहे कि उन्होंने चमत्कार के बल पर जहर उतार दिया तो यह गलत बयानी होगी. गुरू रैदास आम इन्सान की तरह ही थे; बस उनमें दो गुण अन्य लोगों सें बढ़ कर थे : एक सदाचार दूसरा हौसला या हिम्मत.

मीरा के जहर उतारने वाली इस घटना को कृष्ण के साथ जोड़ना धूर्त लोगों का काम है. पहली बात तो यह है कि कृष्ण सिर्फ एक काल्पनिक पात्र है. वह न कभी पैदा हुआ और न कभी पैदा होने वाला है. अगर वह पैदा हुआ भी था तो मीरा के जन्म सें कई साल पहले एक शिकारी के जहरीले तीर सें मारा जा चुका था. मीरा के समय उसका नामो निशान भी नहीं था. अगर उसमें मीरा का जहर कम करने की शक्ति थी तो खुद क्यों तीर के जहर सें मर गया. कोई कहे कि कृष्ण के जो तीर लगा वह बिना जहर के था तो यह कहना गलत है क्योंकि लोग तो पूरा पैर कट जाने पर भी नहीं मरते फिर कृष्ण कैसे तीर की नोक लगते ही मर गया. अगर तीर में जहर नहीं था तो इसमें मरने वाली तो कोई बात ही नहीं थी.

राणा के जहर के वार सें बचने के बाद मीरा ने गुरू रैदास के सम्मान में यह पद कहेः

मीरा, म्हारे सन्त हैं, मैं सन्तां री दास

चेतन सत्ता सैन ये दीखत गुरू रैदास!!

अर्थात मीरा का एलान है कि वह सन्त रैदास उनके हो गए हैं तथा वह उनकी दास (शिष्या) बन गई है क्योंकि गुरू रैदास प्रत्यक्ष में उसे "चेतन सत्ता" दिखाई दे रहे हैं. चेतन सत्ता का अर्थ है जिसे सब कुछ का ज्ञान हो यानि **जो बुद्ध हो.**

माता पिता कुटंब कबीला सब मतलब का गरजी,
मीरा का प्रभु थम ही स्वामी श्री रैदास सतगुरु जी!!

गुरू रैदास की संगत करने पर मीरा को उसके सभी परिवार वालों ने त्याग दिया था. इसलिए मीरा ने उन सब को मतलब के गरजी यानि स्वार्थी कहा. रैदास जी ने न केवल उसकी जान बचाई बल्कि उसे सही राह भी दिखाई. इसलिए उसने रैदास जी को अपना प्रभु, अपना स्वामी सब कुछ माना. सीधी सी बात है जब मीरा गुरू रैदास को ही अपना प्रभु और स्वामी मान रही है तो दूसरे अगर कृष्ण को उसका प्रभु बताएं तो यह सीध सीधे उनका कमीनापन है.

एक बात और भी है कि अगर मीरा का जहर कृष्ण ने उतारा तो ऐसे तो भारत में अनेकों कृष्ण भक्त हैं जो हर साल जहर पीकर या जहर दिए जाने पर अथवा सांप के काटने आदि सें मर जाते हैं तो कृष्ण उन्हें क्यों नहीं बचाता? कृष्ण गीता में बकवास करता है कि शूद्र, स्त्री और वैश्य पाप योनि अर्थात पाप की औलाद हैं. अतः यह पूछा जा सकता है कि वह पाप योनि की चेली को तो क्यों बचाने आया लेकिन ब्राह्मणों और उनके चेले चेलियों को क्यों बचाने नहीं आता?

मीरा को राधा का अवतार बताना : धूर्तता की चरम सीमा

आजकल एक नया रिवाज चला है कि मीरा को राधा का अवतार बताया जाने लगा है. अक्सर कथा करने वाले ऐसी कथाएं सुनाते हैं कि मीरा पिछले जन्म में राधा थी तथा बाद में मीरा बन कर पैदा हो गई. कुछेक कृष्ण भक्त अपनी वैब साइटस पर भी मीरा को राधा का ही पुनर्जन्म या अवतार बता रहे हैं.

मीरा को राधा का रूप या पुनर्जन्म या अवतार बताने वाले परम धूर्त हैं. इसके कारण हैं :

1. राधा एक काल्पनिक पात्र है. उसकी कल्पना मात्र कृष्ण की ऐयाशी की कहानियां घढ़ने के लिए की गई. एक पल के लिए अगर यह मान लें कि वह हुई थी तो भी वह त्रेता युग में पैदा हुई और तभी मर गई. अगर ब्राह्मणिक काल गणना सें हिसाब लगाएं तो त्रेता युग कई लाखों साल पहले समाप्त हो लिया. इतिहासकारों की बात मानें तो भी मीरा के जन्म सें कम सें कम दो तीन हजार साल पहले राधा का खात्मा हो चुका था. अतः जब मीरा हुई उस समय राधा का नामोनिशान भी नहीं बचा था. भगवन बुद्ध और श्रमण सन्तों ने सत्य कहा है कि आदमी चार महातत्वों (पृथ्वी, जल अग्नि, वायु) के अंशों सें बना हुआ है तथा जब वह मरता है तो चारों तत्व अपने चारों महातत्वों में मिल जाते हैं. अगर एक पल के लिए यह मान लें कि आत्मा होती है तो इसका अर्थ हुआ कि राधा की आत्मा हजारों सालों तक भूतनी बन कर भटकती रही! हिन्दुओं में मरने पर शरीर तो जला ही देते हैं. अन्य कहीं ऐसा जिक्र आया नहीं कि राधा मर कर कहीं और पैदा हो गई. सो कई सदियों तक राधा की आत्मा यूं ही बिना शरीर के भटकती रही. यह तो राधा सें बहुत अन्याय है! वह तो एक दिन भी कृष्ण सें मैथुन किए बिना नहीं रह पाती थी. इसीलिए तो उसने अपने पति रायण को नपुंसक कर दिया था. सो बिना शरीर के तो उसे बड़ी समस्या खड़ी हो गई होगी! पुनर्जन्म भी लिया तो मीरा जैसी साध्वी के शरीर में!! उस बेचारी की कई सदियों की वासना की प्यास कभी शांत हो ही नहीं पाई होगी.
2. राधा चरित्रहीनता और व्यभिचार का दूसरा नाम है. मीरा सदचरित्र की मूरत है. बुद्ध कहते हैं कि आदमी के संस्कारों का पुनर्जन्म होता है. जैसे दीपक का संस्कार है प्रकाश फैलाना. जब एक दीप सें दूसरा दीप जलाया जाता है तो पहले दीपक के प्रकाश यानि संस्कार का पुनर्जन्म हो जाता है. राधा के केस में उसके मरने पर उसका शरीर तो जला ही दिया गया था. अतः कोई कहे कि मीरा में राधा के संस्कारों का पुनर्जन्म हो गया तो ऐसा संभव नहीं है क्योंकि राधा के जो 'संस्कार' थे वैसे संस्कारों का पुनर्जन्म तो वेश्याओं और कुल्टाओं में ही होता है क्यों कि वे ही राधा की तरह बदचलन होती हैं. मीराओं में राधाओं के संस्कार नहीं पनपते. "मीरा" कभी भी, कैसे भी, कहीं भी "राधा" हो ही नहीं सकती. और जो राधा है वह कभी भी मीरा नहीं हो सकती.
3. संस्कार और शरीर ही नहीं मीरा अपने धर्म में भी राधा सें बिल्कुल उलट थी. राधा कृष्ण की रखैल थी. मीरा गुरू रैदास की चेली थी. किसी भी सन्त ने कभी भी कृष्ण को भगवान तो क्या आदमी भी नहीं माना.

अतः जब गुरू ने कृष्ण को कुछ नहीं माना तो चेली भी क्यों मानने लगी. सन्तों का धर्म हमेशा ब्राह्मणवाद का विरोध करता रहा है. मीरा ने तो ताल ठोक कर कहा कि उसके भगवान तो गुरू रैदास हैं. अतः धर्म के आधार पर भी मीरा कभी भी राधा का अवतार तो क्या उसके जैसी भी नहीं हो सकती.

4. ब्राह्मणधर्म के मुख्य पुराणों में सें एक ब्रह्मा वैवर्त पुराण के अनुसार राधा का पति रायण नामक आदमी था जो कि यशोदा का सगा भाई था. अतः रायण कृष्ण का सगा मामा हुआ तथा राधा उसकी सगी मामी लगी. ऐसे में जो औरत अपने भांजे के साथ ऐयाशी करने के लिए अपने पति को नपुंसक बना दे उसकी तुलना मीरा सें करना धूर्तता की हद है. अगर मीरा राधा जैसी ही होती तो विधवा होने न होने का उसे कोई अंतर ही नहीं पड़ना चाहिए था. एक पति मर गया तो क्या राणा जैसे उसे सैंकड़ों मिल जाते. उसे महल छोड़ कर रैदास जी जैसे फकीर की झोंपड़ी में आने की कोई जरूरत नहीं थी!!

अतः मीरा किसी राधा की अवतार नहीं है और न ही किसी कृष्ण की भक्तिनी है. मीरा के प्रभु, मीरा के गिरिधर नागर रैदास जी हैं कृष्ण नहीं है. ऐसे पद जहां मीरा द्वारा कृष्ण की स्तुति की गई बताते हैं वे सब या तो ब्राह्मणों द्वारा रच कर मीरा के नाम किए गए हैं अथवा जहां मीरा ने गुरू रैदास का नाम लिया ब्राह्मण लेखकों ने वहां अर्थ का अनर्थ करके रैदास जी की जगह कृष्ण का नाम घुसेड़ दिया. शिक्षा और प्रचार के साधनों पर सदा सें ही उनका कब्जा रहा है सो उन्हें झूठ को सच बनाने में ज्यादा कठिनाई नही हुई. लेकिन वे भूल गए कि झूठ की कितनी भी धूल उड़ाओ, सत्य को सूर्य को सदा ढक कर नहीं रखा जा सकता!!

अध्याय 7

सन्त रैदास : हिन्दू या बौद्ध

दलित सन्तों के जीवन सें जुड़ा सबसें अहम, सबसें महत्वपूर्ण सवाल है कि क्या सतगुरु रैदास, सतगुरू कबीर जैसे सन्तों को "हिन्दू धर्मी" कहा जा सकता है? हमारा मानना है कि यह साधारण प्रश्न नहीं हैं क्योंकि इसी प्रश्न के उत्तर में दलितों का भविष्य छिपा है. अगर दलित सन्त "हिन्दूधर्मी" थे तो उन्होंने ब्राह्मणधर्म या हिन्दू धर्म के विरुद्ध संघर्ष क्यों किया? दूसरे शब्दों में "हिन्दुधर्मी" होते हुए उन्हें संघर्ष कनने की जरूरत ही क्या थी.? यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि उनका संघर्ष कभी भी दयानन्द, विवेकानन्द या गांधी की तरह ढकोसला नहीं था.

अगर वे हिन्दूधर्मी नहीं थे तो ब्राह्मणवाद के विरुद्ध उनका संघर्ष निशिचत रूप सें तथागत बुद्ध द्वारा ब्राह्मणवाद के विरुद्ध शुरू किये गए संघर्ष समान था. अगर उन्होंने बुद्ध के समान ब्राह्मणवाद को तिलांजलि देकर लोगों को भी सधर्म के मार्ग पर चलने के लिए प्रेतित किया **तो वे** दलित जो उनको अपना गुरू, अपना भगवान मानते हैं वे आज भी हिन्दूधर्मी क्यों बने हुए हैं? जो दलित हर साल इन सन्तों की बरसी मनाते हैं वे क्यों आज भी "ब्राह्मण" को अपने धर्म का ठेकेदार माने बैठे हैं.

गुरू रैदास "हिन्दधर्मीू" थे या नहीं इस प्रश्न का उत्तर दो बातों पर निर्भर करता है : पहली यह कि हिन्दूधर्मी होने का क्या अर्थ है तथा दूसरी यह कि गुरू रैदास अपनी बाणी में **धर्म** के बारे में क्या विचार रखते हैं.

"हिन्दू बनाम हिन्दूधर्मी" : बाबा साहिब के अनुसार सब धर्मों में सें यह बताना सबसें कठिन है कि हिन्दूधर्मी किसे कहा जा सकता है. दुनिया भर के धर्मों में "हिन्दू धर्म" को छोड़ कर शेष सभी धर्मों की सीधी परिभाषा है. बौद्ध वह है जो भगवान बुद्ध को अपना आदर्श माने और धम्मपद के अनुसार जीवन बिताए. जैन वह है जो महावीर स्वामी को अपना आदर्श माने और अहिंसा के सिद्धांत अनुसार अपना जीवन बिताए. सिख वह है जो दस गुरूओं में आस्था रखे तथा गुरू ग्रन्थ साहिब के अनुसार अपना जीवन बिताए. मुस्लिम वह है जो पैगम्बर साहिब पर विश्वास करे और कुरान में आस्था रखे.

हिन्दू के बारे में ऐसी कोई सीधी परिभाषा नहीं है. यहां वेदों को पूजने वाला भी हिन्दूधर्मी है तथा वेदों को कुत्तों की भों भों कहने वाला भी हिन्दूधर्मी है. राधा को परकीया (वेश्या) कहने वाला भी हिन्दूधर्मी है तथा रोज सुबह शाम राधे राधे जपने वाला भी हिन्दूधर्मी है. ब्रह्मा को बेटीचोद कहने वाला भी हिन्दूधर्मी है तथा उसे सृष्टिकर्ता कहने वाला भी हिन्दूधर्मी है. सवाल उठता है कि हिन्दुधर्मी ऐसा क्यों है?

इस सवाल का उत्तर है कि **"हिन्दू होना" और "हिन्दूधर्मी होना" दो अलग अलग चीजें हैं**. किसी का **हिन्दू होना या न होना धार्मिक होने की बजाए "सामाजिक" तथा भौगोलिक अधिक है**. एक आदमी जो कि **हिन्दू** कहा

जाता है सुबह उठ कर मंदिर भी जा आता है, रास्ते में अगर मस्जिद या गुरुद्वारा या गिरजा आ जाए तो वहां भी सिर नवा लेता है. इतवार को चर्च भी जा आता है तथा वीरवार को पीर बाबा की दरगाह पर भी माथा टेक आता है. ईद पर सेवईयां भी बना लेता है तो क्रिसमस पर केक भी खा लेता है तथा दीवाली पर पटाखे भी फोड़ लेता है. अतः **हिन्दू होना किसी धर्म की निशानी नहीं है.**

"हिन्दू" शब्द वास्तव में धार्मिक शब्द है ही नहीं. यह तो विदेशियों द्वारा समस्त भारतीयों के लिए प्रयोग किया गया शब्द है. वह भारतीय चाहे हिन्दूधर्मी हो, सिख हो, बौद्ध हो, जैन हो या अन्य धर्मी हो. उन्होंने पूरे भारत को हिन्दोस्तान कहा तथा भारतीयों को हिन्दू कहा. यह तो ब्राह्मणों की चालबाजी और जालसाजी है कि उन्होंने अपने सनातन अथवा वैदिक धर्म का नाम हिन्दूधर्म रख लिया जबकि उनके किसी भी धर्म ग्रन्थ में हिन्दू शब्द नहीं है!! इस तरह हिन्दूधर्म दुनिया का एक मात्र धर्म है जिसके ग्रन्थों में अपने धर्म का नाम ही नहीं है. ब्राह्मणिक धर्म के वेदों पुराणों गीता में "हिन्दू" शब्द का न होना इस बात को साबित करता है कि "हिन्दू" एक विदेशी नाम है. **आज भी भारत सें बाहर भारतीयों को हिन्दू ही कहा जाता है चाहे वह मुस्लिम हो बौद्ध हो या हिन्दूधर्मी हो.**

प्राचीन कथा कहानियां तथा इतिहास इस बात का सबूत हैं कि भारत में जगह जगह लूटमार, राहजनी व ठगी आम बात थी. हिन्दू शब्द का फारसी अर्थ भी ठग चोर डाकू ही है. जैसे पंजाब हरियाणा में आज के समय यूपी बिहार सें काम करने आने वाले सभी मजदूर किस्म के लोगों को "भईया" कहा जाता है चाहे वह किसी भी जाति या धर्म सें सम्बंध रखता हो. पंजाबी में "भईया" का अर्थ ही मजदूर बन गया है! बिल्कुल वैसे ही विदेशियों ने भारतीयों को "हिन्दू" यानि चोर कहा. हो सकता है उन्होंने केवल ब्राह्मणों को हिन्दू कहा हो लेकिन बाद में उन्होंने पूरे भारत को यही नाम दे दिया.

इस गाली में भी ब्राह्मणों को छुपा हुआ वरदान मिल गया. उनके धर्म के चार स्तम्भों में सें एक "अर्थ" यानि धन कमाना भी है. जब विदेशियों ने सारे भारतीयों को हिन्दू कह कर गाली दी तो पूरे भारत के लोगों को अपने चंगुल में करने के लिए ब्राह्मणों ने अपने धर्म का नाम ही हिन्दूधर्म रख लिया. शिक्षा पर केवल उनका ही अधिकार था. अतः जैसा उन्होंने लोगों का पढ़ाया, वैसा लोगों ने मान लिया. इस तरह सें हिन्दू नाम सारे भारतीयों के लिए प्रयोग किया जाने लगा. चाहे वह भारतीय किसी भी जाति नस्ल अथवा धर्म का हो. इससें यह हुआ कि वेद को पूजने वाला और वेद को कुत्ते की भौं भौं बताने दानों धर्मों के लोग "हिन्दू" कहे जाने लगे.

पिछले कुछेक सदियों सें हिन्दू नाम केवल ब्राह्मणधर्म तक सीमित कर दिया गया है. अतः आज हिन्दू और हिन्दूधर्मी का अर्थ एक समान हो गया है. लेकिन अब फिर सें इनको अलग करने की जरूरत है क्योंकि जबसें बीजेपी यानि ब्राह्मण जाति पार्टी को सत्ता मिली है उन्होंने हिन्दू को हिन्दूधर्मी में बदलने का काम किया है. इसका सबूत गुजरात व अन्य जगहों पर हुए दंगे हैं. **इन दंगों में नित्य दरगाह पर माथा रगड़ने वाले हिन्दूओं ने भी हिन्दूधर्मी बन कर आगजनी लूटमार और हत्याएं की हैं.**

हमारे विचार में किसी भी धर्म को अपने लिए "हिन्दू" शब्द प्रयोग करने की मनाही होनी चाहिए. कानून द्वारा यह पाबंदी लगनी चाहिए कि ब्राह्मण अपने धर्म को "हिन्दू" नहीं कहेंगे. **वैसे भी किसी भी ब्राह्मण ग्रन्थ में हिन्दू शब्द नहीं है. वहां धर्म के लिए सनातन या वैदिक धर्म का प्रयोग हुआ है.** अतः ब्राह्मणों को चाहिए कि वे अपने धर्म का नाम ब्राह्मण धर्म या वैदिक धर्म या सनातन धर्म रखें. **उनका धर्म "हिन्दू" नहीं है. आर एस एस, शिव सेना तथा विश्व हिन्दू परिषद वाले लोग जो बाबरी मस्जिद तोड़ कर राम मंदिर बनाने की बात करते हैं वे वास्तव में वे "हिन्दू" नहीं हैं वे वास्तव में ब्राह्मण धर्मी हैं.**

अब हम अपने मूल प्रश्न पर आते हैं कि क्या गुरू रैदास जैसे सन्तों को हिन्दूधर्मी अर्थात ब्राह्मणधर्मी कहा जा सकता है. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए ब्राह्मणधर्मी हिन्दू की परिभाषा जानना जरूरी है. राधाकृष्णन के अनुसार (ब्राह्मणधर्मी) हिन्दू वह है जो चारों वर्णों को माने, चारों आश्रमों को माने और चार प्रयोजन पूरे करे. वेदों को धर्म का मूल आधार माने. (धर्म और समाज पृ 109–111) मनु का भी कहना है कि वेद **ही** धर्म का आधार हैं. (मनु 2.6)

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर ब्राह्मणिक हिन्दू वह है :

1. जो चारों वर्णों यानि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के विभाजन और उनकी ऊँच नीच को वैध माने.
2. जो चार आश्रमों यानि ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास को पालन करे.
3. जो चार प्रयोजन यानि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का यत्न करे.
4. वेदों को सर्वोच्च माने. उन्हें धर्म का आधार माने.

हमारे विचार में किसी भी ब्राह्मणधर्मी को अपने धर्म की इस परिभाषा पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए. इन मापदण्डों के आधार पर गुरू रैदास जैसे सन्तों की ब्राह्मणिक हिन्दू होने परख की जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि सच्चाई क्या है.

1. **चार वर्णों में विश्वास :** ब्राह्मणिक हिन्दू होने के लिए यह जरूरी है कि वह चार वर्णों के सिद्धांत को माने. वह माने कि समाज के चार भाग हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र. साथ में यह भी माने कि यह चारों वर्ण क्रम सें सबसें ऊंचा, उससें नीचा, उससें नीचा और सबसें नीचा वर्ण है. वह यह भी माने कि वर्ण निर्धारण जन्म के आधार पर होता है. ब्राह्मण का बच्चा सबसें ऊँची जात वाला यानि ब्राह्मण बनता है चाहे उसें कितने भी अवगुण हों और शूद्र का बच्चा शूद्र यानि नीची जाति का ही बनता है चाहे उसमें कितने भी गुण क्यों न हों.

ब्राह्मण ऋषियों और नायकों ने एक दूसरे के विरुद्ध बहुत कुछ कहा है. वे आपस में कुत्तों की तरह लड़े भी हैं. मगर जब भी शूद्रों का दमन करने की बात आई है वे सभी एक सें बढ़ कर एक जालिम साबित हुए हैं. **सभी ब्राह्मणों ने सदा शूद्रों को जानवर सें भी बदतर माना है.** कुत्ते बिल्लियां उनकी रसोई तक जा सकते थे मगर शूद्र की निगाह पड़ने पर ही वे अपवित्र हो जाते हैं. रामानन्द तो शूद्र को देखते ही दुबारा स्नान करने चला जाता था.

ऋग्वेद के पुरुषसूक्त सें लेकर गांधी के लेखों तक हर ब्राह्मणवादी ने जातिवाद का समर्थन किया है. यह स्वाभाविक है कि जहां जातिवाद होगा वहां ऊंच नीच भी होगी और जहां ऊंच नीच होगी वहां छूआछात भी होगी. वेद में जातिवाद को भगवान की रचना बताया गया तो गीता में कृष्ण ने फतवा दिया कि पाप की औलाद वैश्य और शूद्र वर्ण में पैदा होते हैं. राम ने शूद्र होकर साधना करने के जुर्म में शूद्र सन्त शम्बूक की गला काट कर हत्या कर दी थी. धूर्त द्रोण ब्राह्मण ने सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर (धनुष चलाने में निपुण) शूद्र एकलव्य का अंगूठा काट लिया था ताकि वह अपने चेले (ब्राह्मण वीर्य सें पैदा) अर्जुन को सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर साबित कर सके. गांधी कहता था कि वर्ण व्यवस्था यानि जातिवाद हिन्दू धर्म की जान है. अगर जातिवाद समाप्त हो गया तो हिन्दू धर्म ही समाप्त हो जाएगा. स्मृतियों ने तो धूर्तता और जालिमपने की सारी हदें पार कर दीं. उनके लेखकों ने तो शूद्रों के विरुद्ध ऐसे नियम बनाए कि पढ़ कर रूह कांप उठती है.

राधाकृष्णन जैसे लोग इसे धर्म का अंग बताएं और ऐसा आदमी हमारे भारत का राष्ट्रपति बन जाए, गांधी इसे धर्म की जान बताए और देश का बाप कहलाए, यह हम सब के लिए बहुत ही शर्म की बात है! ब्राह्मणवाद का एक और धूर्त सिपाही तुलसी कहता थाः

पूजिए विप्र शील गुण ज्ञान हीना!
शूद्र न गुण ज्ञान प्रवीणा!!

अर्थात ब्राह्मण को पूजा जाना चाहिए चाहे वह चरित्रहीन हो, अवगुणों सें भरा हो और ज्ञान सें खाली हो लेकिन शूद्र का आदर नहीं किया जाना चाहिए चाहे वह गुणों और ज्ञान में कितना भी ऊंचा क्यों न हो!! **यही ब्राह्मणधर्म/ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म का सार है!**

सभी जानते हैं कि गुरू रैदास और उनके हमसहरी सन्त कबीर ने वर्ण व्यवस्था और जाति प्रथा तथा इसके मानने वालों के परखचे उड़ा दिए थे. यह तो दलितों की अज्ञानता ही थी कि वे इन क्रांतिकारियों के आंदोलन को जारी नहीं रख पाए वर्ना ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म तो कभी का इतिहास की बात बन चुका होता. उन्होंने कहा :

रैदास एक ही बूंद सें, भयो सब विस्तार!
मूर्ख हैं जो करें वर्ण अवर्ण विचार!!

अर्थात सभी का जन्म एक ही ढंग सें यानि पिता के वीर्य सें हुआ है. अतः वे लोग जो वर्ण व्यवस्था की बातें करते हैं वे सब मूर्ख हैं. अर्थात सन्त शम्बूक का हत्यारा राम, वैश्य और शूद्रों को पापयोनि कहने वाला कृष्ण, छूआछात के नियम बनाने वाला मनु और वर्ण व्यवस्था का समर्थक संकराचार्य सबके सब मूर्ख हैं.

रैदास ब्राह्मण ओ चंडाल में नहीं अन्तर जान
सब में एक जोति है सब घट एक भगवान!!
रैदास बामण न पूजिए जो होवै गुणहीन!
पूजिए चरण चंडाल के जो होवै गुण प्रवीण!!

अर्थात जन्म के आधार पर ब्राह्मण और चंडाल में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि भगवान ने ही सभी को पैदा किया है तथा सभी में उसी की ज्योति है. मात्र जन्म के कारण ब्राह्मण को ऊंचा मान कर उसके चरण नहीं छूने चाहिए. अगर चंडाल गुणवान हो तो उसके चरण जरूर छूने चाहिए.

रैदास जन्म के कारणे होत न कोई नीच
नर को नीच कर डाले है ओछे करमों की कीच!!

अर्थात किसी जाति या वर्ण विषेष में जन्म लेने सें कोई छोटा या बड़ा नहीं हो जाता. केवल बुरे कामों की वजह सें ही आदमी नीच बन जाता है. ब्राह्मण धर्म के नाम पर धोखा करके लूटने का ओछे सें ओछा करम करते हैं मगर वे जन्म के कारण स्वयं को ऊंचा बताते हैं. सतगुरू कबीर ने सटीक कहा है :

साधो पण्डे निपुण कसाई, बकरी मार भेड़ को धाये, दिल में दरद न आई!
करे स्नान तिलक लगाए, विधि सों देव पुजाई, आतम मार पलक में बिनसे, रूधिर की नदी बहाई!
अति पुनीत ऊँचे कुल कहिए, सभा में अधिकाई, इनसै दीक्षा हर कोई मांगै, हंसी मोहे आवै भाई!
पाप कटन की कथा सुनावै, करम करावै नीचा, डूबत दोऊ परस्पर दीखा, गहे बांहि जम खींचा!
भैंसा बधे सो शतरी कहावै, वे क्या इनसे छोटे, कहै कबीर सुनो भाई साधो, चार जुग ब्राह्मण खोटे!!!

अर्थात ब्राह्मण पक्के कसाई हैं. यज्ञ में बलि देते वक्त बकरी भेड़ सबको मार लेते हैं. उनके दिल में तनिक भी दया नहीं आती. स्नान करके तिलक लगा कर अपने देवों की पूजा करते हैं. अपनी अन्तर आत्मा को एक पल में मार कर भुला देते हैं. खून की नदियां बहा देते हैं. स्वयं को अति पवित्र कुल का बताते हैं तथ हर सभा में अपना रौब जमाते हैं. ऐसे नीच लोगों सें जब लोग दीक्षा मांगते हैं तो मुझे उनकी अक्ल पर हंसी आती है. **ब्राह्मण कहते हैं कि कथा सुनने सें पाप कट जाते हैं लेकिन लागों सें नीच काम करवाते हैं.** अतः ब्राह्मण और उनके चेले दोनों डूबेंगे. क्षत्रिय कौन सें कम हैं वे भी भैंसे की हत्या करते हैं. **हे लोगो सुनो, मैं कबीर कहता हूं कि जब सें धरती बनी है ब्राह्मण खोटे ही खोटे हैं.**

अतः जब गुरू रैदास ने वर्ण व्यवस्था, जातिवाद और छूआछात को समाप्त करने की बात की तो सीधे तौर पर उन्होंने ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म को समाप्त करने की बात की है और जो किसी धर्म को नष्ट करने की बात करे वह उस धर्म को मानने वाला तो हो ही नहीं सकता. इसलिए इस मापदण्ड या इस आधार पर गुरू रैदास को हिन्दूधर्मी नहीं कहा जा सकता.

2. **चार आश्रम** : ब्राह्मण धर्म यानि ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म ग्रन्थों का फतवा है कि आदमी को अपने जीवन को चार आश्रमों के अनुसार बिताना चाहिए. ब्राह्मणधर्म का संविधान मनु स्मृति के अनुसार आदमी की आयु 100 है. इसमें पहले 25 साल आदमी को ब्रह्मचर्य अपनाना चाहिए, गुरुकुल में जाकर वेद पढ़ने चाहिए. अगले 25 साल में शादी करके गृहस्थ बन जाना चाहिए. 50 साल का होने पर वन में जाकर रहने लग जाना चाहिए और 75 साल का होने पर सन्यासी बन जाना चाहिए.

यह आश्रमों का सिद्धांत शुरू सें अंत तक बोगस है. वेद तो पचीस साल क्या 25 मिनट भी पढ़ने की चीज नहीं हैं. वेदों की 'महानता' के बारे में बाबा साहिब का एक वाक्य ही काफी है. उन्होंने कहा : **वेदों में मूर्खता के सिवाय कुछ नहीं है.** हमारे विचार में बाबा साहिब के इस कथन में थोड़े से परिवर्तन की आवश्यकता है. इनके बारे में कहा जाना चाहिए कि वेदों में सिवाय मूर्खता और अश्लीलता के कुछ भी नहीं है. वेदों के अधिकतर भाग ऐसे हैं जो कि कोई भी सभ्य पुरुष अपनी माँ बहन के सामने तो क्या अकेला भी नहीं पढ़ सकता.

जहां तक पच्चीस साल तक ब्रह्मचारी रहने का प्रश्न है तो **पच्चीस साल का होने तक कोई हिन्दू देव या भगवान ब्रह्मचारी रहा हो, ऐसा हमें कोई भी नहीं मिला.** उनके सभी देव और ऋषि लगभग कृष्ण मार्का काम करते ही पाये जाते हैं. घर में और वानप्रस्थ यानि वन में जाकर भी आर्य गुलछर्रे ही उड़ाते थे. "सन्यासी" का चोला धारण करके भी उनके ऋषि ऐश ही करते थे.

जहां तक गुरू रैदास का सम्बंध है उन्होंने कभी भी ब्राह्मणिक आश्रमों को नहीं माना. छोटी उम्र में ही उनकी शादी हो गई थी. एक बेटा भी उनके घर पैदा हुआ. **सन्यासी का चोला धारण करने की बजाए** उन्होंने भगवन बुद्ध के सत्संग करने के मार्ग को अपनाया तथा सत्संग करने की प्रथा को फिर सें पुनर्जीवित किया. **किसी भी ब्राह्मण ग्रन्थ में सत्संग करने का प्रावधान तो क्या जिक्र तक नहीं है.** सत्संग करने की प्रथा अपनाना गुरू रैदास को ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म सें दूर खड़ा कर देती है. गृहस्थ रह कर भी भोग विलासों सें दूर रहना केवल दलित सन्तों का ही करिश्मा था. वर्ना ब्राह्मण ऋषि तो सन्यासी का वेश धाण करके भी जानवरों तक को अपनी हवस का शिकार बनाने सें नहीं चूकते थे. महाभारत का सारा किस्सा ही इस बात सें ओत प्रोत है कि पांडवों के बाप ने एक ब्राह्मण ऋषि को एक हिरणी सें कुकर्म करते हुए रोक दिया था.

गुरू रैदास ने कभी भी इन ब्राह्मणिक ब्राह्मचर्य को नहीं अपनाया. चार आश्रमों के पाखण्डों की बजाए उन्होंने भगवान बुद्ध के सदाचार के मार्ग को ही अपनाया. इस आधार पर भी गुरू रैदास ब्राह्मणिक हिन्दूधर्मी नहीं हैं.

3. **चार प्रयोजन** : ब्राह्मण धर्म के चार प्रयोजन उसकी रीढ़ हैं. उनके चार प्रयोजन यानि उद्देश्य हैं : **धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष.** अर्थात ब्राह्मण धर्म के अनुसार हर ब्राह्मणिक हिन्दू को चाहिए कि वह "धर्म" के अनुसार चले, अर्थ यानि पैसा, धन कमाए, काम यानि सैक्स या वासना का आनन्द उठाए और अन्त में मर कर मोक्ष प्राप्त करे. इन चारों प्रयोजनों का गुरू रैदास के जीवन चरित्र सें तुलना करने पर यह पता चल पाएगा कि वे इन चार ब्राह्मणिक प्रयोजनों का कितना पालन करते थे.

पहला प्रयोजन : धर्म :— ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म का पहला प्रयोजन "धर्म" है लेकिन वहां धर्म का अर्थ कभी भी नैतिकता नहीं रहा. वहां **कभी भी सदाचार को धर्म नहीं कहा गया.** वहां क्षत्रिय के लिए जूए में हारी सम्पत्ति वापिस प्राप्त करने के लिए अपने रिश्तेदारों को मारना धर्म है. ब्राह्मणों को खिलाने के लिए गाय काट कर पकाना 'धर्म' है. ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म के ग्रन्थों में "धर्म" की उदाहरणें इस प्रकार सें हैं.

- युद्धिष्ठर ब्राह्मणवाद का धर्मराज (धर्म का राजा) कहा गया है. ऐसा भी माना गया है कि उसका वचन धर्म का वचन है. उसी युद्धिष्ठर के वचन अनुसार जब बड़े भाई का मन छोटे भाई की पत्नि पर डोल जाए तो उस स्त्री को सभी भाईयों द्वारा मिल कर भोगना ''धर्म'' है. (म भा अ.195.13)
- माँ चाहे भीख को बांटने के लिए कहे लेकिन अगर सभी भाई अपने एक भाई की पत्नि सें व्यभिचार करें, दुराचार करें तो वह **सनातन धर्म** है.
- अगर पति अपनी पत्नि को किसी अन्य सें सहवास करने को कहे तो यह ब्राह्मणों का प्राचीन धर्म है. सनातन धर्म है. (म भा 121.3)
- पूर्वकाल (महाभारत सें पहले का समय) सत्ययुग में स्त्रियां कौमार्यावस्था में (शादी सें पहले) ही अनेकों पुरुषों सें मैथुन करती थी क्यों कि उस समय सत्ययुग का यही धर्म था. (म भा 121.122)
- बालक श्वेतकेतु की माँ को एक ब्राह्मण पकड़ कर ले जाता है तथा बलात्कार करता है तो वह अपने बाप ऋषि उद्दालक सें विनती करता है कि उसकी माँ को बचाया जाए तो ऋषि कहता है यह हमारा **''सनातन धर्म''** है कि ब्राह्मण किसी की भी माँ, बहन, बेटी सें कभी भी, कहीं भी अपनी वासना मिटा सकता है. (आदि.122)
- बड़ा होने पर इसी ऋषि श्वेतकेतु ने नियम बनाया कि जो स्त्री अपने पति के कहने पर नियोग (गैर मर्द सें संभोग/बलात्कार) करने सें इन्कार करेगी तो यह ''अधर्म" होगा तथा उसे भ्रूण हत्या का पाप लगेगा. (आदि. 122) समु 1.19
- छोटे भाई की युवा, सुन्दर विधवा (पत्नि) सें समागम क्षत्रियों का **"सनातन धर्म"** है. (आदि 103.25)
- ब्राह्मण अश्वमेध यज्ञ में घोड़े के साथ पटरानी के समागम को "धर्म" बताते हैं. (बाल कांड 14.33) इस बात की पुष्टि दयानन्द भी करता है (स.प्र. 286 समुल्लास 11)
- दयानन्द के अनुसार स्त्री द्वारा गैर पुरूष सें शारीरिक सम्बन्ध बना कर सन्तान पैदा करना धर्म है. (स.प्र. 112 समुल्लास 4) पति चाहे जीवित हो पांडू की तरह, अथवा मर गया हो विचित्रवीर्य की तरह अथवा स्त्री अभी कुंआरी हो विदुर की माँ की तरह! सभी प्रकार के व्यभिचार ब्राह्मणवाद में धर्म है!!
- मैथुन करते समय पति अगर मर जाए तो पत्नि को उसके साथ जल कर सती हो जाना चाहिए ताकि वह अगले जन्म में उसकी अतृप्त कामवासना पूरी करने का धर्म निभा सके. यह प्राचीन सनातन धर्म है.(आदि 124)
- अगर बायीं जांघ पर कामासक्त स्त्री आकर बैठे तो उससें समागम धर्म है. उसकी वासना अतृप्त छोड़ना अधर्म है. अगर वह दायीं जांघ पर बैठे तो उसे बेटे को काम पूरा करने के लिए सौंप दिया जाना चाहिए. (आदि 97) गंगा जब शांतनु के बाप की जांघ पर आकर बैठी तो उसने ऐसा ही धर्म किया था.
- कृष्ण अर्जुन को जूए में हारी सम्पत्ति व राज्य पुनः प्राप्त करने के लिए लड़ने मरने के लिए कहता है कि अगर वह ऐसा नहीं करेगा तो इससें धर्म ओर नीति की हानि होगी. अतः जूए में हारी सम्पत्ति के लिए लड़ना मरना आर्यों का धर्म था, सनातन धर्म!! (गीता 2.33)
- काली को भेंट देते समय बलि को रस्सें सें बांध कर उसका सिर काट कर खून कमल के पत्ते में रख कर देना धर्म है. (बाबा साहिब खण्ड 4.123)
- कीमत लेकर कन्या किसी को देना धर्म है ऐसा स्वयं ब्रह्मा का मानना है. (आदि 112.9)

- उत्तर रामचरित के चौथे अंक के अनुसार वेद के ज्ञानी अतिथि अर्थात ब्राह्मण के लिए दो साल तक की बछिया या बड़े बैल को पका कर खिलाना धर्म कार्य है. (समु 6.154)
- कामातुर स्त्री को मांगने पर भोग नहीं दे तो अधर्म होता है. (आदि 83.32) उसके साथ एक रात बिताना धर्म है (214)
- स्त्रियां स्वछंद अनियंत्रित हैं वे कुंआरी होते हुए भी किसी सें भी भोग करें यही **सनातन धर्म** है. (आदि 122) पांडू ने बताया कि यह धाार्मिक सिद्धांत सनातन है. कुरू में अब भी ऐसा ही है तथा यही **प्राचीन सनातन धर्म कुन्ती को सूर्य ने बताया था.** (आदि 1112) (राज 84)
- अपनी पत्नि अथवा दासी अपने मित्र को उधार देना धर्म है. (उद्योग पर्व 45) (अनुशासन पर्व 2) घर आए अतिथि (ब्राह्मण) सें अपनी पत्नि का समागम करवाना धर्म है. भीष्म कहता है ऐसा करवाने वाले पुरूष को स्वर्ग का सुख मिलता है. (वही 2) यानि पत्नि की दल्लागिरी करने वाले को स्वर्ग!
- पुरूषों द्वारा अनेकों स्त्रियों सें सम्बंध बनाना धर्म है. (आदि 158)
- दक्ष ने अपनी कन्या अपने बाप को ब्रह्मा को भेंट कर दी. ब्रह्म ने उसके साथ भोग करके नारद पैदा किया. दस प्रचेताओं और सोम ने अपनी बेटी सें कुकर्म किया ओर दक्ष प्रजापति पैदा किया. प्रजापति के जब सन्तान पैदा हुई तो उसने 27 कन्याएं अपने बाप को बच्चे पैदा करने के लिए दे दीं!! (हरिवंष 2).(राज 75)

  महाभारत में वैशम्पायन ने यह कहानी जनमेजय को सुनाई तो वह बोला कि **ब्रह्मा और उसके बेटों द्वारा यह अधर्म क्यों किया गया तो वैशम्पायन बोला उस समय (सत्तयुग में) आर्यों का यही धर्म था. ब्राह्मण इसी को धर्म बताते हैं.** (हरिवंष 3).(राज 75)
- मृत पति के साथ जल मरना प्राचीन सनातन धर्म है. (अथर्व 18.3.1) (समु3.72)
- ब्राह्मण सें नियोग करवाने पर धर्म होता है. अन्य सें करवाने पर धर्म का नाष होता है. (मनु 9.64)
- वशिष्ठ जब भगवान वाल्मिकी के आश्रम में गया तो उनकी बछिया मार कर खा गया. धर्म सूत्र लिखने वाले इसे धार्मिक कर्म बताते हैं. (समु 6.154)
- अबोध बालिका सें बीच नदी के बलात्कार करने वाले को धर्मज्ञ अर्थात धर्म का ज्ञाता कहा गया है. (आदि 97)
- धर्मज्ञों (ब्राह्मण धर्म के एक्सपर्ट) का कहना है कि क्षत्रियों द्वारा शादी के मण्डप में सें वधु का बलपूर्वक हरण अच्छा काम है धर्म है. (म भा 121.221) अतः शादी के लिए किसी की बहन बेटी को अगवा कर लेना अधर्म नहीं है. तभी तो तथाकथित ब्रह्मचारी भीष्म ने अंबा और उसकी दो बहनों को शादी के मंडप सें जबरन उठा लिया था. ऐसा आदमी आर्यों का पितामह (बाप का बाप) कहलाया. कृष्ण ने शादी के समय अपनी बहन सुभद्रा शादीसुदा अर्जुन के हाथों अगवा करा दी. वह भगवान कहलाया. विष्णु ने साध्वी वृंदा सें जबरन बलात्कार किया तो वह प्रजापालक भगवान कहलाया. हनुमान ने राम सें सोलह कुआंरी कमसिन लड़कियां ली तो वह यति, ब्रह्मचारी कहलाया. पवन ने हनुमान की माँ अंजनि सें व्यभिचार करके हनुमान को पैदा किया तो वह देवता कहलाया. शिव सदा वासना में डूबा रहने के कारण लिंग बना दिया गया. वह सर्वनाशक भगवान कहलाया. यही ब्राह्मणों का धर्म है! सनातन धर्म!!
- राम ने जब सन्त शम्बूक की गला काट कर हत्या की तो देवों ने इसे धर्म का काम बताया और उस पर फूलों की वर्षा की.
- मनु (5.44) भी कहता है कि वेद ही धर्म है. दयानन्द भी कहता है कि जो कुछ वेद में हे वह सब धर्म है. चाहे इस में नर बलि पशु बलि गाय घोड़े मार कर खाने की बात हो वासना का नंगा नाच हो शराब पीना हो सब धर्म है ब्राह्मणों का सनातन धर्म!!
- कृष्ण का कहना है (1.40) कि जब धर्म नष्ट हो जाता है तब वर्णसंकर बच्चे पैदा होते है. अतः एक जाति वाली स्त्री को अपनी जाति के पुरुष सें ही सम्बंध बनाने चाहिए. जहां दो भिन्न जातियों के स्त्री पुरुष ने बच्चे पैदा किये नहीं कि धर्म नष्ट हुआ समझो. ऐसी सन्तान कुलघाती और कुल को नरक में ले जाने वाली होती है. अगर गीता सही है तब तो इन्दिरा गांधी ने सचमुच धर्म का नाश किया है. कृष्ण के अनुसार तो राजीव गांधी और संजय गांधी दोनों कुलघाती हैं.

- महाभारत में राजा नल की कथा है कि वह महाधर्मी राजा था. नित्य जूआ खेलता था. नित्य यज्ञों में पशु काट कर ब्राह्मणों को परोसता था. ब्राह्मणों के अनुसार उसने कोई काम भी धर्म के विरुद्ध नहीं किया लेकिन एक दिन बिना मूते संध्या करने बैठ गया. बस धर्म का नाश हो गया. धर्म का नाश हुआ तो उसका भी नाश हो गया. वह जूए में सब कुछ हार गया. बस बीवी बची उसे लेकर वह जंगल में चला गया. सो मूत कर संध्या करना धर्म है बिना मूते संध्या करना अधर्म है.
- भरत गद्दी का असली हकदार था. उसके बाप ने गद्दी राम को देने की साजिश की लेकिन नाकाम रहा. राम लक्ष्मण सीता के साथ वन में चले गया. भरत गद्दी पर नहीं बैठा बल्कि राम को मनाने वन में गया. उसे देख कर लक्ष्मण ने राम सें कहा इसकी वजह सें तुझे गद्दी नहीं मिल पाई है इसलिए इसे मारने में अधर्म नहीं होगा. अतः जिस आदमी सें कोई हानि होती हो उसे मारना धर्म है. चाहे इसमें उसकी कोई गलती न हो. (अयोध्या 96)
- असली ब्राह्मण धर्म की परिभाषा आर्यों के पितामह भीष्म ने दी है. उसका कहना है कि **बलवान मनुष्य जिस चीज को धर्म बतलाता है वही धर्म है क्यों कि लोग उसे धर्म मान लेते हैं. कमजोर जो धर्म बतलाता है वह ताकतवर के बताए धर्म के नीचे दब जाता है. (सभापर्व 69.15)** यही कारण है कि राम कृष्ण बलवान थे इसलिए उनके कुकर्म भी धर्म कहलाते हैं. सन्त बलहीन थे उनका धर्म ब्राह्मणों के अधर्म के नीचे दब गया. ब्राह्मणों ने अपने अधर्म को बनाए रखने के लिए हमेशा ताकत का साथ लिया. **इसलिए पहले उनका गाय खाना भी धर्म था और अब गाय पूजना भी धर्म है!!**

गुरू रैदास ने अपने जीवन में कभी भी ऐसे कर्मकांड या पाखण्ड नहीं किए जिन्हें ब्राह्मण 'धर्म' बताते हैं. उनके लिए धर्म और सदाचार में कोई अन्तर नहीं है जबकि ब्राह्मणिक धर्म में सदाचार का धर्म सें कहीं दूर का भी रिश्ता नहीं है. अतः ब्राह्मणों के धर्म और सन्तों के धर्म में उतना ही अन्तर है जितना रात और दिन में होता है.

इसलिए "धर्म" के आधार पर गुरू रैदास ब्राह्मणिक हिन्दू नहीं कहे जा सकते.

दूसरा प्रयोजन : अर्थ :– अर्थ यानि पैसा बनाना ब्राह्मणधर्म का मुख्य काम है. जितना धन आज के दिन ब्राह्मणिक मंदिर कमा रहे हैं उतना धन तो भारत सरकार भी नहीं बना रही होगी. बच्चा बच्चा जानता है कि धन या दक्षिणा देकर ब्राह्मण सें कुछ भी उलटा सीधा काम करवाया जा सकता है. दुनिया में सिर्फ ब्राह्मण ही एक ऐसी कौम है जो बच्चे के जन्म सें पहले ही दक्षिणा लेना शुरू करता है तथा मरने पर दाह संस्कार करवाने के भी पैसे लेता है तथा आदमी के मर जाने के बाद भी उसके वारिसों सें गरुड़ पाठ और श्राद्ध के नाम पर दक्षिणा बटोरता रहता है. ऐसा वह इसलिए करता है क्योंकि पैसा कमाना उनके धर्म का मुख्य उद्देष्य है.

ब्राह्मण को धन आदि दान देने के नियम :

* कलियुग में दान प्रधान है. दान केवल ब्राह्मण ही ले सकते हैं. (मनु 1.86)
* संसार में जो कुछ है सब ब्राह्मणों का ही है. (मनु 1.100) अतः वह किसी का भी धन ले सकता है.
* अगर राजा को लावारिस धन मिल जाए तो आधा स्वयं रखे आधा ब्राह्मण को दे दे. अगर ब्राह्मण को लावारिस धन मिल जाए तो वह सारा ही रख ले. (मनु 8.37–38)
* जो आदमी अपने कमाये गए धन में सें ब्राह्मण को दान नहीं करता, वह चोर तथा पापी है. उसे ब्रह्महत्यारे के समान माना जाना चाहिए. (पाराषर 12.16)
* ब्राह्मण पर कोई जुर्माना, कोई टैक्स नहीं लगाया जा सकता. (मनु 7.133,8.380) सदियों सें चले आ रहे इसी नियम के तहत आज भी उन पर आयकर, बिक्री कर आदि नहीं लगता.
* ब्राह्मण का मूंह लैटर बॉक्स की तरह है. जैसे उसमें डाली गई चिट्ठी नामित व्यक्ति को मिल जाती है वैसे ही ब्राह्मण के मूंह में हव्य (यज्ञ का अन्न माँस घी आदि) डालने पर देवताओं को मिल जाता है तो कव्य (श्राद्ध में तैयार भोजन) डालने सें पितरों को मिल जाता है. (मनु 1.95)
* राजा जो धन ब्राह्मण को दान में देता है उसे राजा के पास सें कोई चोर चुरा नहीं सकता, शत्रु छीन नहीं सकता. इसलिए राजा को चाहिए कि वह ब्राह्मणों को खूब दान दे. (मनु 7.82)
* अग्नि में दी गई आहूति सें तो अच्छा है कि ब्राह्मण को ही दान कर दिया जाए क्योंकि उसे दिया गया दान न तो नीचे गिरता है न सूखता है और न ही नष्ट होता है.(मनु 7.83)

हरिद्वार, प्रयाग, काशी अथवा किसी भी अन्य तीर्थ स्थान पर दक्षिणा मांगने के नाम पर जितनी लूट वहां के ब्राह्मण पण्डे करते हैं, उससें सभी हिन्दू दो चार हो चुके हैं. ब्राह्मणवाद के उलट गुरू रैदास ने कभी किसी सें दान नहीं लिया. मांगने की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती. सन्त रैदास मेहनत करके खाने में विश्वास रखते थे. उनका कहना हैः

रैदास परिश्रम कर खाइये, जो दे पार लगाए!
नेक कमाई जो करे कभी न निष्फल जाए!

रैदास निज हाथ में, राखो रांबी आर!
सुकिरती मेरा धर्म है, तारेगा पार!!

सभी जानते हैं कि गुरू रैदास चर्मकार थे. लोग चाहे उनके काम और उनकी जाति को ओछा बताते थे मगर उन्हें मेहनत करके अपने ही काम सें कमा कर खाने में गर्व महसूस होता था. इसलिए वे कहते थे कि अपने हाथ में अपने औजार रखो तथा नेक कमाई करके खाओ. इसी सें कल्याण होगा.

अतः गुरू रैदास किसी भी ढंग सें सनातन धर्म वाले हिन्दू नहीं हो सकते.

तीसरा प्रयोजन : काम :– ब्राह्मणिक हिन्दुओं में कहने को तो चार प्रयोजन हैं लेकिन जितना अमल ब्राह्मणों और उनके देवों ऋषियों ने "काम" पर किया है उतना किसी और पर नहीं किया. इसलिए सत्य कहा जाए तो काम या वासना ब्राह्मणधर्म का सबसें मुख्य लक्ष्य रहा है. ब्रह्मा ने अपनी बेटी सें बलात्कार करके जो 'काम' शुरू किया था आज तक के ब्राह्मण इस 'काम वासना' के चक्कर में उलझे हुए हैं. ब्राह्मणधर्म में "काम" का पति पत्नि के सम्बंधों या औलाद पैदा करने सें कतई सम्बंध नहीं है. उनके काम का अर्थ मात्र पशुवत वासना सें है. जैसे पशु अपनी वासना मिटाने में किसी रिश्ते अथवा किसी पर्दे की जरूरत नहीं समझते वैसे ही ब्राह्मणिक देव, ऋषि और पण्डे पुजारियों ने किसी किस्म की कोई लिहाज नहीं रखी. स्वयं ब्राह्मण ग्रन्थ इस बात का सबूत हैं.

* ब्रह्मा सें शुरू करें तो उसने अपनी बेटी और पोतियां नहीं बख्शीं.
* विष्णु ने पतिव्रता वृंदा सें बलात्कार किया तथा उन्हें आत्महत्या करने पर मजबूर किया.
* महेश अथवा शिव हमेशा अपनी पत्नि के साथ काम कर्म में लिप्त पाया गया. यहां तक कि जब भृगु उससें मिलने गया तो वह अपने 'काम' में मस्त था. अतः भृगु ने उसे लिंग बन जाने का श्राप दे दिया. आज करोड़ों हिन्दू उस शापित लिंग को पूजते हैं.
* सीता जब महात्मा रावण के पास लंका में थी तो पीछे सें राम ने वासना में अंधे होकर जो हाय तौबा मचाई वह बेशर्मी की हद है.
* कृष्ण ने तो बेशर्मी क्या अनैतिकता की सभी हदें पार कर दीं. राधा उसकी माँ समान मामी लगती थी जिसके साथ वह नित्य शारीरिक सम्बंध बनाता था. आज ब्राह्मण मंदिरों में कृष्ण की पत्नि रुक्मणि की मूर्ति नहीं लगाते बल्कि कुल्टा राधा की मूर्ति लगाते हैं ताकि अन्य राधाएं आएं तो उनका भी काम चलता रहे. अगर भागवत को सच मान लें तो कृष्ण के इलाके में शायद ही कोई बचा होगा जिस की बहन बेटी और पत्नि की इज्जत सें वह नहीं खेला. वर्ना तीन करोड़ अठारह हजार आठ की सूचि तो वहां विद्यमान ही है!
* खजुराहो और जगन्नाथ के वेश्याघरों को मंदिर का नाम दिया जाता है. जैसी मूर्तियां वहां बनी हुई हैं वैसी काम वासना में लिप्त मूर्तियां तो वेश्याघरों में भी नहीं पाई जातीं.
* ब्राह्मणिक आर्य सुन्दर औरत के इतने दीवाने होते थे कि वह किसी एक की बीवी बन कर नहीं रह सकती थी. सुन्दर स्त्री को नगरवधु यानि पूरे गांव की बीवी बना दिया जाता था. अम्बापाली ऐसी ही अभागिन थी जिसे अत्याधिक सुन्दर होने के कारण पूरे नगर की भोग्या यानि वेश्या बनना पड़ा था. भगवन बुद्ध ने उसे भिक्षुणी बना कर अभागिन अम्बपाली सें अम्बा माँ बनाया.
* अप्सराएं देव समाज की स्पेशल वेश्याएं होती थीं. उनका काम देवों की काम वासना मिटाना होता था. जैसे लीडर अपनी कुर्सी बचाने के लिए ओछे हथकंडे अपनाते हैं वैसे ही देव अपना काम निकालने के लिए इन अप्सराओं को ऋषियों आदि को भी सप्लाई कर देते थे. यह ब्राह्मणधर्म ही है जिसके "देवता" लड़कियां सप्लाई का काम करते थे लेकिन उसके बावजूद भी "भगवान" बने हुए हैं.

* दुनिया के किसी भी धर्म में वेश्यावृति को ब्राह्मणधर्म जैसी मान्यता नहीं दी गई है. ब्राह्मणधर्म में तो वेश्याएं और देवियां एक समान हैं. राम को पैदा करने वाला ब्राह्मण ऋषि ऋष्यश्रृंग को जंगल सें बाहर लाने के लिए वेश्याओं को भेजा गया. उनकी अश्लील अदाएं देख कर ही वह ब्राह्मण ऋषि अपना आश्रम छोड़ कर कुत्ते की तरह राल टपकाता उनके पीछे पीछे महल तक आ गया. कृष्ण के तिलक के समय इन्द्र ने मथुरा की वेश्याओं के लिए अन्य लोगों के बराबर सोना दिया था. (हरिवंश अध्याय 55)

* ब्राह्मण ग्रन्थ पढ़ने बैठो तो लगता है कोई ऋषि अपनी माँ के तो पैदा हुआ ही नहीं और न ही किसी ऋषि ने अपनी पत्नि के सन्तान पैदा की है. हर कोई वेश्याओं सें ही पैदा हुआ लगता है तथा वेश्याओं के पीछे ही भागता नजर आता है.

* ब्राह्मण धर्म में काम वासना की सबसें बड़ी मिसाल शिव है. दावा किया जाता है कि उसने कामदेव को नष्ट कर दिया था लेकिन शिव और पार्वती हमेशा वासना कर्म में ही लगे रहते थे. इसलिए श्राप के कारण वे लिंग–योनि के रूप में धरती पर आ गिरे. आज उनका लिंग–योनि हर ब्राह्मणिक मंदिर की शान है.

* काम अर्थात वासना या सैक्स का ब्राह्मणिक धर्म में इतना अधिक महत्व था कि जब देवदत ने यह कहा कि वह किसी स्त्री सें यौन सम्बंध नहीं बनाएगा तो सारे आर्य समाज में तहलका मच गया. इसे "भीषण प्रतिज्ञा" का नाम दिया गया और ऐसी बात करने वाले को **भीष्म** नाम दिया गया. वैसे देखा जाए तो भारत के राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री ऐसे व्यक्ति हो चुके हैं जिन्होंने पूरी उम्र शादी ही नहीं की और वे लोग चरित्र में भीष्म सें लाख दर्जे ऊंचे हैं. लेकिन काम तो ब्राह्मणधर्म की जड़ है अतः अगर किसी ने कह दिया कि वह स्त्री सें संपर्क नहीं बनाएगा तो ब्राह्मणों के लिए महान कार्य हो गया!!

* यह ब्राह्मणों के काम वासना के धर्म का ही पालन था कि जब राम वन में जाने लगा तो उसके बाप ने उसके साथ वेश्याएं भेजने का प्रबंध भी किया. (अयोध्या कांड 36) अतः ब्राह्मणिक हिन्दुओं का बिना सैक्स बिना वेश्याओं के गुजारा नहीं हो सकता.

* काम वासना ब्राह्मण धर्म में इस कदर हावी है कि स्त्री विशेषकर पराई औरत सें मैथुन को तीर्थ बताया गया. निम्न सूचि इस बात की द्योतक है कि ब्राह्मण हर प्रकार की स्त्री सें सम्बंध बनाने में तीर्थ जितना पुण्य समझते थे.: (रुद्रायामल तन्त्र) (आर्य नीति पृ. 15)

स्त्री की किस्म		**तीर्थ के समान**
रजस्वला	:	पुष्कर
चांडाली	:	काशी
चमारिन	:	प्रयाग
धोबिन	:	मथुरा
नाईन	:	हरिद्वार
वेश्या	:	अयोध्या

हमारे विचार में इस मुद्दे पर गुरू रैदास को लेकर किसी किस्म की टिप्पणी की आवश्यकता ही नहीं है. गुरू रैदास के सदाचारी चरित्र और ब्राह्मण धर्मी लोगों के वासनामयी जीवन की तुलना किसी भी हिसाब सें की ही नहीं जा सकती. **जैसे सन्त रैदास थे वैसे ब्राह्मणवादी कभी हो ही नहीं सकते और जैसे ब्राह्मणवादी हैं वैसे सन्त कभी हो ही नहीं सकते!!** गुरू रैदास के काम वासना पर कुछ पद इस प्रकार सें हैं:

जिनके हिरदे सत्त बसे, पंच दोस नांहि!
रैदास वे नर ऊंचे भए, समझ ये मन मांहि!!

अर्थात जिनके हृदय में सच्चाई बसती है उनके मन में पांच दोष नहीं बसते और जिनके मन में पांच दोष नहीं हैं वे आदमी महान हैं. यह पांच दोष हैं : **काम,** क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार! अतः रैदास जी के अनुसार जिनके मन में काम बसता है वे नीच पुरुष हैं. ब्राह्मण धर्म का कोई भी भगवान कोई भी देव और कोई भी ऋषि, सन्त रैदास के मापदण्ड पर खरा नहीं उतरता! इतना कुछ होने पर भी कोई उन्हें ब्राह्मणिक "हिन्दू" कहे तो यह उसकी नीचता ही है!!

अतः इस कसौटी पर भी गुरू रैदास ब्राह्मणिक हिन्दू नहीं हैं.

चौथा प्रयोजन : मोक्ष :– मोक्ष हर ब्राह्मणिक हिन्दू की चाह है, परम लक्ष्य है. पैदा होते ही हर हिन्दू के दिमाग में यह बात बैठा दी जाती है कि उसके शरीर में एक आत्मा है जो कि परमात्मा सें बिछुड़ कर आई है. यह शरीर उसकी कैद है. हर आदमी का परम लक्ष्य है कि जैसे ही आत्मा शरीर की कैद सें आजाद हो वह परमात्मा सें मिल जाए. परमात्मा सें मिलन यानि मोक्ष हो जाए.

ब्राह्मणधर्म में मोक्ष का धन्धा इतना जबरदस्त फल फूल रहा है कि इतना तो बिल गेटस का कम्प्यूटर सिस्टम भी नहीं बढ़ रहा होगा. ब्राह्मणों के तमाम मंदिर, तीर्थ स्थान, नदी तालाब सब के सब मोक्ष की गारंटी देते हैं. एक बार संगम में डुबकी लगाओ सात जन्मों तक मोक्ष पाओ. हरिद्वार में डुबकी लगाओ सीधे बैकुण्ठ में जाओ, वेंकटेसवर, बाला, त्रिपति, बद्री आदि के मंदिरों में दान करो और पापों सें मुक्ति पाओ. जब पाप नहीं रहे तो स्वर्ग में अप्सराओं के साथ ऐश करने सें कौन रोकेगा! ऐसे ब्राह्मण ही हैं जो पैसे लेकर स्वर्ग में सीट की गारंटी देते हैं!!

मातृका भेद तंत्र में शिव अपनी बीवी सें कहता है कि मदिरा पीने सें ब्राह्मणों को मोक्ष मिलता है. मैं तुझे एक महान सत्य बताता हूँ कि जो ब्राह्मण शराब और मैथुन में लगा रहता है वह शिव बन जाता है. जैसे पानी में पानी मिल जाता है वैसे ही शराब पीने वाला ब्राह्मण ब्रह्मा में मिल जाता है. (यानि उसे मोक्ष मिल जाता है) चावल सें बनी शराब (सुरा) पीने सें आदमी सुरत्व (देवत्व) प्राप्त करता है. इसीलिए यह सुरा कहलाती है. (पहेली 14)

गुरू रैदास ने अपनी बाणी में लोगों सें आहवान किया कि वे इन पाखण्डों सें बच कर रहें. उनकी बाणी में मोक्ष सम्बंधी निम्न बाते पाईं जाती है :

1. उन्होंने अपनी पूरी बाणी में कहीं भी मोक्ष प्राप्ति की इच्छा जाहिर नहीं की है.
2. उन्होंने कभी किसी सें यह नहीं कहा कि वे मोक्ष प्राप्ति का यत्न करे. उन्होंने कभी भी लख चौरासी योनि जैसी बकवास बातें नहीं की हैं.
3. उन्होंने आदमी और भगवान को 'एक' करके माना है. वे कहते हैं :

तोहि माहि, मोहि तोहि अंतर कैसा, कनक कटिक जल तरंग के जैसा!

अर्थात हे भगवान, तेरे मेरे में और मेरे तेरे में वैसा ही अंतर है जैसे सोने और उससें बने हुए जेवरों में होता है या फिर जैसे पानी और उसमें उठने वाली लहरों में होता है. जैसे उनमें कोई अंतर नहीं वैसे ही आदमी और भगवान में अंतर नहीं है. जब अंतर ही नहीं तो मोक्ष किस बात का!

वे आगे बोले : **प्रभु जी तुम दीपक हम बाती, तुम मोती हम धागा, तुम तीरथ हम जाती!**

अर्थात भगवान और आदमी का मेल वैसा ही है जैसे दीपक और बाती का, मोती और धागे का तथा तीर्थ और यात्री का. बिना दीपक के बाती बेकार है तो बिना बाती के दीपक किसी काम का नहीं, जब तक धागा न हो मोती की माला नहीं बन सकती, मोती न हो तो अकेला धागा किसी कीमत का नहीं है. बिना यात्रियों के तीर्थ की शोभा नही तो तीर्थ नहीं तो यात्रा नहीं हो सकती.

अतः जब भगवान और आदमी एक दूसरे के पूरक हैं तो आदमी को मोक्ष की जरूरत ही नहीं है. मोक्ष की जरूरत तो तब पड़े जब आदमी भगवान सें दूर हो!! अगर आदमी दूर हो भी जाए तो भी ब्राह्मणों के फैलाए पाखण्डों सें तो मोक्ष मिलने सें रहा. उनके हमसहरी सत्तगुरु कबीर ने ब्राह्मणों के मोक्ष के धन्धे पर सटीक टिप्पणी की है. उन्होंने कहाः

वे क्यों कासी तजैं मुरारी।
तेरी सेवा चोर भये बनवारी।।
जोगी जती तपी सन्यासी, मठ देवल बसि परसै कासी।
तीन बार जे नित प्रति नहावैं, काया भीतरि खबर न पावैं।
देवल देवल फेरी देहिं, नांव निरंजन कबहुं न लेहीं।
चरन बिरद कासी कू न दैहूं, कह कबीर भल नरकहि जैहूं।

अर्थात काशी में बसने वाले पण्डे चोर हैं. वे भगवान के नाम पर मोक्ष का धन्धा करते हुए चोर सें मालिक बन बैठे है. हर प्रकार के ब्राह्मणवादी – योगी, ब्रह्मचारी, तपस्वी और सन्यासी यहां मंदिरों में डेरा डाले बैठे हैं. वे रोजाना तीन बार गंगा में स्नान करते हैं कि इससें उन्हें मोक्ष मिल जाएगा. लोग इनके चक्करों में पड़ कर मंदिर मंदिर फेरे डाल रहे हैं. लेकिन वे लोग सदाचार का नाम नहीं लेते जिससें उन्हें वास्तव में शांति मिलेगी. मैं चाहे नरक में चला जाऊं मगर ऐसी ठगों की काशी में नहीं आऊंगा.

गुरू रैदास भी अपने हमसहरी जैसे ही थे. उन्होंने भी मोक्ष के धन्धे का पूरी तरह सें खण्डन और विरोध किया. वे मोक्ष के धन्धे को इतना ओछा समझते थे कि उन्होंने अपनी बाणी में कहीं भी मोक्ष प्राप्त करने की बात नहीं की है. उन्होंने बस इतना कहा कि सदाचारी काम ही मेरा धर्म है और यही मुझे मुक्ति दिलाएगा.

रैदास निज हाथ में, राखो रांबी आर!
सुकिरती मेरा धर्म है, तारेगा भव पार!!

अतः इस आधार पर भी उन्हें ब्राह्मणिक हिन्दूधर्मी नहीं कहा जा सकता.

4. **वेदों का धर्म** : ब्राह्मण ऋषि अंगिरा सें लेकर ब्राह्मण राष्ट्रपति राधाकृष्णन तक सभी ब्राह्मणों का एक ही मत है कि वेद धर्म की जड़ हैं. अगर वेद नहीं तो धर्म नहीं है. आजकल एक नया फैशन चला है कि सारे वैज्ञानिक फार्मूले भी वेदों में ढूढे जाने लगे हैं. राकेट, कम्प्यूटर, ऐटम बम, बसें, कारें, कंडोम, नसबंदी – सब कुछ वेदों में खोजे जा रहे हैं. अतः आजकल वेद धर्म के साथ साथ ज्ञान और विज्ञान के भी सागर बनाए जा रहे हैं.

वेदों में ज्ञान की बात करें तो वेदों में इतना ज्ञान है कि ब्राह्मणिक देवों के पास लकड़ी का एक पात्र (बर्तन) था जिसमें डाल कर वे यज्ञ का सामान खाते थे. देवों को वह बर्तन छोटा पड़ता था. एक बढई ने उसके साथ का बड़ा बर्तन बना दिया या उसी में जोड़ लगा कर उसे बड़ा बना दिया. बस उस बढ़ई के "ज्ञान" का हल्ला मच गया और उस बढ़ई को "महाज्ञानी" मान लिया गया और उसे "देव" की उपाधि दे दी गई. यह लकड़ी का पात्र वैसा ही था जैसे आजकल हम पशुओं का चारा डालने के लिए लकड़ी की खुरली बनाते हैं. खुरली बनाने बनाने वाला जहां महाज्ञानी है उस समाज के ज्ञान की सहज कल्पना की जा सकती है.

संसार का छोटे सें छोटा मकान तथा बड़े सें बड़ा महल या किला ईंटों सें बना है. **संस्कृत भाषा में "ईंट" शब्द ही नहीं है और पूरे ब्राह्मणिक ग्रन्थों में कहीं भी ईंट शब्द नहीं आया है.** कहने की आवश्यकता नहीं कि जो लोग ईंट को नहीं जानते उन्होंने अपने मकान घास फूस के ही बने होंगे. और यह भी कहने की आवश्यकता नहीं कि घास फूस सें झोंपड़े बनते हैं महल नहीं. जो लोग ईंट बनाना नहीं जानते थे उनके बारे में यह कहा जाए कि वे राकेट बना लेते थे तो यह पागलपन ही है.

एक ब्राह्मणिक कथा है कि इन्द्र ने अहिल्या सें व्यभिचार किया. उसके पति ने इन्द्र को श्राप दिया कि उसके अण्डकोष गिर जाएं. वह "नामर्द" बन गया. देवों ने वर दिया और उसके बकरे के अण्डकोष उग आए. वह फिर सें "मर्द" बन गया. राधा और कृष्ण नित्य रंगरलियां मनाते थे. राधा के पति ने विरोध किया तो दोनों ने मिल कर उसे नपुंसक बना दिया. ऐसी कथाओं के आधार पर अगर ब्राह्मणवादी "विद्वान" दावा करें कि उनके वेदों शास्त्रों में नसबंदी की विधियां बताई गई हैं तो उनके "ज्ञान" और धूर्तता की सहज कल्पना की जा सकती है. बस ऐसे ही ज्ञान की बातें हैं वेदों में ब्राह्मणिक शास्त्रों में.

वेदों में धर्म : सबसें मुख्य बात वेदों में वर्णित "धर्म" की है. हर ब्राह्मणवादी की तरह दयानन्द भी गला फाड़ कर ऐलान करता है कि वेद सुप्रीम हैं, सबसें महान हैं, ईश्वरीय ज्ञान हैं. उसका आर्य समाज तो आज भी यही कहता है कि वेद काल में लौट चलो और अपना जीवन वेदों के अनुसार और अनुरूप व्यतीत करो. मनु का भी कहना है कि वेद सनातन धर्म का मूल हैं. वेद नहीं तो धर्म नहीं.

सभी ब्राह्मणवादी लेखक मानते हैं कि वेद सत्ययुग में रचे गए थे. यह भी मान्यता है कि सत्ययुग और कलियुग परस्पर विरोधी युग हैं. जो बात सत्ययुग में होती थी वह अब कलियुग में नहीं होती और जो अब कलियुग में होती है वह सत्ययुग में नहीं होती थी. राधाकृष्णन ने वेदों का धर्म बताते हुए कहा है कि कलियुग में पांच चीजों की मनाही की गई. (धर्म और समाज पृ.186)

1. यज्ञ की अग्नि को लगातार जलाए रखना
2. गो–हत्या करना. गोमेध यज्ञ करना.
3. श्राद्ध या पितृपूजा के अवसर पर मांस खाना.
4. नियोग द्वारा सन्तान पैदा करना.
5. संसार त्याग करना अथवा सन्यास धारण करना.

यह पांच काम कलियुग में बन्द किए गए तो इसका अर्थ हुआ कि **यह पांचों काम शेष तीनों युगों : सत्ययुग, त्रेता और द्वापर में धर्म होते थे.** यह पांचों काम सत्ययुग यानि उस समय भी होते थे जब वेद ही धर्म होते थे. संकाराचार्य ने कलियुग में सन्यासी बनने पर लगी पाबंदी हटा दी. अतः अब कलियुग में भी लोग सन्यासी बन सकते हैं. वास्तव में देखा जाए तो यही पांच काम वेदों का धर्म हैं. अतः इन कामों का क्या अर्थ है तथा दलित सन्तों खासकर गुरू रैदास का इस बारे में क्या मत है इस पर विचार किया जाना जरूरी है.

यज्ञ : वेदों के धर्म की जान

वेद ब्राह्मणधर्म का मूल हैं और यज्ञ वेदों का मूल हैं. अगर वेदों में सें यज्ञ निकाल दिए जाएं तो शेष कुछ बचेगा ही नहीं. यज्ञ और वेद एक दूसरे के पूरक हैं. कोई समय था कि यज्ञ ही ब्राह्मणधर्म की जान होते थे. हर राजा को अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए यज्ञ करने ही पड़ते थे. हरेक यज्ञ में वेद विधि के अनुसार **कम सें कम सोलह ब्राह्मण ऋषि** (ऋत्विक) बुलाने जरूरी थे. कोई भी यज्ञ इससें कम गिनती में ऋषियों द्वारा करने का विधान नहीं था. मनु का आदेश था कि यज्ञों में बहुत खर्चा होता है. इसलिए सिर्फ धनवान ही यज्ञ करें.

यज्ञ का इतिहास : आज जिस तरह के यज्ञ किए जाते हैं वे वैदिक यज्ञ नहीं हैं. आज के समय में यज्ञ का पूरा स्वरूप ही बदल गया है. आजकल आग में घी डाल कर जो यज्ञ किए जाते हैं वे वैदिक यज्ञ नहीं हैं. प्राचीन काल में यज्ञ का मूल उद्देश्य अनेक लोगों द्वारा इक्कठे होकर सन्तान पैदा करना ही होता था. महाराज रावण द्वारा रोके जाने तक आर्य लोग यज्ञों में शराब पीते थे, यज्ञ अग्नि में मांस भून कर खाते थे तथा स्त्रियों सें सामूहिक समागम करते थे, महात्मा रावण ने ऐसे यज्ञों को **"छिद्रों वाले यज्ञ"** का नाम दिया तथा वे ऐसे वीभत्स और अश्लील यज्ञ करने वाले ऋषियों को सजा देते थे. माननीय काशीनाथ विश्वनाथ राजवाड़े ने अपनी पुस्तक "भारतीय विवाह संस्था का इतिहास" में यज्ञ का असली अर्थ दिया है.

यज्ञ का असली अर्थ : सामूहिक काम वासना : राजवाड़े महोदय के अनुसार संस्कृत भाषा का शब्द "यज्ञ" दो शब्दों यज + न् के मेल सें बना है. यज का अर्थ है गमन करना, जन्म देना, संभोग करना. न् इसे बहुवचन बना देता है. **अतः यज्ञ का अर्थ हुआ बहुत सारे लोगों द्वारा एक जगह इक्कठे होकर गमन करना, बच्चे पैदा करना.** यह ब्राह्मणधर्म के इतिहास की सच्चाई भी है कि उनके ऋषि यज्ञों में एकत्रित होकर सबके सामने बच्चे पैदा करने का काम ही किया करते थे. राम के जन्म के लिए किए गए यज्ञ इस बात का सबूत हैं. द्रुपद द्रोपदी जैसे अनगिनित लोग यज्ञों में ही पैदा हुए हैं. राजवाड़े महोदय के अनुसार प्राचीन काल में आर्य पूर्वज आग की धूनी के चारों ओर एकत्रित होते थे. गुप्तांगों के बारे में बातें करते थे तथा वहीं पर गर्भाधान भी करते थे. इन तीनों क्रियाओं के लिए वे यज्ञ शब्द का प्रयोग करते थे. उनके अनुसार यज्ञों में जो अभद्र अश्लील बातें की जातीं थीं वही अश्वमेध यज्ञ के मन्त्र भी बनाए गए हैं.

प्राचीन वैदिक आर्यों में यज्ञ का अर्थ स्त्री सें यौन सम्बंध बनाना ही था. ब्राह्मणों का सबसें प्राचीन उपनिषद बृहदारण्यक (6.12.3) और छांदोग्य (5.8.1) में यज्ञ का यही अर्थ किया गया है. इनके अनुसार स्त्री ही यज्ञ की अग्नि है, उसकी योनि ज्वाला है, आदमी का लिंग समिधा (यज्ञ की लकड़ी) है, आकर्षण धूंआ है, प्रवेष अंगार हैं, आनन्द चिंगारी हैं, वीर्यपात ही आहूति है. इसी सें गर्भ ठहरता है.

उपनिषदों में यज्ञ का दिया हुआ उपरोक्त अर्थ किसी बात की कोई गुंजायश ही नहीं छोड़ता कि वेदों के धर्म में यज्ञ में क्या किया जाता था.

यहां यह स्पष्ट करना भी जरूरी है कि वैदिक आर्यों में हर स्त्री के लिए दस पुत्र पैदा करना अनिवार्य था. आज के समय में भी दयानन्द वैदिक फतवा जारी करता है कि हर स्त्री दस पुत्र पैदा करे. अगर उसका पति मर जाए या बच्चे पैदा करने में असमर्थ हो जाए तो उसे उच्च कुल (ब्राह्मणों) सें बच्चे पैदा करने चाहिए! (सत्यार्थ प्रकाश 4) सो अगर किसी को यह शंका हो कि यज्ञ में इतनी स्त्रियां कैसे आ पाती होंगी, निर्मूल हो जाती है क्योंकि उन्हें दस पुत्र पैदा करने ही होते थे.

हत्यारे परषु राम की कथा सच मानें तो जब उसने क्षत्रियों का सर्वनाश कर दिया था (उसने समस्त क्षत्रिय नर अपने कुल्हाड़े सें काट दिए थे. यहां तक कि क्षत्राणियों के गर्भ में पल रहे बच्चे भी निकाल कर काट दिए थे!) तो क्षत्राणियां ब्राह्मणों के आगे लाइन लगा कर खड़ी रहती थीं कि वह उनसें समागम कर ले ताकि उनके पुत्र पैदा हो जाए और वह स्वयं तो मोक्ष की अधिकारिणी बन जाए और उसका पुत्र अपने पितरों को पानी देने लायक हो जाए.

ब्राह्मणों का आर्य समाज की स्त्रियों पर कितना दबदबा था, वह इस बात सें भी जाहिर होता है कि जब महाराज रावण ब्राह्मण का वेश बना कर सीता हरण के लिए गए तो उन्होंने सीता के अंग अंग की वैसी ही तारीफ की जैसे एक पति अपनी पत्नि की कर सकता है. ब्राह्मणों के भगवान कहे जाने वाले राम की बीवी सीता भी "ब्राह्मण" के मुख सें अपने अंगों की तारीफ सुन कर खुश हुई तथा उन्हें फल मेवे भेंट किए. सो जब भगवान कहे जाने वाले आदमी की बीवी भी ब्राह्मणों के चंगुल सें आजाद नहीं थी तो आम स्त्री ने तो यज्ञ में लाइन लगानी ही थी.

यज्ञ में शराब : ऋग्वेद में पचासों अध्याय सोम रस (भांग या शराब) की स्तुति में लिखे गए हैं. यज्ञ में सोम नामक शराब पीना भी अनिवार्य था. राजवाड़े महोदय के अनुसार ब्राह्मण ऋषि और यज्ञ में भाग लेने वाले इसलिए सोम पीते थे क्योंकि वे मानते थे कि सोम सें वीर्य पैदा होता है तथा उसके नशे में मस्त होकर रतिक्रिया खुल कर की जा सकती है. साथ में सोम पीने सें समागम करने की इच्छा भी बढ़ती है. (पृ. 125) वे यह भी कहते हैं कि प्रजापति (गांव का मुखिया) यज्ञ का आयोजन करके सभी जवानों को एकसाथ बुला कर अपने समूह की स्त्रियों सें समागम करवाते थे ताकि अधिक प्रजा पैदा हो सके.

अतः वेदों का धर्म यही था कि यज्ञ किए जाएं ताकि सब मिल कर बच्चे पैदा कर सकें. यज्ञ में पैदा बच्चे किसी एक की सन्तान नहीं होते थे बल्कि पूरे कबीले या समूह की सन्तान माने जाते थे. शायद तभी सें यह कहावत बनी है कि बच्चे सब के सांझे होते हैं. होश में रह कर सबके सामने समागम करना हरेक इन्सान के बस की बात नहीं है. अतः सोम के नशे में धुत होकर यज्ञों में ऐसे कुकर्म किए जाते थे.

यज्ञ में मांस भक्षण : यज्ञ में ब्राह्मण ऋषियों को पीने के लिए शराब मिल जाती थी तथा भोगने के लिए स्त्रियां तो ऐसे में मांस न खाया जाए, ऐसा होना तो उनके लिए अनहोनी थी. अतः वैदिक धर्मी ब्राह्मण ऋषि यज्ञ में डट कर शराब पीते थे, यज्ञ की आग में पशु भून कर खाते थे तथा वहीं मदमस्त होकर स्त्रियों सें समागम करते थे. **ब्राह्मण यज्ञ में हर प्रकार का मांस भून कर खाते थे. नर मांस, गोमांस तथा घोड़े का मांस उनका सर्वप्रिय खाद्य था.** इसके अतिरिक्त वे भेड़ बकरी गैंडा हिरण, सब प्रकार के पक्षी तथा पानी में रहने वाले जीव सभी कुछ वे यज्ञ की अग्नि में भून कर खा जाते थे. राम को पैदा करने के लिए किए गए यज्ञ में 300 के करीब पशु, पक्षी और जलचर खूंटों के बांधे गए थे जिनको बाद में काट कर तथा यज्ञ की आग में भून कर खाया गया.

यज्ञ में नरमांस भक्षण : ऋग्वेद में दो जगहों पर यज्ञ में आदमी की बलि देने का उल्लेख आया है. एक जगह तो शुनःशेप नामक बालक की बलि का प्रसंग है. कथा है कि यज्ञ में काटने के लिए एक बालक की जरूरत थी. इस बालक को उसका ब्राह्मण बाप खूब सारी गायें लेकर यज्ञ में काटने के लिए बेच देता है. लेकिन उस मासूम को कोई जल्लाद भी यज्ञ में काटने को तैयार नहीं होता तो वही ब्राह्मण ऋषि धन लेकर उसे काटने को भी तैयार हो जाता है लेकिन अन्त में प्रथम जैन तीर्थंकर उसे बचाने में कामयाब हो जाते हैं. दूसरे प्रसंग में ऋग्वेद के दसवें मण्डल में एक पुरुष की बलि देने का पूरा किस्सा है. रामायण के बालकांड में भी नरबलि की कथा है.

यज्ञ में गोमांस : गोमांस ब्राह्मणों का सबसें प्रिय भोजन था. अगर ब्राह्मण ग्रन्थों में लिखी बातों को सत्य मान लें तो ब्राह्मणों ने इतनी गाएं काट कर खाई हैं कि आज भी जांच की जाए तो असली ब्राह्मण के खून में गाय के मांस के गुण मिलेंगे! वेदों की वकालत करने वाला दयानन्द भी यह फतवा देता है कि बूढ़ी और बांझ गायें यज्ञ में काट कर खाई जानी चाहिए!!

सनातन या ब्राह्मण धर्म के चारों वर्णों के लोग मजे सें गाय का मांस खाते थे. (प्राचीन भारत में गोमांस 22). मनु स्मृति (5.39) के अनुसार यज्ञ की जलती हुई आग में गाय व अन्य पशुओं को काट कर भूना जाता था. फिर उसके टुकड़े किए जाते थे तथा ब्राह्मण शास्त्रों में दिए गए विधान के अनुसार उसका बंटवारा होता था. लगभग पूरी गाय या पशु ब्राह्मण ऋषि खा जाते थे. यजमान के हाथ केवल पूंछ जीभ व पेडू का भाग आता था.

अगर महाभारत में दर्ज रन्तिदेव की कहानी को सच मान लें तो वह रोजाना दो हजार गायें काट कर ब्राह्मणों को खिला देता था. कभी कभी तो बीस हजार गायें भी काट कर खिला देता था. ब्राह्मणों ने महाभारत में रन्तिदेव को महादानी कह कर पशंसा की है.

वेदों में इन्द्र : सबसें बड़ा भगवान वेदों के अनुसार वह सब ब्राह्मणिक भगवानों व देवों का राजा है. ऋग्वेद का फतवा है कि उसके लिए एक बार में 15–20 बैल पकाए जाएं तथा उसे शराब सें लाद दिया जाए. कहा जाता है यथा राजा तथा प्रजा यानि जैसा राजा वैसी प्रजा. जब राजा ही एक बार में पन्द्रह बैल खा जाएगा तो बाकी प्रजा ने तो गाएं खानी ही थीं. जो समाज जैसा आचरण करता है या जैसा कुछ खाता पीता है वैसी ही वह कहावतें बना लेता है. आजकल कहावत है गाजर मूली की तरह काट देना. वेदों के समय में इतनी गाएं खाई जाती थीं कि उस समय कहावत थी : गाय की तरह काट देना.

यज्ञ बनाम हवन

महात्मा रावण ने हवन करने का नियम बनाया

महाराज रावण ने आस्ट्रेलिया सें लेकर भारत जापान तक अपना साम्राज्य स्थापित किया. उन्होंने अपने साम्राज्य में ऐसे अश्लील और वीभत्स यज्ञ बन्द करने के आदेश जारी किए. **उन्होंने यज्ञ में मारे जा रहे पशुओं की**

रक्षा के लिए तथा वहां किए जाते व्यभिचार सें स्त्रियों की रक्षा के लिए "रक्ष संस्कृति" की नींव रखी. उन्होंने नारा दिया "वयम् रक्षामः" अर्थात हम रक्षा करेंगे. उन्होंने तीन काम सबसें महान किए जिनके लिए भारतीय समाज उनका सदा ऋणी रहेगाः

1. उनका पहला महान काम था **वीभत्स व अश्लील यज्ञों को समाप्त** करना और उसकी जगह **हवन करने की प्रथा चलाना**. यज्ञ में कम सें कम **16 ब्राह्मण ऋत्विक** आते थे जो कि यजमान के पशु तो चट कर ही जाते थे उसकी बहन, बेटी, बीवी तक की इज्जत पर हाथ डाल लेते थे. उन्होंने 16 ऋत्विकों के यज्ञ की जगह **केवल एक आदमी** द्वारा हवन करने की प्रथा चलाई. इस प्रथा में सबसें बड़ी बात यह थी कि हवन करने के लिए किसी ब्राह्मण की जरूरत नहीं होती थी. कोई भी आदमी बिना जाति बन्धन के स्वयं यज्ञ कर सकता था. उन्होंने ब्राह्मणिक वेदों की जगह अपने वेद बनाए जिसमें उन्होंन हवन करने की विधि निर्धारित की. हनुमान जब लंका गया तो उसने वहां हर घर सें हवन का धूंआ उठते देखा था. महाराजा रावण ने अश्लील व बलि वाले यज्ञों को वह **"छिद्र वाले यज्ञ"** का नाम दिया. उनके रक्षकगण ऐसे छिद्र वाले यज्ञ करने वाले ब्राह्मण ऋषियों को काट कर उसी यज्ञ की आग में झोंक दिया करते थे. दसरथ ने राम को पैदा करने के लिए जो यज्ञ किए थे उसमें उसने विशेष प्रबन्ध किए थे कि उसके छिद्र वाले यज्ञों को कोई रक्षक नष्ट न कर दे.

2. उनका दूसरा महान काम था **"एक मर्द एक औरत की शादी"** का नियम बनाना तथा विवाह प्रथा चलाना. इस तरह उन्होंने धर्म के नाम पर किए जा रहे व्यभिचार पर रोक लगाई. महाभारत में "धर्मपुत्र" युधिष्ठर (वास्तव में अधर्म पुत्र) बताता है कि पुराने जमाने (सत्ययुग) में आर्य स्त्रियों पर कोई रोक नहीं थी. वे किसी सें भी यौन सम्बंध बना सकती थीं. यही आर्यों का सनातन धर्म है. जैसे हनुमान की मां अंजनि ने अपने पति केसरी की बजाए पवन सें व्यभिचार करके हनुमान को पैदा किया, अहिल्या ने इन्द्र सें सम्बंध बनाए, ब्रह्मा की बेटी पोतियों ने अपने दादा चाचा सें यौन सम्बंध बनाए. सबसें हैरानी की बात है कि ऋषि विश्वामित्र और उसके ससुर में पत्नियों की अदला बदली हो गई थी. उनके बच्चे पैदा हो गए तब उन्हें अपनी गलती पता लगी और उन्होंने अपनी अपनी पत्नि वापिस बदली!!

   आर्य जिसे स्वयंवर कहते थे असल में वहां दुल्हन दांव पर ही लगाई जाती थी. कोई भी शर्त जीतो और दुल्हन को ले जाओ. शर्त में भाग लेने वाला बूढ़ा, रोगी, या पहले सें ही शादीशुदा भी हो सकता था. दुल्हन को शर्त जीतने वाले के साथ जाना ही पड़ता था. उसमें उसकी हां या ना का सवाल ही नहीं उठता था. महाराज रावण ने दुल्हन को दांव पर लगाने वाले स्वयंवर की इस क्रूर प्रथा को बन्द किया तथा एक स्त्री एक पुरुष की शादी का नियम बनाया. **आज जो भारत में विवाह करने को जो रिवाज है कि पहले लड़की देख कर आते हैं फिर बाराती जाकर वधु को लेकर आते हैं यह महात्मा रावण द्वारा चलाई गई रक्ष–विवाह पद्धति के अनुरूप ही है.** विवाह के समय दिए जाने वाले सात वचन भी महात्मा रावण द्वारा बनाए गए हैं. कहा जाता है कि उन्होंने अपने वेद बनाए. उनके यही वेद हैं कि एक स्त्री एक पुरुष का सम्बंध हो, विवाह हो, सात फेरे हों, सात वचन हों. वर्ना ब्राह्मणिक आर्य या तो राम और अर्जुन की तरह अपनी बीवियां दांव पर जीत कर लाते थे या फिर कृष्ण की तरह उधाल कर लाते थे.

3. उन्होंने तीसरा महान काम यह किया कि उन्होंने अपने रक्ष–संस्कृति के लोगों में **विधवा विवाह** की प्रथा चलाई. जब रक्ष संस्कृति के मानने वाले बालि का कत्ल हुआ तो उसकी पत्नि तारा ने सुग्रीव के साथ घर बसा लिया. जब स्वयं महाराज रावण का कत्ल हुआ तो महारानी मंदोदरी ने विभीषण के साथ घर बसा लिया. लेकिन जब कृष्ण मरा तो उसकी बीवियां और रखैलें अपना पेट पालने के लिए वेश्यावृति करने पर मजबूर हुईं. कुन्ती माद्री जैसी अनेकों आर्य विधवाएं हैं जो सारी उम्र विधवा ही बनी रहीं. लेकिन ब्राह्मणिक समाज में आदमियों पर यह पाबंदी नहीं थी. जब पार्वती अपने बाप के यज्ञ मंडप में जल मरी तो शिव ने उसकी छोटी बहन को तुरंत अपना लिया. वह सारी उम्र रंडुआ नहीं रहा. आज जो विधवा स्त्री पुनः विवाह करने की सोचती है यह सब महात्मा रावण की ही देन है. भारत का स्त्री समाज सदा उनका ऋणी रहेगा. उनके मन में स्त्री के प्रति इतनी इज्जत थी कि जब वे सीता को ले गए तो उसे अपने रनिवास में नहीं रखा बल्कि अलग सें दूसरे घर में रखा. राम को जब शक हुआ कि सीता का गर्भ उसका नहीं है तो उसने उसे बिना बताए जंगल में फिंकवा दिया. यही अन्तर है रक्ष संस्कृति (सदाचार) और आर्य संस्कृति (अनाचार) में!

इसी लिए भगवान वाल्मिकी ने जब रामायण में अयोध्या और किष्किंधा के कस्बों का वर्णन किया तो इन अध्यायों को "अयोध्या कांड" तथा "किष्किंधा कांड" नाम दिया लेकिन जब उन्होंने महात्मा रावण की लंका नगरी का वर्णन किया तो उसे लंका कांड की बजाए "सुन्दर कांड" नाम दिया.

महात्मा रावण की तरह ही गुरू रैदास ने यज्ञों का विरोध किया और उन वेदों का खण्डन किया जो यज्ञों को धर्म बताते थे. उन्होंने कहा :

चारों वेद किए खण्डोति, जन रैदास करे डण्डोति!!

अर्थात मैं रैदास चारों वेदों का खण्डन करता हूं तथा इस बात का हर जगह ढिंढोरा पीटता हूं. कुछेक जगहों पर "डण्डोति" की जगह "दण्डोति" शब्द भी उल्लेख भी किया गया है. अतः जहां "दण्डोति" का प्रयोग हुआ है उस पद का अर्थ हुआ कि चारों वेदों का खण्डन करने के कारण लोग उनके सामने दण्डवत प्रणाम करते हैं. ऐसा सम्भव भी है क्योंकि उनके समय में ब्राह्मण पण्डे वेदों के आधार पर नित्य पशुओं की बलि देते थे. इससें लोग बहुत दुःखी थे.

उनके हमसहरी सतगुरु कबीर ने स्पष्ट कहा :

- **अंध सो दरपण वेद पुराणा**
- **अधरम को धरम बतावैं वेद**
- **अजामेध, गोमेध यज्ञ अष्मेध नरमेध, कहै कबीर अधर्म को धर्म बतावैं वेद!!**
  जीव हनै हिंसा करै प्रगट पाप सिर होय, निगम सुन ऐसे पाप की, सुरग गया ना कोय!!

अर्थात वेदों और पुराणों की उतनी ही उपयोगिता है जितनी अन्धे आदमी के लिए दर्पण की होती है. वेदों में जिस काम को धर्म कहा गया है वह वास्तव में अधर्म है. यज्ञ में बकरा काटना, गाय काटना, घोड़ा काटना और आदमी को काटना **अधर्म** है लेकिन वेद इस अधर्म को धर्म बताते हैं. जीव की हत्या करना पाप है चाहे यज्ञ में करो या कसाईखाने में करो. जीव हत्या का पाप हत्यारे के सिर लगता ही है. वेदों, पुराणों और भागवत में जो यज्ञ में पशु काटने (बलि देने) की कथाएं हैं वे पाप की कथाएं हैं. ऐसी कथा सुन कर कोई स्वर्ग नहीं जा सकता.

उन्होंने यज्ञ में पशु मार कर खाने का विरोध करते हुए कहा:

अंकुर खाए सो मानव, मांस खाए सो स्वान!
जीवित को जो मुर्दा करे उसे राक्षस जान!!

वे आगे बोले :

जैसे माँस पसु की, वैसे माँस नर की, रूधिर रूधिर एक सारा!
पसु मास भखे सब कोय, नरहिं न भखे सियारा !!

माटी की करे देवी देवा, काट काट जीव देइया !
जो तेरे है सांचे देवी देवा, खेत चरत क्यों न लेइया !!
कहै कबीर जो कुछ किया जिभ्या के स्वारथ, बदला परैगा देइया!!

वेदों में सिर्फ पशु मारने की ही कथाएं नहीं हैं बल्कि लाखों नर नारियों को कत्ल करने की भी कथाएं हैं. दयानन्द का कहना है कि भगवान ने वेद और दुनिया एक ही दिन बनाए हैं. वह तो अब जीवित नहीं है. अतः उसके चेलों सें पूछा जा सकता है कि अगर जिस दिन दुनिया बनी उसी दिन वेद बने तो वेदों में इन्द्र द्वारा जो लाखों आदमियों को मारने का जिक्र है वे उसने दुनिया बनने सें पहले कैसे मार दिए!

गुरू रैदास के हमसहरी गुरू कबीर ने साफ कहा:

हिन्दू मुए राम कहि, मुसलमान खुदाय! कहै कबीर सो जीवता, दुई में कभी न जाए!!

अर्थात हिन्दू तो राम कहते मर लिए और मुस्लिम खुदा कह कर मर लिए. कबीर साहिब का कहना है कि वही जीवित बचेगा जो दोनों सें दूर रहेगा.

भगती द्रविड़ उपजी : सतगुरु कबीर ने एक आश्चर्यजनक बात और कही. वे बोले : **भगती द्रविड़ उपजी.** उनके अनुसार भगती की परम्परा दक्षिण भारत में पैदा हुई तथा पूरे भारत में उन्होंने ही उसे फैलाया है. सभी जानते हैं कि महात्मा रावण द्रविड़ थे. जिन वीभत्स व अश्लील कर्मकांडों का सन्तों ने विरोध किया है, महात्मा रावण ने अपने राज्य में वही कर्म कांड बन्द करा कर वास्तविक धर्म की नींव रखी थी. सो कबीर साहेब के कहने अनुसार भगती की परम्परा द्रविड़ यानि महात्मा रावण सें आरम्भ हुई है. भगती की सबसें महत्वपूर्ण उपलब्धि अहिंसा है.

अहिंसा का किसी भी ब्राह्मणिक देवता या भगवान सें कभी कोई वास्ता नहीं रहा. अतः भगती का ब्राह्मणवाद सें भी कोई वास्ता नहीं है.

समस्त सन्तों की बाणी में में एक आश्चर्यजनक बात पाई जाती है कि सभी ने अपनी बाणी में स्पष्ट रूप सें राम पुत्र दसरथ को अपना राम मानने सें इंकार किया लेकिन किसी भी सन्त ने महात्मा रावण को बुरा नहीं बताया है. यह बड़ी आश्चर्य वाली बात है कि किसी भी सन्त ने उनकी बुराई नहीं की है. अगर किसी ने उनके बारे में कुछ कहा भी है तो बस इतना ही कहा है कि बलशाली होते हुए भी समय के चक्र में उन्हें पराजय का मूंह देखना पड़ा. अगर इस बात को हम गुरू कबीर के उपरोक्त बयान के साथ देखें तो ऐसा आभास होता है कि सन्तों को महात्मा रावण द्वारा अपनाई गई श्रमण परम्परा का पता था. कबीर साहेब ने अपने अंदाज में खुलासा कर दिया कि भगती की परम्परा महात्मा रावण के देश में उपजी है.

इसी पद में आगे कहा गया है कि रामानन्द उसे लेकर आया. ऐसा तो सम्भव ही नहीं है. रामनन्द और द्रविड़ भगती का कहीं मेल ही नहीं है. भगती सन्तों की परम्परा है, कट्टर ब्राह्मणवाद रामानन्द की परम्परा है. दोनों का कहीं कोई सम्बंध ही नहीं है. यह तो फिर भी माना जा सकता है कि भैंस के मूंह सें किसी ने वेद मन्त्र बुलवा दिए क्योंकि न तो किसी को भैंस के रंभाने का अर्थ पता चलता है और न ही किसी को वेद मन्त्रों के अर्थ का पता चलता है लेकिन रामनन्द द्वारा भगती लेकर आना वैसे ही है जैसे यह कहना कि अमरीकी बैलगाड़ी पर बैठ कर चांद पर गए!! हां, यह बिल्कुल सत्य है कि वेद तथा यज्ञ विरोधी द्रविड़ भगती का ही प्रचार सतगुरु कबीर और सतगुरू रैदास ने किया था.

श्राद्ध में गोमांस खाना : सत्ययुग अथवा वेदों के समय ब्राह्मण धर्म का एक नियम और भी था. वह यह कि ब्राह्मण किसी के पिता की मौत पर पिण्डदान करने के समय यजमान सें भरपूर मांस का आनन्द उठाते थे. विश्व के एक मात्र हिन्दू राज्य नेपाल में यह प्रथा आज भी जारी है. कुछ समय पहले नेपाल नरेश के पिण्डदान के समय वहां ब्राह्मणों ने माँस खाकर इस प्रथा को पूरा किया था. ब्राह्मणों का संविधान कहे जाने वाली मनुस्मृति के अनुसार श्राद्ध में ब्राह्मणों को माँस परोसना अनिवार्य है. मनु के अनुसार ऊंट को छोड़ कर एक ओर दांतों वाले सभी पशु भक्ष्य अर्थात खाये जा सकते हैं. (5.18) अगर कोई ब्राह्मण अथवा यजमान श्राद्ध के समय विधि पूर्वक माँस नहीं खाता तो वह 21 बार पशुयोनि में पैदा होता है. (5.35). ब्राह्मणों का गो-माँस खाना अनवरत चलता रहे, इसके लिए उन्होंने यथोचित नियम बनाए. गौतम धर्म सूत्र (7.16.25) के अनुसार **श्राद्ध में गो-माँस खाने सें पितर एक साल तक तृप्त रहते हैं.** (समु 3.80) **इसका अर्थ यह हुआ कि यजमान हर साल श्राद्धों में ब्राह्मणों को गो-माँस खिलाता रहे ताकि उनके पितर तृप्त रहें.** वायु पुराण के अनुसार गोमाँस खाकर पितर अधिक प्रसन्न होते हैं. मार्कण्डेय पुराण के अनुसार गाय का माँस खाने सें पितर 10 महीने तक तृप्त रहते हैं. (गोमाँस 71)

मरने के बाद कोई पितर बनता भी है या नहीं, कोई नहीं जानता. अतः श्राद्ध में ब्राह्मणों को गो-माँस खिलाने सें पितर तृप्त होते हैं या नहीं, कोई नहीं जानता परन्तु इतना निश्चित है कि श्राद्ध में ब्राह्मणों गो-माँस खाकर खूब तृप्त होते थे. श्राद्ध में गो-माँस के अतिरिक्त अन्य जानवरों का माँस खाने सें पितरों को कितनी तृप्ति मिलती है, उसकी सूचि इस प्रकार सें हैः (मनु 3.267—272)

सूअर = 10 मास	पक्षी = 5 मास	बकरी = 6 मास	कांटे वाली मछली = अनंत काल
मछली = 2 मास	बकरा = 12 मास	चित्र मृग = 7 मास	गेंडा = अनंत काल
हिरण = 3 मास	खरगोश = 11 मास	काला मृग = 8 मास	लाल बकरा = अनंत काल
मेढा = 4 मास	कछुआ = 11 मास	रूरू मृग = 9 मास	भैंसा = 12 मास

ब्राह्मणों की इस मांस लोलुपता के विरुद्ध सारे दलित सन्तों ने आवाज उठाई. कबीर साहिब ने अपने दिल की बात इस प्रकार सें कही.

अंकुर भखे सो मानवा, माँस भखे सो स्वान,
जीवत को मुरदा करे, सोइ राकस परमान!

अर्थात अन्न खाने वाला इन्सान है तथा मांस खाने वाला कुत्ते के समान है. जो आदमी जीवित प्राणी को मार देता है वही राक्षस है.

नियोग यानि धार्मिक व्यभिचार : ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म में एक प्रथा ऐसी है जो उसे दुनिया भर के अन्य धर्मों सें अलग करती है. वह प्रथा है नियोग प्रथा. नियोग का सीधे शब्दों में अर्थ है : गैर मर्द सें यौन सम्बंध बना कर

सन्तान पैदा करना. राम, हनुमान, वेदव्यास, कर्ण और पांडव इसकी मुख्य उदाहरण हैं. दुनिया के अनेकों धर्माधिकारी हुए हैं जिन्होंने धर्म की आड़ में स्त्रियों का यौन शोषण किया है मगर दुनिया में केवल ब्राह्मणधर्म ही ऐसा सिस्टम है जिसमें व्यभिचार को धर्म का नाम दे रखा है. ब्रह्मा सें लेकर दयानन्द तक हर ब्राह्मणधर्मी इस घिनौनी प्रथा की वकालत करता है. बाकी देशों में जैसे जैसे जनता समझदार होती गई वहां सें ऐसे धर्मों का नाश हो गया चाहे वह रोम हो या युनान हो. वहां के लोग अपने पूवर्जो द्वारा किए गए इन कुकर्मों को आज घृणा की नजर सें देखते हैं.

यह सिर्फ ब्राह्मणधर्म या ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म ही है जहां ऐसे व्यभिचारी आज भी देवता और भगवान कह कर पूजे जाते हैं. आज भी दयानन्द का "सत्यार्थ प्रकाश" नियोग की वकालत करता है. आज भी दयानन्द का आर्य समाज हर स्त्री को दस पुत्र पैदा करने का वैदिक आदेश देते हुए कहता है कि अगर उसका पति सन्तान पैदा करने में असमर्थ है तो वह ब्राह्मणों सें नियोग (व्यभिचार) करके सन्तान पैदा करे. किसी भले आदमी ने उससें पूछा कि यह व्यभिचार तो पाप है. दयानन्द ने उत्तर दिया पाप तो नियोग रोकने में है. (समुल्लास 4) हैरानी की बात है कि आज आर्य समाज के बड़े बड़े पदाधिकारी करोड़ों के आर्य समाज मंदिर बना कर ठाठ कर रहे हैं लेकिन उनमें सें कोई भी अपने गुरू का सच्चा भगत नहीं है. दयानन्द के नाम पर कमाई करने को सभी तैयार हैं मगर कोई भी अपनी बहन, बेटी या पत्नि का नियोग नहीं करवाता जबकि उनके भगवान के अनुसार नियोग न करवाना पाप है!!

समस्त दलित सन्तों ने धर्म के नाम पर किए जा रहे नारी शोषण का विरोध किया – चाहे वह सती प्रथा हो या नियोग प्रथा हो या तुलसी प्रथा (नारी ताड़न की अधिकारी) हो. सभी दलित सन्तों ने नारी को माँ कहा. भगवान वाल्मिकी ने माँ के चरणों में स्वर्ग बताया तो गुरू रैदास ने उसे वीर और सन्त जननी कहा. और यह तो कल्पना सें भी बाहर की बात है कि गुरू रैदास ऐसे ब्राह्मणधर्म को अपना धर्म मानें जो नारी को मात्र भोग की वस्तु मानता हो.

ईश्वर में विश्वासः ब्राह्मणवाद का एक मुख्य आधार है कि यह ईश्वर में विश्वास रखता है. उनके तीन मुख्य भगवान हैं – ब्रह्मा, विष्णु और महेश. उनका दावा है कि ब्रह्मा ने सृष्टि बनाई, विष्णु उसे बनाए हुए है तथा शिव उसका नाश करता रहता है. इन तीनों ने कई बार धरती पर जन्म या अवतार भी लिया है लेकिन किसने कौन कौन सा अवतार लिया है ब्राह्मण ग्रन्थ ही इस बात पर एक दूसरे के विरोधी हैं. एक पुराण में दस अवतार बताए गए हैं तो दूसरे में 21 अवतार बताए गए हैं. कई बार ऐसा भी हुआ हैं कि एक भगवान का अवतार दूसरे भगवान के अवतार सें लड़ने मरने के लिए युद्ध भी कर बैठा. कई बार ऐसी भी कथाएं घढ़ी गईं कि एक ही भगवान के दो अवतार आपस में भिड़ गए. ब्राह्मण ग्रन्थ ऐसे किस्सों सें भरे पड़े हैं कि उनके तीनों भगवान रोजाना ही आपस लड़ते रहते थे कि वही सबसें बड़ा है.

गुरू रैदास और उनके हमसहरी गुरू कबीर ने कभी भी किसी भी ब्राह्मणिक भगवान को भगवान नहीं माना! उन्होंने स्पष्ट रूप सें सदाचार और सच्चाई को ही भगवान का दर्जा दिया. **इतना ही नहीं गुरू रैदास ने तो भगवन बुद्ध की तरह कभी ईश्वर में भी विश्वास व्यक्त नहीं किया.** उन्होंने भगवान और स्वयं को एक दूसरे का पूरक बताया. वे बोले : तोहि मोहि अन्तर कैसा, कनक कटिक जलतरंग के जैसा. अर्थात भगवान और उनमें कोई अन्तर नहीं है. जैसे सोनेऔरउससेंबने जेवर में कोई अन्तर नहीं होता. पानी और उसमें उठने वाली लहरों में कोई अन्तर नहीं होता वैसे ही आदमी और भगवान में कोई अन्तर नहीं होता. सन्तों के भगवान को नरबलि, गोबलि, सोम रस आदि की जरूरत नहीं होती.

उनके हमसहरी गुरू कबीर ने भी ईश्वर के अस्तित्व को साफ तौर पर स्वीकार नहीं किया. उन्होंने तो स्वयं को परमात्मा का रूप घोषित किया है. वे बोले :

राम कबीरा एक हैं कहन सुनन में दोय!
हम ही आप कबीर कहावा. (कबीर समग्र 158)

निष्कर्ष : गुरू रैदास की बाणी सें निम्न तथ्य स्पष्ट होते हैं कि :

1. उन्होंने चारों वेदों का खण्डन किया जिस कारण लोगों ने उनको दण्डवत प्रणाम किया.
2. उन्होंने उन बातों को अधर्म बताया जिन्हें वेद धर्म बताते हैं. अतः उन्होंने सीधे सीधे वेदों को अधर्म की पुस्तके बताया.
3. उन्होंने यज्ञ, तप, योग आदि सभी ब्राह्मणिक पाखण्डों का खण्डन किया.
4. उन्होंने ब्राह्मणधर्म की जान वर्ण व्यवस्था यानि ब्राह्मण सबसें ऊंचा तथा शूद्र सबसें नीचा है, इस मत का बूरी तरह मर्दन किया.

5. उन्होंने चारों आश्रमों में सें किसी को भी नहीं अपनाया और न ही किसी सें उन्हें अपनाने के लिए कहा.
6. उन्होंने ब्राह्मणवाद के चारों प्रयोजनों – धर्म अर्थ काम और मोक्ष का पूरी तरह सें खण्डन किया.
7. मंदिरों, अवतारों, त्रिमूर्ति, देवों, ब्राह्मणों सभी को झूठ और धोखा बताया.
8. उन्होंने राम पुत्र दशरथ को तो सिरे सें ही नकार दिया. अन्य ब्राह्मणिक देवों को इस लायक ही नहीं समझा कि उस पर दो लाइनें तो लिखते!

इस तरह कुल मिला कर ब्राह्मणिक हिन्दू कहे जाने के समस्त पक्षों का उन्होंने खण्डन कर दिया. अतः गुरू रैदास किसी भी प्रकार सें हिन्दूधर्मी नहीं थे. जो लोग उन्हें जान बूझ कर ब्राह्मणधर्मी बताते हैं अथवा उनका गंगा व राम आदि सें नाता जोड़ते हैं वे निशिचत रूप सें धूर्त हैं.

गुरू रैदास : श्रमण संस्कृति के ध्वज वाहक

भारत में प्राचीन काल सें दो संस्कृतियां चली आ रही हैं. एक श्रमण अथवा सन्त संस्कृति जिसके मुख्य ध्वज वाहक भगवन बुद्ध और महावीर स्वामी थे. इस संस्कृति का नारा था सदाचार और नैतिक जीवन सर्वश्रेष्ठ है. दूसरी संस्कृति ब्राह्मणवाद की थी जिसके मुख्य ध्वज वाहक ऋषि और देव थे. उनका नारा था खाओ, पीओ और ऐश करो. ब्राह्मण ऋषियों और देवों में सें एकाध को छोड़ कर शेष सभी शराब, शबाब और कबाब यानि सुरा, सुन्दरी और सामिष के भोगी थे. उन्होंने धर्म के नाम पर अनाचार फैला रखा था. महावीर और बुद्ध ने लगभग अढाई हजार साल पहले ब्राह्मण संस्कृति पर लगाम लगाई और लोगों को सदाचार और सच्चाई की राह दिखाई.

सम्राट अशोक ने भगवान बुद्ध के सदाचार के संदेश को पूरी दुनिया में फैला दिया. उस समय ब्राह्मणधर्म अपनी अंतिम सांसें ले रहा था. अनाचारी यज्ञ बन्द हो चुके थे. तब ब्राह्मणों ने अपना चिर परिचित रास्ता अपनाया. उन्होंने सम्राट अशोक के पौत्र सम्राट वृहदर्थ की हत्या कर दी. ब्राह्मण पुष्यमित्र राजा बन बैठा. उसने बौद्धों का कत्लेआम किया लेकिन लोगों ने सदाचार का मार्ग नहीं छोड़ा. तब ब्राह्मणों ने नई चाल चली. उन्होंने यज्ञों में बलि देना बन्द कर दिया. परस्त्री गमन पर भी अंकुश लगाया. लेकिन समय के साथ जैसे जैसे उनकी सत्ता पर पकड़ मजबूत हुई वे फिर सें अपने पुराने रास्ते पर आ गए. गुप्तकाल यानि चौथी सदी ईस्वी में वही वीभत्स और अश्लील यज्ञ फिर सें शुरू कर दिए गए. धर्म के नाम पर अनाचार फिर सें पनपने लगा.

गुरू रैदास के समय भी ब्राह्मण धर्म के नाम पर बहुत से अनाचार करते थे. बलि केवल यज्ञों में ही नहीं दी जाती थी बल्कि अब तक उन्होंने काली दुर्गा जैसी देवियां भी घढ़ ली थीं, उन्हें भी पशु बलि के साथ साथ मानव बलि भी दी जाने लगी थी. अश्वमेध यज्ञ में यजमान पत्नि का घोड़े सें समागम जरूरी बना दिया गया था. स्वयं दयानन्द मानता है कि गोरखपुर की रानी ऐसे ही धार्मिक कांड में मारी गई थी.

सतगुरु रैदास और उनके हमसहरी सतगुरु कबीर ने ब्राह्मणवाद को मिटाने के लिए भगवान बुद्ध की राह अपनाई. उन्होंने ब्राह्मणधर्म के अनाचार के विरुद्ध श्रमण संस्कृति का सदाचार का दीप जलाया. पूरे भारत में दलित सन्तों ने अपने आदि गुरू भगवन बुद्ध की आवाज को पुनर्जीवित किया कि अनाचारी ब्राह्मणधर्म का नाश हो. सभी सन्तों ने लोगों को धर्म की वही राह बताई जो भगवन बुद्ध ने बताई थी. **यह नोट करने वाली बात है कि ब्राह्मणों के चार वेद, अठारह पुराण, एक सौ आठ उपनिषद, एक गीता तथा दो महाकाव्य हैं. इनमें सें किसी भी ग्रन्थ में कहीं भी सदाचार पर चलने की शिक्षा नहीं दी गई है. इन ग्रन्थों को कोई भी नायक सदाचारी नहीं है. सभी ने ब्राह्मणों को दान देने, गंगा में डुबकी लगाने और यज्ञ बलि आदि पाखण्डों व कर्मकांडों को ही धर्म बताया है.**

सभी सन्तों की तरह गुरू रैदास ने भी भगवान बुद्ध द्वारा बताए गए सदाचार के मार्ग को ही धर्म माना. बुद्ध धर्म और सन्त रैदास की बाणी की तुलना करने पर यह स्पष्टतः सिद्ध हो जाता है कि गुरू रैदास सच्चे बौद्ध थे. आगे दिया गया उनकी तथा भगवन बुद्ध की बाणी का तुलनात्मक सार इस बात की पुष्टि करता है.

सन्तों की भक्ति यानि भगवान बुद्ध का मध्यम मार्ग

भगवन बुद्ध के धर्म को मध्यम मार्ग का धर्म कहा जाता है. उन्होंने कहा कि किसी बात की अति करने पर ही आदमी को दुख होते हैं. उन्होंने कहा कि आदमी को इतना भोला भी नहीं होना चाहिए कि हर कोई उसे मिठाई की तरह हड़प कर जाए और न ही इतना बुरा होना चाहिए कि हर कोई उसे जहर की तरह परे फैंक जाए. बुद्ध तानपुरे की उदाहरण देते हुए समझाते थे कि जैसे तानपुरे की तारें अधिक ढीली कर दी जाएं या फिर बहुत ज्यादा कस दी जाएं तो दोनों ही स्थितियों सुर नहीं निकलेंगे. इसी तरह आदमी को मध्यम मार्ग अपनाना चाहिए.

उदाहरणतः हिंसा करने के बारे में वे बोले कि बिना कारण पशुओं या आदमी को मारना पाप है. अतः यज्ञों में पशु मारना और उन्हें खाना पाप है. लेकिन अगर कोई जानवर आदमी पर हमला कर दे तो अपनी जान बचाने के लिए उसे मारना पाप नहीं है. आदमी कहीं जंगल आदि में भटक जाए और खाने को कुछ न मिले तो स्वयं को जिन्दा रखने के लिए पशु को मार खाना पाप नहीं है लेकिन जीभ के स्वाद के लिए किसी भी प्राणी को मार कर खाना पाप है. अपने भगवन बुद्ध का संदेश आगे फैलाते हुए कबीर साहेब बोले :

माटी की करे देवी देवा, काट काट जीव देइया !
जो तेरे है सांचे देवी देवा, खेत चरत क्यों न लेइया !!
कहै कबीर जो कुछ किया जिभ्या के स्वारथ, बदला परैगा देइया!!

आज जो हम भारतीय बीच का रास्ता चुनने की बात करते हैं यह भगवन बुद्ध का ही संदेश है जिसे श्रमण संस्कृति के सन्तों ने ही हम तक पहुंचाया है. सन्त कबीर ने कहाः

कबीर मध्य अंग जेको रहै, तो तिरत न लागे बार!
दुई दुई अंग सें लागि करै, डूबत है संसार!!

अर्थात जो आदमी मध्यम मार्ग अपनाता है उसे संसार के दुखों सें छुटकारा पाने में देर नहीं लगती लेकिन जो आदमी दोनों किनारों पर चलता है वह डूब जाता है. दोनों किनारे यानि भोग और सन्यास, पारस और माटी, अमृत और जहर आदि.

गुरू रैदास सन्त थे. अतः हर कोई प्रचारित करता है कि उन्होंने भक्ति की. लेकिन उनकी भक्ति ब्राह्मणवादी भगवाधारियों की तरह नहीं थी. उन्होंने कभी किसी मूर्ति की पूजा नहीं की. उन्होंने कभी किसी मंदिर में घण्टियां नहीं बजाईं. उन्होंने कभी गंगा में स्नान नहीं किया. कभी यज्ञ नहीं किया कभी व्रत नहीं किया. तो प्रश्न उठता है कि उन्होंने कैसी भक्ति की. उन्होंने वही किया जो भगवन बुद्ध ने कहा. उन्होंने सदाचार का पालन किया. अनेक लेखक उनकी भक्ति को सगुण निर्गुण के शब्द जाल में उलझाते हैं लेकिन सच्चाई यही है कि उन्होंने कभी भी किसी भगवान की "पूजा" नहीं की! उनके अनुसार भगवान तो आदमी के अंदर बसता है. सो बाहर वाले भगवान की पूजा की ही नहीं जा सकती. चाहे वह सगुण हो या निर्गुण हो! वे बोले :

- **तोहि मोहि अंतर कैसा, कनक कटिक जल तरंग के जैसा**! अर्थात मेरे और भगवान में कोई अन्तर नहीं है जैसे सोने और जेवर में तथा पानी और उसकी लहरों में कोई अन्तर नहीं होता वैसे ही भगवान और इन्सान है.
- जो तुम दीपक तो हम बाती अर्थात मैं और भगवान एक दूसरें के पूरक हैं.
- मन ही पूजा मन ही धूप, मन ही सहज सरूप! पूजा अर्चना न जानूं तेरी, कहै रैदास यह गति मोरी!!

इतना कुछ कहने के बावजूद भी उन्हें किसी भगवान का भक्त बताया जाए तो दुख की बात है. उनकी भक्ति केवल सदाचार, सच्चाई और संतोष के मार्ग पर चलने का ही नाम है. भक्ति के नाम पर आडम्बर और पाखण्ड करने वालों के बारे में वे कहते हैं:

ऐसी भगती न होय रे भाई,
राम नाम बिन जो कुछ करिये, सो सब भरम कहाई,
भगति न रस दान, भगति न कथा ज्ञान,
भगति न वन में जाई, भगति न गुफा खुदाई,
भगति न इन्द्री बांधा, भगति न जोग साधा,
भगति न निद्रा साधे, भगति न बैराग बांधे,
भगति न आहार घटाई, भगति न वेद बड़ाई,
भगति न मूंड मुंडाए, भगति न माला दिखाए,
भगति न चरन धुलाए, भगति न मुनी कहाए,
आपो गयो तब भगति पाई,
ऐसी भगति है मेरे भाई!!
कह रैदास आत्म थिर भई, तबहि सब निधि पाई!!

अर्थात इस को भक्ति नहीं कहते जब राम नाम के बिना कुछ किया जाए. यहां स्पष्ट कर दें कि उन्होंने हर प्रकार की शंका को दूर करते हुए कहा है : **रैदास हमारे राम जी दसरथ का सुत नांहि**! अतः जब गुरू रैदास राम

नाम की बातें करते हैं तो उनका कहना का तात्पर्य होता है कि हम सदाचार की बातें करें. राम पुत्र दसरथ का नाम वे नहीं लेते. वे आगे कहते हैं दान देना, कथा सुनना, वन में जाना, गुफा में रहना, योग द्वारा इन्द्रियों को बांधना, भगवा धारण करना, नींद न लेना, व्रत करना, वेदों के गुण गाना, सिर मुंडाना, माला फेरना, ब्राह्मणों के पैर धोना, मुनी कहलाना आदि आडम्बर भगति नहीं हैं. जब आदमी स्वयं को संयत कर लेता है यानि निर्वाण की स्थिति में ले आता है और जब वह स्वार्थ त्याग देता है यानि बहुजन का भला सोचता है उसी को भक्ति कहते हैं.

गुरू रैदास ने भक्ति की जो परिभाषा दी है वह बिलकुल भगवन बुद्ध के धर्म की परिभाषा सें मेल खाती है. भगवन बुद्ध ने घर त्याग देने के बाद छः साल तक इस बात पर मनन किया कि आदमी को दुख क्यों होते हैं तथा उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है. यही उनके ज्ञान का आधार है. उन्होंने किसी भगवान की तपस्या नहीं की थी. उनका भी यही आहवान था कि आदमी को मात्र अपने भले की बजाए बहुजन के भले के लिए काम करना चाहिए. बहुजन के भले के लिए गए कामों को ही उन्होंने धर्म माना. भगवान बुद्ध ने **"बहुजन हिताय बहुजन सुखाय"** का आहवान किया था जो कि उनके धर्म का मूल आधार है.

1. **भगवन बुद्ध के चार सत्य :** भगवन बुद्ध ने कहा इस दुनिया में चार सत्य हैं :

   पहला सत्य यह है कि दुनिया में हर प्राणी को कोई न कोई दुःख अवश्य है. बुद्ध के इसी मन्त्र को दोहराते हुए गुरू नानक देव ने कहा : नानक दुखिया सब संसार.

   दूसरा सत्य है कि दुःखों का कारण तृष्णा है. तृष्णा यानि कभी न समाप्त होने वाली इच्छाएं. आदमी की कुछ जरूरतें अथवा आवश्यकताएं होती हैं. जैसे ही वे जरूरते पूरी होती हैं आदमी संतुष्ट हो जाता है तथा और अधिक पाने की इच्छा नहीं रहती. जैसे रोटी के लिए भूख लगती है तथा भोजन खाते ही शांत हो जाती है. शरीर में पानी की कमी होने पर प्यास लगती है तथा पानी पीते ही प्यास शांत हो जाती है. लेकिन तृष्णा के मामले में उलटा हिसाब है. जितना आदमी पाता है उतनी ही तृष्णा बढ़ती है. धन, ओहदे या ताकत की तृष्णा कभी शांत नहीं होती. इसी लिए आदमी और अधिक पाने के चक्कर में दुखी होता है.

   तीसरा सत्य है कि कोई दुख अलौकिक नहीं है. सभी दुख इसी दुनिया के हैं तथा यहीं दूर किए जा सकते हैं. **कोई भी दुख लाईलाज नहीं है यानि कोई दुख ऐसा नहीं है कि उसका समाधान न हो.** हर दुख दूर किया जा सकता है. तृष्णा पर काबू पाना दुखों सें छुटकारा पाने का सीधा रास्ता है. दुखों सें बचने के लिए भगवन बुद्ध ने कहा कि आदमी हर वस्तु को कम सें कम ग्रहण करे. अर्थात कम सें कम वस्तुओं को अपने पास रखे. जितनी ज्यादा वस्तुएं आदमी के पास होंगी उनके खोने का उतना ही अधिक दुख होगा. इसलिए आदमी न्यूनतम सें गुजारा करे. फकीर या भिक्षु के पास सिर्फ अपना शरीर होता है इसलिए उसे सिर्फ अपने शरीर का दुख होता है राजा पूरे देश का मालिक होता है अतः उसे पूरे देश का दुख होता है. कहीं बाढ़ आ जाए, कहीं बगावत हो जाए या कोई दुश्मन हमला कर दे राजा को सारे ही दुख झेलने पड़ते हैं.

   चौथा सत्य है कि दुखों को दूर करने का रास्ता है कि अष्टांगिक मार्ग अपनाओ. अष्टांगिक मार्ग भगवन बुद्ध की दुनिया को दी गई अनमोल सौगात है. आज जो हम सदाचार, सच्चाई, सब्र, संतोष की बातें करते हैं वे सब इसी अष्टांगिक मार्ग के ही हिस्से हैं.

2. **अष्टांगिक मार्ग :** अष्टांगिक मार्ग यानि आठ अंगों वाला रास्ता. तृष्णा को दूर करने के लिए भगवन बुद्ध ने निम्नलिखित आठ सीधे और सरल मार्ग बताए हैं.

   पहला अंग : सही दृष्टि :– भगवन बुद्ध के अनुसार दुख का एक कारण है : मनुष्य में अज्ञान, अविद्या अथवा अंधविश्वासका होना. विद्या प्राप्ति सें अज्ञान और अंधविश्वास सें पैदा होने वाले दुखों का नाश होता है. साधारण सी उदाहरण लें. अनपढ़ आदमी किसी भी सरकारी दफतर में जाता हुआ घबराता है लेकिन पढ़े लिखे आदमी को ऐसी कोई परेशानी नहीं होती. अंधविश्वासी आदमी बीमार होने पर झाड़ फूंक करवाने बैठ जाता है और दुख पाता है. सही समझ वाला आदमी सही डाक्टर या वैद्य सें इलाज करवा लेता है. अतः ज्ञान प्राप्ति दुख दूर करने का साधन है.

   भगवन बुद्ध ने धर्म और सत्य की परिभाषा देते हुए बोले किसी बात को इसलिए मत अपनाओ कि ऐसा धर्म ग्रन्थों में कहा गया है, अथवा ऐसा किसी बड़े आदमी ने कहा है, अथवा ऐसा सदियों सें लोग करते आ रहे हैं. किसी बात को अपनाने लायक धर्म और सत्य तभी मानो जब वह बहुजन के हित में हो तथा आपको स्वयं अपने विवेक सें भली महसूस होती हो.

   सतगुरु रैदास ने भगवन बुद्ध की बात दोहराते हुए कहा :

   अविद्या अहित कीन, ताते विवेक दीप भया मलीन!

जहां अंधविश्वास होय, वहां सत्तपुरुष नांहि!!
रैदास सत्त सोई जानिए, जो अनुभव हो मन मांहि!!

अर्थात अज्ञान अहित करता है उससें अच्छे बुरे की परख करने वाली बुद्धि मन्द पड़ जाती है तथा जहां अन्धविश्वास हो वहां सच्चे आदमी का वास नहीं होता. अंधविश्वासों में पड़ कर आदमी स्वयं तो दुखी होता ही है और दूसरों को भी दुख देता है. सत्य वही है जो आदमी अपने मन सें अनुभव करता है

दूसरा अंग : सही संकल्प :– भगवन बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग का दूसरा अंग है कि आदमी यह संकल्प करे कि वह मात्र अच्छाई के लिए अपनी इच्छाएं रखेगा. बुरे कामों सें अपने आप को दूर रखेगा. गुरू रैदास की पूरी बाणी भगवन बुद्ध के इसी मूल मन्त्र के इर्द गिर्द घूमती है. वे बोले : **नर को नीच कर डाले है ओछे करमों की कीच!**

तीसरा अंग : सही वाणी :– भगवन बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग का तीसरा अंग है कि आदमी को सत्य बोलना चाहिए और जितनी जरूरत हो उतना ही बोलना चाहिए. झूठी, व्यर्थ और मूर्खतापूर्ण बातें सुनने और करने वाले दोनों को दुख देती हैं. चुगली क्षणिक रोमांच देती है मगर अन्त में सबको दुख ही देती है, गाली हमेशा सभी को दुखी करती है. बुद्ध बोले लोगों को इस प्रकार की बातें नहीं करनी चाहिए,

गुरू रैदास ने भगवन बुद्ध का अनुसरण करते हुए कहा :

बोलत बोलत बढ़ै व्याधि, बोल अबोल जावै!
बौलै बोल अबोल... तब ही मूल गवावै!!

जो अठसठ तीरथ नहावै, द्वादस सिला पुजावै!
जो कूप तड़ा दवावै, करै निन्दा सब बिरथा जावै!

अर्थात अधिक बोलने सें कलेश होता है तथा काम की बात भी बेकाम चली जाती है. और अगर कोई न करने योग्य बातें करता है तो अपनी इज्जत गंवाता है. अतः आदमी को सोच समझ कर सही बोलना चाहिए. चाहे कोई दुनिया भर के तीर्थ नहा ले, सभी देवों की पत्थर की मूर्तियों के आगे माथा रगड़ ले चाहे कूएं भर कर दान दे लेकिन जो अगर वह दूसरे लोगों के बारे में झूठी बातें (निन्दा) करता है तो सब व्यर्थ जाता है.

चौथा अंग : सही काम :– भगवन बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग का चौथा अंग है कि आदमी को सही काम करने चाहिए. उसका व्यवहार दूसरे लोगों के साथ वैसा ही होना चाहिए जैसा वह चाहता है कि दूसरे लोग उसके साथ करें. अतः हर आदमी को चाहिए कि सदाचारी कार्य करे तथा सबके साथ अच्छा व्यवहार करे. गुरू रैदास ने बुद्ध–वचन को ही दोहराते हुए कहा : **सत्य, संतोष, सदाचार; जीवन के ये मूल आधार!**

पांचवां अंग : नेक कमाई :– भगवन बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग का पांचवां अंग है कि आदमी को नेक कमाई करनी चाहिए. अपने खून पसीने की कमाई सें अपना और अपने परिवार का पेट भरना चाहिए. दूसरे लागों का हक नहीं मारना चाहिए. कमजोर का शोषण नहीं करना चाहिए. गुरू रैदास ने अपनी बाणी में कहाः

रैदास श्रम कर खाइये, जो लो पार लगाए!
नेक कमाई जो करे कभी न निसफल जाए!!

श्रम को ईश्वर जान के जो पूजै दिन रैन!
रैदास उसे संसार में मिले सदा सुख चैन!!

अर्थात मेहनत करके खाने में ही शांति मिलती है. नेक कमाई हक हलाल की कमाई का फल हमेशा मिलता है और अच्छा फल मिलता है. उन्होंने लोगों सें मंदिर में घण्टियां बजाने की बजाए मेहनत करने को ही भगवान की असली पूजा मानने का आहवान किया है. जो आदमी अपने खून पसीन की कमाई करके खाता है उसे दिन और रात चौबीसों घण्टे सुख चैन मिलता है.

यहां यह कहना गलत नहीं होगा कि ब्राह्मणों के किसी ग्रन्थ में नेक कमाई करने की शिक्षा नहीं दी गई है. वहां तो जूआ खेलने वाले को भगवान का परम मित्र या भक्त कहा गया है. वहां महापाप की कमाई करने वाले को भी ब्राह्मणों को दान देने पर मोक्ष की गारंटी दी गई है.

छठा अंग : सही प्रयत्न :– भगवन बुद्ध ने कहा कि आदमी को चाहिए कि वह अपने मन, वचन और कर्म सें किसी का बुरा न करे. अर्थात न किसी का बुरा सोचो, न किसी को बुरा बोलो और न किसी का बुरा करो. ऐसे ही अपने मन वचन और कर्म सें बुरी इच्छाओं को हटाओ तथा नेक इच्छाओं को बढ़ाओ. इस

बुद्ध–वचन को दोहराते हुए गुरू रैदास कहते हैं : **सांचा सुमरिन नाम बिसासा, मन वचन कर्म कहै रैदास!!** अर्थात मन वचन कर्म सें सच्चे मार्ग पर चलना ही भगवान का नाम लेना है.

सातवां अंग : सही स्मृति :– भगवान बुद्ध ने कहा कि मन ही सब चीजों का केन्द्र है. हमारे सभी अच्छे और बुरे काम मन द्वारा ही संचालित होते हैं. अतः हर इन्सान को चाहिए कि चह अपने मन को सदाचार पर एकाग्र करे. आदमी अपने मन में सदा कुशल विचार बनाए रखे तथा अकुशल विचारों को त्याग करे. गुरू रैदास कहते हैं:

मन ही पूजा, मन ही धूप, मन ही सहज सरूप!
सो मन चीन्ह जो मन को खाए, बिन दौड़े तिलोक समाए!
जो मन बांधै सोई बांध, अमावस में ज्यों दीखै चांद!!

अर्थात आदमी का मन ही भगवान के समान है. मन को काबू करना ही उसकी पूजा है. उन विचारों को काबू में करो जो मन को बहकाते हैं. बुरे विचार आदमी को भटकाते हैं. दुनिया भर की वस्तुएं पाने के लिए आदमी को लालायित करता है. जो आदमी अपने मन को काबू में कर लेता है उसके जीवन सें दुख वैसे ही दूर हो जाते हैं जैसे अंधेरी रात में चंद्रमा के आने सें अंधेरा भाग जाता है.

आठवां अंग : सही समाधि :– भगवन बुद्ध ने कहा कि ऊपर बताए गए सात कार्य करने में पांच बाधाएं मन को विचलित करती हैं : लोभ, द्वेष, आलस्य, शक और अनिश्चय. इन पांचों को मन की समाधि अथवा एकाग्रता द्वारा दूर किया जा सकता है. जब आदमी का मन पक्के तौर पर एकाग्र हो जाए तथा मन सें लोभ द्वेष की भावना निकल जाए तो यह समाधि की अवस्था कहलाती है. भगवन बुद्ध के इसी संदेश को आगे बढ़ाते हुए गुरू रैदास बोले :

सत्य, संतोष, और सदाचार, जीवन के हैं आधार!
रैदास वे नर भये देवता, जिन्ह त्यागे पंच विकार!!
पांचों थकित भये जहां, थिति पाई वहां !!

अर्थात जहां यह पांचों रोग थक जाते हैं अर्थात आदमी पर अपना असर करना छोड़ देते हैं वहीं आदमी "थिति" यानि स्थिरता पा लेता है. स्थिरता तभी होती है जब मन काबू में हो जाता है. यही समाधि की स्थिती है.

ब्राह्मणिक तपस्या बनाम श्रमणिक समाधि : यह दोनों एक जैसी वस्तु नहीं हैं. उनमें दिन रात का अंतर है. तपस्या का अर्थ है आसन में बैठना और कई सालों तक उनके किसी भगवान का नाम जपते रहना. फिर एक दिन ब्रह्मा या उनका कोई दूसरा भगवान आता है और उसे वरदान देता है. तपस्या सें उठ कर वह प्राणी निश्चिंत होकर वह सारे कुकर्म करता है जो आम आदमी करने की सोचता भी नहीं. सारे ब्राह्मण ग्रन्थ ऐसे किस्सों सें भरे पड़े है. जैसे नारद ने तपस्या करने बाद चुगलखोरी में कसर नहीं छोड़ी, दुर्वासा ने गुस्सा नहीं छोड़ा, काम वासना तो किसी ऋषि ने न कभी तपस्या सें पहले छोड़ी और न ही तपस्या के बाद छोड़ी!

श्रमणिक समाधि का मूल है कि आदमी अपने मन को काबू करे ताकि वह उसे सही मार्ग सें न भटकाए. मन को अपने बस में करने के लिए किसी आसन में बैठने की आवश्यकता नहीं होती और न ही किसी का नाम जपने की जरूरत होती है. मन की समाधि अर्थात मन को साधने का कार्य बहुजन हित के लिए किया जाता है अर्थात मन को बुरे कामों सें बचने तथा नेक काम करने के लिए साधा जाता है जबकि तपस्या केवल निज स्वार्थ के लिए की जाती है. ब्राह्मणिक ग्रन्थों में जितने भी तपस्या के किस्से हैं सबके सब निजि लाभ के लिए किये गए है.

3. **पाँच भ्रांतियां** : भगवन बुद्ध के समय भी धर्म के नाम पर ब्राह्मण बहुत पाखण्ड तथा अन्याय करते थे. उस समय यज्ञ करना उनका मुख्य कार्य था. वे रोजाना सैंकड़ों पशु यज्ञ में काट कर खा जाते थे. आजकल उन्होंने यज्ञ में मांस खाना तो छोड़ दिया है मगर उनका मोक्ष और आत्मा परमात्मा का धन्धा आज भी जारी है. भगवन बुद्ध ने इन सब कुकर्मों के विरुद्ध आवाज उठाई. उन्होने धर्म के नाम पर की जा रही पांच भ्रांतियों सें लोगों को बच कर रहने का आहवान किया. वे पांच भ्रांतियां हैं:

पहली भ्रांति : वेद :– ब्राह्मणों ने पहली भ्रांति यह फैला रखी है कि वेद भगवान द्वारा बनाए गए हैं तथा उनमें लिखी बातों को मानना धर्म है. वेदों में यज्ञ के समय दारू पीना, पशुओं को यज्ञ की आग में भून कर

खाना और पराई स्त्री सें यौन सम्बंध बनाना धर्म कहा गया है. घर आए मेहमान खासकर वेदज्ञ ब्राह्मण को मधुपर्क खिलाना अनिवार्य था और कोई भी मधुपर्क बिना मांस के नहीं बन सकता था. उन्होंने पूरे भारत को कसाईघर बना रखा था. बुद्ध ने ऐसे कुकर्म कराने वाले वेदों को भगवान की जगह धूर्तों की रचना बताया. उन्होंने वेदों को पथ विहीन जंगल तथा बिना पानी के तालाब के समान बताया. गुरू रैदास बोले **चारों वेद किए खण्डोति जन रैदास करै दण्डोति!**

आज के समय में दयानन्द ने वेदों पर आधारित आर्य समाज नामक संस्था की स्थापना की है. उसने वेदों के नियमों अनुसार जीवन चलाने के लिए आर्य समाजियों के लिए एक पुस्तक "सत्यार्थ प्रकाश" भी लिखी. **लेकिन आज तक का रिकार्ड है कि किसी भी आर्य समाजी ने वेदों अर्थात सत्यार्थ प्रकाश के अनुसार जीवन नहीं बिताया. दयानन्द गला फाड़ फाड़ कर चिल्लाता रहा मगर किसी आर्य समाजी ने अपनी बहन बेटी सें नियोग द्वारा 10 पुत्र पैदा नहीं करवाए!! काश दयानन्द सतगुरु कबीर की बात मान लेता : अधर्म को धर्म बतावैं वेद!**

दूसरी भ्रांति : भगवान :– भगवन बुद्ध के समय अनेकों लोग उनके पास जाते थे तथा पूछते थे कि इस संसार को किस ने बनाया है तथा कौन इसे चला रहा है. भगवन अक्सर ऐसी बातों का जवाब नहीं दिया करते थे. उनका कहना था कि यह सब फिजूल अथवा व्यर्थ की बातें हैं. आदमी को सदाचारी जीवन जीने के लिए किसी भगवान की जरूरत नहीं है. भगवान के नाम पर सिर्फ पाखण्ड और लूट की जाती है. लागों के बार बार पूछे जाने पर उन्होंने आत्मा और परमात्मा दोनों के अस्तित्व सें इंकार कर दिया.

गुरू रैदास तथा गुरू कबीर जैसे सन्तों ने भगवान के होने न होने पर अपने आदि गुरू भगवन बुद्ध का अनुसरण किया. उन्होनें अपनी बाणी में ऐसे भगवान के अस्तित्व सें इंकार किया जिसकी इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता. सभी सन्तों ने उन लोगों को भगवान मानने सें इंकार किया जिन्हें ब्राह्मणधर्म में भगवान माना गया है. उन्होंने स्पष्ट कहा कि ऐसी बातें करने वाले लोग दूसरों को बेवकूफ बना कर उन्हें लूट रहे हैं. उन्होंने लोगों सें भगवान के चक्करों में पड़ने की बजाए मानव के साथ भला करने का आहवान किया. उनकी तरह गुरू रैदास ने अपनी पूरी बाणी में कहीं भी भगवान द्वारा दुनिया बनाने या चलाने की बात नहीं की है. भगवान के स्वरूप के बारे में गुरू रैदास बोले :

मन ही पूजा मन ही धूप मन ही सहज सरूप!
पूजा अर्चना न जानूं तेरी, कह रैदास यह गति मेरी!
श्रम को ईश्वर जान के जो पूजे दिन रैन!
रैदास ऐसे लोगों को मिले सदा सुख चैन!!

तीसरी भ्रांति : आत्मा :– ब्राह्मणों की रोजी रोटी और ऐयाशी का मुख्य साधन आत्मा का प्रचार है. हर प्रकार का ब्राह्मण कथाकार, संकराचार्य और महाराज आत्मा के नाम पर लोगों को गुमराह किए जा रहा है. भगवन बुद्ध ने कहा कि आत्मा नाम की कोई चीज नहीं होती. अगर शरीर में आत्मा होती भी है तो यह शरीर के साथ ही जन्मती है तथा साथ ही मर जाती है. आत्मा का यही मोक्ष है. आत्मा के मोक्ष के लिए कोई भी आडम्बर करना मूर्खता है. उन्होंने लोगों सें आहवान किया कि वे आत्मा परमात्मा के प्रपंचों सें दूर रहें तथा अपना जीवन नेक कमाई करके शांति के साथ बितायें.

भगवन बुद्ध का अनुसरण करते हुए गुरू रैदास ने अपनी पूरी बाणी में कभी भी आत्मा और उसके मोक्ष की बात नहीं की. उन्होंने कभी भी किसी आत्मा के किसी परमात्मा के चरणों में लीन होने की बात नहीं की. उनके अनुसार यह व्यर्थ की बातें हैं. केवल सदाचार का जीवन जीना ही इन्सानीयत है. वे बोले :

सत्य, संतोष, और सदाचार, जीवन के हैं आधार!
रैदास वे नर भये देवता, जिन्ह त्यागे पंच विकार!!

चौथी भ्रांति : जाति :– ब्राह्मणधर्म की चौथी भ्रांति है कि भगवान ने आदमी की जातियां और उप–जातियां बनाई हैं. इस जाति प्रथा में ब्राह्मण सबसें श्रेष्ठ तथा शूद्र सबसें नीचे है. गुरू रैदास के अनुसार मानवों में जाति के आधार पर ऊंच नीच बनाना भगवान का काम नहीं है. ऐसा करना मात्र शैतान का काम है. ब्राह्मणों ने अपने लाभ के लिए जाति प्रथा बना रखी है. वे बोले :

रैदास जन्म के कारण होता नहीं कोई नीच!
नर को नीच कर देती है, ओछे करमों की कीच!!

जात जात में जात है ज्यों केले के पात !
रैदास मानस न जुड़ सके जब तक जात न जात!

पांचवीं भ्रांति : पुनर्जन्म :– ब्राह्मणों ने यह बात फैला रखी है कि हर आदमी का पुनर्जन्म होता है तथा हमारा यह जीवन पिछले जन्म के कर्मों के आधार पर बनता है. इस जन्म में जितने भी वैश्य और शूद्र हैं उन सबने पिछले जन्म में पाप किए हैं. ब्राह्मण को किसी किस्म का पाप लगता ही नहीं है. इसलिए वह कितने भी पाप करले वह कभी भी नीची जाति में पैदा होगा ही नहीं. भगवन बद्धु ने आत्मा के अस्तित्व को नकार दिया. उन्होंने कहा कि शरीर में कोई आत्मा नहीं होती. अगर होती भी है तो यह शरीर के साथ ही समाप्त हो जाती है. शरीर चार तत्वों का बना है: पृथ्वी जल अग्नि और वायु. मरने पर यह चारों तत्व अपने महातत्वों में मिल जाते हैं.

गुरू रैदास ने भी अपनी बाणी में कहीं भी आत्मा परमात्मा के मिलन अथवा पुनर्जन्म की बात नहीं की है. वे बोले : **तोहि मोहि अन्तर कैसा, कनक कटिक, जलतरंग के जैसा!** अर्थात भगवान और आदमी वैसे ही एक हैं जैसे सोना और उससें बने गहने या पानी और उसमें उठने वाली लहरें. जब भगवान और आदमी में कोई अन्तर ही नहीं है तो आत्मा का परमात्मा में समाने या फिर सें जन्म लेने का सवाल ही पैदा नहीं होता. उन के हमसहरी गुरू कबीर स्थिति को बिलकुल साफ करते हुए:

जल में कुंभ है कुंभ में जल है, बाहर भीतर पानी!
फूटा कुंभ जल में जल समाया, यह तथ्य कहें ज्ञानी!!

अर्थात जैसे पानी भरते हुए घड़ा पानी के अंदर होता है तथा घड़े के अंदर पानी होता है. वैसे ही आदमी इस दुनिया में रहता है. जो चार तत्व (पृथ्वी, जल अग्नि वायु) उसके शरीर में हैं, वही तत्व उसके चारों ओर हैं. जैसे घड़ा फूटने पर अन्दर का पानी उसके बाहर वाले पानी सें मिल जाता है वैसे ही आदमी की मृत्यु होने पर उसके तत्व अपने महातत्वों में मिल जाते हैं. आदमी के चार तत्व हैं : हाड–मांस, खून, गर्मी तथा सांसें जो क्रमश : पृथ्वी, जल अग्नि और वायु नामक महातत्वों में मिल जाते हैं.

4. **पंचशील :** भगवन बुद्ध ने इस विश्व को पंचशील यानि पांच प्रकार के भले काम करने का वरदान दिया है. सन्तों ने उनके इस संदेश को घर घर तक पहुंचाया है. उनके पंचशील हैं :

1) अहिंसा अपनाओ. हिंसा न करो.
2) चोरी न करो, जूआ न खेलो अर्थात दूसरों की चीज पर नीयत खराब न करो.
3) चरित्रवान बनो. व्यभिचार न करो.
4) सत्य बोलो. झूठ न बोलो.
5) नशे न करो.

यह आश्चर्य की बात नहीं है कि ब्राह्मणधर्म की किसी भी किताब में उपरोक्त नियमों पर चलने को नहीं कहा गया है. वहां यज्ञ में पशु मार कर खाने को अहिंसा कहा गया है. उनके भगवान का "अवतार" परशु गर्भ में पल रहे बच्चों तक को निकाल कर काट देता है. ब्राह्मणधर्म के महानायकों का मुख्य धन्धा जूआ खेलना ही रहा है. ब्राह्मणधर्म के ऋषियों और भगवानों – ब्रह्मा, पवन कृष्ण आदि ने व्यभिचार की सारी सीमाएं पार कर दीं. ब्रह्मा ने अपनी बेटी पोतियों को तो कृष्ण ने तो अपनी मामी राधा तक को नहीं बख्शा. महाभारत में उनका भगवान ही लोगों सें झूठ बोलने पर मजबूर करता है. **उनके धर्म में आम धारणा है कि लड़ाई, प्रेम और जान बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिए. जिन्दगी का हर काम इन तीन भागों में बांटा जा सकता है. अतः ब्राह्मणधर्म में आदमी हर वक्त झूठ बोल सकता है!!** नशे करने के बारे में ब्राह्मणधर्म सें बढ़कर कोई धर्म नहीं है. वहां सोम नामक दारू वेदों के मुख्य भगवानों में सें एक है. उनका कोई भी यज्ञ बिना सोम पीए नहीं हो सकता. **अतः ब्राह्मणधर्म भगवन बुद्ध के पंचशील के सिद्धांत के बिलकुल विपरीत है.**

पंचशील का अक्षरषः पालन करते हुए सभी सन्तों ने सदाचार को जीवन का आधार बताया. गुरू रैदास बोले:

सत्य, संतोष, और सदाचार, जीवन के हैं आधार!
रैदास वे नर भये देवता, जिन्ह त्यागे पंच विकार!!

भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री जवाहर लाल नेहरू ने भी भगवन बुद्ध के पंचशील के सिद्धांत आधार पर दुनिया में शांति स्थापना के लिए पंचशील का संदेश दिया. मानवों की तरह ही पंचशील में देशों को सदाचार की शिक्षा दी गई. देशों के लिए पंचशील के पांच नियम इस प्रकार सें बनाए गए.

1. हर देश की सीमाओं और प्रभुसत्ता का आदर करना.
2. किसी देश पर हमला नहीं करना
3. किसी भी देश के आंतरिक मामलों में दखल नहीं देना.
4. सभी देशों को बराबर मानना तथा सबके भले के लिए काम करना.
5. शांतिपूर्ण ढंग सें मिल जुल कर रहना.

5. **निर्वाण** : बुद्ध धर्म में निर्वाण का सिद्धांत विलक्षण है. **निर्वाण का सिद्धांत बुद्ध धर्म के सिवाय दुनिया के किसी भी धर्म में नहीं है. निर्वाण का सिद्धांत बुद्ध धर्म का आधार है तथा यही सिद्धांत इसे ब्राह्मणधर्म के विरुद्ध खड़ा करता है.** बुद्ध धर्म का सारा दर्शन निर्वाण प्राप्ति सें ओत प्रोत है. निर्वाण नहीं तो बुद्ध धर्म नहीं.

भगवन बुद्ध मानते थे कि आदमी सुख और दुख के प्रभाव सें बिलकुल अछूता नहीं हो सकता. सुख दुख सें प्रभावहीन सिर्फ बेजान वस्तु ही हो सकती है, जीवित प्राणी नहीं. **उनके अनुसार निर्वाण का अर्थ है जीते जी दुखों सें छुटकारा प्राप्त करना. यह मन की वह स्थिति है जहां आदमी सुख और दुख सें बहुत अधिक प्रभावित नहीं होता. यह तभी होता है जब आदमी तृष्णा सें छुटकारा पा लेता है. सुख पाकर वह उड़ता नहीं तो दुख पाकर वह विचलित नहीं होता.**

गुरू रैदास और उनके हमसहरी सतगुरु कबीर ने स्पष्ट शब्दों में निर्वाण प्राप्ति को जीवन का मुख्य लक्ष्य बताया. उन्होंने कहा :

रैदास सोई साधु भला, जिस मन मांहि नहीं अभिमान!
हर्ष, शोक जाने नहीं, जाने सुख दुख एक समान!!

गुरू रैदास के अनुसार उसे ही साधु कहा जा सकता है जिसके मन में अभिमान नहीं है. ऐसे साधु खुषी गमी सुख दुख को एक समान लेते हैं. यही निर्वाण की स्थिति है जब आदमी खुषी गमी सें बहुत ज्यादा प्रभावित नहीं होता.

कहे रैदास सुनो रे सन्तो, यह पद है निर्वाण,
यह रहस्य कोउ खौजै बूझै, सोइ सन्त सुजान!!

अर्थात रैदास जी सभी सन्तों को आहवान करते हैं कि निर्वाण को खोजें. जो सन्त जीते जी मुक्त होने को रास्ता ढूंढ लेता है वही ज्ञानी सन्त है. अतः जो निर्वाण का पद नहीं ढूंढता वह मात्र भगवाधारी है साधु या सन्त कहलवाने के योग्य नहीं है.

घृत कारण दधि मथै सयाण! जीवत मुक्त सदा निर्वाण!!

अर्थात जैसे घी प्राप्त करने के लिए दही को मथा जाता है वैसे सयाणे आदमी जीवन की सच्चाईयों को मथ कर **जीते जी निर्वाण** प्राप्त करने के लिए कहते हैं. अतः गुरू रैदास भगवन बुद्ध के बताए निर्वाण के मार्ग को सर्वोत्तम मानते थे तथा उसे अपनाना समझदार आदमियों को काम बतात हैं.

कुछ धूर्त लेखक भगवन बुद्ध के निर्वाण के सिद्धांत को ब्राह्मणिक मोक्ष के जैसा बताने की कोशिश करते हैं. जबकि दोनों अलग ही नहीं बल्कि एक दूसरे के विपरीत भी हैं. **मोक्ष कभी भी जीवित आदमी को नहीं मिल सकता और निर्वाण कभी भी मर कर प्राप्त नहीं किया जा सकता. निर्वाण हमेशा ही जीते जी प्राप्त किया जाता है!** मोक्ष का गोरखधन्धा मरने के बाद ही शुरू होता है.

6. **क्षणिकवाद** : भगवन बुद्ध का क्षणिकवाद का सिद्धांत आत्मा परमात्मा की अमरता को नकारता है. उनके अनुसार दुनिया की हर वस्तु हर क्षण बदल रही है तथा अपने अन्त की ओर बढ़ रही है. इस सिद्धांत को अनित्यवाद भी कहा जाता है. भगवन बुद्ध के अनुसार हर वस्तु अनित्य है. अनित्य का अर्थ है हर समय एक जैसी न रहने वाली. बुद्ध उदाहरण देकर बताते हैं कि बच्चा जन्म लेते ही मृत्यु की ओर बढ़ने लगता है. उसके शरीर में परिवर्तन होते हैं. वह बच्चे सें जवान और फिर बूढ़ा होकर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है. उसका शरीर हर क्षण बदल रहा होता है. भगवन बुद्ध ने कहा कि अगर आत्मा है या भगवान है तो वह भी इस नियम सें अछूता नहीं हो सकता. उन्हें भी बाकी वस्तुओं की तरह हर क्षण बदल कर अपना अन्त प्राप्त करना ही पड़ता है. **दुनिया में कोई अमर नहीं है कोई नित्य नहीं है.**

भगवन बुद्ध के अनित्यवाद के सिद्धांत को पूरी तरह समझाते हुए पर गुरू रैदास ने कहा :

बिन देखे उपजै नहीं आसा, जो दीसै सो होई बिनासा!!

अर्थात जो चीज हमें "दिखती" नहीं है उसके होने की आशा नहीं की जा सकती और जो दिखती है उसका अन्त होना निश्चित है. इस पद में "देखे" या "दीसै" का अर्थ है जिसका हमें आभास होता है. किसी वस्तु का आभास करने के लिए आदमी के पांच ज्ञानेद्रियां तथा एक विवेक या मन होता है. गुरू रैदास के अनुसार जिस वस्तु का हमें इन छः के माध्यम सें आभास नहीं होता उसका अस्तित्व नहीं है. आत्मा या परमात्मा का आभास अगर हमें इन छः माध्यम सें हो जाए तो उनका अस्तित्व है. अगर नहीं होता तो उनका अस्तित्व नहीं है. **सबसें महत्वपूर्ण बात उन्होंने यह कही कि जिस चीज का हमें आभास होता है उसका अन्त होना निश्चित है.** अतः अगर आत्मा है तो वह भी नाशवान है. इस तरह वे भी भगवन बुद्ध की बात को ही दोहराते हैं.

वे बुद्ध के क्षणिकवाद को ही विस्तृत करते हैं जब वे कहते हैं :

फल कारन फूल बनराई ! फल लागा तब फूल बिलाई!!
ज्ञान कारन करम अभिआस! ज्ञान भया तो करमहि नास!!

अर्थात हर वस्तु में परिवर्तन वैसे ही आता है जैसे पेड़ पर पहले फूल लगता है फिर उससें फल बनता है. फल बनने पर फूल समाप्त हो जाता है. ज्ञान प्राप्ति के लिए आदमी अभ्यास करता है तथा ज्ञान मिलने पर आदमी के कर्मों (अज्ञानता) का नाश हो जाता है. जैसे आदमी बच्चे सें बूढ़ा हो जाता है लेकिन उसमें किसी पल भी परिवर्तन होता दिखाई नहीं देता वैसे ही पेड़ पर फूल एक ही पल में नहीं उग आते और न ही फूलों से फल बनते दिखाई देते हैं. लेकिन जैसे बच्चा बूढ़ा होकर अपने अन्त को प्राप्त करता है वैसे ही फल फूल अपने अन्त को प्राप्त करते हैं.

ब्राह्मणधर्म में लगभग हर वस्तु सनातन है. कभी न बदलने वाली! उनके केवल भगवानों के नाम और मॉडल बदलते हैं. वेदों में इन्द्र सबसें बड़ा भगवान था तो पुराण काल में विष्णु और शिव महान हो गए. आज इन्द्र को कोई जानता ही नहीं, विष्णु मात्र यदा कदा याद किया जाता है. आजकल माताएं ज्यादा प्रचलित हो रही हैं. उनके भगवान घर के अंदर बैठ गए हैं. भगवानों की बीवियों, सालियों या पुत्रियों ने मोर्चा संभाल लिया है.

उपरोक्त तथ्यों सें स्पष्ट है कि गुरू रैदास ने भी भगवन बुद्ध के सदाचार, सच्चाई और संतोष के मार्ग को ही धर्म माना. जिस चीज को बुद्ध ने आडम्बर माना गुरू रैदास ने भी उन बातों का खण्डन किया. वेद, यज्ञ, पूजा पाठ को बुद्ध ने बेकार बताया तो रैदास जी ने भी उनका तिरस्कार किया.

एक बात बार बार मन में उठती है कि भगवन बुद्ध की शिक्षाओं का अक्षरशः पालन करने के बावजूद रैदास जी की बाणी में इस बात की घोषणा क्यों नहीं है कि भगवन बुद्ध उनके मार्ग दर्शक हैं. उन्होंने जब राम पुत्र दसरथ को अपना रामजी नहीं माना तो उन्होंने सीना तान कर घोषणा कर दी : रैदास हमारे रामजी दसरथ का पुत नांहि! लेकिन उन्होंने अपने आदि गुरू का नाम लेने में ढील क्यों दिखाई, इस प्रश्न ने हमें विचलित किए रखा.

गुरू रैदास की बाणी भी पूर्ण रूप में उपलब्ध नहीं है क्योंकि गुरू रैदास की हत्या करके उनकी चिता में उनकी बाणी भी जला दी गई. उनके कुछेक पद गुरू नानक देव जब काशी में उनसें मिलने गये तो अपने साथ ले आए थे. उनकी बाणी के वे ही पद आज प्रमाणिक रूप में उपलब्ध हैं लेकिन फिर भी उनकी बाणी में कुछ पद ऐसे हैं जो स्पष्ट रूप सें यह दर्शाते हैं कि गुरू रैदास भगवन बुद्ध को अपना भगवान मानते थे. गुरू रैदास बोले :

अजामिल, गज, गणिका तारी काटी कुंजर फांस !
ऐसे दुरमति मुक्त किए, तू क्यों न तरै रैदास!!

अर्थात जिस महान पुरुष ने अजामिल यानि अंगुलिमाल जैसे हत्यारे को सही राह दिखा दी हो, गणिका अर्थात अम्बपाली को उसके नरकीय जीवन सें मुक्ति दिला दी हो तथा हाथी के पैर में चुभी फांस निकाल कर उसे चैन दिला दिया हो, ऐसे महा पुरुष (भगवन बुद्ध) सें रैदास जैसे सन्त निश्चित रूप सें मुक्ति की आशा कर सकते हैं.

अजामिल की कथा सभी जानते हैं कि उसको किसी ब्राह्मण ने उसे बताया कि नरमेध सबसें श्रेष्ठ यज्ञ है. उसे मुक्ति का मार्ग यह बताया गया कि वह एक हजार नरमेध करे. अतः उस ने मनुष्य मारने शुरू कर दिए. लोगों ने जब विरोध किया तो वह जंगल में जाकर छिप गया तथा जो भी आदमी उसे मिल जाता उसे बलि दे देता. बलि दिए गए आदमियों की गिनती का हिसाब रखने के लिए उसने एक तरीका अपनाया कि वह उसकी अंगुली काट कर धागे में पिरो लेता था तथा उसे माला की तरह गले में डाले रखता था. बिलकुल वैसे ही जैसे आज भी काली देवी अपनी नग्नता ढकने के लिए मनुष्यों के हाथों की माला पहने रहती है. अंगुलियों की माला पहनने के कारण उसका नाम **अंगुलिमाल** पड़ गया. जब भगवन बुद्ध को यह बात पता चली तो वे उस जंगल की ओर गए जहां अंगुलिमाल रहता था. वह अपनी आदत के अनुरूप भगवन बुद्ध को मारने दौड़ा मगर उनको निडर खड़ा देख कर

वह हकाबका रह गया. तब भगवन बुद्ध ने उस अजामिल को मुक्ति की सही राह बताई. अजामिल नरमेध छोड़कर नरसेवा में लग गया. **यह कथा जान कर गुरू रैदास बोले : नीच सें ऊँच करै, मेरा गोबिंद काहु सें ना डरै!**

इसी तरह अम्बा माँ की कथा है. आर्यों में यह रीत थी कि वे अपने बच्चों को खासकर लड़कियों को पैदा होते ही यूं ही फैंक जाते थे. सीता, शकुन्तला अम्बा आदि मुख्य उदाहरण हैं. आम के पेड़ के नीचे मिलने के कारण उनका नाम अम्बपाली रख दिया गया. जवान होने पर वे बेहद खूबसूरत बन गईं. आर्य संस्कृति के लोग सुन्दर स्त्री को पाने के लिए कुत्तों की तरह लड़ते थे. अतः अम्बपाली के लिए लड़ाई न हो, इसके लिए हल यह निकाला गया कि उन्हें पूरे नगर की भोग्या बना दिया गया. उन्हें जबरन वेश्यावृति में झोंक दिया गया. भगवन बुद्ध ने उन्हें वेश्यावृति सें मुक्ति दिलाई तथा उन्हें "वेश्या अम्बपाली" सें "अम्बे माँ" बना दिया.

इसी प्रकार हाथी की कथा है कि एक बार एक हाथी के पैर में फांस लग गई. उससें तड़पता हुआ वह तोड़ फोड़ मचाने लग गया. भगवन बुद्ध को जब यह बात पता चली तो उन्होंनें उस हाथी को काबू में किया तथा उसके पैर में सें फांस निकाल दी. हाथी शांत होकर विचरने लग गया.

अतः इस पद में गुरू रैदास ने स्पष्ट रूप सें भगवन बुद्ध को अपना मुक्ति मार्ग दाता माना है. **उनके सिवाय किसी ने भी अंगुलिमाल (अजामिल), गणिका (अम्बपाली) और हाथी को उनके कष्टों सें मुक्ति नहीं दी.** ब्राह्मण ग्रन्थ तो वेश्यावृति की तारीफ में भरे पड़े हैं. उनके यहां तो स्पैशल किस्म की वेश्याएं अर्थात अप्सरायें तो सीधे स्वर्ग में देवों और भगवानों के साथ रमण करती हैं. सो उनका तो कोई भगवान या देव तो गणिका तारक हो नहीं सकता.

निरंजन यानि बुद्ध : इतिहास गवाह है कि सम्राट अशोक के पौत्र वृहदर्थ की हत्या करने के बाद ब्राह्मणों ने बुद्ध धर्म को समाप्त करने के लिए साम दाम दण्ड भेद हर प्रकार के हत्थकण्डे अपनाए. बौद्धों का कत्लेआम किया गया. अनेक ब्राह्मण "भिक्षु" बन गए तथा बुद्ध धर्म का स्वरूप बिगाड़ने के लिए इसमें तन्त्र मन्त्र यानि तांत्रिक वाद घुसेड़ दिया. इस तन्त्रवाद को समाप्त करने के लिए "नाथ" पन्थ का उदय हुआ. नाथ भिक्षुओं की तरह जीवन बिताते थे.

नाथ पंथ के लोग "निरंजन" को अपना भगवान मानते थे. उनका नारा "अलख निरंजन" अपने आप में विलक्षण है क्योंकि अलख और निरंजन का अर्थ है आँख सें दिखाई न देने वाला!! यहां सवाल यही उठता है कि अगर इन दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है तो एक ही अर्थ के दो शब्दों को उन्होंने अपना मुख्य नारा क्यों बनाया. इसका उत्तर यह है कि अलख का अर्थ है जो आँखों सें देखा न जा सके और निरंजन का अर्थ है भगवन बुद्ध!!

ब्राह्मण ग्रन्थों में कथा है कि **भगवन बुद्ध ने "निरंजन" के नाम सें असुरों की सेना बना कर देवों सें संघर्ष किया.** ब्राह्मणिक कथा के अनुसार इस संघर्ष में निरंजन यानि बुद्ध और असुर हार गए. कहने की जरूरत नहीं कि यह एक ऐतिहासिक तथ्य है. भगवन बुद्ध ने दारू मीट खाने वाले ऐयाश देवों और उनके एजैन्ट ब्राह्मणों के विरुद्ध संघर्ष किया था. भगवन बुद्ध ने अपनी शिक्षाओं में कहा है कि शराब सब बुराइयों की जननी है क्योंकि अन्य नशे करके आदमी मात्र स्वयं को हानि पहुंचाता है लेकिन शराब पीकर वह न केवल स्वयं का नुकसान करता है बल्कि पूरे समाज को परेशाना करता है.

इस सच्चाई को अब ब्राह्मण लेखक भी स्वीकार करने लग गए हैं कि "असुर" का अर्थ "सुरा न पीने वाले" है. निश्चित रूप में भगवन बुद्ध ने सुरा न पीने वाले (असुरों) का संघ (सेना) बना कर ब्राह्मणधर्म के पाखण्डों के विरुद्ध संघर्ष किया था. भगवन बुद्ध निश्चित रूप सें विजयी रहे थे मगर जब ब्राह्मणों ने धोखे सें सम्राट वृहदर्थ की हत्या करके सत्ता हथियाई तो उन्होंने इस प्रकार की कथाएं घढ़ लीं.

इसी निरंजन नाम का जाप नाथ करते थे तथा इसी नाम का जाप गुरू रैदास, गुरू कबीर तथा अन्य दलित सन्त किया करते थे. सतगुर कबीर बोले :

देवल देवल फेरी देहिं, नांव निरंजन कबहुं न लेई।
कहै कबीर बिन निरंजन सरना, संस सागर माहिं मरना!

अर्थात जो लोग मंदिरों के चक्कर लगाते हैं लेकिन निरंजन का नाम नहीं लेते ऐसे लोग मरते दम तक संशय यानि दुविधाओं सें मुक्ति नहीं पा सकते.

वे आगे बोले :

सुरग नरक सें दूर रह्य, निरंजन के प्रसाद!
चरन कमल की मौज में, रहुं अंत आदि!!
हिन्दू मूए राम कहि, मुसलमान कह खुदाय!

कबीर सोई जीवता, जो दुइ में कभी न जाय!!

अर्थात जो व्यक्ति स्वर्ग नरक आदि पाखण्डों सें दूर रहता है वह भगवन बुद्ध की शरण में रहता है तथा शुरू सें लेकर अन्त तक आनन्दमय रहता है. हिन्दू रामराम कहते मर गए और मुस्लमान खुदा का नाम जपते हैं. सन्तों का कहना है कि असली जिन्दगी वही जी रहा है जो इन दोनों से दूर रहता है यानि जो बुद्ध की शरण जाता है. कबीर साहेब इन दोनों सें इस लिए बच कर रहने को कहते हैं क्योंकि दोनों ही धर्मों के हमलावरों ने बौद्धों का कत्लेआम किया था.

अपने निरंजन भगवन बुद्ध की स्तुति करते हुए गुरू रैदास ने कहाः

नाम निरंजन छोड़ कर, करै आन की आस!
वे नर जमपुर जाएंगे सत्य कहे रैदास!!

अर्थात जो लोग निरंजन बुद्ध के धर्म का मार्ग त्याग कर अन्य कर्मकांडों में धर्म की आशा करते हैं वे लोग निश्चित रूप सें बेकार में ही मर जाएंगे. जो जन्मा उसने मरना तो है ही, चाहे कोई अच्छा हो या बुरा हो. अतः जब गुरू रैदास कहते हैं "वे नर जमपुर जाएंगे" तो उनके कहने का तात्पर्य इतना ही है कि वे लोग व्यर्थ ही अपना जीवन बिता कर इस दुनिया में मर जाएंगे. गुरू रैदास किसी स्वर्ग नरक में विश्वास नहीं करते. अतः जमपुर जाएंगे का अर्थ यह नहीं है कि वे 'नरक में जाएंगे'. इसका अर्थ यह अवश्य है कि भगवन बुद्ध के सधर्म का मार्ग छोड़ने लोग दुखी होकर जीयेंगे तथा दुखी ही मरेंगे.

अनहद नाद निरन्तर, जहां दिन रैन होइ!
जन रैदास निरंजन महिमा रहा समोइ!!

'अनहद नाद' निर्वाण की स्थिति है जहां आदमी सुख दुख, वासना, लोभ मोह, अपने पराए जैसे बन्धनों सें अलग हो जाता है. सूफी सन्तों की मस्ती निर्वाण की स्थिति है. गुरू रैदास कहते हैं कि वे उस निरंजन की महिमा गाते हैं जिसने अनहद नाद यानि बिना ढोल नगाड़ों के संगीत पैदा किया है. हर सन्त ने इस स्थिति को अनुभव किया है. सतगुरु रैदास, कबीर नानक पीपा सैन आदि सभी सन्तों ने निर्वाण की स्थिति का आनन्द लिया है. जब गुरू नानक 'तेरा तेरा' करके अपना सब कुछ लुटा देते हैं तो यह निर्वाण की स्थिति है जहां आदमी अपने पराये का भेद भूल जाता है. निर्वाण की स्थिति में अन्दर सें संगीत लहरियां उठती हैं जिसे सन्तों ने अनहद नाद का नाम दिया है.

मीन पिपील तजे दोनों पंछी की न करै आस!
सरन निरंजन नाम की, आयो जन रैदास!!

अर्थात सतगुर रैदास कहते हैं कि उन्होंने पानी, धरती और आसमान में रहने वाले जीवों की 'आस' छोड़ दी है तथा अब वे निरंजन के नाम की शरण में आ गए है.

इस पद में गुरू रैदास ने दो बहुत महत्वपूर्ण बातें कहीं हैं. पहली यह कि उन्होंने तीनों प्रकार के जीवों की आस छोड़ दी है और दूसरी यह कि **जन रैदास** निरंजन की शरण में आये हैं. तीनों प्रकार के जीवों को छोड़ने का अर्थ हमें रामायण व अन्य ब्राह्मणिक ग्रन्थों के संदर्भ में देखना पड़ेगा. रामायण में राम को पैदा करने के लिए जिस यज्ञ को किया गया था उसमें **तीनों प्रकार के सैंकड़ों जीवों** को यज्ञ वेदी पर काट कर उसकी आग में भून कर खाया गया था. रैदास–कबीर काल में भी पण्डे ऐसा ही करते थे. इसीलिए कबीर साहेब ने कहा था :**पण्डे निपुण कसाई, साधो पण्डे निपुण कसाई, भेड मार बकरी को धावै, मन में दया न आई, साधो पण्डे निपुण कसाई!!**

गुरू रैदास कहते हैं उन्होंने ऐसे पाखण्डपूर्ण धर्म को त्याग दिया है तथा अब वे अपने 'जन' यानि लोगों के साथ निरंजन यानि भगवन बुद्ध की शरण में आ गए है. जो कुछ गुरू रैदास ने अपने इस पद में कहा है बाबा साहिब अम्बेडकर ने 14 अक्तूबर 1956 में वही करके दिखाया है!!

गुरू रैदास ने आगे कहा :

अविगत नाथ निरंजन देवा, मैं तो करूं तेरी सेवा!
बांधूं न बधन, छाउं न छाया, तोहिं सेवूं निरंजन राया!
सिव, सनकादि अंत न पाया, ब्रह्मा खोजत जन्म गंवाया!!

अर्थात कभी न मिटने वाले अपने स्वामी निरंजन की मैं सेवा करता हूँ. मैं यज्ञ में काटने के लिए पशु नहीं बांधता, अपने लिए महल नहीं बनवाता, शिव, ब्रह्मा आदि ब्राह्मणिक देवों को खोजना अपना जन्म गंवाने के समान है. अतः अब मैं इन सब को त्याग कर बस निरंजन की शरण में आ गया हूँ.

रैदास रैन की नींद तज, दिवस न करिय स्वाद!
नाम निरंजन सुमरिये, छोड़ सकल प्रतिवाद!!

अर्थात रैदास जी का कहना है कि आदमी को चाहिए कि वह सब वाद विवाद छोड़ कर भगवन बुद्ध की शरण में आ जाए. आदमी आलस्य त्यागे तथा जीभ के स्वाद में न पड़े. जीभ के स्वाद में पड़ कर ही तो ब्राह्मणों और उनके देवों ने भारतभूमि गायों सें लगभग खाली कर दी थी. गुरू रैदास अपने आदि गुरू यानि भगवन बुद्ध की तरह लोगों को मति देते हैं कि वे भगवान और आत्मा के वाद विवाद में न पड़ें. उन्हें बस मानव धर्म का पालन करना चाहिए.

उपरोक्त तथ्यों सें स्पष्ट है कि गुरू रैदास पक्के बुद्ध धर्मी थे. वे भगवन बुद्ध और उनके धर्म में पूर्ण आस्था और विश्वास रखते थे. उन्होंने न केवल स्वयं ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म त्यागा बल्कि अपने शिष्यों को भी ब्राह्मणधर्म के पाखण्डों सें मुक्ति दिलाई. साथ ही उन्होंने आम लोगों सें भी आहवान किया कि वे सद्धर्म का मार्ग चुनें. सरेआम वेदों का खण्डन करना, चाण्डाल और ब्राह्मण को एक समान बताना, निर्वाण को जिन्दगी का परम पद बताना तथा निरंजन बुद्ध की स्तुति करना उन्हें पक्का बौद्ध साबित करते हैं. उनके और बाबा साहिब के जीवन में इस मामाले में कोई अन्तर नहीं है. अतः जो लोग उन्हें हिन्दू बताते हैं अथवा उन्हें ब्राह्मणिक देवी देवों के उपासक बताते हैं वे निश्चित रूप सें धूर्त हैं.

भाग 2

अध्याय 8

परम लक्ष्य : राजनीतिक सत्ता प्राप्ति

बेगमपुरा बसाना

सन्त रैदास के विषय में एक बात सबसें अधिक हैरान करती है कि "सन्त" होकर उन्होंने कभी भी मोक्ष की चाह नहीं की लेकिन उन्होंने **दलित शासन** प्राप्त करने की चाह अवश्य प्रकट की. यह बेहद चौंकाने वाली बात है कि सन्त होते हुए भी उन्होंने दलितों सें राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का आहवान किया तथा यह भी चेताया कि कभी भारत पर दलितों का राज था. अछूत राज छिन जाने के कारण ही दलितों की इतनी बुरी दशा हो रही है. **गुरू रैदास ने आहवान किया है कि दलित वर्ग अपना खोया हुआ शासन फिर सें प्राप्त करें और जब तक वे अपना छिना हुआ राज फिर सें प्राप्त नहीं करते उनकी दशा सुधरने वाली नहीं है.** उन्होंने कहा कि **दलितों का परम लक्ष्य यही है कि वे अपना छिना हुआ शासन फिर सें प्राप्त करें.**

बाबा साहिब अम्बेडकर गुरू रैदास की **प्रतिमूर्ति** ही थे. जो कुछ बाबा साहिब ने किया अथवा कहा, उन सब में वे गुरू रैदास की करनी और कथनी को ही दोहरा रहे थे. बाबा साहिब और गुरू रैदास का जीवन संघर्ष लगभग एक जैसा है. दोनों महामानवों ने दलितों को न केवल सामाजिक बराबरी तथा धार्मिक आजादी दिलवाने के लिए संघर्ष किया किया बल्कि दोनों ने राजनीतिक सत्ता दिलवाने के लिए भी संघर्ष किया. रैदास जी ने ब्राह्मणधर्म के अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई तथा उसके हर ग्रन्थ, हर देव, हर भगवान को झूठा साबित किया तो बाबा साहिब ने भी वेदों को "मूर्खों की किताब" बताया तथा संसद में मनुस्मृति जला कर वही कुछ किया. गुरू रैदास ने ब्राह्मणधर्म त्याग कर जिस धर्म को अपनाने की बात कही बाबा साहिब ने उसी श्रमण धर्म को अंगीकार किया. गुरू रैदास ने अछूतराज स्थापित करके बेगमपुरा बसाने की बात की तो बाबा साहिब ने अनेक प्रकार के विरोधों के बावजूद हर दलित को हर ब्राह्मण और धनवान के बराबर वोट का अधिकार दिलवाया ताकि वे वोट के जरिए सत्ता पर काबिज हो सकें.

अतः कुल मिला कर बाबा साहिब और गुरू रैदास के जीवन और संघर्ष में कोई खास अंतर नहीं है. साफ कहा जाए तो दोनों दलित महापुरुष एक समान सन्त और एक समान राजनीतिज्ञ हैं. दोनों ने ब्राह्मणवाद त्याग कर श्रमण संस्कृति की वकालत की और दोनों ने एक समान दलितों के लिए राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का आहवान किया. अंतर केवल एक रहा कि जहां ब्राह्मण गुरू रैदास की हत्या करके उनकी बाणी जलाने में सफल हो गए वहीं दलित चेतना के आगे वे बाबा साहिब को वे छूने की हिम्मत भी नहीं कर पाए.

प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि सन्त होते हुए भी उन्होंने दलितों के लिए राज मांगने की इच्छा क्यों की! इसका कारण है कि गुरू रैदास महाविद्वान थे. उनके समय में किसी भी दलित के लिए संस्कृत सीखना असंभव था

लेकिन उन्होंने कैसे भी हो ब्राह्मण ग्रन्थों का अध्ययन किया तथा उनकी वास्तविकता जानी. गीता, वेद, पुराण की असलीयत जानने के बाद ही उन्होंने उनका खण्डन किया. वेद पुराण आदि पढ़ कर ही वे जान पाए कि दलित कभी भारत के शासक थे, धार्मिक गुरू थे, वैज्ञानिक आदि सभी कुछ थे लेकिन फिर उनसें सत्ता छीन ली गई. उन्हें दास बना दिया गया. गुरू रैदास का कहना है कि दलित तब सें लेकर अब तक दास हैं. उन्होंने दलितों को अपनी दासता मिटाने और फिर सें आजादी प्राप्त करने के लिए एक ही मन्त्र दिया कि वे अपनी छिनी हुई **राजनीतिक सत्ता** को फिर सें प्राप्त करें और भारत को अपना बेगमपुरा बनाएं.

गुरू रैदास के राजनीतिक ज्ञान अथवा राज मांगने का संदेश चार तथ्यों पर आधारित है.

पहला तथ्य : भारतीय इतिहास का गौरव दलित हैं.

दूसरा तथ्य : वर्तमान में दलित गुलाम हैं.

तीसरा तथ्य : दलितों की आजादी की कुंजी राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने में ही है.

चौथा तथ्य : आजादी प्राप्त करने और उसे बचाए रखने का रास्ता है : शिक्षित बनो, संगठित बनो और संघर्ष करो.

प्रथम तथ्य : भारतीय इतिहास का गौरव : दलित जन

भारत का इतिहास : बाबा साहिब के अनुसार भारत का इतिहास **ब्राह्मण और श्रमण संस्कृतियों** के आपसी संघर्ष का ही इतिहास है. ब्राह्मण संस्कृति का अर्थ है ब्राह्मणों के आडम्बर और पाखण्डपूर्ण कर्मकांड तथ उनके देवों भगवानों, ऋषियों, महा ऋषियों की करतूतें. श्रमण संस्कृति का अर्थ है महावीर, बुद्ध, नानक, कबीर, रैदास, बुल्लेशाह, फरीद, पीपा, नामदेव, तुकाराम जैसे सन्तों का बताया हुआ मार्ग. सुननें में चाहे बुरा लगे लेकिन यह सच्चाई है कि ब्राह्मणों के लगभग सारे के सारे भगवान, ऋषि और देव अनाचारी थे, ऐयाश थे. आज हम गर्व सें कहते हैं कि प्राचीन भारत विश्व का गुरू होता था, विदेशों सें लोग यहां ज्ञान की तलाश में आते थे. **इस प्रकार सें गर्व करने में ब्राह्मणधर्म या उसके धर्मग्रन्थों या उसके विद्वानों का कहीं कोई हाथ नहीं है. आज तक कोई विदेशी यात्री भारत में वेद, पुराण, गीता या भागवत पढ़ने नहीं आया और न ही आज तक कोई विदेशी यात्री यहां सें अपने साथ ब्राह्मणों के किसी भी ग्रन्थ को लेकर गया है. सबके सब यात्री बुद्ध धर्म के अध्ययन के लिए आए तथा अपने साथ बौद्ध ग्रन्थ ही लेकर गए. बुद्ध धर्म सदा सें ही अब्राह्मणों और दलित वर्ग का धर्म रहा है. अतः यह दलित ही थे जिनकी वजह सें भारत विश्व का गुरू बना तथा गौरव बना.**

भारत का इतिहास सिन्धु सभ्यता सें आरम्भ होता है. सिन्धु सभ्यता के जनक शूद्र और वणिक थे. बनियों को पणिक का बताया जाता है. अब सें हजार साल पहले तक बनिये और शूद्रों दलितों में रोटी बेटी का रिश्ता भी होता था. यहां तक कि अब सें लगभग पचास साठ साल पहले बनी फिल्म में दिखाया गया है कि ब्राह्मण बनिये के हाथ लगे लड्डू खाना भी पाप समझते थे. अतः कुल मिला कर सिन्धु सभ्यता दलितों की ही सभ्यता थी.

लंका और सिन्धु सभ्यता : आदिकवि बाल्मिकी ने अपनी रामायण के सुन्दर कांड में लंका नगरी का वर्णन किया है. लंका नगरी की बनावट का जो उल्लेख उन्होंने किया है वह सिन्धु सभ्यता के नगर मोनजोदड़ो और हड़प्पा सें हूबहू मिलता है. हनुमान ने वहां चौड़ी सड़कें ऊंचे भवन तथा गगनचुंबी चैत्य (बौद्ध मंदिर) देखे थे. उसने एक चैत्य को तो नष्ट भी किया था. वहां के लोगों को जला कर मारा था. बिल्कुल ऐसा ही दृष्य सिन्धु सभ्यता के नगरों में मिलता है. अतः बाल्मिकी रामायण वास्तव में सिन्धु सभ्यता का ही वर्णन है और **महाराजा रावण सिन्धु सभ्यता के ही सम्राट थे.**

कुछ देसी व विदेशी विद्वानों का मानना है कि आर्य बाहर सें आए और उन्होंने सिन्धु सभ्यता को नष्ट कर दिया तथा भारत के मूल निवासियों को दक्षिण की ओर खदेड़ दिया. इस विषय पर बाबा साहिब ने गहन अध्ययन किया. उनके अनुसार **आर्य किसी जाति का नाम नहीं है बल्कि एक संस्कृति का नाम है.** आर्य संस्कृति के लोग खाओ, पीओ और ऐश करो के सिद्धांत पर चलने वाले लोगों का गिरोह था. इसमें देसी और विदेशी सभी प्रकार के लोग शामिल थे. महात्मा रावण ने इस ऐयाश आर्य संस्कृति की करतूतें रोकने के लिए आदेश जारी किए थे. आचार्य चतुरसेन के अनुसार महाराज रावण ने आस्ट्रेलिया सें लेकर भारत और जापान तक अपना शासन कायम किया था. धर्म के नाम पर ऐयाशी करने वाले ऋषियों को वे बख्शते नहीं थे. महाराजा जालन्धर भी उनके हमसहरी थे. ऐसे

दलित राजाओं ने आर्य संस्कृति की करतूतों पर सख्ती सें पाबन्दी लगाई थी. इसी कारण योजनाबद्ध ढंग सें उनकी हत्या कर दी गई.

भारत में विदेशियों का आगमन विदेशी हमलावर सिकन्दर के हमलों सें शुरू हुआ. पौरस जैसे राजाओं को हरा कर वे सत्ता पर काबिज हुए. ये वही लोग हैं जिन्हें हम आज आर्य कहते हैं. इन्हीं की संस्कृति को हम ब्राह्मणवादी संस्कृति कहते हैं. ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अरुण वरुण सब इनके ही देव हैं. इन्हीं लोगों ने यहां के देशद्रोही व लालची ब्राह्मणों सें मिल कर भारत पर कब्जा किया. मान्यवर मुद्राराक्षस ने अपने खोजपूर्ण ग्रन्थ (धर्म ग्रन्थों का पुनर्पाठ) में साबित किया है कि ब्राह्मण असल में अब्राह्म की निष्काशित सन्तान हैं जो भटकते हुए भारत आए और अपनी शातिर चालों द्वारा सत्ता पर काबिज हो गए.

जैसे अंग्रेजों ने भारत पर कब्जा करके स्वयं को "लाट साहब" अर्थात ऊंचे लोग कहलवाना शुरू कर दिया था, वैसे ही इन युनानियों व रोमनों ने भी भारत पर कब्जा करने के बाद स्वयं को ऊंचा यानि "आर्य" कहलवाना शुरू कर दिया. ब्राह्मणधर्म में कभी भी देशप्रेम की भावना नहीं रही. उनका ग्रन्थ महाभारत कहता है कि जो राजा तगड़ा हो उसी की जी हजूरी करनी चाहिए. इसलिए जब भी उन्हें अकबर जैसा तगड़ा राजा मिला वे उसके तलवे चाटने लग गए. रोमनों की संस्कृति अपना कर तो उनकी पांचों उंगलियां ही नहीं वे तो सारे के सारे घी में डूब गए. विदेशी आर्य संस्कृति अपना कर उन्हें सुरा, सुन्दरी और सम्पत्ति का भरपूर आनन्द मिला. इन विदेशियों ने ब्राह्मणों सें मिल कर भारत के प्राचीन इतिहास को ही नष्ट कर दिया. आज कोई जान ही नहीं सकता कि सिन्धु सभ्यता कब कैसे नष्ट हुई. किसने नष्ट की.

आर्य संस्कृति अथवा ब्राह्मण संस्कृति हमारी भारतीय संस्कृति नहीं है क्योंकि :

* आर्य संस्कृति के लोगों में बाप–बेटी, बहन–भाई, चाचा–भतीजी आदि में यौन सम्बंध हो जाते थे. ब्रह्मा–सरस्वती,(बाप बेटी) यम–यमी,(भाई बहन) धर्म–दक्षा, (चाचा भतीजी) राधा–कृष्ण,(मामी भांजा) राम–सीता(समगोत्री भाई बहन) इसके प्रमुख उदाहरण हैं. मूल भारतीयों में ऐसा न तब होता था और न अब होता है. उनके लिए ऐसा सम्बंध प्राचीन काल में भी पाप था, अब भी पाप है. ब्राह्मणों के वेदों व महाभारत में ऐसे रिश्ते बनाना "धर्म" माना गया है.

* आर्य संस्कृति की स्त्री के लिए बच्चे पैदा करने के लिए विवाह करना जरूरी नहीं होता था (कुन्ती की तरह) तथा शादीशुदा स्त्री के लिए अपने पति सें ही गर्भवती होना भी जरूरी नहीं था. वह किसी भी गैरमर्द सें गर्भवती हो सकती थी. (हनुमान की माँ अंजनि की तरह जो कि केसरी की विवाहिता थी लेकिन पवन सें गर्भवती होकर हनुमान पैदा किया) भारतीय मान्यताओं के अनुसार ऐसी सन्तान हरामी कही जाती है लेकिन ब्राह्मण या आर्य संस्कृति में ऐसी सन्तान भगवान है!

* आर्य संस्कृति की हर स्त्री के लिए पुत्र पैदा करना जरूरी था. अगर उसका पति मर जाता था या पुत्र पैदा करने में असमर्थ होता था तो ब्राह्मण उस स्त्री के पुत्र पैदा करते थे. इस प्रथा को **आर्य नियोग प्रथा** कहते थे. **महाभारत में नियोग को आर्यों का सनातन धर्म बताया गया है. आधुनिक काल का दयानन्द भी नियोग न करने को पाप कहता है.** महाभारत और पुराण पढ़ कर ऐसा लगता है कि शायद ही कोई ब्राह्मण ऋषि व भगवान होगा जो अपने असली बाप के द्वारा पैदा किया गया है वर्ना सबके सब नियोग की ही उपज हैं.

* आर्यों में जूआ खेलना धर्म था. उनके प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में भी जूआ खेलने का वर्णन है. यहां तक कि उनके चारों युगों के नाम भी जूए के पासों पर ही आधारित हैं. ब्राह्मणों के चार युग हैं : सत्य या कृत, त्रेता, द्वापर और कलि युग. यह चारों उनके जूए के पासों के भी नाम हैं. आर्य समाज में पांसा फैंकने वाले जिस जुआरी का कृत पांसा पड़ता था उसे सारे का सारा माल मिलता था, त्रेता पासा पड़ने पर तीन चौथाई माल पासा फैंकने वाले को तथा बाकी सामने वाले जुआरी को मिलता था, द्वापर पासा पड़ने पर दोनों को आधा आधा माल मिलता था तथा कलि पासा पड़ने पर फैंकने वाले को एक चौथाई तथा सामने वाले को तीन चौथाई माल मिल जाता था. इसलिए ब्राह्मणों ने कहा कि कृतयुग या सतयुग "धर्म" के चारों पाए होते थे, त्रेता में तीन पाए होते हैं, द्वापर में दो तथा कलियुग में केवल एक पाया ही बचता है.

* आर्य यज्ञ करते थे जिसमें कम सें कम **सोलह ब्राह्मण ऋषियों** सें पुरोहिताई करवाना जरूरी होता था. यह सोलह दरिंदे यजमान के पशु तो चट कर ही जाते थे उसकी बहन बेटियों की इज्जत भी नहीं बख्शते थे. श्रमण संस्कृति के कर्णधारों महावीर स्वामी तथा भगवन बुद्ध ने इन बुचड़खाना मार्का यज्ञों का विरोध किया. आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ ने तो नरबलि के मंडप सें बालक शुनःशेप को छुड़वाया था. शुनःशेप की कथा सें

तो सभी जानते हैं कि उस मासूम बच्चे के बाप (ब्राह्मण ऋषि अजीगर्त) ने धन के बदले में उसे यज्ञ में काटने के लिए बेच दिया था. और जब जल्लाद भी उस मासूम को यज्ञ में काटने के लिए तैयार नहीं हुए तो वह ब्राह्मण ऋषि और अधिक धन लेकर उस बालक को काटने के लिए भी तैयार हो गया. सभी ब्राह्मणिक देव या भगवान बच्चे के नर्म मांस में सें हिस्सा पाने के लिए राल टपका रहे थे. बच्चे की चीख पुकार सुन कर तीर्थंकर आए और उन्होंने बालक को बचा लिया. उन्हीं की श्रमण संस्कृति के नायक महाराजा रावण ने ऐसे यज्ञ बन्द किये और उसकी जगह हवन करने की प्रथा चलाई जिसमें किसी भी पुरोहित की जरूरत नहीं होती. कोई भी आदमी अकेला हवन कर सकता है. महात्मा रावण की नगरी में हर घर में हवन होता था. हनुमान ने लंका के हर घर सें हवन का धूंआ उठते देखा था.

* आर्य या ब्राह्मण संस्कृति में शराब पीना धर्म है. वेदों में सोम नामक शराब तो उनका मुख्य भगवान है. आज भी काली के मंदिरों में दारू मीट का चढ़ावा चढ़ता है. आर्य भगवानों का राजा इन्द्र तो खुश ही उन लोगों सें होता था जो उसके लिए एक बार में पन्द्रह बैल पकाते थे और उसके कंधे पर शराब की मश्कें लाद देते थे. लगभग सारे ब्राह्मणिक भगवान, देव और ऋषि नशे में धुत रहते थे. इसके विपरीत श्रमण संस्कृति के नायक बुद्ध कहते थे कि शराब पीना सबसें बड़ा पाप है.

* आर्य संस्कृति में स्त्री मात्र दो काम आती थी. एक मर्द की वासना शांत करना और दूसरा तोहफे के रूप में आदान प्रदान होना. ब्राह्मण ग्रन्थ ऐसे निर्देशों सें भरे पड़े हैं कि स्त्री कभी भी किसी भी पुरुष को शारीरिक सम्बंध बनाने सें मना नहीं कर सकती. जो स्त्रियां चरित्रहीना होती थीं उनके लिए कहा गया था कि स्त्रियां अपने जारों सें वासना का खेल खेलकर दूषित नहीं होतीं. स्त्रियों विशेषकर कुंआरी लड़कियों की दल्लगिरी हर देव हर भगवान करता था. हमें ऐसा **कोई देव, ब्राह्मण ऋषि या भगवान नहीं मिला जिसने तोहफे में लड़कियां ली न हों अथवा किसी को दी न हों. दूसरे शब्दों में कोई ऐसा देव, कोई भगवान कोई ऋषि जिसने दल्लगिरी न की हो!** दल्लागिरी भारतीय संस्कृति नहीं है. यह आर्य संस्कृति है.

* आर्य संस्कृति का अन्य मुख्य काम वेश्यावृति था. अम्बपाली को जबरन वेश्यावृति में झोंकने का काम आर्य संस्कृति की विशेषता है. प्राचीन राजनीतिशास्त्र "अर्थशास्त्र" में एक पूरा अध्याय इस विषय पर लिखा गया है कि वेश्याओं सें कितना टैक्स लिया जाए, कब लिया जाए. जैसे आज के समय गृह, विदेश आदि पूरे मंत्रालय होते हैं वैसे ही आर्य शासन में राजा के पास पूरा "वेश्या मंत्रालय" होता था. अनेक अफसर वेश्या विभाग में काम करते थे. वेश्याओं का इतना आदर होता था कि कृष्ण का जब तिलक किया गया तो वेश्याओं को ब्राह्मणों के बराबर सोना दान दिया गया. राम को पैदा करने वाले ऋश्यश्रृंग को भी वेश्याएं ही जंगल सें बाहर लेकर आईं थीं. अर्थशास्त्र पढ़ कर तो ऐसा लगता है कि आर्यों में वेश्यावृति न करना अपराध था.

*

जब इस संस्कृति के लोग भारत में आए तो उस समय भी उनका विरोध हुआ था. कुछेक ब्राह्मण ऋषियों को छोड़ पूरा भारत इनके विरुद्ध था लेकिन इन विदेशियों ने साम दाम दण्ड भेद की नीति अपनाते हुए अपना जाल फैलाना जारी रखा. महाराजा रावण और उनके साथियों ने इस संस्कृति का विरोध किया तो उनकी हत्या कर दी गई. उनकी सिन्धु सभ्यता के नगरों को तहस नहस कर दिया गया. बुद्ध और महावीर ने जन आंदोलन चलाया और वे सफल भी रहे. लोगों ने पूरे आदर के साथ श्रमण संस्कृति को अपना लिया. सम्राट अशोक ने बुद्ध धर्म के सदाचार, सच्चाई और संतोष के संदेश को घर घर तक पहुंचा दिया. आर्य अथवा ब्राह्मण संस्कृति के लोगों को यह सहन नहीं हुआ. अतः ब्राह्मणों के एक गिरोह ने पुष्यमित्र शुंग नामक हत्यारे की मदद सें सम्राट वृहदर्थ की हत्या कर दी और भारत में फिर सें ब्राह्मण संस्कृति का धावा बोल दिया. फिर सें वीभत्स और अश्लील यज्ञ शुरू हो गए. भारत फिर ऐयाशों के चंगुल में फंस गया. यही भारत का इतिहास है!

दलितों का स्वर्णिम इतिहास : गुरू रैदास

गुरू रैदास की बाणी पढ़ कर यह आभास होता है कि उन्होंने वेद पुराण व अन्य ब्राह्मणिक ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया था. **गुरू रैदास ने सबसें महत्वपूर्ण बात यह कही कि दलितों का इतिहास गौरवमयी रहा है.** प्राचीन भारत में दलित वर्ग के लोग भारत के शासक होते थे. भारत का गौरव होते थे. भारत का विदेशों में जो मान

सम्मान बना था वह दलित जातियों के सन्तों, वैज्ञानिकों और राजाओं की वजह सें बना था. जिस समय भारत सोने की चिड़िया कहलाता था उस समय भारत पर दलितों की सत्ता थी.

प्राचीन भारत का इतिहास सिन्धु सभ्यता सें शुरू हुआ और सम्राट वृहदर्थ की हत्या पर समाप्त हो गया. हमारे पास केवल तर्क और अनुमान ही हैं कि सिन्धु सभ्यता के नगर महाराजा रावण के साम्राज्य का ही हिस्सा थे. **लेकिन इस बात में कहीं कोई शक नहीं है कि सिन्धु सभ्यता की सृजना करने वाले वही लोग हैं जिन्हें आजकल शूद्र कहा जाता है.** अतः भारत के इतिहास की शुरूआत दलितों सें ही होती है. सिन्धु सभ्यता के बाद नन्द वंश के लोगों ने भारत पर अपना साम्राज्य स्थापित किया. वे भी दलित जाति सें थे. नन्द वंश के बाद मौर्य साम्राज्य स्थापित हुआ. मौर्य भी दलित थे. उनके वंशज आज भी दिल्ली के रैगरपुरा और पूरे राजस्थान, गुजरात व यूपी में बहुसंख्या में पाए जाते हैं. मौर्यों के बाद विदेशियों का राज रहा. उनके बाद गुप्त राजा आए जो जन्म सें "दलित" थे लेकिन कामों सें ब्राह्मणवादी थे. उन्होंने आर्यों की अनाचारी संस्कृति को फिर सें जीवित कर दिया. उन्होंने फिर सें अनेकों अश्वमेध यज्ञ शुरू किए. उन्होंने कोई सड़क कोई धर्मशाला नहीं बनवाई, कोई कूआं नहीं खुदवाया मगर ब्राह्मणों को खूब दान दिया नतीजन ब्राह्मणवादी इतिहासकारों ने इसे भारत का स्वर्ण युग करार दे दिया. गुप्त राजाओं के अन्त होने के बाद तो पूरे भारत पर कभी किसी भी भारतीय राजा का शासन नहीं रहा.

अतः पूरे भारत देश पर जब भी एक राजा का राज रहा तो वह मात्र दलित वर्ग सें ही था. अयोध्या जैसे गांव के "चक्रवर्ती" क्षत्रिय राजा किस्से कहानियों में ही होते थे. गुरू रैदास ने भी अपनी बाणी में इसी सच्चाई को उजागर किया है. अपनी बाणी में दलितों के इतिहास के बारे में उन्होंने कहाः

1. **हम बड़ कबि, कुलीन, हम पंडित हम जोगी सन्यासी!**
   ज्ञानी, गुणी, सूर, हम दाते, यह बुद्धि कभी न नासी!!

हम दलित बड़े कवि, राजा, दार्शनिक, योगी और सन्यासी होते थे. हम ज्ञानी, गुणी, शूरवीर तथा दानी होते थे. हमारी बुद्धि कभी भी नाशक नहीं रही. अर्थात दलितों नें कभी भी अपनी बुद्धि का प्रयोग नाश करने के लिए नहीं किया. प्राचीन भारत का गौरव हम सें ही बना था.

2. **साधो, अविद्या अहित कीन, ताते विवेक दीप भया मलीन !**

अर्थात अविद्या (अनपढ़ता, अज्ञान) ने हमारा बहुत अहित हानि की है. अनपढ़ता के कारण हमारी सोचने, समझने व परखने की शक्ति मन्द पड़ गई है. यह हमारी अविद्या ही है कि हमारे युगपुरुष सन्त शम्बूक के हत्यारे को आज अनेकों दलित भगवान मानते हैं. गुरू रैदास ने इसी अविद्या को दूर करने के लिए कहा था : रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहि!

3. **नरपति एक सिंहासन सोया, सपने भया भिखारी!**
   अछूत राज बिछड़े दुख पाया, सोई दसा भई हमारी!!

अर्थात जैसे एक राजा सिंहासन पर सो जाए और सपने में भिखारी बन कर दुखी होता है वैसे ही अछूत राज छिन जाने सें हम दुखी हो रहे हैं. यह श्लोक अपने आप में विलक्षण है. इस श्लोक में गुरू रैदास ने बहुत कुछ कह दिया है. वे कहते हैं कि सिंहासन आज भी हमारा ही है, बस जागृत होने भर की देर है. अविद्या की नींद सें बाहर आने की जरूरत मात्र है. आज जो हमारी दयनीय दशा हो रही है उसका कारण हमसें हमारा अछूत राज बिछड़ना ही है. अपने राज को फिर सें प्राप्त कर लो वही रंग लग जाएंगे!!

4. **रज भुजंग प्रसंग जैसे है, अब कुछ मर्म जनाया!**
   अनिक कटक जैसे भूलि पड़ै, अब कहते कहन न आया!!

अर्थात जैसे रस्सी को सांप समझने की भूल हो जाती है वैसा ही हमारे साथ हुआ है. अब हमें सच्चाई की कुछ समझ आने लगी है. अनेक सेनाओं जितने हमारे लोग अपने लक्ष्य सें भटके हुए हैं. अब जब मैं उनको समझाता हूं तो वे कहते हैं कि पहले तो उन्हें किसी ने ऐसा बताया ही नहीं.

गुरू रैदास ने इस पद में अपनी तथा दलित समाज की पीड़ा व्यक्त की है. गुलाम होते हुए भी उन्हें अपनी गुलामी का एहसास नहीं है. अपने दुखों को वे अपनी नीयति मान बैठे हैं. बाबा साहिब ने भी अनेकों बार इसी पीड़ा को झेला था. माननीय काशी राम ने भी अनेकों बार स्टेज पर खड़े होकर कहा : तुसीं बन्दे बणजो, बाकियां नूं तां बन्दे दा पुत आपां बणा लांगे!! अर्थात हे दलितो सचेत हो जाओ अगर तुम सुधर हो जाते हो तो बाकियों को तो हम अपने आप "सुधार" लेंगे! आज तो फिर भी दलित विद्या प्राप्ति करके कुछ जागृत हो गए हैं लेकिन अपने समय में लोगों को समझाने में गुरू रैदास को वाकई बहुत पीड़ा झेलनी पड़ी होगी. दलितों को यह समझाना कि उनकी दयनीय हालत के जिम्मेवार उनके कर्म नहीं बल्कि ब्राह्मणों की चालें हैं, बहुत मेहनत का काम है.

5. ऐसा चाहूं राज मैं, मिलै सबन को अन्न! छोटे बड़े सम बसैं, रैदास रहै प्रसन्न!!

अर्थात मैं रैदास ऐसा राज चाहता हूं जहां सब को रोटी कपड़ा और मकान मिले. जहां जाति की ऊंच नीच न हो और सभी लोग बराबर रहते हों तथा जहां सदाचारी खुश रह सकते हों.

ऊपर गुरू रैदास के पांच पदों का सरल अर्थ दिया गया है. अगर इन श्लोकों को एक दूसरे का पूरक मान कर देखा जाए तो यह बात साफ जाहिर होती है कि गुरू रैदास ने यह जान लिया था दलित भारत के मालिक रहे हैं तथा भारत का गौरव उनसें ही बना था. अपनी खोई हुई सत्ता को पुनः प्राप्त करना ही उनके दुखों का इलाज है.

सबसें पहले पद में गुरू रैदास ने जो कुछ कहा उसे ही आधुनिक काल के दलित नायक दोहराते हैं. उनके अनुसार दलित जातियों में सें अनेकों बड़े कवि, राजा, दार्शनिक, योगी, सन्यासी, ज्ञानी, गुणी, शूरवीर तथा दानी हुए हैं. हमारी बुद्धि कभी भी नाशक नहीं रही अर्थात दलितों ने कभी जूआ खेल कर महाभारत नहीं मचाई. पैरियर रामास्वामी, महात्मा ज्योतिबा फूले, बाबा साहिब अम्बेडकर, बाबू कांशी राम आदि सभी दलित नेताओं ने अपने भाषणों तथा पुस्तकों में इसी तथ्य को उजागर किया है.

कवि : भगवान बाल्मिकी भारत ही नहीं दुनिया के सर्वश्रेष्ठ और आदि कवि हुए हैं. उन्होंने रामायण की सृजना की. उनकी विलक्षण विद्वता का सबूत यह है कि उन्होंने सारी रामायण अनुष्टुप छन्द में लिखी है. उन्होंने रामायण में राम को एक साधारण आदमी की तरह पेश किया है तथा महाराजा रावण को एक महात्मा की तरह पेश किया है. जब रामायण को प्रसिद्धि मिल गई तो ब्राह्मणवादियों ने राम को अपने भगवान का "अवतार" बनाने के लिए रामायण में कुछ अध्याय घुसेड़ दिए. भगवान वाल्मिकी ने क्योंकि अनुष्टुप छन्द अपनी विद्वता सें स्वयं बनाया था अतः बाद में जो अध्याय जोड़े गए उनका लेखक भगवान वाल्मिकी की तरह अनुष्टुप छन्द नहीं बना पाया. परिणाम–स्वरूप ब्राह्मणों द्वारा जोड़े गए अध्याय और श्लोक दूर सें वैसे ही अलग दिखाई दे जाते हैं जैसे दूध में पड़ी मक्खी दिखाई देती है. सभी विद्वान मानते हैं कि पहला अध्याय बाल कांड बाद में जोड़ा गया जिसमें राम को अवतार बताया गया है. ऐसे ही उत्तर कांड बाद में जोड़ा गया है जिसमें कई प्रकार की कथाएं हैं. ऐसे ही उनकी रामायण में वह श्लोक जोड़ा गया जिसमें यह कहा गया कि चोर और बौद्ध को एक जैसी सजा मिलनी चाहिए.

भगवान वाल्मिकी के बारे में सबसें अधिक आहत करने वाली बात यह की गई कि उन्हें ब्राह्मण ग्रन्थों में डाकू कातिल आदि बताया गया. ऐसा ब्राह्मणधर्मियों की सोची समझी रणनीति के तहत किया जाता है. जो भी दलित कुछ बनके दिखाता है, यह लोग उनका चरित्र हनन कर देते हैं. भगवान वाल्मिकी को "डाकू" घोषित कर दिया, सतगुरु कबीर को "अवैध" सन्तान घोषित कर दिया, गुरू रैदास को पिछले जन्म में पापी ब्राह्मण घोषित कर दिया. भगवन बुद्ध को बलात्कारी विष्णु का अवतार घोषित कर दिया. कोई हैरानी नहीं होनी चाहिए अगर कुछेक दिनों में यही लोग बाबा साहिब को कलिक अवतार ही बना दें!!

सच्चाई यह है कि भगवान वाल्मिकी एक अत्यंत करुणाशील सन्त थे. किसी शिकारी द्वारा एक नर पक्षी को मार देने पर मादा पक्षी विलाप कर उठी. उस पक्षी का विलाप सुन कर उनका मन इतना दुखी हुआ कि उन्होंने रामायण की रचना कर डाली जिसमें उन्होंने उस पक्षी का दुख एक स्त्री (सीता) के माध्यम सें बयान किया. सीता को उसके मां बाप ने पैदा होते ही खेतों में फैंक दिया, जब वह छः बरस की थी उसके पालक बाप (जनक) ने उसे दांव पर लगा दिया कि कोई भी धनुष उठाओ और उसे ले जाओ. जब वह रानी बनने वाली थी तो उसे बनवास मिल गया. जब वह मां बनने वाली थी और जिस समय उसे पति की सर्वाधिक आवश्यकता थी तब उसे जंगल में फिंकवा दिया गया. सीता की कहानी पढ़ कर पाठक को वही दर्द महसूस होता है जो भगवान वाल्मिकी ने मरते हुए पक्षी को देखकर महसूस किया था.

जिन लोगों ने उनके बारे में ऐसी अपमानजनक बातें अपने धर्म ग्रन्थों में लिखीं उन पर लानत है कोटि कोटि लानत!! ऐसी कथाएं बनाने वाले अपने गिरेबान में नहीं झांकते. उनके ऋषियों ने एक सें बढ़ कर एक कुकर्म किए हैं, उनके भगवानों ने हद दर्जे के अनाचार किए हैं. गैरों की तो छोड़ो उन्होंने अपनी बहन बेटियां तक नहीं छोड़ीं. सारी दुनिया जानती है कि ब्रह्मा ने अपनी बेटी सें कुकर्म किया था, राधा कृष्ण की सगी मामी है जिससें वह नित्य मैथुन करता था, शिव काम वासना में अन्धा होकर मोहिनी बने विष्णु के पीछे भाग लिया था. यह तो शुक्र हुआ कि भागते भागते उसका वीर्य सख्लित हो गया वर्ना पता नहीं विष्णु शिव के कितने बच्चों की मां बन जाता! हनुमान सीता को साफ बताता है कि राम के लिंग न होने के समान (हिजड़ा) है लेकिन उसे पुरुषोत्तम कहा जाता है. हनुमान के माँ अंजनि का पति केसरी है लेकिन अंजनि पवन नामक देव सें व्यभिचार करती है जिससें उसके

गर्भ रह जाता है तथा हनुमान पैदा होता है. भारतीय लोग जानते हैं कि गैर बाप की औलाद को क्या कहा जाता है. उनकी यह सूचि अन्तहीन है. इसलिए दलित महापुरुषों के बारे में बकवास करने सें पहले उन्हें अपने गिरेबान में झांक लेना चाहिए. उन्हें राजस्थानी कहावत सें सीख लेनी चाहिए कि तवो तो बौलै सो बौलै, चालणी भी बौलै जीमै कौतर सो बेज! यानि तवा तो बोले सो बोले, देखो छलनी भी बोलती है जिसमें इक्हतर सो छेद हैं!!

होने को तो महाभारत का लेखक **व्यास भी आधा शूद्र** है लेकिन उसने अगर महाभारत लिखने का गुण पाया तो निश्चित रूप सें अपनी शूद्र माँ सत्यवती सें ही आया क्योंकि बाप के गुणों के अनुरूप तो उसने बलात्कार करके पांडू और धृतराष्ट्र ही पैदा किए.

प्रसद्ध कवि **कालीदास भी शूद्र** थे. अगर वे ब्राह्मण होते तो तुलसी की तरह अपनी रचनाओं में अपने बाप दादाओं को ब्राह्मण बताते, अपने पूरे खानदान का इतिहास बताते तथा साथ में अपनी रचनाओं में ब्राह्मणों और उनके देवों की स्तुति करते मगर उनकी रचनाओं सें ऐसा कुछ भी नहीं मिलता जो यह दर्शाता हो कि वे ब्राह्मण थे. सबसें अहम बात यह है कि ब्राह्मणों की रचनायें हमेशा अनाचार का पक्ष लेकर उसे धर्म बताने का प्रचार करती हैं लेकिन दलित लेखकों की रचनायें हमेशा इन बातों सें दूर रहती हैं. गीता जैसी ब्राह्मणिक रचनायें जूए की सम्पत्ति के लिए लड़ने मरने को धर्म बताने का अपदेश देती हैं, मनुस्मृति जाति के आधार पर समाज को बांटने को धर्म बताती हैं. कालीदास की रचनाओं में ऐसी बातों का अभाव यह दर्शाता है कि वे ब्राह्मण नहीं थे.

कल्हण जिन्होंने कश्मीर का इतिहास लिखा, **बाण बट्ट** ''कादम्बरी'' जैसे महाकाव्य के रचियता, **विष्णु गुप्त** पंचतंत्र व हितोपदेश के रचियता आदि सभी शूद्र थे. ब्राह्मण कुल में तो दो ही नग पैदा हुए हैं एक था मनु जिसने पूरे भारत को जाति प्रथा और छूआछात के पाप सें कलंकित कर दिया तथा दूसरा था तुलसी जिसने पूरी स्त्री जाति को गाली दी.

कुलीन : अर्थात राज घराने वाले लोग. गुरू रैदास जानते थे तथा इतिहास गवाह है कि आदि काल सें लेकर चौथी सदी तक भारत पर मात्र शूद्र कुल के लोगों का राज ही रहा है. (राधाकृष्णन : धर्म और समाज प् 156) पुराणों में चाहे लाख किस्से कहानियां हों कि सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी क्षत्रिय चक्रवर्ती राजा होते थे लेकिन हकीकत यही है कि दसरथ जैसा चक्रवर्ती राजा अयोध्या जैसे गांव का राजा होता था जिसके पास **मात्र एक** सुमंत्र नाम का नौकर होता था जो उसका रथ भी हांक लेता था तथा मन्त्री बन कर सलाह भी दे देता था. जिस राजा के मन्त्री और रथवान के काम एक ही आदमी करता हो तो सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि वह कितना बड़ा चक्रवर्ती राजा होगा.

नन्दवंश, मौर्य वंश और गुप्त राजाओं के शूद्र होने पर किसी को कोई शक नहीं है. सम्राट अशोक जैसा प्रजापालक राजा न कभी हुआ और न कभी हो सकता है. अतः गुरू रैदास ने दलितों को कुलीन बता कर सच्चाई को ही उजागर किया है.

दार्शनिक : भगवन बुद्ध दुनिया के सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक हुए हैं. वे उसी क्षत्रिय कुल सें हैं जिसने ब्राह्मणों के विरुद्ध संघर्ष किया था तथा हार जाने पर "शूद्र" बना दिए गए थे. आज अधिकतर शूद्र उन्हीं के वंशज हैं. उन्हीं के संघ में सें महात्मा रावण का उदय हुआ. गुरू रैदास ने अपनी वाणी में महात्मा रावण का तो जिक्र नहीं किया मगर राम पुत्र दसरथ को जरूर अपना रामजी नहीं माना. **यह बात बहुत हैरान करने वाली है कि किसी भी दलित सन्त ने महात्मा रावण की बुराई नहीं की है और सभी के सभी सन्तों ने राम पुत्र दसरथ को अपना राम मानने सें इंकार किया है!** यह अहम तथ्य है. हमारे विचार में दलित विद्वानों को इस पर संजीदगी सें गौर करना चाहिए कि ऐसा क्यों है कि सन्तों ने राम पुत्र दसरथ को तो दुत्कार दिया मगर महात्मा रावण पर चुप्पी क्यों साध गए!!

अर्थ शास्त्र के रचियता **कौटिल्य** को भी ब्राह्मण घोषित किया गया है. कथा बनाई गई है कि उनका नन्दवंश के राजा सें झगड़ा हो गया तथा उसने अपनी चोटी खोल कर प्रतिज्ञा की कि वह उस शूद्र राज्य को समाप्त कर देंगे. तब उन्होंने शूद्र बालक चन्द्रगुप्त को 'राजा राजा' खेलते देखा और उन्हें ट्रेनिंग देकर योद्धा बना दिया. बाद में उन्होंने मगध के नन्दवंश पर हमला करके उसे नष्ट कर दिया.

ऐसी बातें कोरी कल्पना के सिवाय कुछ नहीं हैं. जैसे ब्राह्मणों ने गुरू रैदास को ब्राह्मणधर्मी सिद्ध करने के लिए स्वयं के हारने वाले किस्से घढ़ लिये वैसे ही उन्होंने कौटिल्य को ब्राह्मण सिद्ध करने के लिए यह किस्सा घढ़ लिया. जबकि सच्चई यह है कि **मौर्य काल में कोई भी भारतीय चोटी नहीं रखता था**. चोटी रखने का रिवाज छटी सातवीं सदी में शुरू हुआ. अतः यह किस्सा बोगस है. वैसे भी चन्द्रगुप्त नाग वंशी राजघराने सें थे. अतः उन्हें राजा बनने के लिए किसी ब्राह्मण की सहायता की जरूरत ही नहीं थी. कौटिल्य उन्हीं की तरह शूद्र कुल सें थे. उनके अर्थ शास्त्र सें ब्राह्मणिक धर्म की बू नहीं आती. अगर वे ब्राह्मण होते तो अपने पूरे खानदान का इतिहास लिखते.

इसी तरह राजा कृष्णराव के मन्त्री **तेनाली राम** थे जिन्होंने पग पग पर ब्राह्मणधर्म का नाश किया. **प्रसिद्ध गणितज्ञ आर्य भट्ट भी शूद्र थे जिन्होंने पूरे विश्व को "0" शून्य का ज्ञान दिया. उनका खोजा हुआ यह '0' ही है जिसके आधार पर आज कम्प्यूटर काम कर रहे हैं.**

पाई (π) का मूल्य भी दलित गणितज्ञ बुद्धायण ने पहले पहल ज्ञात किया. अतः यह आश्चर्य की बात नहीं कि सिन्धु सभ्यता के नगरों की सभी सड़कें और गलियां गणित के अनुपात सें बनाई गई हैं. भास्कर ने इस बात की गणना की कि धरती कितने समय में सूर्य का चक्र लगाती है. जब ब्राह्मणों को सूर्य देव कुन्ती को गर्भवती बना रहा था, दलित सभ्यता के लोग असली सूर्य का ज्ञान ढूंढ रहे थे. सूर्य ग्रहण चन्द्र ग्रहण कब और कैसे लगेंगे, इन प्रश्नों का उत्तर ढूंढ रहे थे.

योगी सन्यासी : सन्त सम्बूक, उपालि उनके समकालीन सभी सन्त, दलित कुल सें थे. कबीर दादू दयाल, नामदेव, फरीद, नाभादास, बुल्लेशाह, पल्टू, परमेष्ठी, सैन, धन्ना, गोराजी, कुबाजी, सिंगाजी, जोगा परमानन्द, तुकाराम, बीठल व सावंता, चोखामेला, रघुजी, नानक, ज्योतिबा में सें कोई भी ब्राह्मण या क्षत्रिय कुल सें नहीं था. सबके सब 'नीची जाति' वाले थे. ब्राह्मण जाति में तो तुलसी जैसे पैदा हुए हैं जिसने अपनी माँ बहन तक के लिए कह दिया : नारी ताड़न की अधिकारी!

शूरवीर : महराजा रावण सें दलित शूरवीरों की गाथा शुरू होती है जो आज तक अनवरत चली आ रही है. एकलव्य, इन्द्र को जीतने वाले मेघनाद, चन्द्र गुप्त मौर्य, झलकारी बाई, गुरू गोबिन्द सिंह के पांच प्यारे धर्म सिंह (खत्री), दया सिंह (कलाल), हिम्मत सिंह (खाती), मोहकम सिंह(छीपी), साहिब सिंह (नाई) आदि सें होती हुई सरदार भगत सिंह, करतार सिंह सराभा तथा उधम सिंह कम्बोअ तक यह वीरों की गाथा बिना रुके चल रही है. **कोई ब्राह्मण उस सभा में गुरू का प्यारा बनने नहीं आया जिनकी खातिर गुरू गोबिन्द सिंह ने अपना सारा वंश न्योछावर कर दिया. ब्राह्मण तो ऐसे कृत्धन थे कि ऐसे महान पुरुष के बेटों को गंगू नामक ब्राह्मण ने धन की खातिर सरहिंद की दीवारों में चिनवा दिया था.**

ज्ञानी : सुश्रुत, चरक तथा जीवक शूद्र अर्थात दलित समाज सें थे. उन्हें सर्जरी यानि शल्य चिकित्सा का पिता माना जाता है. जिस जमाने में (अगर ठेठ गांव वाली भाषा में कहा जाए) आर्यों को जंगल जाकर हाथ धोने की अक्ल नहीं थी तथा जब वे पशुओं की तरह बच्चे पैदा करने का कार्य करते थे उस समय दलित समाज की सिन्धु सभ्यता में सुश्रुत तथा जीवक जैसे वैद्य जन्म ले रहे थे जो उस जमाने में भी **आँख तथा दिमाग का आप्रेशन** तक कर देते थे. आर्युवेद उन्हीं की चलाई हुई चिकित्सा पद्धति है. उनके पास 125 सें अधिक चिकित्सा के औजार पाये गए हैं.

सिन्धु सभ्यता के नन्दवंशी नाग राजाओं द्वारा विश्व की प्रथम यूनिर्वसिटी यानि विश्वविद्यालय तक्षशिला ईसा सें 700 साल पहले स्थापित किया था. उन्होंने ही नालन्दा विश्वविद्यालय इसके 300 साल बाद बनवाया. यहां विश्व भर के देशों सें आए 20 हजार विद्यार्थी एक साथ पढ़ते थे. **यही वह समय था जब भारत सोने की चिड़िया कहलाता था. इन विश्वविद्यालयों को हत्यारे ब्राह्मण पुष्यमित्र ने तुड़वा दिया था क्योंकि कोई भी विद्याार्थी यहां ब्राह्मणधर्म के ग्रन्थ पढ़ने नहीं आया था. क्या यह गर्व की बात नहीं है कि सभी विदेशी विद्याार्थी यहां बुद्ध धर्म ही सीखने आए तथा अपने साथ केवल बौद्ध ग्रन्थ ही लेकर गये. एक भी विद्यार्थी अपने साथ थोथे ज्ञान की डींगें मारने वाले ब्राह्मणधर्म की गीता, पुराण, वेद या उपनिषद को लेकर नहीं गया!!**

दानी : कर्ण को जन्म देने वाले मांबाप चाहे घटिया रहे हों लेकिन उसे पाला एक कुम्हार ने था. शूद्र के संस्कारों की वजह सें ही वह दानवीर कर्ण कहलाया. वर्ना उसी के माँ के जाये युधिष्ठर ने दान तो क्या करना था जूए में अपने छोटे भाई की पत्नि तक को हार गया. और अब कलियुग में बाबा साहिब जैसा दानी कहां मिलेगा जिन्होंने पूना पैक्ट करके गांधी को जीवन का दान दे दिया. कहीं बाबा साहिब ने दान न दिया होता तो गोडसे की गोलियां खराब न होतीं!

यह एक आश्चर्यजनक सच्चाई है कि भारतीय समाज में जितनी भी नैतिकता, ज्ञान, दर्शन की बातें हुई हैं वे सभी दलित समाज के लोगों की देन हैं. **और यह दलित समाज के लिए गौरव की बात है कि आज तक जितने भी विदेशी भारत में शिक्षा ग्रहण करने आए हैं, वे सब के सब मात्र उनके श्रमण धर्म का अध्ययन करने ही आए हैं. आज तक किसी विदेशी यात्री ने भारत में आकर गीता पुराण या वेद नहीं पढ़ा और न ही अपने साथ इनमें सें किसी किताब को अपने साथ लेकर गया है.** सभी विदेशी यात्री अपने साथ दलितों द्वारा रचित त्रिपिटक की पुस्तकें ही अपने साथ लेकर गए है. ब्राह्मणवादियों ने तो सिर्फ कर्मकांडों और पाखण्डों को ही धर्म बताया है. श्रमण धर्म नैतिकता, सदाचार और सच्चाई का रास्ता है. असहाय की सहायता करना, दुखियों के दुख बांटना, पशुओं पर दया करना, बड़ों का आदर करना आदि सभी नैतिक बाते श्रमण धर्म द्वारा ही सिखाई गईं हैं.

गुरू रैदास का एक अन्य श्लोक भी है जिसे हर लेखक ने, चाहे वह दलित हो सवर्ण हो, विश्वविद्यालय का प्रोफैसर हो या साधारण कथावाचक हो, सभी ने उसे गुरू रैदास द्वारा भगवान को सम्बोधित किया माना है. उनका श्लोक है:

जब हम होते हैं तो तुम नांहि!
जब तुम होते हो तो हम नांहि!!
अब तमु ही तुम हो, हम नांहि!!

हमने अपनी पुस्तक में सन्तों सभी के श्लोक साधारण हिन्दोस्तानी भाषा में लिखे हैं ताकि किसी को समझने में अधिक कठिनाई न हो. अतः उपरोक्त श्लोक का अर्थ आसानी सें समझ आने वाला है. उनका कहना है कि जब हम होते हैं तो तुम नहीं होते. जब तुम होते हो तो हम नहीं होते. अब सिर्फ तुम ही तुम हो हम नहीं हैं.

अन्य विद्वान इसका भावार्थ करते हैं कि गुरू रैदास ने यह पंक्तियां भगवान को सम्बोधित की हैं कि जब तक मेरे में अहंकार था मैं स्वयं को ही मानता था तुम्हें नहीं मानता था. जब मैंने भगवान को मान लिया तो मेरा अभिमान समाप्त हो गया. इसलिए अब हे भगवान तुम ही तुम हो हम नहीं हैं.

हमें यह कहने में रत्ती भर भी संकोच नहीं है कि जो विद्वान इस श्लोक का अर्थ इस प्रकार सें करते हैं उन्होंने गुरू रैदास को समझा ही नहीं है. उनके संघर्ष, उनके लक्ष्य को समझा ही नहीं है. जिस किसी ने भी इस श्लोक के अर्थ को भगवान सें जोड़ा है, उसने ब्राह्मणवाद का चश्मा पहन कर ऐसा किया है. जिस मकसद के लिए सन्त सिपाही रैदास ने अपने जीवन का बलिदान दिया, ऐसा अर्थ उस मकसद के विपरीत है. इसके कारण हैं :

1. गुरू रैदास और उनके हमसहरी गुरू कबीर ने कभी भी **रहस्यवादी बाते नहीं की हैं**. उन्होंने जो कहना होता था भगवन बुद्ध की तरह सीधे सपाट स्पष्ट शब्दों में कहते थे. उन्हें राम पुत्र दसरथ पसन्द नहीं था तो उन्होंने साफ कहा **रैदास हमारे राम जी दसरथ का सुत नांहि**. ब्राह्मण को ऊंचा नहीं माना तो स्पष्ट कहा : जो तू बामण बामणी जाया तो आन बाट क्यों नहीं आया. जब उन्होंने भगवान सें बात की तो स्पष्ट कहा प्रभु जी तुम चंदन हम पानी, तुम दीपक हम बाती. अगर यह पद भी भगवान सें कहना होता तो वे साफ तौर पर भगवान का नाम लेते और साफ कहते प्रभुजी जब तुम होते तो मैं नांहि.
2. गुरू रैदास स्वयं और भगवान में कभी कोई अंतर नहीं मानते. उनका मानना था : तोहि मोहि अंतर कैसा कनक कटिक जलतरंग के जैसा. अर्थात हे भगवान तेरे और मेरे में कोई अंतर नहीं है वैसे जैसे सोने और उससें बने जेवरों में कोई अंतर नहीं होता जैसे पानी और उसमें उठने वाली लहरों में कोई अन्तर नहीं होता. सन्त कबीर ने कहा : राम कबीरा एक है कहन सुनन में दोय! जब वे भगवान और स्वयं में अंतर ही नहीं मानते तो ऐसे शब्द भगवान को कहने की जरूरत ही नहीं है.
3. उन्होंने दलितों के लिए राजनीतिक सत्ता मांगी, दलितों का राज्य बेगमपुरा बसाने का आहवान किया. इस संघर्ष में उन्होंने अपने प्राणों की बाजी भी लगाई. उनके द्वारा दलित राज्य मांगने और इस मकसद के लिए दलितों को शिक्षित करने के जुर्म में ब्राह्मणों ने उनकी लाठी डण्डों सें पीट पीट कर हत्या कर दी और उनकी बाणी भी जला दी. अगर गुरू रैदास यह शब्द भगवान सें कहते तो ब्राह्मणों को उन्हें कत्ल करने की वजह नहीं बनती थी.
4. यह पंक्तियां उस पद के साथ आई हैं जहां गुरू रैदास ने दलितों को अछूत राज्य छिन जाने की बात बताई है. जहां उन्होंने इस बात का अफसोस जाहिर किया है कि दलित उनसें कहते हैं कि अछूत राज के बारे में पहले तो किसी ने उनको बताया नहीं. जहां उन्होंने रस्सी को सांप समझने की भूल करने की बात बताई है. अतः वहां भगवान को ऐसा कहने की कोई तुक नहीं बनती.
5. अतः **गुरू रैदास ने यह शब्द सीधे सीधे ब्राह्मणों को कहे थे कि जब अशोक काल में हमारी सत्ता थी तो तुम्हारा अन्याय नहीं चलता था. तुम्हारी हैसियत नहीं के बराबर थी. जब उनके पौत्र सम्राट वृहदर्थ की हत्या करके तुमने दलित राज्य छीना तो उसके बाद तुम ही तुम हो. हमारा कुछ भी नहीं रहा.** तब सें लेकर आज तक तुम ब्राह्मण ही सत्ता पर काबिज हो हम दलितों को कुछ भी नहीं है. जब गुरू रैदास ने ऐसी बातों का प्रचार किया तब ब्राह्मणों ने अपनी साम दाम दण्ड भेद की नीति में सें दण्ड का सहारा लेते हुए उनकी हत्या कर दी बिल्कुल वैसे ही जैसे सदियों पहले उन्होंने सम्राट वृहदर्थ की हत्या की थी.

6. इस श्लोक में गुरू रैदास ने "हम" का प्रयोग किया है जबकि सभी सन्त अहंकार के लिए "मैं" का प्रयोग करते हैं. गुरू रैदास ने जब भी अपनी बाणी में "हम" का प्रयोग किया है तो पूरे दलित समाज के लिए प्रयोग किया है.

उपरोक्त सभी पदों को मिला कर एक बात साफ होती है कि जब "हम" दलितों की सत्ता थी तो भारत के लोग गुणी, ज्ञानी थे. उसी समय ही विदेशी विद्वान यहां ज्ञान प्राप्ति के लिए आते थे. वे सिर्फ "हमारा" ज्ञान ही लेने आते थे. भारत में हजारों लाखों विदेशी विद्वान आए आज तक उनमें सें *एक भी* अपने साथ वेद पुराण या गीता लेकर नहीं गया. कहीं भूले भटके सें भी कोई प्रसंग नहीं आता कि फलां विदेशी आया और उसने यहां भारत में ब्राह्मणग्रन्थ पढ़े या जाते समय अपने साथ किसी ब्राह्मण ग्रन्थ को ले गया. सबके सब विदेशी केवल और केवल श्रमण धर्म का अध्ययन करने आए तथा सन्तों की बाणी ही लेकर गए.

सो जब रैदास जी यह विद्या कभी न नासी कहते हैं तो इसका अर्थ यही है कि **हमारी विद्या सदाचार की विद्या** है जिसका कोई नाश नहीं कर सकता. आम के पेड़ के साथ कितने भी आक उग लें वे आम की बराबरी कभी नहीं कर सकते!! जब भारत पर दलितों को शासन था तभी भारत सोने की चिड़िया कहलाता था. जब यहां वैदिक यज्ञ करके पशु मारे जाते थे या कृष्ण द्वारा एक जुआरी सें दूसरे जुआरी को मारने का गीता ज्ञान दिया जाता था उस समय का भारत सोने की चिड़िया नहीं कहलाता था. समय साक्षी है और साक्षी रहेगा : **दलित सत्ता लौटेगी और भारत फिर सें सोने की चिड़िया बनेगा.**

दूसरा तथ्य
दलित गुलाम हैं!
पराधीनता पाप है, जान लेवो रे मीत!

गुरू रैदास ने जो दूसरा तथ्य उजागर किया वह यह है कि दलितों सें उनका राज छीन लिया गया है. उनका पढ़ने लिखने नहीं दिया जाता. उनके समय दलितों की हालत बहुत ही बुरी और दयनीय थी. बेगारी छूआछूत उस समय चरम सीमा पर थी. गुरू रैदास कहते हैं कि दलित गुलाम है. दलितों की दुख तकलीफें देख कर उनका मन द्रवित हो उठा. वे बोले :

दारिद देख कर हर कोइ हसैं ऐसी दसा हमारी

उस समय सें लेकर अब तक दलितों की हालत में बहुत अधिक अन्तर नहीं आया है. वर्तमान में धन और सामर्थ्य होते हुए भी दलित आज भारत के अनेकों भागों में दूल्हे को घोड़े पर सवार करके नहीं ले जा सकते. बाबू जगजीवन राम द्वारा उदघाटन की गई मूर्तियां गंगाजल सें धोकर पवित्र की जाती हैं. अभी सन 2007 में अखबारों में एक ओर गणतन्त्र दिवस मनाने खबरें थीं तो दूसरी ओर हिमाचल की खबर लगी थी कि सरकार द्वारा स्कूल में जो दोपहर का खाना दिया जाता है वहां दलित बच्चों को बर्तन अपने घर सें लाने पड़ते हैं तथा उन्हें बाकी बच्चों सें दूर बैठा कर खाना दिया जाता है. गुरू रैदास कहते हैं यही गुलामी है. दलितों को बिना कसूर के सजा दी जा रही है और दलित चुपचाप सहन किए जा रहे हैं, चुपचाप अत्याचार सहने की प्रवृति को ही तो गुलामी कहते हैं.

बाबा साहिब के अनुसार गुलामी दो प्रकार की होती है. शारीरिक गुलामी तथा दिमागी गुलामी. शारीरिक गुलामी का सीधा सा अर्थ है बेगारी. अर्थात जहां आदमी को मजबूरी में काम करना पड़ता है तथा उसे काम के बदले में कुछ भी नहीं दिया जाता. इस गुलामी सें छुटकारा पाना बहुत ज्यादा कठिन नहीं होता. लेकिन जहां आदमी दिमागी तौर पर गुलाम हो जाए उसे गुलामी सें आजाद करवाना बेहद कठिन होता है क्योंकि दिमागी तौर पर गुलाम आदमी यह मानने को ही तैयार नहीं होता कि वह गुलाम है.

दिमागी तौर पर गुलाम होने की कुछेक कड़वी उदाहरणें हैं :

- राम पुत्र दसरथ ने दलित सन्त शम्बूक की पूजा करते समय गला काट कर हत्या कर दी. उनका कसूर यह था कि शूद्र होते हुए भी उन्होंने स्वयं शिक्षा प्राप्त की तथा दलितों को शिक्षा देने का काम किया था. उन पर झूठा आरोप लगाया गया कि उनकी शिक्षा प्राप्त करने सें ब्राह्मण का बेटा मर गया है. अगर दलितों द्वारा शिक्षा लेने सें ही ब्राह्मणों के बेटे मरते हैं तो अब तक तो भारत में एक भी ब्राह्मण नहीं बचना चाहिए था. उनके बेटे तो कभी के मर लिए होते. दलितों की दिमागी गुलामी का सबूत यह है कि ऐसे निर्मम हत्यारे को वे भगवान मानते हैं.

- हजारों सालों सें दलितों पर जुल्म होते आए हैं मगर उन्होंने इसे अपनी किस्मत या नीयति माना हुआ है. वे यह मान बैठे हैं कि उनकी दयनीय हालत इसलिए है कि उन्होंने पिछले जन्म में बुरे कर्म किए थे. उन्होंने कभी भी नहीं सोचा कि अगर अच्छे कर्म करने सें ही ऊंची जाति मिलती है तो फिर ऊंची जाति के लोग भी लूले लंगड़े अंधे अपाहिज क्यों पैदा होते हैं. अगर बुरे कर्मों की वजह सें ही आदमी दलित के घर पैदा होता है तो दलित के घर पैदा होकर भी बाबा साहिब अम्बेडकर दुनिया के सबसें अधिक पढ़े लिखे व्यक्ति क्यों बन पाए, क्यों वे भारत के कानून मन्त्री बन पाए. क्यों वे मनुस्मृति का नाश करके अपना संविधान बना पाए. क्यों माननीय के आर नारायणन भारत के राष्ट्रपति बनते हैं और सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रपति कहे जाते हैं. माननीय के जी बालाकृष्णन सबसें कम उम्र के भारत के सर्वोच्च न्यायधीष बनते हैं जिनका एक एक शब्द कानून है. गीता तो वैश्यों और दलितों सब को पाप योनि अर्थात पिछले जन्म में पाप करने वाले बताती है. इन जातियों के अनेकों व्यक्ति उच्च अधिकारी हैं जिन्हें उनके ब्राह्मण चपरासी सुबह शाम सल्यूट मारते हैं. अगर ब्राह्मण पुण्य करने पर पैदा होता है तो उसे पाप योनि को क्यों सल्यूट मारने पड़ते हैं.
- **उनकी दिमागी गुलामी की एक उदाहरण यह भी है कि उन्होंने कभी नहीं सोचा कि वे उन मंदिरों के मालिक बनें जिनके भगवानों को वे अपना भगवान मानते हैं.** यह बात उनके दिमाग में आती ही नहीं है कि वे भी उन मंदिरों के पुजारी बने जहां सदियों सें वे अपना सिर झुकाते आए हैं. यह हमारी दिमागी गुलामी ही है कि हम यह मान बैठे हैं कि केवल ब्राह्मण ही पुरोहित बनेगा. भगवान को पिता कहा जाता है. तो ऐसा क्यों है कि उसका एक बेटा (ब्राह्मण) ही उसके घर, सम्पत्ति (मंदिर, घाट) का वारिस बनता है. बाकी बेटे वारिस बनने का ख्वाब भी नहीं देखते. ऐसा नहीं सोच पाना हमारी दिमागी गुलामी की निशानी ही तो है. ब्राह्मण आज चमड़े का व्यापार करने लग गए हैं, सुनार का काम करने लग गए है, हलवाई का काम करने लग गए हैं यहां तक कि सुलभ सौचालय भी चलाने लग गए हैं लेकिन आज तक एक भी दलित ने किसी मंदिर का पुजारी नहीं बन पाया है. बनना तो दूर कभी किसी ने आवाज भी नहीं उठाई कि उसे पुजारी बनाया जाए!! यही गुलामी है!!
- हमारी दिमागी गुलामी की एक और उदाहरण यह है कि हम गुरू रैदास को पिछले जन्म का पापी ब्राह्मण कहने पर चुप रहते हैं, गुरू कबीर को ब्राह्मणी की नाजायज सन्तान कहने पर चुप रहते हैं लेकिन ब्राह्मणधर्म के जन्म तथा कर्म सें नाजायज लोगों को हम भगवान मान लेते हैं. महाराजा रावण जैसे महात्मा के पुतले हर साल जला कर हम खुश होते हैं. हर साल रामलीला की जाती है उसमें भीलनी के बेर खाते तो राम को हर बार दिखाया जाता है लेकिन भगवान वाल्मिकी का एक दृश्य भी नहीं दिखाया जाता. अगर वे सीता को नहीं बचाते तो राम का नाम लेवा पानी देवा कोई नहीं बचता. दलितों द्वारा यह मांग नहीं करना कि राम के वंश को बचाने वाले हमारे भगवान को भी रामलीला में दिखाया जाए तथा हमारे सन्तों को पापी या हरामी कहने की हिमाकत न की जाए, दलित समाज की दिमागी गुलामी को ही दर्शाता है.
- दलितों की दिमागी गुलामी की अन्य उदाहरण है. आज तक जितने भी दलित सन्त हुए हैं उन सभी ने ब्राह्मणधर्म का तिरस्कार करके श्रमण धर्म अपनाया है. हरेक सन्त ने वेद, पुराण, गीता आदि को गलत बताया है, उनका खण्डन किया है. हरेक सन्त ने उन्हें छोड़ने का आहवान किया है. सभी ने ब्राह्मणधर्म के हर कर्मकांड को पाखण्ड कहा है. ब्रह्मा सें लेकर राम तक, हर देव, हर भगवान को उन्होंने झूठ कहा है मगर दलित वहीं के वहीं हैं. वे उन्हें छोड़ते ही नहीं हैं. वे सभी दलित सन्तों की बाणी में सत्संग तो कर लेते हैं मगर ब्राह्मणधर्म के पाखण्डों को नहीं छोड़ पाते. उनकी हालत पिंजरे के तोते जैसी हो रही है जो खुला छोड़ने पर भी वापिस पिंजरे में ही घुसता है!! इसी को गुरू रैदास पराधीनता कहते हैं.

गुरू रैदास जानते थे कि दलितों की दयनीय हालत उनकी दिमागी गुलामी की वजह सें है. उनकी दयनीय हालत सें दुखी होकर गुरू रैदास बोले :

पराधीन का दीन क्या,
पराधीन बेदीन!
रैदास दास पराधीन को
सभी समझैं हीन!!

पराधीनता पाप है,
जान लेवो रे मीत!
रैदास दास पराधीन को,
कौन करे है परीत!!

अर्थात गुलाम की कोई जिन्दगी नहीं होती. उसे कोई अधिकार नहीं होता. वह अपनी मर्जी सें कुछ भी नहीं कर सकता. उसकी कोई अहमीयत ही नहीं होती. उसे वही करना पड़ता है जो उसका मालिक कहता है. उसका कोई धर्म नहीं होता. जो उसका मालिक कहे वही उसका धर्म बन जाता है.

महाभारत में भी कहा गया है कि ताकतवर आदमी के धर्म को ही कमजोर आदमी अपना धर्म मान लेता है. रैदास जी कहते हैं कि गुलाम को हर कोई कमजोर समझता है. कहावत है कि कमजोर की पत्नि को हर कोई भाभी कह लेता है. इसी तरह गुलाम पर हर कोई जुल्म कर लेता है. इसलिए गुरू रैदास दलितों को चेताते है कि पराधीनता को पाप समझें. **गुलाम के साथ कोई भी दोस्ती नहीं करता.** दोस्ती हमेशा बराबर वालों सें ही होती है. अतः कोई ब्राह्मणवादी दलित सें दोस्ती नहीं करेगा. उन्हें अपने दुख स्वयं मिटाने पड़ेंगे. उदाहरण के तौर पर मुगलों के पतन के बाद भारत कमजोर पड़ गया. दुनिया भर के देश भारत को लूटने के लिए आ गए. कोई भी देश भारत की सहायता करने नहीं आया. आज भारत ताकतवर है तो अमरीका भी भारत सें दोस्ती करने को लालायित है. यही हालत दलितों की है. वे गुलाम हैं : शारीरिक और दिमागी तौर पर दोनों ढंग सें. शरीर सें कुछ कम लेकिन दिमाग सें बहुत ज्यादा. वे आज भी अपने पूर्वजों के हत्यारों को भगवान मानने का पाप कर रहे हैं! इसीलिए गुरू रैदास ने कहा पराधीनता पाप है जान लेवो रे मीत!!

पराधीनता के कारण दलितों की क्या हालत है इस पर गुरू रैदास बोले : **दारिद देख कर हर कोई हंसै ऐसी दसा हमारी!** इसी दशा का उल्लेख करते हुए बाबा साहिब ने कहा कि जब ब्राह्मणी गर्भवती होती है तो वह सोचती है कि उसका बच्चा जज बनेगा, अध्यापक बनेगा, अफसर बनेगा लेकिन जब दलित महिला गर्भवती होती है तो वह सोचती है कि उसका बच्चा कमेटी में सफाई कर्मचारी बनेगा या मजदूर बनेगा या स्टेशन पर बूट पालिश करेगा. सैंकड़ों सालों की गुलामी ने दलितों को दिमागी तौर पर अपाहिज कर दिया है. गुरू रैदास ने इसी गुलामी को समाप्त करने का आहवान किया था. बाबा साहिब ने भी गुरू रैदास की तरह वही बात दोहराई कि दलित गुलाम हैं. इसीलिए **उन्होंने कहा कि गुलाम को यह समझाओ कि वह गुलाम है. वह निश्चित रूप में बगावत कर देगा.**

गुरू रैदास के अनुसार दलितों (गुलामों) का धर्म ब्राह्मणवाद नहीं है जो उनके ऊपर लाद दिया गया है. दलित ब्राह्मणवाद को अपना कर बेदीन हो गए हैं क्योंकि ब्राह्मणवाद धर्म है ही नहीं. माननीय लाहोरी राम बाली के अनुसार **ब्राह्मणधर्म तो धर्म के नाम पर कलंक है.** (हिन्दुइज्म धर्म या कलंक) जब दलितों ने धर्म की जगह ब्राह्मणवाद को अपनाया तो उन्हें अपना श्रमण धर्म त्यागना पड़ा. गुरू रैदास के अनुसार इसलिए हम बेदीन अर्थात अधर्मी हो गए हैं. दलितों का असली दीन सन्तों द्वारा बताया गया मार्ग है. और सन्तों का मार्ग ब्राह्मणवाद सें उलटा है, विपरीत है. अतः **दलितों को आजादी प्राप्त करनी है तो उन्हें ब्राह्मणवाद के इस जाल सें बाहर निकलना पड़ेगा.**

माननीय लाहोरी राम बाली के अनुसार ब्राह्मणवाद धर्म के नाम पर कलंक इसलिए है :

* क्योंकि ब्राह्मणवाद आदमी को जन्म के आधार पर ऊंचा या नीचा मानता है. तुलसी कहता है ब्राह्मण को पूजा जाना चाहिए चाहे वह चरित्रहीन हो, अज्ञानी हो, बेगुण हो लेकिन दलित का आदर भी नहीं किया जाना चाहिए चाहे वह कितना भी चरित्रवान और ज्ञानी क्यों न हो! इसीलिए दसवीं फेल ब्राह्मणवादी गांधी को देश का बापू बना दिया गया जबकि वह असल में क्या था उसी के शब्दों में : मो सम कौन कुटिल खल कामी, जिन तन दियो ताही बिसरायो ऐसो निपट हरामी!! अर्थात मुझ मोहनदास जैसा कौन धूर्त, गंदा, वासनामयी हो सकता है. मैं ऐसा पक्का हरामी हूं कि मैंने जन्म देने वाले को ही भुला दिया है. गांधी ने स्वयं अपनी औकात बता दी है हमें कुछ कहने की जरूरत ही नहीं है.

* क्योंकि ब्राह्मणवाद जन्म के कारण अपने ही अनुयाईयों को अछूत मानता है. उनको छूना, देखना भी पाप मानता है. आज भारत के अछूतों की आबादी अमरीका की आबादी सें भी ज्यादा है. बिना कसूर इतनी बड़ी संख्या में मानवों को सजा दी जाती है. सजा भी ऐसी कि जल्लादों के भी रोंगटे खड़े हो जाएं. बिना कसूर सजा देना धर्म का काम तो ही नहीं सकता.

* क्योंकि ब्राह्मणवाद में ऐसे लोगों को भगवान बताया गया है जो वास्तव में इन्सान कहलाने के भी हकदार नहीं हैं. उदाहरणतः उनकी त्रिमूर्ति में सें ब्रह्मा ने अपनी बेटी और पोती सें मूंह काला किया, विष्णु ने वृंदा सें बलात्कार किया (जिसे आजकल हम तुलसी के रूप में पूजते हैं.) शिव को सदा काम वासना में लिप्त रहने के कारण भृगु नामक ब्राह्मण के शाप सें लिंग बनना पड़ा. इन्द्र एक बार में पन्द्रह बीस बैल मार कर खा जाता था. लगभग सभी ऋषि वेश्याओं को देख कर अपना इमान गंवाए हुए हैं. वहां अपने छोटे भाई की पत्नि को जूए के दांव पर लगाने वाला धर्मपुत्र कहा जाता है. कृष्ण ने तो अश्लीलता और ओछेपन की सभी हदें पार कर दीं. ब्राह्मणों के भगवान के अवतार परशुराम ने बच्चे, जवान, बूढ़े क्षत्रिय तो मारे ही, उसने तो मांओं के गर्भ में पल रहे बच्चे भी निकाल कर अपने फरसे सें काट दिये. ऐसे कुकर्मी भगवानों की सूचि अन्तहीन है.

* क्योंकि ब्राह्मणवाद में पाप "छुड़ाने" के रास्ते नहीं हैं. वहां पापों के फल या सजा सें बचने के रास्ते हैं. सीधे और आसान! बस गंगा में डुबकी लगाओ, ब्राह्मणों को दक्षिण दो, गीता, भागवत का पाठ करो या करवाओ, बस सारे पाप माफ! उनके हर ग्रन्थ का महामात्य है कि उसका पाठ करो जितने मर्जी पाप किए हों सभी माफ हो जाते हैं! इसी तरह सें ही तो उनके त्रिमूर्ति और दूसरे भगवान अपने पापों की सजा सें छुटकारा पा सके थे.

* क्योंकि ब्राह्मणवाद में सदाचार की बजाए कर्मकांड ही धर्म है. सही मुहूर्त में छोटे भाई की बीवी को दांव पर लगाना भी धर्म है और बिना कर्मकांड के भगवान का नाम लेना भी अधर्म है. महाभारत में राजा नल की कथा है. वह युधिष्ठर की तरह पक्का जुआरी था लेकिन ब्राह्मणों को दान देता था इसलिए महान था. एक दिन बिना मूते संध्या करने बैठ गया. उसकी सारी ग्रह चाल बिगड़ गई. जूए में सब कुछ हार गया. अगर कहीं वह मूत कर संध्या करता तो उसकी पौ बारह हो जानी थी. यही ब्राह्मणधर्म है!!

कहा जा सकता है कि अब तो भारत आजाद हो गया है. कानून के अनुसार सब बराबर हैं. छूआछात को अपराध करार दे दिया गया है. अब तो दलितों को ब्राह्मणों सें अधिक अधिकार दे दिए गए हैं. अब उनको गुलाम कैसे कहा जा सकता है. दलित जाति के लोग तो राष्ट्रपति, मुख्य न्यायधीश, मन्त्री तक बनने लग गए हैं. अब कैसी गुलामी.

इसके उत्तर में सबसें पहली बात तो यह है कि दलितों में सें जो राष्ट्रपति बने हैं. पहले ज्ञानी जैल सिंह थे. उन्हे राष्ट्रपति क्यों बनाया गया, उन्हीं के शब्दों में : मैं इंदिरा जी का सिपाही हूं. उन्होंने मुझे राष्ट्रपति बना दिया. अगर वे मुझे झाड़ू लगाने को कहती तो मैं झाड़ू लगा लेता. सो ऐसे लोगों ने दलितों को बदनाम ही किया है, उन्हें पीछे ही धकेला है. हमारे अधिकतर मन्त्री भी ऐसे ही बनाए जाते हैं जो कहने को दलित होते हैं लेकिन जिनका काम मालिकों के आगे पूंछ हिलाना ही होता है. इसका कारण हमारी दरिद्रता है– दिमागी, आर्थिक, शारीरिक जैसी भी हो. सदियों के अभाव ने हमें हर पक्ष सें खोखला कर दिया है. लेकिन समय आने पर दलित अपना अस्तित्व जरूर दिखाते हैं. ज्ञानी जैल सिंह ने भी राजीव गांधी को प्रैस बिल पास नहीं किया. अगर वे प्रैस बिल को पास कर देते तो आज अधिकतर छोटे अखबार बन्द हो चुके होते. उन्होंने इन्दिरा गांधी सें वफादारी जरूर दिखाई मगर भारत और भारतीयों सें गद्दारी नहीं की.

भारत के दूसरे दलित राष्ट्रपति थे माननीय के आर नारायणन. जितने लायक जितने पढ़े लिखे वे थे वैसा उनसें पहले कोई राष्ट्रपति नहीं हुआ. अगर बीजेपी सरकार के समय वे राष्ट्रपति नहीं होते तो आज आरक्षण इतिहास बन चुका होता. माननीय के जी बालाकृष्णन अगर भारत के मुख्य न्यायधीष बने हैं तो इसमें उन पर कोई एहसान नहीं किया गया है. उन्होंने यह पद अपने दम पर अपनी योग्यता सें प्राप्त किया है. आज वे भारत के सबसें कम उम्र के मुख्य न्यायधीश बने हैं तो अपनी योग्यता सें. अपनी छोटी उम्र में ही उन्होंने सुप्रीम कोर्ट का न्यायधीश बनने की सारी योग्यताएं प्राप्त कर ली थीं मगर बीजेपी सरकार ने उन्हें कम उम्र होने के कारण न्यायधीश नहीं बनाया. अगर ऐसा कुछ कोई ब्राह्मण कर लेता तो दुनिया भर में उसके नाम के ढोल बजा दिए गए होते!

अतः जो भी दलित ऊपर तक पहुंच पाये हैं अपनी योग्यता के बल पर पहुंचे हैं. किसी ने उन पर एहसान नहीं किया है किसी ने खैरात नहीं दी है. अपने पद पर बैठ कर हर दलित ने अपनी योग्यता दिखाई है. अपने पद को सार्थक किया है.

आम तौर ब्राह्मणधर्मी लोग प्रचार करते हैं कि ऐसे दलित अधिकारी मात्र आरक्षण की वजह सें इन पदों पर पहुंचे हैं योग्यता (मैरिट) के आधार पर नहीं. उस समय वे दलितों को उनकी पराधीनता का एहसास कराने की कोशिश कर रहे होते हैं. वे दलितों को यह जताना चाह रहे होते हैं कि दलित कुछ भी कर पाने के काबिल नहीं हैं.

यह तो उन ब्राह्मणधर्मियों की दरियादिली है कि उन्होंने दलित लोगों को राष्ट्रपति मुख्य न्यायधीष तक बना दिया. जबकि सच्चाई यह है कि इन दलितों ने इन पदों तक पहुंचने के लिए ब्राह्मणधर्म के कई किलों को ध्वस्त करना पड़ा है. माननीय बालाकृष्णन की उदाहरण ही ले लें. योग्यता के आधार पर पांच साल पहले ही सर्वोच्च न्यायलय के न्यायाधीश बनने के काबिल हो गए थे. तत्कालीन राष्ट्रपति माननीय के आर नारायणन ने उन्हें न्यायधीश बनाने की सिफारिष की मगर सरकार और सर्वोच्च न्यायलय में बैठे ब्राह्मणवादी लोगों ने उन्हें कई साल तक न्यायधीश नहीं बनने दिया.

जहां तक इस बात का सवाल है कि अब तो संविधान द्वारा भी छूआछात समाप्त कर दी गई है, कानून बना कर दलितों को ब्राह्मणों सें भी अधिक अधिकार और सुविधाएं दे दी गईं हैं तो इस का उत्तर बाबा साहिब ने बड़े मार्मिक शब्दों में संसद में ही दे दिया था. उन्होंने कहा कि हमने संविधान के रूप में एक मंदिर बनाया था जिस पर देवताओं के आने सें पहले ही शैतानों ने कब्जा कर लिया है. उन्होंने बिल्कुल सत्य कहा था. आज तक हमारे सुनने में नहीं आया कि किसी भी व्यक्ति को छूआछात विरोधी कानून के तहत कभी सजा हुई हो. आरक्षण के बारे में रोजाना ही कोई न कोई बखेड़ा खड़ा किया ही जाता रहता है. कभी कोई अदालत तो कभी कोई सरकार इसमें अड़चन डालती ही रहती है. **आज तक किसी भी राजनीतिक दल ने आरक्षित सीटों सें अधिक दलित उम्मीद्वार चुनावों में नहीं उतारे हैं.** कांगेस को तीस साल सत्ता में बनाए रखने वाले बाबू जगजीवन राम जैसे काबिल राजनीतिज्ञ को भी हमेशा`आरक्षित सीट सें ही कांग्रेस ने टिकट दी थी.

भारत सरकार के निर्देश हैं कि जहां कहीं भी आरक्षण व्यवस्था है वहां पहले दलितों को सामान्य वर्ग में गिना जाएगा अर्थात जितने भी दलित विद्यार्थी या उम्मीद्वार सामान्य वर्ग में चुने जाऐं उन्हें मैरिट के आधार पर सामान्य वर्ग में चुना जाए. उसके बाद दलितों में सें आरिक्षत पदों पर भर्ती की जाए. उदाहरण के तौर पर 100 सीटें पर भर्ती करना हो तो 49 सीटें दलितों के लिए आरक्षित होंगी. शेष बची 51 सीटों पर जितने दलित उम्मीद्वार मैरिट के आधार पर आगे आएं उन्हें उन 51 सीटों पर चुना जाना चाहिए. ऐसे चयनित दलित उम्मीद्वार 49 आरक्षित सीटों के अतिरिक्त होंगे. परन्तु माननीय पासवान, लालू यादव कितने भी कानून बनवा दें लेकिन उन्हें लागू करने वाले तो वही ब्राह्मणवादी सोच के आदमी हैं जिनके अनुसार भंगी का काम झाडू लगाना ही है, कलैक्टर बनना नहीं!! कुछ पंगा हो जाए तो ऊपर अदालतें तो उन्हीं की हैं. नतीजा यह होता है कि अनारक्षित सीटों पर तो दलित क्या लगााने थे, उनकी आरक्षित साढे उनचास (49 ½) प्रतिशत सीटें भी भरी नहीं जाती.

बाबा साहिब द्वारा दिलवाए गए आरक्षण की वजह सें लाखों दलित परिवारों ने तरक्की की है. मगर अब इस आरक्षण की हड्डी पर मूंह मारना भी दलितों की गुलामी की निशानी बन गई है. ब्राह्मणवादी सरकार और उसके गुर्गे दलितों के आगे आरक्षण का मसला नित्य उठाए रखते हैं. दलित इसी चक्कर में पड़े रहते हैं कि कहीं उनसें आरक्षण छिन न जाए. **आरक्षण के चक्कर में वे यह कभी सोच ही नहीं पाते कि वे तो पूरे भारत के स्वामी हैं. दलित आरक्षण के नहीं, सत्ता के अधिकारी हैं. दलितों को यह जानना और मानना चाहिए कि यह भारत देश और भारत की सरकार दलितों की जागीर है. गुरू रैदास का भी यही आहवान है कि पराधीनता छोड़ो. सत्ता कब्जाओ!!**

तीसरा तथ्य
राजनीतिक सत्ता :
दलित आजादी की कुंजी

गुरू रैदास के अनुसार राजनीतिक सत्ता की प्राप्ति ही दलितों की आजादी की कुंजी है. जब तक दलित सत्ता पर काबिज नहीं होते सभी प्रकार के आंदोलन बेअसर या प्रभावहीन हैं. सच कहा जाए तो अगर भारत पर दलितों का शासन होता तो बाबा साहिब का धर्म परिवर्तन पूरे भारत का नक्शा ही बदल कर रख देता. आज इक्का दुक्का ही ब्राह्मणधर्मी कहीं नजर आता. लेकिन जिस समय बाबा साहिब ने धर्म परिवर्तन किया तब सें लेकर आज तक ब्राह्मणवादियों की सरकार है. अतः उनका मानवता का संदेश केवल गिनती के दलितों तक ही सिमट कर रह गया है. बुद्ध धर्म दुनिया में तभी फैला जब सम्राट अशोक ने इसे अपनाया यानि जब बुद्ध धर्म को राजनीतिक समर्थन मिला.

राजस्थानी भाषा में कहावत है कि अनबोले के तो दाने भी नहीं बिकते, बोलने वाले के बूमले भी बिक जाते हैं अर्थात जो आदमी बोल सकता है वह तो बिना दाने के बाजरे के सिट्टे भी बेच सकता है और जो बोल नहीं पाता वह अपने दानों के भरे सिट्टे भी नहीं बेच पाता. यह सत्य हर जगह लागू है. ब्राह्मणग्रन्थों में नैतिकता का एक भी

दाना नहीं है मगर उनके पास सत्ता है वे सुबह सें लेकर रात तक हर टीवी चैनल पर, हर रेड़ियो स्टेशन पर अपने धर्म का गुणगान किए जा रहे हैं. उनके बूमले बिक रहे हैं. बुद्ध धर्म के पास सदाचार के दानों के भरे सिट्टे हैं मगर वे बोल नहीं पाते सो बुद्ध धर्म केवल दलितों के कुछ घरों तक ही सीमित है. ब्राह्मणवाद की सच्चाई पर कोई एक शब्द भी बोल दे तो उनकी अदालतें सजा देने को तैयार बैठी हैं.

यही सत्ता जब तक दलितों के पास रही उन्होंने हर क्षेत्र में तरक्की की. गुरू रैदास कहते हैं :

हम बड़ कबि, कुलीन, हम पंडित हम जोगी सन्यासी!
ज्ञानी, गुणी, सूर, हम दाते, यह बुद्धि कभी न नासी!!

जब हमारे पास सत्ता थी हम कवि, कुलीन, पंडित, योगी, ज्ञानी सभी कुछ बन पाए लेकिन जब सत्ता छिन गई हम पर जुल्म हुए तो ऐसी स्थिति आ गई कि दारिद देख हर कोई हंसै ऐसी दसा हमारी! दलितों सें सत्ता छीन लेने के बाद ब्राह्मणों ने ऐसी चाल चली कि दलित आज तक नहीं उठ पाए. उन्होंने दलितों को शिक्षा देने पर पाबन्दी लगा दी. अगर किसी दलित ने महात्मा शम्बूक की तरह शिक्षा प्राप्त करने या आगे दलितों को पढ़ाने की हिम्मत की तो उन्हें राम जैसे हत्यारों ने कत्ल कर दिया.

विद्या या शिक्षा या पढ़ाई न होने सें दलितों के साथ ऐसा हुआ :

साधो, अविद्या अहित कीन, ताते विवेक दीप भया मलीन !

महात्मा ज्योतिबा के अनुसार विवेक मलीन होने सें शूद्र चरमरा गए. आज दलितों की दयनीय दशा अनपढ़ता के कारण ही है. इसीलिए दलित आज भ्रमाए हुए हैं. वे रैदास जी के कहे अनुसार सिंहासन पर सोये हुए राजा की तरह सपने में भिखारी बन कर दुखी हो रहे हैं. वे रस्सी को सांप समझ कर उससें डर रहे हैं. माननीय वी टी राजशेखर अपने "दलित वॅायस" के लगभग हर अंक में यही तथ्य दोहराते हैं. उनका कहना है कि अगर दलित इक्कठे होकर एक हुंकार ही मार दें तो ब्राह्मणवादी अमरीका सें पहले कहीं नहीं ठहरेंगे. गुरू रैदास ने भी अपने श्लोक में यही कहा है :

रज भुजंग प्रसंग जैसे है, अब कुछ मर्म जनाया!
अनिक कटक जैसे भूलि पड़ै, अब कहते कहन न आया!!

अर्थात अविद्या के कारण हम करोड़ों दलित अपनी शक्ति भूले पड़े हैं. ब्राह्मणवाद जैसी रस्सी को सांप समझ कर बिना कारण सें डर रहे हैं.

सत्ता प्राप्ति का रास्ता

गुरू रैदास ने स्पष्ट कहा है कि अविद्या ने हमारा अहित किया है. हमारी सत्ता छिन जाने के कारण हम अविद्या यानि अनपढ़ता की गहरी खाई में गिर गए हैं. अपनी खोई हुई सत्ता को फिर सें प्राप्त करने के गुरू रैदास ने जो रास्ता बताया बाबा साहिब ने उसे अपने मिशन का मूल मन्त्र बनाया है. उनके अनुसार सत्ता प्राप्ति का रास्ता है :

1. **शिक्षित बनो**
2. **संगठित बनो ; तथा**
3. **एकजुट होकर संघर्ष करो!**

पहला कदम : शिक्षित बनो और अविद्या को समाप्त करो

गुरू रैदास के अनुसार सत्ता प्राप्ति की ओर पहला कदम है कि दलित अपनी अविद्या का नाश करें. जब तक दलित अविद्या के दलदल सें बाहर नहीं आते वे सत्ता प्राप्ति की ओर बढ़ ही नहीं सकते. विद्या प्राप्ति का अर्थ स्कूल कॉलेजों में जाकर डिग्री लेना मात्र नहीं है. विद्या प्राप्ति का अर्थ है स्कूल कॉलेजों की शिक्षा के साथ साथ अपने विवेक को सुधारना, उसकी मलिनता दूर करना. उन्होंने कहा है कि अविद्या सें दलितों का विवेक मलिन हो गया है. वे भले बुरे, अपने पराए, शत्रु और मित्र की पहचान नहीं कर पा रहे हैं. अन्य शब्दों में कहें तो बुरों को भला समझने लग गए हैं तथा शत्रुओं को अपना मित्र समझने लग गए हैं. जिन लोगों ने उन्हें दबाया कुचला, वे आज उन्हीं की पूजा करने लगे हैं. वे अपने नायकों, वीरों, दानियों को भूल बैठे हैं. अपना इतिहास भुला बैठे हैं. अविद्या दूर करने के लिए ब्राह्मण ग्रन्थों को पढ़ो. उन्हें समझो कि वे दलितों को दबाए रखने के कौन कौन से हत्थकण्डे

बताते हैं. यह जानों कि किस ब्राह्मणिक देव, ऋषि या भगवान ने दलितों पर कैसे अत्याचार किए हैं. यह जानों कि उन्होंने दलितों को कैसे राजा सें भिखारी बनाया गया है. यह विद्या आजादी प्राप्त करने के लिए जरूरी है.

यह बात गुरू रैदास को मालूम थी कि दलितों सें सत्ता छीन कर उन्हें सदा के लिए पराधीन बनाए रखने के लिए ब्राह्मणों ने शूद्रों को शिक्षा देना बंद कर दिया है. गुरू रैदास ने फिर सें दलितों को शिक्षा देना शुरू किया. उनका यह कदम नेता जी सुभाष चन्द्र बोस द्वारा अग्रेजों के विरुद्ध आजाद हिन्द फौज खड़ी करने सें भी बढ़कर साहसिक कदम था. खेद की बात है कि दलित होने मात्र के कारण उनके इस साहस की किसी ने कद्र नहीं की! अगर कोई ब्राह्मणवादी ऐसा साहस पूर्ण काम कर गया होता तो वह कब का भगवान बना दिया गया होता!

अविद्या के इसी मलिन विवेक के कारण दलित क्रांतिकारी सन्त शम्बूक की हत्या करने वाले राम पुत्र दसरथ को दलित अपना "राम" माने बैठे हैं. ब्राह्मणधर्म को अपना धर्म माने बैठे हैं. गुरू रैदास ने दलितों की इस मलिनता को दूर करने के लिए ही कहा था : **रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहि!** उन्होंने यह भी कहा कि **"चारों वेद किए खंडोति"**! यह दलित समाज के विवेक की मलिनता ही है कि वे एक ओर तो गुरू रैदास को अपना गुरू मानते हैं लेकिन उनके स्पष्ट रोकने के बावजूद वे राम पुत्र दसरथ को अपना राम मानते हैं. उनके द्वारा ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म की हर छोटी बड़ी बात का खण्डन करने के बावजूद हम आज भी ब्राह्मणिक हिन्दू बने हुए हैं.

विवेक दीप मलिन : गुरू रैदास ने बड़े मार्मिक शब्दों में कहा है कि अविद्या के कारण हमारा विवेक मलिन हो गया है. हमारे विवेक पर अविद्या की यह मलिनता हमारे जीवन के हर अंग – **व्यक्तिगत, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक** हर जगह पर दिखाई पड़ती है.

व्यक्तिगत मलिनता : अविद्या के कारण दलितों के प्राणी के मन में हीन भावना ने घर कर लिया है. ब्राह्मणधर्मियों ने दिन रात प्रचार करके हर दलित के मन में यह बात बैठा दी है कि हर दलित नालायक है. उसमें द्विजों जितनी अक्ल अथवा योग्यता नहीं है. आज जहां यह कहा जाता है कि वह केवल आरक्षण की बैसाखी के बल पर ही घिसट रहा है. गुरू रैदास के जमाने में भी दलित ऐसे ही माने जाते थे. इसीलिए दलितों के मन सें हीन भावना दूर करने के लिए ही समस्त दलित सन्तों ने अपनी जाति पर गर्व करने का आहवान किया. गुरू रैदास के दसियों श्लोक हैं जहां उन्होंने स्वयं को बारम्बार **चमार** कहा है तथा यह भी कहा कि **बनारस के सारे ब्राह्मण तथा ब्राह्मणों का प्रधान उनके आगे दण्डवत प्रणाम करता है.** वे बोले :

जाके कुटुंब के ढेढ, सब ढोर ढुवंते फिरैं आजह बनारस आसा पासा!
आचार सहित विप्र करें दण्डवति, तिन तनै रैदास दासान दासा!!

मेरी जाति कुट बांढला, ढोर ढुवंता नित ही बनारस आसा पासा!
अब विप्र प्रधान तिहि करै दंडवति, तोरे नाम सरणाइ रैदासा!!

इन श्लोकों के माध्यम सें गुरू रैदास दलितों को यह संदेश देना चाह रहे हैं कि वे स्वयं को हीन न समझें. वे स्वयं में गुण पैदा करें. जैसे ब्राह्मण और उनका प्रधान (रामानन्द) उनके चरणों में गिरते हैं वैसे ही वे विप्र गुणी और सामर्थ्यवान दलितों के चरणों में गिरेंगे. अतः दलितों को अपने मन सें अविद्या की इस मलिनता को साफ कर देना चाहिए कि कोई भी दलित कुल में पैदा होने के कारण अयोग्य है. गुरू रैदास के अनुसार "मुर्दा पशु ढोने वाला ढेढ" भी गुणों में ब्राह्मणों सें बढ़ कर हैं. वे बोले :

रैदास जन्म के कारणे होत ना कोई नीच!
नर को नीच कर डाले है ओछे करमों की कीच!!

अतः किसी भी दलित को स्वयं को दलित कुल में जन्म लेने मात्र के कारण हीन समझना छोड़ देना चाहिए.

सामाजिक मलिनता : व्यक्तिगत मलिनता की तरह दलितों में सामाजिक मलिनता का दोष भी है. ब्राह्मणों की कुटिल चालों के तहत भारतीय समाज न केवल चार वर्णों में बांटा गया बल्कि हजारों जातियों और उप जातियों में भी बांट दिया गया. नतीजा यह हुआ कि हर आदमी अपनी जाति और उससें भी आगे अपने कुणबे तक ही सीमित होकर रहा गया है. बाबा साहिब के अनुसार इस ब्राह्मणिक जाति व्यवस्था में हर जाति अपनी अपनी मंजिल पर अपने अपने स्थान पर कैद है. न तो एक जाति वाला अन्य मंजिल पर जा सकता है और न ही दूसरे स्थान पर जा सकता है. इस तरह जातियों में न केवल दूरी है बल्कि ऊंच नीच भी है.

दलितों को ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तो नीचा समझते ही हैं, स्वयं दलित भी एक दूसरे को ऊंचा या नीचा समझते हैं. उदाहरणतः राजस्थान में रैगर कुछ समय पहले तक बलाइयों को अपने बराबर नहीं बैठने देते थे. अपने हुक्के में उनको कश नहीं लगाने देते थे. आज भी अनेकों दलित वाल्मिकियों का छूआ नहीं खाते. एक ही काम

करने वाले दलित जैसे कि चर्मकार भी आज दसियों जातियों में बंटे हुए हैं : चमार, बलाई, मेघ, रैगर, जटिया, जाटव, मोची, रविदासिया, खटीक आदि. यह जातियां आपस में रोटी बेटी का रिश्ता तो खैर रखते ही नहीं एक दूसरे को ऊंचा नीचा भी समझते हैं. अविद्या के कारण दलितों में यह सामाजिक मलिनता पनपी है.

अविद्या और विद्या का अन्तर ब्राह्मणों की व्यवस्था में स्पष्ट झलकता है. ब्राह्मणों में भी उप जातियां हैं. हर एक ब्राह्मण अपनी उप जाति को दूसरी ब्राह्मण उप जातियों सें ऊंचा बताता है. लेकिन वह ब्राह्मण कभी भी किसी अन्य ब्राह्मण उप जाति को दूसरी जाति सें नीचा नहीं बताता. शैव और वैष्णव ब्राह्मण आपस में कितना भी लड़े हो मगर किसी ने कभी भी बुद्ध धर्म का पक्ष नहीं लिया. सैंकड़ों दलित ऐसे मिल जाएंगे जो यह कहेंगे कि आरक्षण जाति की बजाए आर्थिक आधार पर होना चाहिए लेकिन **एक ब्राह्मण ऐसा नहीं मिलेगा जो यह कहे कि पुरोहिताई जाति आधार पर नहीं होनी चाहिए बल्कि योग्यता के आधार पर होनी चाहिए.**

इसी अविद्या के कारण दलितों ने अपने अपने सन्त भी बांट रखे हैं. भगवान वाल्मिकी केवल भंगियों तक सीमित कर दिए गए हैं. रैदास चमारों तक तो कबीर जुलाहों तक सीमित कर दिए गए हैं. **जबकि सच्चाई यह है कि दलितों के किसी भी सन्त ने मात्र अपनी जाति विशेष के लिए संघर्ष नहीं किया था. प्रत्येक दलित नायक ने पूरे दलित समाज की आजादी के लिए संघर्ष किया था.** जब सतगुरू कबीर ने ललकारा :

अगर तू बामण बामणी जाया, तो आन बाट क्यों नहीं आया!

या गुरू रैदास ने कहा : **जन्म के कारणे होत ना कोई नीच!**

या **जब भगवान वाल्मिकी ने कहा माँ और मातृभूमि स्वर्ग सें भी बढ़ कर है!**

तो उन्होंने मात्र अपनी जाति के लोगों के लिए ऐसा नहीं कहा था. सन्त शम्बूक ने मात्र अपनी जाति के लोगों को शिक्षा दिलाने के लिए अपने प्राण न्योछावर नहीं किए थे. महात्मा ज्योतिबा जैसे क्रांतिकारियों ने पूरे दलित समाज के लिए संघर्ष किया था. सोचने की बात है कि राम ने ब्राह्मणों और क्षत्रियों के सिवाय किसी का भला नहीं किया, कृष्ण का सारा जीवन जुआरी पांडवों के साथ बीत गया. ऐसे लोग तो पूरे समाज के भगवान थोप दिए गए लेकिन जिन सन्तों ने सारी मानवता के भले के लिए काम किया उन्हें मात्र उनकी जाति तक सीमित कर दिया गया. दुख की बात यह है कि दलितों ने इस बात को स्वीकारा भी है. यह उनकी दिमागी गुलामी की निशानी है. गुरू रैदास के कहने अनुसार अविद्या के कारण दलितों का विवेक दीप मलिन हो गया है.

मान्यवर कांशी राम के मैदान में आने सें पहले ब्राह्मणिक मीडिया ने बाबा साहिब तक को चमारों तक सीमित कर दिया था. सत्तर अस्सी के दशक में चर्मकारों के अतिरिक्त इक्का दुक्का ही दलित जाति के लोग होते थे जो बाबा साहिब का जन्म दिन या महापरिनिर्वाण दिवस मनाते थे. इसी सामाजिक मलिनता को दूर करने के लिए गुरू रैदास कहते हैं :

जात पात के फेर में उलझ रहे सब लोग!
मनुष्यता को खा रहा, रैदास जात का रोग!!

जात जात में जात है,
ज्यों केले में पात!
रैदास मानस न जुड़ सकै,
जब तक जात न जात!!

अर्थात ब्राह्मणों ने चार जातियां – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तो बनाई ही हैं. हर जाति के अन्दर सैंकड़ों उप जातियां, उप उप जातियां बना दी हैं. इसकी उदाहरण गुरू रैदास केले के तने सें करते हैं. केले के तने की एक परत उतारने पर नीचे दूसरी परत निकल आती है. ऐसा लगता है जैसे किसी ने पते के ऊपर पता लपेट दिया हो. जैसे केले के तने में पते के नीचे पता निकलता जाता है वैसे ही ब्राह्मणों ने भारतीय समाज में जाति के अन्दर जाति बना दी है. गुरू रैदास के अनुसार जब तक यह जाति की परतें समाप्त नहीं होती मानव सें मानव का रिश्ता नहीं बन सकता.

इस जाति बांट के कारण ब्राह्मण 3 प्रतिशत सें भी कम आबादी होने पर भी पूरे भारत पर शासन कर रहे हैं. पूरे भारत में अगर एक करोड़ छोटे बड़े पुरोहित हैं तो कुल मिला कर एक सौ भी गैर ब्राह्मण पुरोहित नहीं होंगे. दलितों की 85 प्रतिशत आबादी को 49 प्रतिशत आरक्षण देने पर अदालतें तक हो हल्ला मचा रही हैं. **लेकिन पुरोहिताई में ब्राह्मणों का 100 प्रतिशत आरक्षण है वहां कोई नहीं बोलता.** इसका कारण "जात जात में जात" का होना ही है. जिस दिन दलित आपसी जाति भेद मिटा देंगे उसी दिन ब्राह्मणवाद का अन्त हो जाएगा.

धार्मिक मलिनता : दुनिया में मात्र ब्राह्मणधर्म या ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म ऐसा धर्म है जो अपने ही धर्म के मानने वालों को पशुओं सें भी बदतर समझता है. जिसके धर्म ग्रन्थ अपने ही अनुयाइयों को देखना, छूना पाप करार देते हैं. इतना जुल्म होने के बावजूद दलित अभी तक इस धर्म में बने हुए हैं तो यह उनकी धार्मिक मलिनता की ही निशानी है. हिन्दू धर्म को छोड़ कर दुनिया का कोई धर्म छूआछात को धर्म का अंग नहीं मानता.

धार्मिक मामले में दलितों के अपने ही रीति रिवाज तथा मान्यताएं हैं जिनका ब्राह्मणधर्म सें कोई लेना देना नहीं है. उदाहरण के लिए दलितों द्वारा भैरों या भैरव की पूजा करना. कई ब्राह्मण ग्रन्थों में कथाएं हैं कि उनकी किसी माता ने भैरव को मारा था. यह विडम्बना ही है कि दलित भैरव को भी पूजते हैं तथा साथ में उनके कातिल को भी पूजते हैं. इसीलिए गुरू रैदास ने कहा :

पराधीन का दीन क्या, पराधीन बेदीन!!

उनके अनुसार दलित बेदीन हैं क्योंकि अगर दलितों का अपना कोई धर्म होता तो वे अपने नायकों के कातिलों को नहीं पूजते. गुरू रैदास के अनुसार ऐसा दलितों के मलिन विवेक के कारण ही है कि अपने वीरों के कातिलों को पूजते हैं. वे उस द्रोण को आचार्य मानते हैं जिसने अपने क्षत्रिय शिष्य अर्जुन को श्रेष्ठ घोषित करने के लिए दलित वीर एकलव्य का अंगूठा काट लिया था.

जितने भी दलित सन्त हुए हैं सभी ने ब्राह्मणधर्म का, उसके धर्म ग्रन्थों का, उसके देवी देवताओं का और उसके सभी कर्मकांड व पाखण्डों का खण्डन किया है. गुरू रैदास ने स्पष्ट कहा :

रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहिं!
राम रम रह्यो हमीं में बसै कुटुम्ब मांहिं!!

अतः दलितों की धार्मिक मलिनता तभी दूर होगी जब वे ब्राह्मणिक राम के चंगुल सें बाहर निकलेंगे. सभी सन्तों ने दलितों सें आग्रह किया कि वे ब्राह्मणवाद सें बच कर रहें. लेकिन उसके बावजूद दलित उसी खाई में पड़ रहे हैं तो यह उनकी मलिन विवेक की ही निशानी है. गुरू रैदास और गुरू कबीर ने अपनी बाणी में स्पष्ट कहा है कि वे न हिन्दू हैं और न ही मुस्लमान हैं. दलितों की इसी धार्मिक गुलामी सें दुखी होकर गुरू रैदास ने कहा था : पराधीनता पाप है जान लेवो रे मीत.

सभी दलित सन्तों ने श्रमण धर्म को अपना धर्म माना है. सभी सन्तों ने उन्हीं बातों का प्रचार किया जो भगवन बुद्ध ने सद्धर्म के तौर पर बताईं थीं. दलित व्यर्थ के कर्मकांडों में पड़ कर अपने श्रमण धर्म सें दूर बैठे हैं. वे जब अपना श्रमण धर्म अपनाएंगे तब उनके विवेक सें अविद्या की मलिनता दूर होगी.

आर्थिक मलिनता : आर्थिक हालात पर गुरू रैदास का कहना है : दारिद देख हर कोई हंसै ऐसी दसा हमारी. अर्थात द्ररिद्रता ने हमारी ऐसी हालत कर दी है कि हम पर हर कोई हंसता है. अविद्या के कारण दलितों का कितना नाश हुआ है इसके बारे में महात्मा ज्योतिबा की मार्मिक कविता एकदम सटीक है.

विद्या बिन गई मति,
मति बिन गई नीति,
नीति बिन गई गति,
गति बिन गया वित्त,
वित्त बिना चरमराये शूद्र,
एक अविद्या ने किए
इतने अनर्थ!!

अर्थात विद्या न मिलने के कारण दलितों की अक्ल या समझ मन्द पड़ गई. समझ मन्दी होने पर उनमें भविष्य के बारे में योजना बनाने की योग्यता क्षीण हो गई. भविष्य के बारे में योजना न बना पाने के कारण उनकी आगे बढ़ने की गति रुक गई जिससें उनकी आर्थिक दशा बिगड़ गई. पैसा न होने के कारण दलित चरमरा गए. **एक अविद्या ने दलितों का इतना बुरा हाल कर दिया है.**

बाबा साहिब के अनुसार ब्राह्मणों और क्षत्रियों में श्रेष्ठता को लेकर संघर्ष हुआ. इस संघर्ष में क्षत्रिय हार गए. यह संघर्ष कई सदियों तक चला था. शुरू में यह संघर्ष वाद विवाद और तर्क वितर्क तक ही सीमित था. एकाध झड़प भी कभी कभार हो जाती थी. वाद विवाद के इस संघर्ष में एक समय ऐसा भी आया जब क्षत्रियों ने ब्राह्मणों और उनके वेदों को बेकार की वस्तु बता कर त्याग दिया तथा क्षत्रियों ने ब्रह्मज्ञान कहे जाने वाले उपनिषदों की रचना कर ली. वे अपने उपनिषदों का ज्ञान ब्राह्मणों को नहीं देते थे. दिनों दिन संघर्ष गहराता गया और अंत में ब्राह्मणों ने बेरहम हत्यारे परशु के नेतृत्व में क्षत्रियों का समूल नाश कर दिया. जब क्षत्रिय शारीरिक रूप सें ही

ब्राह्मणों का सामना करने लायक नहीं रहे तो ब्राह्मणों ने उनको सदा के लिए अपना गुलाम बनाए रखने के लिए उनकी शिक्षा बन्द कर दी. उन्हें क्षत्रिय सें शूद्र घोषित कर दिया. ब्राह्मणों न केवल स्वयं उनको शिक्षा देना बन्द किया बल्कि शूद्रों द्वारा स्वयं भी शिक्षा प्राप्त करने को अपराध घोषित कर दिया. शूद्र अगर गुरुकुल के पास सें भी गुजरने की हिम्मत कर लेता था तो उसे तुरंत कत्ल कर दिया जाता था. किताब की ओर देखने मात्र पर उसकी आंखें फोड़ दी जाती थी. विद्या के बारे में बात कर लेने मात्र पर उसके मूंह में सरिया ठोक दिया जाता था.

गुरू रैदास के कहने अनुसार दलित कभी कवि, राजा और दानी होते थे मगर उपरोक्त जुल्म होने पर हमारी हालत पशुओं सें भी बदतर बना दी गई. अविद्या द्वारा विवेक मलिन होने पर दलितों का इतना अनर्थ हुआ है.

राजनीतिक मलिनता : मान्यवर कांशी राम के स्टेज पर आने सें पहले तक दलितों में आम तौर पर राजनीति के प्रति उदासीनता पाई जाती थी. उनकी हर संस्था यह ऐलान करती थी कि उसका राजनीति सें कोई लेना देना नहीं है. सिखों ने गुरुद्वारे में बैठ कर अकाली दल बनाया. आज सिख भारत की सम्पन्न कौम हैं. उन्होंने राजनीति को कभी भी धर्म सें अलग नहीं किया. सो वे सत्ता पर काबिज हैं. पंजाब में किसी भी पार्टी की सरकार बने लेकिन सत्ता का केन्द्र सिखों के पास ही रहता है. हरियाणा में जाटों ने अपनी राजनीतिक दल बनाए. नतीजा जब सें हरियाण राज्य बना है एकाध बार को छोड़ कर लगभग हर बार वहां जाट मुक्ष्यमन्त्री रहा है.

दलितों ने अपना ऐसा राजनीतिक दल नहीं बनाया. बाबा साहिब ने रिपब्लिकन पार्टी बनाई थी मगर दलितों में राजनीतिक चेतना न होने के कारण, उनके जाने के बाद यह पार्टी अधिक दिन तक नहीं चल पाई. गुरू रैदास ने राजनीतिक सत्ता प्राप्ति की बात की थी. बाबा साहिब के बाद मान्यवर कांशी राम ने गुरू रैदास के आहवान को समझा तथा उन्होंने दलितों में राजनीतिक चेतना का संचार किया. आज के समय में दलितों को गुरू रैदास का यह आहवान याद रखना चाहिए : ऐसा चाहू राज मैं, जहां मिलै सभी को अन्न, छोटे बड़े सम बसैं रैदास रहै प्रसन्न!! अर्थात आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक **बराबरी चाहते हो तो शिक्षित बनो, मलिनता दूर करो और राज प्राप्त करो**!

दलितों के 'मलिन विवेक दीप' को साफ करने के लिए बाबा साहिब ने 22 प्रतिज्ञाएं करवाई. जिस दिन दलित समाज के लोग उन बाईस प्रतिज्ञाओं का पालन करने लगेंगे उनकी मलिनता भाग जाएगी और भारत की सत्ता फिर सें उन्हें प्राप्त हो जाएगी. यह बाईस प्रतिज्ञाएं बाबा साहिब का दलित समाज को अन्तिम आदेश हैं:

1. मैं ब्रह्मा, विष्णु और महेश में विश्वास नहीं रखूंगा और न ही उनमें सें किसी की पूजा करूंगा.
2. मैं राम अथवा कृष्ण में विश्वास नहीं रखूंगा जिसको भगवान का अवतार बताया जाता है. और न ही उनमें सें किसी की पूजा करूंगा.
3. मैं गौरी गणपति अथवा किसी भी हिन्दू देवी देवता में आस्था नहीं रखूंगा और न ही उनमें सें किसी की पूजा करूंगा.
4. मैं भगवान के अवतार लेने की बात पर विश्वास नहीं करता हूँ.
5. मैंने कभी भी इस पर विश्वास नहीं किया और न ही कभी करूंगा कि भगवन बुद्ध कभी विष्णु के अवतार हो सकते हैं. मेरा मानना है कि ऐसी बातें कहने वाले धूर्त अथवा पागल हैं.
6. मैं कभी श्राद्ध नहीं करूंगा और न ही कभी पिण्डदान करूंगा.
7. मैं कभी ऐसा काम नहीं करूंगा जो भगवन बुद्ध की शिक्षाओं अथवा उनके आर्दर्शें के विपरीत हैं.
8. मैं कभी कोई संस्कार ब्राह्मण सें नही करवाउंगा.
9. मैं सब मानवों की समानता में विश्वास रखूंगा.
10. मैं सब में समानता स्थापित करने की कोशिश करूंगा.
11. मैं भगवन बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करूंगा.
12. मैं भगवन बुद्ध द्वारा स्थापित पारमिताओं का अनुसरण करूंगा.
13. मैं सब जीवों के प्रति करुणा और प्यार की भावना रखूंगा तथा उनकी रक्षा करूंगा.
14. मैं चोरी नहीं करूंगा.
15. मैं झूठ नहीं बोलूंगा.
16. मैं व्यभिचार नहीं करूंगा.
17. मैं कोई नशा नहीं करूंगा.
18. मैं अष्टांगिक मार्ग, दयाभाव और करूणा को अपनी दिनचर्या बनाऊंगा तथा अपना सारा जीवन उनके अनुरूप ही व्यतीत करूंगा.

19. **मैं ब्राह्मणवाद का त्याग करता हूँ जो कि मानवता के लिये खतरा है क्यों कि यह असमानता पर आधारित है तथा मानव की प्रगति में बाधा है. मैं हिन्दूधर्म त्याग कर बुद्ध की शरण में जाता हूँ.**
20. **मैं दृढ़ता सें विश्वास करता हूँ कि मात्र बुद्धधर्म ही सच्चा धर्म है.**
21. **मैं मानता हूँ कि भगवन बुद्ध की शरण में आने सें मेरा नया जन्म हुआ है.**
22. **मैं पवित्रता सें सौगंध खाकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब सें भगवन बुद्ध द्वारा बताये नियमों और सिद्धातों के अनूरूप अपना जीवन व्यतीत करूंगा.**

दूसरा कदम : संगठित बनो

सत्ता प्राप्ति के लिए दलितों को एकजुट होना जरूरी है. गुरू रैदास के अनुसार एकजुट होने के लिए केले के पत्तों की तरह बनी इस जाति भेद को समाप्त करना होगा. सदियों सें चला आ रहा जाति का भेद क्योंकि हर आदमी के जन्म और उसकी पहचान के साथ जुड़ा हुआ है सो जाति भेद को समाप्त नहीं किया जा सकता लेकिन जाति के आधार पर जो ऊंच नीच का भेदभाव है उसे अवश्य समाप्त किया जा सकता है तथा इसे समाप्त किया भी जाना चाहिए. अतः दलितों को चाहिए कि सबसें पहले आपसी जाति भेद के ऊंच नीच को समाप्त करें. जाति भेद के कारण ही एक अरब की जनसंख्या वाले दलित कुछेक हजार ब्राह्मण पण्डों के गुलाम बने हुए हैं. गुरू रैदास कहते हैं :

रैदास मानस न जुड़ सकै जब तक जात न जात!

अर्थात जब तक यह जाति की ऊंच नीच समाप्त नहीं होती तब तक मानव सें मानव जुड़ नहीं सकता. वे अपने पद में मानस शब्द को प्रयोग करते हैं. मानस का अर्थ है मानव का मानव का दिल सें मिलन होना. किसी भी काम को सही ढंग सें करने के लिए आदमी का उस काम सें मन सें जुड़ना जरूरी होता है. उदाहरण के तौर पर कहीं भागवत की कथा हो रही होती है तो उसमें सैंकडों आदमी जुड़े होते हैं लेकिन अधिकतर अपने अपने प्रयोजन सें आए हुए होते हैं. कथा मण्डप सें बाहर निकलते ही अधिकतर लोग "कथा" को भुला कर अपने अपने कामों में लग जाते हैं. गुरू रैदास के अनुसार जाति की ऊंच नीच समाप्त करने के लिएं मन सें जुड़ना होगा.

बाबा साहिब के अनुसार जातिभेद को समाप्त करने का रास्ता मात्र सहभोज अथवा अंतर–जातीय विवाह नहीं है. **जाति भेद को समाप्त करने का रास्ता है उस धार्मिक व्यवस्था और धार्मिक आस्था को नष्ट करना जो आदमी के मन में जाति भेद के ऊंच नीच को को पैदा करती है. ऐसा तब हो सकता है जब उन धार्मिक कहे जाने वाले ग्रन्थों को नष्ट किया जाए जो आदमी को आदमी सें जाति के आधार पर ऊंचा या नीचा करार देते हैं. इन ग्रन्थों के साथ उन लोगों को भी नष्ट किया जाए जिन्होंने जाति के घमंड में शूद्रों पर जुल्म किए हैं. वह चाहे सन्त शम्बूक का हत्यारा राम हो या महावीर एकलव्य का अंगूठा काटने वाला द्रोण हो या दलितों और वैश्यों को पाप योनि बताने वाला कृष्ण हो. जिस किसी ने भी जाति के आधार पर भेदभाव किया है उसे समाप्त करने सें ही जातिभेद और ऊंच नीच समाप्त होगा.**

इसीलिए गुरू रैदास ने दलितों को ब्राह्मणधर्म के चंगुल सें आजाद होने का आहवान किया. उन्होंने घोषणा की :

* चारों वेद किए खण्डोति! जन रैदास करै डंडोति!!
* रैदास हमारे रामजी दसरथ का सुत नांहि!
* जो हमसहरी सो मीत हमारा

अर्थात जो ब्राह्मणिक ग्रन्थों, ब्राह्मणिक भगवानों को छोड़ कर आएगा वही मेरा मित्र है. जब तक दलित ब्राह्मणवाद के जूओे में बन्धे हुए हैं उन्हें सत्ता नहीं मिल सकती! ब्राह्मणवाद सें पीछा छुड़ाने के बाद ही वे आजादी का सपना देख सकते हैं.

गुरू रैदास के अनुसार दलितों को एकजुट करना एकदम आसान काम नहीं है. उसका पहला कारण तो यह है कि जाति की भावना पूरे समाज में ऐसे रच बस गई है **'ज्यों केलन में पात'**. अतः जाति व्यवस्था को परत दर परत समाप्त करना होगा. सबसें पहले दलितों में जो ऊंच नीच की भावना है उसे समाप्त करना होगा. फिर जाति भेद को समाप्त करना होगा. दूसरा कारण उनमें अविद्या का बोलबाला है. सदियों सें गुलामी सहते सहते वे गुलामी के ही आदी हो गए है. पिंजरे के तोते की तरह उन्हें खुले आसमान में डर लगता है. रैदास जी ने समाज को जागृत करने में आने वाली कठिनाइयों को अपने एक पद में बहुत ही मार्मिक ढंग सें बयान किया है. उन्होंने कहा :

रज भुजंग प्रसंग जैसे है, अब कुछ मर्म जनाया!
अनिक कटक जैसे भूलि पड़ै, अब कहते कहन न आया!!

दलित रस्सी को सांप समझ रहे हैं. अब कुछ लोग समझने लगे हैं. करोड़ों की आबादी वाले दलित सैनिक जैसे भूले भटके हुए हैं. अब मैं उन्हें आजादी का रास्ता बताता हूं तो वे कहते हैं पहले तो हमें किसी ने ऐसा नहीं बताया.

गुरू रैदास और उनके हमसहरी गुरू कबीर ने दलित समाज को चेताया तथा आपस में जोड़ा भी. वे अपने लक्ष्य में सफल भी हुए. हजारों लोग उनकी सत्संग में आने लगे. केलों के पत्तों की तरह बनी जाति व्यवस्था नष्ट होने लगी. दलित कुल के लोग अपनी जाति के खोल सें बाहर भी निकले. लेकिन ब्राह्मणों के पास साम दाम दण्ड भेद का हथियार है. उन्होंने इसी नीति के तहत "दण्ड" का प्रयोग करते हुए सन्त सिपाही गुरू रैदास की हत्या कर दी तथा उनकी अधिकतर बाणी भी जला डाली. **आज जो दलितों की अनेक जातियों में सांझे गोत्र मिलते हैं वे इसी कारण सें मिलते हैं कि इन गोत्र वाले लोग गुरू रैदास के हमसहरी बन गए थे.** लेकिन उनकी हत्या हो जाने के बाद समाज फिर बिखर गया.

गुरू रैदास ने समाज जोड़ने का एक मन्त्र भी दिया है. **श्री राज कुमार हमदर्द** ने अपने एक लेख में उस मन्त्र का जिक्र किया है. उनका मन्त्र है :

कथा कहें और अर्थ विचारैं!
आप तरै औरन को तारैं!!
कहै रैदास, मिलें नित दास!
जन्म जन्म की काटें फांस!!

अर्थात दलितों को मिल बैठ कर कथा करनी चाहिए यानि अपने गुरुओं, सन्तों, वीरों, राजाओं, विद्वानों का प्रचार करना चाहिए. उन्होंने जो शिक्षाएं दी उनको समझना चाहिए. उन्होंने जो काम किए उनके अनुसार अपना जीवन बिताना चाहिए. इस तरह सें प्रचार करने वाले तथा विचार करने वाले सभी का कल्याण होगा. दास अर्थात गुलाम यानि दलितों को नित्य मिलना चाहिए अर्थात मात्र किसी पर्व त्यौहार पर ही नहीं मिलना चाहिए बल्कि इसे अपने नित्य जीवन का अंग बनाना चाहिए. जब दलित नित्य अपने महान पूर्वजों का गुणगान करेंगे तथा उसी अनुसार अपना जीवन बिताएंगे तो जन्म जन्म सें चली आ रही उनकी गुलामी की फांस निकल जाएगी.

समाज जोड़ने और आजादी प्राप्त करने का यह मन्त्र गुरू रैदास ने दिया था. इसी अनुसार उन्होंने तथा उनके हमसहरी सतगुरु कबीर ने सत्संग करने की प्रथा को निभाया. लेकिन अविद्या के कारण जैसा दलितों सें सदा होता आया है, इस मन्त्र को भी ब्राह्मणों ने हाइजैक यानि अपहरण कर लिया. आज वे हर जगह अपने आचारहीन, चरित्रहीन नायकों का प्रचार करके उन्हें भगवान बना कर पेश कर रहे हैं. **उनके जिन "भगवानों" की ओर हमारे सन्तों ने कभी थूका भी नहीं, आज ऐसे मर्यादाहीनों को मर्यादापुरुषोतम बना कर हमारे सन्तों का पूज्य पुरुष बताया जा रहा है. दलित गुरूओं की असली शिक्षाओं को छोड़ कर ब्राह्मणों द्वारा घढ़ी गई बेसिरपैर की कथाएं आज दलित गुरुओं के जन्मदिन पर प्रचारित की जाती हैं.**

इसलिए अगर दलित समाज अपनी खोई हुई आजादी वापिस चाहता है, अपना छिना हुआ राज्य फिर सें प्राप्त करना चाहता है तो उसके लिए गुरू रैदास द्वारा बताए मन्त्र पर अमल करना होगा. इसी मन्त्र पर अमल करके उन्होंने छ सौ साल पहले पूरे दलित समाज को जागृत किया था.

अतः दलित समाज को जोड़ना असम्भव नहीं है. अगर छः सौ साल पहले जब आने जाने के साधन सीमित थे तथा संचार का कोई साधन नहीं था, उस समय अगर गुरू रैदास और गुरू कबीर पूरे दलित समाज को एकजुट कर सकते थे तो आज तो ऐसा करना बहुत आसान है. चाहिए तो सिर्फ एक मन जो दलितों को एकजुट करना चाहता हो! बाबा साहिब ने दलित एकजुटता का धर्म चक्र चला दिया है. मान्यवर कांशी राम ने इसे गति प्रदान कर दी है. सर्वश्रद्धेय ललई सिंह यादव, वी टी राजशेखर, डी आर जाटव जैसे विद्वान इस चक्र को दिशा प्रदान कर रहे हैं. अब "अनिक कटक जैसे भूलि पड़ै, अब कहते कहन न आया" वाली बात नहीं होगी. विवेकानन्द को जो डर था कि दलित राज्य लौटेगा वह काम अब जल्द पूरा होने वाला है.

तीसरा कदम : संघर्ष करो

दलित राज स्थापित करना चाहे आसान काम नहीं है लेकिन यह काम असंभव भी नहीं है. इसके लिए सतत संघर्ष की आवश्यकता है. अब सें दो हजार साल पहले दलितों सें राज छिना था. उन्होंने 2000 साल की

गुलामी सही है. गुलामी का जीवन बिताते उनकी **एक सौ पीढ़ियां** गुजर गई हैं. अतः ऐसे दलित परिवारों की भी कमी नहीं है जो गुलामी को ही अपनी नीयति मान चुके हैं. ऐसे लागों को कभी यह एहसास ही नहीं होता कि वे ब्राह्मणधर्म के गुलाम हैं. लेकिन जब सें बाबा साहिब ने आजादी की मशाल जलाई है लोगों को आभास होने लग गया है कि वे गुलाम हैं.

गुरू रैदास और गुरू कबीर ने स्वयं आजादी की लड़ाई का नेतृत्व किया था. उन्होंने दलितों को ललकार कर कहा : **पराधीनता पाप है जान लेवो रे मीत!** उन्हीं को बातों को दोहराते हुए बाबा साहिब ने कहा कि गुलाम आजादी के लिए तभी बगावत करेगा जब उसे यह बताया जाए और जताया जाए कि वह गुलाम है.

जब गुरू रैदास और उनके हमसहरी गुरू कबीर ने दलितों को आजादी की राह पर लाने का प्रयत्न किया तो उन्हे अत्याधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था. उस जमाने में जब ब्राह्मण का शब्द ही कानून होता था, उनके लिए आजादी के लिए संघर्ष करना बेहद कठिन काम था. खासकर दबे कुचले लोगों को जगाना और ऐसे लोगों को जगाना जो दिमागी तौर पर गुलाम हैं, उनके लिए आसान नहीं था. उनका आजादी का संघर्ष और अधिक कठिन हो जाता था जब उन्हें ब्राह्मणवादी साम दाम दण्ड भेद के पैंतरों का सामना भी करना पड़ता था. इसीलिए सत्य कहा गया है :

ठांव ठांव ठग बैठे, पग पग पैठे बटमार
साधु का भेस धरैं, डाकू सी करैं लूटमार!

इसी कठिनाई को ध्यान में रखते हुए उन्होंने आजादी के लिए संघर्ष करने वाले दलितों सें कहा :

सूरा सोई सहारिये जो लड़ै दीन के हेत!
पुरजा पुरजा होई भोंय रहै, तबहु न छाडे खेत!!

अर्थात शूरवीर उसे ही समझा जाना चाहिए जो असहाय के हित के लिए लड़ता है. असली शूरवीर वही है जो अपनी जिन्दगी की आखरी सांस तक अपने संघर्ष का रास्ता नहीं छोड़ता.

दलित गुरुओं के आदेश "सूरा सोइ सहारिए जो लड़ै दीन के हेत" को मूल मन्त्र बनाकर दशम पिता गुरू गोबिन्द सिंह ने खालसा फौज बना दी. दुनिया भर में सिख कौम का नाम कर दिया. मगर हम दलित अभी तक ऐसा आदेश देने वाले क्रांतिकारी युगपुरुष को माला फेरने वाला "बाबा" ही बनाए बैठे हैं. सिख कौम में कोई बाहर सें आए हुए लोग नहीं हैं. उसमें अधिकतर संख्या दलित कहे जाने वाली जातियों के लोग ही शामिल है. यह तथ्य भी याद रखने वाला है कि आज चाहे जाट ब्राह्मणवाद के चक्कर में पड़ कर स्वयं को उच्च जाति का कहलवाने लग गए हैं लेकिन **सन 1935 के लाहौर हाई कोर्ट** के फैसले में उन्हें जाति व्यवस्था में शूद्र ही माना गया था.

गुरू गोबिंद ने जब खालसा पन्थ की स्थापना की तो उनके पहले पांचों के पांचों प्यारे दलित समाज सें ही थे. उस समय चर्मकारों में गुरू रैदास के क्रांति के आहवान का असर था. अतः वे बहुसंख्या में दशम पिता की खालसा फौज में शामिल हुए. इसलिए उन्होंने कहा : रंगरेटे गुरू के बेटे अर्थात चमड़ा रंगने वाले गुरू गोबिन्द सिंह के बेटे हैं. अफसोस की बात है कि आज सिख धर्म में भी ब्राह्मणवाद का जहर फैलने लग गया है. **सिखों में भी जाति पाति और छूआछात पनपने लग गई है. वहां गुरू गोबिन्द सिंह के बेटों को खून बहाने वाले ब्राह्मण के वंशज फिर सें उच्चकुल कहलवाने लग गए हैं और अपने दशम पिता के लिए अपना खून बहाने वाले सरदार जीवन सिंह के वंषज "नीच कुल" के कहे जाने लगे हैं.**

दलित कुल के सरदार जीवन सिंह ने जो कुर्बानी दी वह बेमिसाल है. दिल्ली के चांदनी चौक पर नवम गुरू तेग बहादुर का शीश औरंगजेब के गुर्गों ने धड़ सें अलग कर दिया. उन्होंने पूरी सिख कौम को चुनौती दी कि वे उनके शीश को उठा कर ले जाने की हिम्मत दिखाएं. तब सरदार जीवन सिंह तथा उनके पिता ने विश्व की सर्वश्रेष्ठ कुर्बानी का इतिहास रचा. उनके पिता ने अपना शीश काट लिया ताकि उनका बेटा उस शीश को चांदनी चौक में रखे गुरू तेग बहादुर के शीश सें बदल दे. सरदार जीवन सिंह ने रात के अंधेरे में वहां गए तथा अपने पिता के शीश को वहां रखा तथा गुरू तेग बहादुर का उठा कर ले आए. पहरेदार कभी सपने में भी नहीं सोच सकते थे कि कोई ऐसी कुर्बानी भी दे सकता है. उन्हें गुमान भी नहीं हुआ कि एक दलित सिख ने अपने पिता के शीश के बदले में अपनी कौम के पिता का शीश बदल लिया है.

गुरू रैदास ने ऐसे ही सूरवीर पैदा करने का आहवान किया है जो बोटी बोटी हो जाने तक भी रणक्षेत्र छोड़ कर न आएं!!

गुरू रैदास के हमसहरी सतगुरु कबीर ने ललकार कर कहाः

गगन दमामा बाजिया, पड़्या निसानै घाव!
खेत बुहारे सूरमा, मुझ मरण का चाव!!

अर्थात युद्ध का नगाड़ा बज उठा है. सही निशाने पर चोट हुई है. इस समय रणक्षेत्र में प्राण न्योछावर करने का चाव रखने वाले ही असली सूरमा कहलाएंगे.

यह बहुत आश्चर्य जनक बात है कि दलित सन्तों ने रणक्षेत्र में जूझ मरने की बातें की हैं. युद्ध का नगाड़ा बजने की बातें की हैं. युद्ध के मैदान में अंग अंग कट मरने तक संघर्ष करने की बातें की हैं. इसके साथ यह सच्चाई भी है कि गुरू रैदास और गुरू कबीर ने अपनी आखरी सांस तक ब्राह्मणधर्म के फन्दे सें दलितों को आजाद कराने के लिए संघर्ष किया और गुरू रैदास ने तो अपने जीवन का बलिदान भी दिया. जहां सन्त रैदास की तो ब्राह्मणों ने हत्या कर दी वहीं सन्त कबीर का चरित्र हनन करने की कोशिश की. उन्हें ब्राह्मणी की नाजायज सन्तान बताने की कोशिश भी की. आजादी के संघर्ष में अनेकों बार उन्हें राजा व अन्य अधिकारियों के सामने भी पेश होना पड़ा.

ऐसे ही जब भगवान वाल्मिकी ने अपना संघर्ष शुरू किया तो उनके चरित्र हनन का भी प्रयास किया गया. ब्राह्मण ग्रन्थों में उनके विरुद्ध कथाएं बनाई गई कि वे डाकू व हत्यारे थे. महात्मा शम्बूक ने जब दलितों को शिक्षा देनी शुरू की तो राम पुत्र दसरथ ने एक शातिर हत्यारे की तरह उनकी गर्दन काट दी! महात्मा ज्योतिबा फूले ने जब भारत में पहला स्कूल खोला तो उनका भी भारी विरोध किया गया. जब उनकी धर्मपत्नि मां सावित्री बाई ने लड़कियों के लिए भारत का पहला स्कूल खोला तो उन पर गोबर और गन्दगी तक फैंकी गई. अगर ऐसा ही कोई स्कूल किसी ब्राह्मणी ने खोला होता तो आज उसके नाम पर भारत का शिक्षा मंत्रालय ही बना दिया गया होता.

बाबा साहिब का संघर्ष भी कम कठिनाई वाला नहीं रहा है. चाहे उन्होंने कितनी भी कठिनाइयां सहीं हो लेकिन भारतीय संविधान लिख कर उन्होंने वह कर दिखाया है जो सम्राट अशोक ने बुद्ध धर्म अपना कर किया था. जैसे सम्राट अशोक ने बुद्ध धर्म अपना कर इसे विश्व धर्म बना दिया वैसे ही **बाबा साहिब ने भारतीय संविधान के द्वारा दलित सत्ता की नींव लगा दी है. अब यह दलित बुद्धिजीवियों, विद्वानों, सन्तों, राजनीतिज्ञों और आम जनता का पावन कर्तव्य है कि सतगुरु रैदास के सपने को वे जल्द सें जल्द पूरा करें.**

जब सें सम्राट वृहदर्थ की हत्या करके ब्राह्मणधर्मी सत्ता पर काबिज हुए है तब सें लेकर आज तक वे येन केन प्राकरेण सत्ता पर अपना कब्जा बनाए हुए हैं. उन्हें पता है कि जिस दिन सत्ता उनके हाथ सें छिनी उनका सत्यानाश हो जाएगा क्योंकि सदियों सें वे दलितों पर जुल्म करते आ रहे हैं. उन्हें उसका हिसाब देना मुश्किल पड़ जाएगा. अमरीका जाकर **ब्राह्मणवादी विवेकानन्द** को यह आभास हो गया था कि एक न एक दिन भारत में भी लोकतंत्र की स्थापना होगी ही. तब ब्राह्मण और दलित को एक समान वोट का अधिकार मिलेगा. दलित बहुमत में होने के कारण एक न एक दिन अपनी खोई सत्ता पुनः प्राप्त कर ही लेंगे. इसलिए उसने ब्राह्मणों को चेताया था कि दलितों की सत्ता पुनः लौट रही है. अतः वे दलितों पर जुल्म बंद कर दें वर्ना उन्हें हिसाब देना महंगा पड़ जाएगा. अब यह दलितों पर निर्भर करता है कि वे कब विवेकानन्द का डर पूरा करते हैं.

9. बेगमपुरा

गुरू रैदास ने दलितों को अपना छिना हुआ राज फिर सें प्राप्त करने का आहवान किया. उन्होंने दलित समाज के लोगों में घूम घूम कर आजादी प्राप्त करने का प्रचार भी किया. जैसे आजादी मांगने पर अंग्रेजों ने सरदार भगत सिंह की हत्या कर दी वैसे ही गुरू रैदास द्वारा "बेगमपुरा" बसाए जाने की मांग करने पर ब्राह्मणों ने उनकी हत्या कर दी. अतः प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि उन्होंने दलितों सें ऐसा क्या मांगने का आहवान किया कि ब्राह्मणों को उनकी हत्या करके ही शांति मिली.

बेगमपुरा बनाम अमृतदेश : अधिकतर ब्राह्मणवादी लेखकों ने गुरू रैदास के बेगमपुरा बसाए जाने के आहवान को अमृतदेश यानि "भगवान का देश" करार देकर दलित समाज को गुमराह करने का प्रयत्न किया है. वे अपने काम, अगर सही कहें तो **अपनी चाल**, में सफल भी हुए है. उन्होंने गुरू रैदास के शुद्ध राजनीतिक तथा क्रांतिकारी जीवन को धूर्तता पूर्वक या अज्ञानवश भगवान की भक्ति करार दे दिया है. अफसोस इस बात का है कि दलित समाज के विद्वान भी तोते की तरह उन्हीं की बोली को दोहराने में लगे रहे. यहां तक कि विश्वविद्यालयों के दलित

प्रोफैसरों ने भी कभी इस बात का कष्ट नहीं किया कि वे लीक सें हट कर गुरू साहिबान की बाणी का असली अर्थ खोजें. गुरू रैदास ने अमृतदेश तथा बेगमपुरा दो अलग अलग सिांत दिये हैं.

- ❖ "अमृतदेश" उनकी धार्मिक या दार्शनिक विचारधारा है. जबकि "बेगमपुरा" गुरू रैदास का शुद्ध राजनीतिक सिद्धांत है जिसमें उन्होंने बताया है कि आदर्श राज्य क्या है.
- ❖ "अमृतदेश" निर्वाण प्राप्ति का आहवान है. बेगमपुरा राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने का आहवान है.
- ❖ "अमृतदेश" व्यक्ति का निज के लिए किया जाने वाला प्रयास है. बेगमपुरा पूरे समाज के लिए किया जाने वाला प्रयास है.
- ❖ "अमृतदेश" प्राप्त करने सें केवल व्यक्ति को निजि लाभ मिलेगा, बेगमपुरा बसाने सें पूरे समाज का भला होगा.
- ❖ "अमृतदेश" जाने के लिए बुद्धम शरणम गच्छाामि का नारा लगाना पड़ेगा तो बेगमपुरा बसाने के लिए "सूरा सोई सहारिए, लड़ै दीन के हेत" तथा गगन दमामा बाजया का नारा बुलन्द करना पड़ेगा.
- ❖ "अमृतदेश" जाने की राह आसान है मगर बेगमपुरा कर राह "ज्यों खांडे की धार" है. हजारों सालों सें दलितों का हक मारे बैठे लोग आसानी सें उनको सत्ता नहीं लौटाएंगे. जैसे अंगेजों को लात मार कर भगाना पड़ा वैसे ही इन लोगों के साथ करना पड़ेगा.

अमृतदेश की रूप रेखा : गुरू रैदास ने अपनी बाणी में "अमृतदेश" जाने की इच्छा जाहिर की है. कई **ब्राह्मणवादी लेखक** यहां भी **अपनी धूर्तता** सें बाज नहीं आते. **वे गुरू साहिब के "अमृतदेश" को "ब्रह्मदेश" का नाम देते हैं जबकि किसी भी दलित सन्त ने कभी भी बेटी–भोगी ब्रह्मा की पूजा तो छोड़ो अपनी बाणी में उसका नाम तक नहीं लिया है. कौन सन्त ऐसे नीच बलात्कारी ब्रह्मा का नाम लेगा जिसने अपनी बेटी तक को नहीं बख्शा.** और यह तो अकल्पनीय है कि गुरू रैदास ऐसे नीच बलात्कारी के नाम पर अपने देश का नाम रखें. यहां एक बात विवेक को छूती है कि गुरू नानक देव गुरू रैदास का बहुत सम्मान करते थे. वे उनसें मिलने काशी भी गए थे. अपनी बाणी के साथ वे गुरू जी की बाणी भी गाते थे. उन्हीं के शिष्य गुरू अमरदास ने अमृतसर शहर की नींव रखी. अतः पूरी संभावना है कि गुरू रैदास को आदर देने के लिए ही उनके अमृतदेश के नाम पर इस शहर का नाम अमृतसर रखा गया है.

किदवन्ती है कि जब राम ने सीता को जंगल में फिंकवा दिया तो भगवान वाल्मिकी ने सीता को मरने सें बचा लिया. बाद में राम के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को भगवान वाल्मिकी के शिष्यों लव कुश ने पकड़ लिया. राम व उसके भाईयों ने घोड़ा छुड़वाने के लिए उनसें युद्ध किया. इस युद्ध में राम व भाई मारे गए. सीता ने भगवान वाल्मिकी सें प्रार्थना की कि वे राम को जिन्दा कर दें. तब भगवान ने अमृत की बून्दें राम व उसके भाईयों के मूंह में डाली जिससें वे फिर सें जीवित हो गए. इसी दौरान कुछेक बून्दे जमीन पर भी गिर गईं. कहते हैं वहीं पर कि अमृतसर का सरोवर बना हुआ है. **दोनों ही स्थितियों में अमृतसर दलित गुरुओं के सम्मान में बसाया गया है**.

गुरू रैदास ने अमृतदेश की रूपरेखा इस प्रकार सें दी हैः

रे मन, अब चल अमृत देस!
जहां न मृत्यु, न सोग कलेस!!
नामदेव छीपी जाति की ओछ, जिनका जस गावत हैं लोक!
भगत हेत भगती के चेले, अंकमाल लै बीठल मिले!
निरगुण का गुण देखो आइ, देहि सहित कबीर सिधाई!
जन रैदास निरंजन राई, तोहि में अब रहइ समाई!!

अर्थात अब हमें अमृतदेश चलना चाहिए जहां मृत्यु, शोक और कलेश नहीं है. अनेकों सन्त नामदेव, अंकमाल बीठल कबीर आदि ने अमृतदेश में **सशरीर वास** कर लिया है. गुरू रैदास भी अब अपने लोगों के साथ वहां निरंजन की शरण में जा रहे हैं.

उपरोक्त पद में गुरू रैदास ने अमृतदेश की व्याख्या की है. इस पद सें स्पष्ट होता है कि वे "निर्वाण" की स्थिति को ही अमृतदेश मानते थे. निर्वाण वह स्थिति है जहां आदमी मृत्यु सुख दुख के प्रभावों सें बहुत अधिक प्रभावित नहीं होता. भगवन बुद्ध ने निर्वाण का रास्ता दिखाया था लेकिन सुख दुख के प्रभाव सें वे भी बिल्कुल अछूते नहीं रह पाये थे. कुछ लोग इस पद में प्रयोग किए गये "जहां न मृत्यु" का अर्थ उस स्थान सें करते हैं जहां

अमरत्व है. ऐसा स्थान किस्से कहानियों में स्वर्ग को बताया जाता है जहां भगवान बसता है तथा वहां रहने वाले कभी नहीं मरते. लेकिन गुरू रैदास अपने अन्य पद में स्पष्ट कह चुके हैं कि जो चीज है उसे समाप्त होना ही है – **जो दिखे सो होई विनासा**! अतः जब वे कहते हैं –"जहां न मृत्यु न सोग कलेस" तो उनके कहने का अर्थ है कि वहां मृत्यु का भय नहीं होता.

अपने अमृतदेश के विचार को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि उस स्थिति में सन्त नामदेव, सन्त बीठल तथा सन्त कबीर भी प्राप्त कर चुके हैं. वे साफ कहते हैं कि सन्त कबीर **सदेह** यानि अपने शरीर समेत उस स्थिति को प्राप्त हुए हैं. वे स्वयं के लिए भी कहते हैं कि वे भी उसी स्थिति में समा गए हैं. सन्त कबीर द्वारा तथा स्वयं उनके द्वारा सदेह अथवा जीते जी अमृतदेश की स्थिति में जाना यह सिद्ध करता है कि यह स्थिति मात्र निर्वाण की है. **निरंजन तो भगवन बुद्ध का नाम है ही**! अतः अमृतदेश जाने का अर्थ है भगवन बुद्ध की शरण में जाकर निर्वाण की स्थिति प्राप्त करना.

सतगुरु कबीर भी ऐसे ही निर्वाण की स्थिति को अपना "देश" मानते हैं. वे कहते है :

महरम होवै सो जानो साधो, ऐसा देस हमारा!
वेद कतेब पार न पावै, कहन सुनन में न्यारा!
जाति बरण कुल किरया नाहिं, संध्या न नेम आचारा!
बिन जल बूंद पडै जहां भारी, न मीठा न खारा!
सुन्न महल में नौबत बाजै, किंगरी बीन सितारा!
बिन बादल जहां बिजली चमके, बिन सूरज उजियारा!
बिन नैन जहां मोती दीखै, बिन सुर शब्द उचारा!
कहै कबीर तहां रहन हमारी, बूझै कोई गुरुमुख प्यारा!

अर्थात भेद जानने वाला कोई हो तो जाने कि हम किस देश अथवा हालात में रह रहे हैं. उस स्थिति को वेदों के ज्ञान सें पाना सम्भव नहीं है. वहां पर जाति भेद नहीं है, कोई कर्मकांड नहीं हैं. कोई सुबह शाम की घण्टी बजा कर पूजा करने का पाखण्ड नहीं है. कोई नेम नहीं है कि सुबह सूरज को पानी देना है, शाम को हवन करना है आदि. यह तो वह स्थिति है जहां आदमी खुशी गमी को भुला देता है. मन इतना मस्त हो जाता है कि बिना बजाये संगीत बजता लगता है. आँखें न हों तो भी वहां ज्ञान का मोती मिलता है. कबीर साहेब का कहना है कि जहां हम सन्त रह रहे हैं उस स्थिति को गुरुमुख अर्थात सदचरित्र वाला व्यक्ति ही प्राप्त कर सकता है. निर्वाण की स्थिति यज्ञों में बलि देने वाले पण्डे प्राप्त नहीं कर सकते. वहां केवल सदाचारी जा सकते हैं.

बेगमपुरा : उपरोक्त पदों में गुरू रैदास तथा गुरू कबीर ने अमृतदेश का बयान किया है. बेगमपुरा इन पदों सें बिल्कुल भिन्न है. बेगमपुरा के बारे में उनके विचार विशुद्ध राजनीतिक हैं. प्लैटो, लॉक एवम हॉबस आदि के राजनीतिक विचारों को मात देने वाले उनके विचार हैं. वे कहते हैं :

बेगमपुरा शहर को नांव,
दुख अंदोह नहीं तिस ठांव!
न तसवीस, खिराज न माल,
खौफ़ खता न तरस जवाल!
कायम दायम सदा पातशाही,
दोम न सोम, सब एक सो आही!
आबादान सदा मसहूर,
वहां गण बसैं मामूर!
वहां सैर करो जहां जी भावै,
महरम महल न कोय अटकावै!
अब मोहि खूब वतन गहि पाई,
वहां खैर सदा मेरे भाई!
कहे रैदास खालस चमारा,
जो हमसहरी सो मीत हमारा!!

उपरोक्त पद में प्रयोग किए गए शब्दों का शाब्दिक अर्थ इस प्रकार सें हैं:

बेगमपुरा = जहां गम न हों.
नांव = नाम.
अंदोह = शंका, झगड़े फसाद
तिस ठांव = उस जगह,
तसवीस = फिक्र चिन्ता,
खिराज = पछतावा,
माल = टैक्स,
खौफ़ = डर,
खता = गलती या धोखा,
तरस = लाचार पर दया,
जवाल = अभाव,
कायम दायम = बनना तथा टिके रहना,
पातशाही = सच्ची बादशाही, सच की हकूमत
दोम = दूसरे दर्जे का,
सोम = तीसरे दर्जे का,
आबादान = जीविका,
गण = लोग,
मामूर = मामूल यानि कानून के अनुसार,
महरम = कर्मचारी,
महल = राजा,
अटकावै = रोकना,
मोहि = मुझे
खूब = अच्छी तरह,
वतन = अपने देश,
गहि पाई = गहरी समझ आई,
खैर = कल्याण,
खालस चमारा = शुद्ध दलित,
हमसहरी = साथ रहने वाला,
मीत = मित्र.

अतः इस पद का शाब्दिक अर्थ हुआ कि गुरू रैदास ऐसा राज्य चाहते हैं जहां गम, शंका, डर, धोखा, लाचारी, अभाव, ऊंच नीच, टैकस, घूमने फिरने की रुकावट आदि नहीं होंगी. जो इस काम में उनका साथ देगा उनका मित्र कहलाएगा. गुरू रैदास के शुद्ध राजनीतिक ज्ञान को समझने के लिए उनके बेगमपुरा के विचार को पूरी तरह समझना जरूरी है.

बेगमपुरा शहर को नांव : गुरू रैदास के अनुसार उनके देश का नाम बेगमपुरा है. बेगमपुरा यानि बे+गम+पुरा अर्थात ऐसा पुर जहां गम न हों. भगवन बुद्ध कहते हैं कि हर आदमी को दुख है और उनके ध्वजवाहक गुरू रैदास कहते हैं कि वे ऐसा राज्य बसाना चाहते हैं जहां गम नहीं हों! यह दोनों बातें परस्पर विरोधी लगती हैं. अतः कुछ विद्वान इस आधार पर गुरू रैदास के बेगमपुरा के राज्य को काल्पनिक देश मान लेते हैं कि वे ऐसे स्थान की बात कर रहे हैं जहां दुख नहीं हों. लेकिन गुरू रैदास जब कहते हैं 'बेगमपुरा सहर को नांव' तो उनका मकसद यह कहना कतई नहीं है कि लोगों को वहां व्यक्तिगत दुख नहीं होंगे बल्कि उनका कहना है कि राज्य की तरफ सें, सरकार की तरफ सें या सरकारी अफसरों की तरफ सें लोगों को गम नहीं दिए जाएंगे. उन्हें परेशान नहीं किया जाएगा. दूसरी बात यह भी है कि गम और दुख में हल्का सा अंतर है. बहुत लम्बे समय तक चलने वाला या पक्के तौर साथ रहने वाला दुख गम बन जाता है. अतः रैदास जी की नगरी में यह भी माना जा सकता है कि दुख बहुत लम्बे समय तक नहीं रहेंगे.

सरकार या राजा की तरफ सें इस प्रकार के दुख दिये जा सकते हैं : अक्सर ऐसा होता है कि बड़े शहरों में दलित झुग्गी झोंपड़ियां बना कर रहते हैं. कई बरस रहने के बाद एक दिन सरकारी आदमी आते हैं और उन्हें वहां सें बेदखल कर देते हैं. अपना घर टूटने का दुख बहुत तीव्र होता है जो सरकार उन्हें देती है. अक्सर ऐसा भी

होता है कि अपना सही और वैध काम कराने के लिए सरकारी बाबू को घूस देनी पड़ती है. यह सब सरकार की तरफ सें दिए जाने वाले गम हैं. मान्यवर वीटी राजशेखर के अनुसार ब्राह्मण प्रधान मन्त्री नरसिम्हाराव की साजिश के कारण बाबरी मस्जिद ब्राह्मणवादियों ने नष्ट कर दी. ऐसे गम सरकार पर काबिज लोगों द्वारा दिए जाते हैं. गुरू रैदास के लोगों सें आहवान किया है कि ऐसा बेगमपुरा बसाएं जहां ऐसे गम नहीं मिलें.

पुराः बेगमपुरा में पुर शब्द का विशेष महत्व है. पुरा यानि पुर अर्थात किला या महल. गुरू रैदास जानते थे कि सिन्धु सभ्यता दलितों की बसाई हुई थी. जब उन्होंने कहा : **हम कबि बड़े कुलीन** तो उनका सीधा इशारा सिन्धु सभ्यता की ओर है. अशोक सम्राट द्वारा बनाई गई धर्मशालाओं, किलों, महलों और उनके पिता बिम्बसार द्वारा **विश्व में पहले पहले बनाई गई सड़कों** की तरफ उनका इशारा होता है. वे ऐसे घरों, भवनों महलों वाला देश बसाना चाहते हैं.

बेगमपुरा यानि सिन्धु सभ्यता : गुरू रैदास की बाणी पढ़ कर ऐसा आभास होता है कि उन्होंने जान लिया था कि सिन्धु सभ्यता दलितों की बसाई हुई थी. वे यह भी जानते थे कि बुद्ध महावीर जैसे सन्त, अशोक जैसे सम्राट सभी आज दलित कहे जाने वाले लोगों में सें ही थे. इन लागों ने ब्राह्मणवाद के विरुद्ध संघर्ष का बिगुल बजाया था. फिर ऐसा हुआ कि ब्राह्मण इस संघर्ष में जीत गए. हम शूरवीर, कवि, दाता सब हार गए. वीरों को गुलाम बना लिया गया. सिन्धु सभ्यता के महलों में रहने वालों को फूस की झोंपड़ियों में रहने पर मजबूर कर दिया गया.

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि सिन्धु सभ्यता के अनेकों नगरों और उनके भवनों और महलों को इन्द्र ने तबाह किया था. उसका नाम भी पुरन्दर अर्थात किले तबाह करने वाला है. पंजाबी में ऐसे गन्दे आदमी को पतन्दर कह कर बुलाया जाता है. गुरू रैदास फिर सें सिन्धु सभ्यता जैसे "पुर" वाला देश बसाना चाहते थे. सवाल उठता है कि उन्होंने क्यों बेगमपुरा बसाने का आहवान किया. इसका उत्तर गुरू रैदास स्वयं अपनी बाणी में देते हैं. वे कहते हैं कि कभी हम भारत देश के राजा होते थे. फिर जैसे राजा सिंहासन पर ही सो जाए और सपने में भिखारी बन कर दुखी हो वैसे ही दलितों सें राज छिन जाने पर उनकी हालत हो रही है. कभी कुलीन होने वाले दलितों की आज यह हालत है कि उन्हें देख कर हर कोई हंसता है. अविद्या के कारण हम जान नहीं पा रहे कि यह भारत देश हमारा ही है. बस इस अविद्या के सपने को तोड़ने की जरूरत मात्र है. जिस दिन दलित जागेंगे उनको अपना छिना हुआ सिंहासन फिर सें मिल जाएगा.

सिन्धु सभ्यता बनाम आज का दलित :

सिन्धु सभ्यता और सम्राट अशोक का राज्य	रैदास काल व आधुनिक काल
दलितों की प्राचीन नगरियों या पुरों में एक बड़े भवन को छोड़ कर शेष सभी भवन लगभग एक समान बने हुए थे. बड़े घर में मात्र फालतू अनाज स्टोर किया जाता था. सभी लोग एक समान घरों में रहते थे.	दलितों के पास रहने को मकान नहीं हैं. वे गांवों और शहरों के बाहर घास की झोंपड़ियों में रहने को मजबूर हैं. पैसे वाला दलित भी आज अग्रवाल या ब्राह्मण कालोनी में अपना घर नहीं बना सकता.
हर छोटे बड़े घर में साफ पानी आने तथा सीवरेज की गंदगी बाहर जाने की पूरी व्यवस्था थी. दलित सभ्यता के सिवाय दुनिया में कहीं भी ऐसी सफाई व्यवस्था नहीं थी.	दलित बस्तियों में पीने का साफ पानी कभी आता नहीं और गंदगी कभी बाहर जाती नहीं. पूरे शहर की गंदगी साफ करने वालों की अपनी बस्तियां गंदगी सें संड़ांध मार रही होती हैं.
सिन्धु सभ्यता के लोगों ने कभी लोहे का प्रयोग नहीं किया. उनके पास **सोने** की बनी हुई अनेकों वस्तुएं मिली हैं.	ब्राह्मणों द्वारा उन्हें हरा देने पर ब्राह्मण मनु ने कानून बनाया कि कोई भी दलित सोना नहीं रखेगा. दलित केवल लोहे के बर्तनों में ही खाना बनाएंगे तथा खाएंगे और लोहे के गहने ही पहनेंगे.
दलित सभ्यता के लोग रेशमी, सूती, ऊनी कपड़े पहनते थे.	ब्राह्मण मनु ने कानून बनाया कि दलित केवल चीथड़े पहनेंगे. नया कपड़ा कभी नहीं.
महात्मा रावण की नगरी भी दलित सभ्यता या दलिता राज्य की ही एक नगरी थी. हनुमान ने वहां	दलितों को अंधेरी बस्तियों में रहने को मजबूर किया जाता है. रात को उनकी बस्तियों में कभी

रात को चौराहों पर बड़े बड़े दीपकों व मशालों द्वारा रोशनी की जाती देखी थी.	प्रकाश नहीं होता.

बाबा साहिब ने कहा है गुलाम को अगर यह समझा दो कि वह गुलाम है तो वह बगावत कर देगा. आज हर वह दलित जो यह जानता है कि सिन्धु सभ्यता उनके पूर्वजों की बनाई हुई थी, जहां उनके पूर्वज बड़ी शान और ठाठ के साथ रहते थे, शांति अमन चैन के साथ रहा करते थे, जहां उनके पूर्वजों को दुनिया में सबसें बड़े व्यापारी होने का गर्व हासिल था, जिनकी बन्दरगाहें आज की कई बन्दरगाहों सें बड़ी होती थीं. और जब वह यह जानता है कि उस हमारी शानदार सभ्यता को आर्यों ने नष्ट कर दिया तो सचमुच दिल में बगावत की लहर उठती है. खासकर उस समय, जब दलित यह पाते हैं कि कभी महलों में रहने वाले दलितों के साथ सदियों सें जुल्म होते आ रहे हैं. क्या कसूर था दलितों का कि उनकी नगर तबाह कर दिए गए उन्हें गुलाम बना लिया गया महलों में रहने वालों को गन्दी कोठरियों में रहने को मजबूर किया जा रहा है. जिनके पूर्वजों ने दुनिया की सबसें पहली सीवरेज प्रणाली बनाई आज उन्हीं की माँएं बहनें सड़कों किनारे सबके सामने लौटा लेकर बैठने को मजबूर हैं. जिन्होंने दुनिया में सबसें पहले घरों में साफ पानी आने की व्यवस्था बनाई वे ही आज सीवरेज का मिला पानी पीने को मजबूर हैं. काश गुरू रैदास का पैगाम बाबा साहिब के जरिए हर दलित समझ पाए! और वह जालिमों लुटेरों को अपनी सही जगह पर भेज पाए!!

बाबा साहिब की तरह गुरू रैदास और उनके हमसहरी गुरू कबीर ने इस गुलामी को पहचाना था. तभी उनके मन में आजादी की लहर उठी. उनके मन में अपना बेगमपुरा फिर सें बसाने का ख्याल आया. सन्त होते हुए भी उन्होंने दलितों सें अपना खोया हुआ राज फिर सें प्राप्त करने का आहवान किया. अपना बेगमपुरा बसाने का आहवान किया. उसके लिए पुरजा पुरजा कट मरने का आहवान किया तथा इस ध्येय के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया.

दुख अंदोह नहीं तिस ठांव : गुरू रैदास ऐसा बेगमपुरा बसाना चाहते हैं जहां लोगों को दुख न हों. अंदोह का अर्थ शंका भी किया जाता है तथा आपसी झगड़ों के लिए भी किया जाता है. भारत में जब सें मुस्लिम आए उनका ब्राह्मणिक हिन्दुओं सें झगड़ा होता ही रहता है. अंग्रेजों का जब नामो निशान भी नहीं था तब भी दोनों धर्मों के लोग आपस में लड़ते झगड़ते थे. शुरू में जब "विदेशी" मुस्लिमों का शासन था तो ब्राह्मणिक हिन्दू चुप रहते थे. तथाकथित बहादुर वीर क्षत्रिय भी अकबर के तलवे चाटते थे. उसे अपनी बेटियां भी भेंट करते थे. मगर जब दलितों ने मुस्लिम धर्म अपना लिया तो उन्हें अपने बराबर का या अपने सें ऊंचा दर्जा देना उन्हें स्वीकार नहीं हुआ. नतीजा दोनों पक्षों में झगड़ा होने लग गया. "रैदास" और "कबीर" यानि दलित और मुस्लिम तो एक साथ रह लेते थे, एक दूसरे के हमसहरी भी बन जाते थे मगर सनातन धर्मी लोग मुस्लिम बने दलितों को नीच ही समझते थे. नतीजा यह होता था कि उन में झगड़ा होता था. दंगे फसाद होते थे.

सनातनी हिन्दुओं और मुस्लिमों में यह झगड़ा तब सें लेकर आज तक जारी है. एक बात और भी दिमाग को झंझकोरती है कि भारत में जितने भी धार्मिक या सांम्प्रदायिक दंगे फसाद होते हैं उनमें एक पार्टी हमेशा ही सनातनी हिन्दू होते हैं. ऐसा कभी सुनने में नहीं आया कि सिख, ईसाई, मुस्लिम, बौद्ध, जैन या दलित, पारसी कभी आपस में झगड़े हों. भारत में जब भी इनका किसी सें झगड़ा हुआ है तो सदा सनातनियों सें ही हुआ है.

भारत के इतिहास की किताबों में पढ़ाया जाता है कि अंगेजों ने भारत में फूट डाली और राज किया. उन पर दोष लगाया जाता है कि उन्होंने हिन्दू मुस्लिमों को आपस में लड़वाया. लेकिन यह पूर्ण सत्य नहीं है. यह दोनों धर्मी तो रैदास कबीर के समय भी मरते मारते थे. उस समय अंग्रेजों को यह भी पता नहीं था कि दुनिया में कहीं भारत नाम का देश भी है. गुरू रैदास और गुरू कबीर के अनेकों पद हैं जहो उन्होंने दुखी होकर दोनों सें शांति बनाए रखने की अपील की है. रैदास जी ने कहा :

रैदास कंगन और कनक में जैसे अंतर कुछ नांहि!
तैसे ही अंतर नांहि, हिन्दू तुरकन मांहि!!
मुस्लमान सें दोस्ती, हिन्दू सें कर प्रीत!
रैदास सभ जोत सतराम की, सबहि अपने मीत!!

गुरू रैदास इन झगड़ों सें रहित मानवता पर आधारित राज्य की स्थापना करना चाहते हैं. आम हिन्दू और मुस्लिम कयामत तक बिना खून खराबा किए, शांति सें इक्कठा रह सकते हैं. दलित सन्तों के अनुसार इन दोनों का कोई झगड़ा नहीं है. झगड़ा है तो मात्र इनके धर्म के ठेकेदारों का. पांच सौ सालों सें बाबारी मस्जिद खड़ी ही थी. हिन्दू मुस्लिम वहीं रह रहे थे. किसी ने उस पर एतराज नहीं किया मगर जैसे ही एक कट्टरपंथी ब्राह्मण प्रधान मन्त्री

बना और विपक्ष भी ब्राह्मणवादियों का कब्जा हुआ कि इस मस्जिद को नष्ट कर दिया गया. पिछले बीस सालों सें ब्राह्मणवादियों की पार्टियां राम मन्दिर के नाम पर धन बटोर रही हैं और लोगों को लड़वा रही हैं. मन्दिर उन्होंने कभी नहीं बनवाना. अगर मन्दिर बन गया तो उनका तो काम ही खत्म हो जाएगा.

प्रश्न उठता है कि गुरू रैदास ऐसा क्या करेंगे कि उनके बेगमपुरा में फसाद नहीं होंगे. उसके लिए गुरू रैदास कहते हैं कि अविद्या अहित कीन, ताते विवेक दीप भया मलीन! अज्ञान के कारण हिन्दू मुस्लिम लड़ रहे हैं. जब भी इन दोनों धर्मों के लोग लड़ते हैं तो जो खून बहता है वह मात्र दलितों का ही होता है. चाहे वह दलित हिन्दू कहलवाता हो या मुस्लिम कहलवाता हो. ऐसा कभी नहीं हुआ कि किसी ब्राह्मण नेता का खून भी बहा हो. जब दंगे हो रहे होते हैं मिश्रा, बाजपेयी, मोदी, शुक्ला ड्राइंग रूम में बैठे एसी की हवा में व्हिस्की की घूंट लगा रहे होते हैं. जिन दलितों को कभी मंदिर की सीढ़ियां भी नहीं चढ़ने दिया जाता और जिनके पूर्वजों को "तप" करने के जुर्म में गला कटवाना पड़ा था, वही दलित राम की खातिर अपने ही भाईयों को मार रहे होते हैं या उनके हाथों मर रहे होते हैं. रैदास जी के कहे अनुसार अगर उनमें विद्या का प्रकाश हो जाए और वे अपना इतिहास जान लें कि वे एक ही पिता की औलाद हैं तो उनमें कोई भी दंगा नहीं करवा सकता.

भारत के अधिकतर मुस्लिम, बौद्ध, सिख और ईसाई वे लोग हैं जिनके पूर्वज कभी ब्राह्मणधर्म के गुलाम (शूद्र या अछूत) होते थे और जिन्होंने अपनी गुलामी सें छुटकारा पाने के लिए ब्राह्मणधर्म को त्याग दिया था. अतः जब वे यह जान जाएंगे कि कौन क्या है तो वे उन लोगों के लिए नहीं लड़ेंगे जिन्होंने सदियों सें उन पर तथा उनके पूर्वजों पर जुल्म किया है. बेगमपुरा तभी बनेगा जब लोग शिक्षित हो जाएंगे,

पूछा जा सकता है कि सनातनी हिन्दू ही क्यों दंगे करते हैं. वे इसलिए करते हैं कि उनके धर्म ग्रन्थ कहते हैं कि दलित के पास धन नहीं रहने दिया जाए. अगर उसके पास धन आ गया तो वह ब्राह्मण को तंग करेगा. (मनु 10.129) इसलिए हर एक दो साल के बाद ब्राह्मणवादी नेता इनका झगड़ा करवा देते हैं दंगे करवा देते हैं. दोनों तरफ के दलितों का धन माल व जान की हानि होती है. अगर उनके पास धन माल रह जाए तो वे भी ब्राह्मण की तरह अच्छा जीवन जीने की सोचने लगेंगे. और अगर दलित ही अच्छा जीवन जीने की सोचने लग जाएंगे तो ब्राह्मणधर्म का तो सत्यानाश ही हो जाएगा. अगर ब्राह्मण और दलित एक जैसे हो गए तो वेद पुराण गीता स्मृतियां सभी रद्दी माल बन जाएगा क्योंकि इन ग्रन्थों की रचना की ही इसलिए गई है कि ब्राह्मण कैसे दलितों को अपने नीचे दबाके रखें. जातिवाद और छूआछात ही उनके धर्म की आत्मा है. सन्त रैदास इसी आत्मा को मिटा कर बेगमपुरा बसाना चाहते हैं जहां सन्तों की बाणी गूंजेगी : एक बूंद सें सब जग उपजा, कौन ऊंचा कौन नीचा!

जब बेगमपुरा बस जाएगा तो फिर एकलव्य के अंगूठे नहीं कटेंगे, शम्बूक की गर्दनें नहीं कटेंगी, बाबरी मस्जिद नहीं टूटेंगी, बौद्ध स्तूपों को अग्रसेन की नगरी नहीं बताया जाएगा, दरबार साहिब पर धावा नहीं बोला जाएगा, एक ब्राह्मणी के मर जाने पर हजारों बेगुनाह दलित सिख नहीं जलाए जाएंगे. **तब** वे हाथ कटेंगे जो एकलव्यों के अंगूठे काटने के लिए उठते हैं. फिर शम्बूक की गर्दन काटने वालों की सात पीढ़ियां बिना गर्दन के ही पैदा होंगी. गुरू गोबिन्द सिंह के साहिबजादों को दीवार में चिनवाने वाले गंगू ब्राह्मणों को बोटी बोटी करके चील कौवों को डाल दिया जाएगा. बेगमपुरा में ब्रह्म–हत्या पाप नहीं होगा बल्कि मानव हत्या जुर्म होगी. ऐसा तभी होगा जब विद्या का प्रसार होगा! विद्या के प्रचार सें ही दलित अपना इतिहास पहचानेंगे चाहे किसी भी धर्म में हो.

न तसवीस, खिराज न माल : गुरू रैदास के अनुसार उनके बेगमपुरा में तीन चीजें नहीं होगी. तसवीस यानि बेचैनी या घबराहट, खिराज यानि चिंता या अफरा–तफरी, माल यानि टैक्स या कर.

तसवीस : अगर पूछा जाए कि आज भारत में किस चीज की बेचैनी है तो कहा जा सकता है कि हर आदमी बेचैन है. हर नौकरीपेशा दलित को बेचैनी है कि कोई उसकी जाति न पहचान ले. सांखला सें शर्मा बने, सिंघाड़िया सें सिंघानिया बने, मेंहदवाल सें महेन्द्रा बने हर दलित को बेचैनी है कि कहीं कोई उसकी जाति पूछ कर उसकी हिन्दी न कर दे. दूसरे शब्दों में हर दलित को अपनी जाति के बोध सें बेचैन है. वह किस जाति सें है इसमें उसका कोई रोल नहीं है. फिर भी उसे यह अहसास है कि उसकी जाति नीच है. वह चाहे किसी भी ब्राह्मण बणिए सें अधिक सुन्दर और समझदार क्यों न हो फिर भी अपनी जाति को लेकर उसमें हीन भावना की बेचैनी बनी ही रहती है.

बेगमपुरा दलितों का ही मुल्क, वतन या देश होगा. वहां उन्हें कोई बेचैनी नहीं होगी. अपना उदाहरण देता हूँ. मैं बैंक में बतौर अधिकारी नियुक्त हुआ. पढ़ना लिखना मेरी आदत है. सो मैंने बैंक के सारे नियम खंगाल डाले. दूसरी शाखाओं सें लोग मुझ सें राय लेने आते थे. अक्सर ऐसा होता था कि वे लोग मुझे बनिया समझ कर बातें करते थे. मैं अक्सर उनकी बातें अनसुनी कर जाता था, अन्जान कर्मचारी को पलट कर जवाब नहीं देता था कि मैं

तो अम्बेडकरवादी हूं. अन्दर एक डर भी होता था कि यह लोग समझेंगे कि मैं तो दलित हूँ तथा आरक्षण के आधार पर ही नौकरी प्राप्त कर पाया हूं. फिर मान्यवर कांशी राम की डी ऐस फोर आई. बामसेफ आई. हम सब दलित एक हो गए थे चाहे वह किसी भी उप जाति सें था. भंगी चमार रैगर मोची धानक नाई तेली सभी इक्कठे थे हम! और तब एक दिन 14 अप्रैल को मैं बाबा साहिब का बैज अपने सीने पर लगा कर बैंक गया. वह दिन मुझे आज भी याद है. मेरा सीना फूला हुआ था और सवर्ण कर्मचारियों के चेहरे बुझे हुए थे. **बस यही रैदास साहिब का बेगमपुरा है.** जिस दिन दलित सीना तान कर चलेंगे और ऊंची जाति वालों का अभिमान चूर चूर होगा, यही गुरू रैदास का सपना है. सो जब गुरू रैदास कहते हैं कि तसवीस रहित बेगमपुरा बसाओ तो उनके कहने का यही अर्थ है कि दलित ऐसा भारत बनाएं जहां दलित सीना तान कर चलें. उन्हें अपनी जाति बताने पर शर्म न आए बल्कि वे गुरू रैदास की तरह सीना ठोक कर कहें **"कहे रैदास खालस चमारा** जो हमसहरी सो मीत हमारा!

इसी लिए उन्होंने दलितों सें कहा कि वे सदा याद रखें कि

हम बड़ कबि, कुलीन, हम पंडित हम जोगी सन्यासी!
ज्ञानी, गुणी, सूर, हम दाते, यह बुद्धि कभी न नासी !!

इस भारत को दलितों ने ही सोने की चिड़िया बनाया है. जितने भी विदेशी आए वे दलित समाज के ही सन्तों की बाणी पढ़ने आए और उन की ही बाणी अपने साथ लेकर गए. हम दलितों ने ही दुनिया की सबसें प्राचीन तथा सबसें बढ़िया लोकतंत्र यानि सिन्धु सभ्यता का निर्माण किया था. अगर दलित अपना इतिहास जान लें तो उन्हें फिर तसवीस सें दो चार नहीं होना पड़ेगा. यही गुरू रैदास का पैगाम है.

खिराज : यानि चिन्ता या अफरा तफरी. गुरू रैदास के जमाने में दलितों को चिंता होती थी कि पता नहीं कब कोई ब्राह्मण या ठाकुर आएगा और उन्हें बेगार के लिए पकड़ ले जाएगा. उनकी बहन बेटियों की इज्जत सुरक्षित नहीं थी. फूलन देवी का जीवन सबके सामने है. उनके साथ जो हुआ वह अधिकतर दलित महिलाओं के साथ हो जाता है. यह हमारे समाज की सबसें बड़ी चिन्ता थी और है. आज भी दलित महिलाएं सुरक्षित नहीं हैं.

अदालतों में ऐसे जॅज बैठे हैं जो ऊंची जाति के बलात्कारियों को इस आधार पर बरी कर देते हैं कि ऊंची जाति वाले तो दलितों को छूते भी नहीं है सो उनकी महिलाओं सें बलात्कार तो वह कर ही नहीं सकते. लेकिन राजस्थान का वह जॅज यह भूल गया कि उसी के राज्य में अगर आधे नहीं तो एक चौथाई मर्द "गोले" हैं. गोला उस सन्तान को कहा जाता है जो किसी ठाकुर द्वारा अपनी दासी (दलित) सें यौन सम्बंध बनाने सें पैदा होता हैं. ठाकुर ऐसे बच्चे पैदा तो कर देते हैं मगर उनका पालन पोषण माँ को ही करना पड़ता है.

गुरू रैदास जब कहते हैं कि दारिद देख, हर कोई हंसै, ऐसी दसा हमारी! तो उनके मन में अपने समाज की ऐसी हालत ही हलचल मचा रही होती है. रैदास जी दलितों पर हो रहे ऐसे अत्याचारों को समाप्त करना चाहते हैं. तभी वे बेगमपुरा बसाने का आहवान करते हैं ताकि दलितों की ऐसी हालत वहां न हो!

माल : माल यानि मालिया यानि टैकस. टैक्स लेना न लेना और कितना लेना यह सब विशुद्ध राजनीति के सवाल हैं. इन बातों का धर्म या साधुपन सें कोई सम्बंध नहीं है. जब रैदास जी यह कहते हैं कि बेगमपुरा में टैक्स नहीं होगा तो वे राजनीतिक विज्ञान की खरी बातें करते हैं. किसी साधु या सन्त का राज्य द्वारा टैक्स लेने देने सें कोई सरोकार नहीं होता क्योंकि आज तक शायद ही ऐसा कोई राजा हुआ हो जिसने धार्मिक गुरुओं सें टैक्स लिया हो अथवा जिसने धर्मस्थानों के चन्दे या आमदन पर टैक्स लगाया हो.

सभी ब्राह्मण ग्रन्थ इस नियम का स्पष्ट बखान करते हैं कि ब्राह्मण पर टैक्स नहीं लगाया जा सकता. सदियों सें यह स्थिति आज भी जारी है. उनके मंदिर ही नहीं उनक धन्धे की कमाई भी टैक्स सें बरी है. घाटों पर बैठे पण्डे साल का करोड़ों कमाते हैं लेकिन टैक्स के रूप में उन्हें एक पाई भी नहीं देनी पड़ती. उस सें टैक्स लेना वर्जित था और है तथा जब तक ब्राह्मणवादियों की सत्ता रहेगी वह टैक्स सें आजाद ही रहेगा. सड़क पर झाडू लगाने वाले जमादार को हर प्रकार का टैक्स देना पड़ता है.

अतः जब गुरू रैदास बेगमपुरा में टैक्स नहीं लगने की बात करते हैं तो इसका विशेष अर्थ है. टैक्स का बोझ हमेशा ही आम आदमी पर पड़ता है. ब्राह्मण पर तो टैक्स लगता नहीं, व्यापारी पर जो लगा टैक्स लगता है उसे वह सामान की कीमत बढ़ा कर वसूल कर लेता है. अतः टैक्स का बोझ केवल आम आदमी यानि किसान, मजदूर, कारीगर पर ही पड़ता है. उन्हें अपने खून पसीने सें की गई कमाई में सें टैक्स देना पड़ता है. किसान पर चाहे कितना भी टैक्स लगे वह उसी हिसाब सें अपनी फसल के दाम नहीं बढ़ा सकता क्योंकि फसल के भाव तय करना उसके हाथ में नहीं है. मजदूर या कारीगर जो कि आम तौर पर दलित वर्ग सें ही होते हैं, कभी भी टैक्स के आधार पर अपनी दिहाड़ी तय नहीं कर पाते. हर साल बजट की घोषणा की जाती है. यह घोषणा लगभग शाम पांच

बजे होती है तथा सवा पांच बजे तक बीड़ी सिगरेट, ब्रैड, चाय, चीनी, दाल, पैट्रोल आदि के दाम तुरंत बढ़ जाते हैं लेकिन मजदूर की मजदूरी बढ़ने में बरसों लग जाते हैं. अतः टैक्स का बोझ हमेशा ही दलित पर पड़ता है.

अभी पिछले दिनों सरकार ने सभी कारीगरों सें 1400 रूपए सालाना का टैक्स वसूला. कारों में घूमने वाले और साल के लाखों कमाने वाले बिना टैक्स दिए मस्ती करते रहे लेकिन जूती बनाने वाले, साइकिल रिपेयर करने वाले, ठेला लगाने वाले दलितों को टैक्स देना पड़ा. गुरू रैदास के समय भी ऐसा ही होता था. बड़ा जमींदार ऐश करता था तथा दलित किसान को मालिया देना पड़ता था चाहे उसके फसल हुई हो या न हुई हो.

यह भी सत्य है कि कोई भी सरकार बिना धन के काम नहीं कर सकती. आम आदमी को भी घर चलाने के लिए भी धन की आवश्यकता पड़ती है. पूरे राज्य को चलाने के लिए धन की आवश्यकता तो होगी ही. अतः टैक्स के बिना तो काम चल नहीं सकता. फिर गुरू रैदास कैसे कहते हैं कि उनके बेगमपुरा में टैक्स नहीं लगाए जाएंगे. इसे हम एक उदाहरण सें स्पष्ट करते हैं. महाराष्ट्र में शिवाजी मराठा और पेशवाओं का बड़ा नाम है. अनेकों संस्थाएं इनके नाम पर चलाई जा रही हैं. शिवाजी और पेशवाओं ने आम आदमी सें सिवाय चौथ वसूलने के और कोई काम नहीं किया. उसने हर किसान सें अनाज का चौथाई भाग बतौर टैक्स वसूला. बदले में उसने सिवाय ब्राह्मणों को दान देने और अपनी स्तुति गवाने के कुछ नहीं किया. उसने कोई सड़क, कोई धर्मशाला नहीं बनवाई, कोई कूंआ नहीं खुदवाया. बस चौथ वसूली और ब्राह्मणों को दी. आज ब्राह्मणवादी संस्थाएं उसे महानायक और पता नहीं क्या कुछ बता रही हैं. गुरू रैदास कहते हैं उनके राज्य में **ऐसी चौथ वसूली नहीं** होगी.

दूसरी ओर सम्राट अशोक थे. उन्होंने टैक्स लिया मगर पूरे भारत में सड़कें बनवा दीं. सड़क किनारे हर दस बीस कोस पर धर्मशालाएं बनवा दीं. कूएं खुदवा दिए. सड़कों किनारे पेड़ लगवा दिए. ऐसे राजा का टैक्स लेना किसी को भी नहीं अखरतां. ऐसे ही एक अफगान राजा थे शेरशाह सूरी. उन्होंने पेशावर सें लेकर कलकता तक जी टी रोड़ बनवा दी. पूरे भारत को एक सू में पिरो दिया. ऐसे राजाओं को ब्राह्मणवादी इतिहासकार बुरा बताते हैं क्योंकि उन्होंने किसी ब्राह्मण को दान नहीं दिया कोई यज्ञ नहीं करवाए.

गुरू रैदास का सपना है कि भारत में फिर सें अशोक सम्राट जैसे कल्याणकारी दलित राज्य की स्थापना हो. जहां कोई भी जाति के आधार पर टैक्स सें बचे नहीं और न ही कोई जाति के आधार पर टैक्स के बोझ के नीचे दबे. वहां पण्डे ऐश न लूटें और दलितों सें चौथ वसूली न हो.

खौफ़ खता न तरस जवाल : खौफ़ यानि डर, खता यानि धोखा, तरस यानि दयनीय, जवाल यानि पतन या हानि.

खौफ़ : सन्त रैदास चाहते हैं कि ऐसा बेगमपुरा बसे जहां उनके बच्चे बेखौफ रह सकें. उन्हें अपनी जाति की वजह सें डर न लगता हो. उन्हें उनकी जाति के आधार पर कोई डराने वाला न हो. ऐसा बेगमपुरा बसे कि वे वहां निडर होकर रह सकें. निरपराध होते हुए भी उन्हें अपनी "नीची जाति" होने के कारण द्विजों सें हमेशा `डर बना रहता है. आज भी गांव में कहीं कोई चोरी हो जाए पुलिस वाले पहला शक दलितों पर ही करते हैं. उन्हीं सें पूछताछ करते हैं. उनके घरों की तलाशी लेना वे अपना पहला काम समझते हैं.

आजादी सें पहले की कुछ दलित जातियों की मार्मिक दशा याद आती है. किसी समय ऐसा हुआ कि किसी जाति के दोएक आदमी चोरी आदि के जुर्म में पकड़े गये. नतीजा यह हुआ कि इन जातियों के समस्त पुरुषों को "क्रिमिनल" यानि अपराधी घोषित कर दिया गया. उस जाति के समस्त आदमियों को हिदायत दी गईं कि कोई भी रात को अपने बिस्तर सें नहीं उठेगा. इस बात को पक्का करने के लिए एक नायाब तरीका निकाला गया. शाम को एक सिपाही आता और पूरे कबीले के आदमियों के पैरों के नीचे मुहर लगा देता ताकि वे रात को कहीं बाहर न जा सकें. अगर उनमें सें कोई भी चलने के लिए पैर जमीन पर टिकाता तो मुहर मिट सकती थी. सुबह जब तक वह सिपाही आकर उनकी मुहर जांच नहीं लेता था कोई भी मर्द घर सें बाहर नहीं जा सकता था. ऐसे में सहज कल्पना की जा सकती है कि अगर रात को आकर कोई उनकी बहन बेटियों की इज्जत सें खिलवाड़ करे तो उनके पास चुपचाप लेटे रह कर यह मंजर देखने के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं होता था. अगर वे उठ कर अपनी बहन बेटी को बचाते तो मुहर मिट जाती और सुबह थाने में उनकी खाल उधेड़ दी जाती.

एक आदमी के दोष के कारण पूरे समाज को सजा देना ब्राह्मणवादी लोगों की पुरानी परम्परा रही है. जैसे क्षत्रिय कार्तवीर्य अर्जुन ने परशु के बाप को मारा तो बदले में परशु ने समस्त क्षत्रिय कत्ल कर दिए. यहां तक कि क्षत्राणियों के पेट में पल रहे बच्चे तक उसने अपनी कुल्हाड़ी सें काट डाले.

ऐसे डर बसाया गया था दलितों के मन में! दलितों की कुछेक परिवारों को छोड़ कर अधिकतर के साथ ऐसा अन्याय किसी न किसी रूप में हुआ ही है. राजस्थान में हमारी जाति रैगर बहुसंख्या में है. ठाकुर और ब्राह्मण

हम लोगों को मिठाई तक खाने नहीं देते थे. अपने पैंसों सें भी हमारे लिये देसी घी खाना जुर्म था. तब मिठाई खाने का हम बहाना ढूंढते थे. हमारे बुजर्गों ने तब किसी के मरने पर मिठाई बनाने और खाने का रिवाज बनाया. इसे वहां खर्च कहा जाता है. लेकिन इस मिठाई पर भी उनकी पाबन्दी थी कि कोई भी देसी घी की मिठाई नहीं बनाएगा. स्वयं हमारे परिवार के साथ ऐसा हुआ कि एक बार उन्होंने देसी घी की मिठाई बना ली. हमारे परिवार में सब को डर लग रहा था कि कहीं ब्राह्मणों को पता न चल जाए कि हमारे यहां देसी घी की मिठाई बनी है. हमारा डर सच साबित हुआ. देसी घी की खुशबू गांव में फैली नहीं कि ऊंची जाति के ठाकुर और ब्राह्मण लट्ठ लेकर आ गए. उन्होंने पूरी मिठाई पर रेत डाल दी.

आज आजादी मिले साठ साल होने को आए आज भी अनेकों गांवों में दलित परिवार के दूल्हे को घोड़े पर बैठ कर गांव सें गुजरने की मनाही है और कई जगह तो दूल्हा सेहरा बांध कर भी गांव सें नहीं निकल सकता. आज भी ऐसे गांव मौजूद हैं जहां ठाकर या ब्राह्मण के गली में सें निकलने पर दलित समाज के लोग अपनी चारपाई पर बैठे नहीं रह सकते. उन्हें अदब में सिर झुका कर खड़े होना ही पड़ता है. चाहे हमारे आदमी के पास ठाकरों ब्राह्मणों सें ज्यादा पैसे हों, हम उनसें ज्यादा पढ़े लिखे हों, सारे कानून हमारे पक्ष में हों तो भी हमारे समाज पर ब्राह्मणों की लगाई गईं ये पाबंदियां आज भी मौजूद हैं. हमारे अनेकों आदमी डर के मारे दूल्हे को अपनी बस्ती तक ही सीमित रखते हैं.

ऐसे ही वहां बलाई या चमार जाति के लोगों के साथ होता था. जब ठाकर या ब्राह्मण की बेटी की शादी होती थी तो वहां काम करने वाले बलाइयों की बेटियों को बतौर गोली (दासी) उस लड़की के साथ भेज दिया जाता था. ब्राह्मणधर्म का नियम है कि दासी का स्वामी उसके शरीर का भी मालिक होता है. नतीजन ठाकर चाहे बलाइयों की छाया सें भी दूर रहते थे मगर गोलियों सें यौन सम्बंध बनाने में नहीं झिझकते थे. लेकिन उनके बच्चों को ठाकर बाप का नाम नहीं मिलता था.

कोई माँ बाप यह नहीं चाहता कि उसकी बेटी किसी की गोली बन कर उसके साथ जाए. हर माता पिता यह कामना करता है कि उसकी बेटी को चाहे रूखी सूखी मिले लेकिन वह अपने पति के घर सुख सें रहे. वहां हर मां बाप को जवान होती अपनी बेटी के भविष्य के प्रति हमेशा डर लगा रहता था. इसीलिए वहां दलित अपनी बेटियों को बचाने के लिए उसके दो चार साल की होते ही बेटी की शादी कर देते थे. समय के साथ यही रिवाज बन गया ताकि उन्हें गोली बनने सें बचाया जा सके. ऐसा डर था दलितों में!!

ऐसा ही एक अनोखी रस्म हमारे यहां बेटा होने पर की जाती है. बेटा होने पर घर के अन्दर एक चौखट के साथ स्वास्तिक और चक्र गोबर सें बनाया जाता है. स्वास्तिक को "सात्या" तथा चक्र को "छाबड़ी" कहा जाता है. छाबड़ी सात्या लगाते ही **तुरंत ही** उनकी पूजा की जाती है तथा **तुरंत ही** उन्हें खुरच कर उतार दिया जाता है तथा सारी सामग्री कूंए में डाल दी जाती है. हमने बचपन सें ऐसे होते देखा था. हमें कोई भी बताने वाला नहीं मिला कि यह निशान किस चीज के हैं तथा इन्हें गोबर सें ही क्यों लगाया जाता है, घर के अंदर ही क्यों लगाया जाता है तथा फिर तुरंत ही खुरच कर क्यों उतारा जाता है. सभी बुजुर्गों ने अपने बचपन सें ऐसा होते हुए देखा था मगर इस रिवाज के पीछे कारण खोजने की किसी ने कोशिश नहीं की थी. रैदास जी ने यूं ही नहीं कहा : **अविद्या अहित कीन !!**

यह प्रथा बार बार हमारे विवेक को छूती थी. मन में छटपटाहट होती थी कि किस सें पूछें कहां सें पता लगाएं कि हम ऐसा क्यों करते हैं. तब कॉलेज के दिनों में हमने बाबा साहिब की पुस्तकें पढ़ीं. तब हमने जाना कि **सात्या वास्तव में भगवन बुद्ध के "चार सत्य" का द्योतक है तथा जिस चक्र को हम छाबड़ी कहते हैं वह वास्तव में उन्हीं का "धर्मचक्र" है.** यह वही धर्म चक्र है जो भारत के झण्डे की शान बढ़ाता है और जिसे बाबा साहिब ने गांधी के चर्खे की जगह भारत के झण्डे में स्थान दिलवाया था.

हमारे बाकी प्रश्न अभी भी बिना जवाब के भटक रहे थे. तब हमने बाबा साहिब की पुस्तकों सें ही जाना कि सम्राट अशोक के काल में हम सब अछूत बौद्ध धर्मी थे. ब्राह्मणों की तरह हम भी गोमांस खाते थे. (हमारी जाति में पचास साल पहले तक गाय को मारना बुरा माना जाता था मगर बैल या सांड का मांस आम मांस की तरह ही खाया जाता था) फिर ब्राह्मणों ने सम्राट अशोक के पौत्र वृहदर्थ की हत्या करके सत्ता हथिया ली. उन्होंने भारत में बौद्ध भिक्षुओं व बौद्धों का कत्लेआम किया. बुद्ध का नाम लेना भी अपराध करार दे दिया गया. अछूत लोग छितरा गए. हम लोग वक्त के साथ बुद्ध को तो भूल गए मगर घर में पैदा हुए पुत्र को भगवान बुद्ध की शरण में भेजने वाले रिवाज करते रहे. लेकिन हमें क्योंकि ब्राह्मणों सें डर लगता था इसलिए हम यह दोनों निशान घर के अन्दर

बनाते थे तथा उनका कोई निशान न बचे इसलिए गोबर सें बना कर तुरंत खुरच कर कूएं में डाल आते थे. वक्त के साथ यह रिवाज बन गया और हम आज भी ऐसा ही करते हैं.

ब्राह्मणवाद के कब्जे वाले राज्य में रहते हुए दलितों को कोई न कोई ऐसा गम ऐसा डर चौबीसों घण्टे डराता रहता है. गुरू रैदास ने इसीलिए दलितों सें आहवान किया कि वे अपना बेगमपुरा बसाएं जहां उन्हें कोई भी डराने वाला ठाकर या ब्राह्मण न हो.

कहा जाता है कि बिना डर के तो कोई प्यार भी नहीं करता. फिर रैदास जी बिना डर के पूरा राज्य कैसे चला सकते हैं. अतः बेगमपुरा में डर खौफ होना तो निश्चित है, लेकिन वहां खौफ खाएंगे वे लोग जो अपराधी हैं. जो भेड़ की खाल के अंदर भेड़िये हैं. सम्राट वृहदर्थ की हत्या के बाद जब सें दलित राज्य समाप्त हुआ है येन केन इन्हीं भेड़ियों का राज भारत पर चला आ रहा है. धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक हर जगह इन्होंने भारतीयों का शोषण किया है बल्कि खून पिया है. आलीशान महलनुमा आश्रमों में रहने वाले ये भेड़िये स्वयं को साधु सन्यासी कहलवाते हैं.

बेगमपुरा में ऐसे ही भेड़ियों को खौफ होगा. दलितों की बहन बेटियों पर बुरी नजर डालने वालों को वहां खौफ़ होगा. देवदासियां बनाने वालों को खौफ़ होगा. वीर एकलव्य का अंगूठा काटने वाले को अपना हाथ कटने का खौफ़ होगा. महात्मा शम्बूक का कत्ल करने वाले को फांसी का खौफ़ होगा. रैदास वहां प्रसन्न रहेंगे.

खता : खता यानि भूल, धोखा, अपराध. दलितों का सबसें बड़ी खता यही है कि वे अपना इतिहास भूल चुके हैं या सही शब्दों में कहें तो उन्हें उनका इतिहास भुलवा दिया गया है. दलित अपनी सिन्धु सभ्यता को भुला बैठे हैं, अपने वीरों को भुला बैठे हैं, अपने सन्तों को भुला बैठे हैं. यह बात शत प्रतिशत सच है कि **जो कौमें अपना इतिहास भुला देती हैं भविष्य उन्हें भुला देता है**. यही उनकी खता है. इसी खता की सजा वे सदियों सें भुगत रहे हैं. इतिहास भुलाने में उनका दोष नहीं है फिर भी वे सजा पा रहे हैं.

गुरू रैदास चाहते हैं कि उनके बेगमपुरा में ऐसी खता न की जाएं. दलितों सें धोखा न किया जाए. दलितों के हत्यारों को दलितों का भगवान न बताया जाए. सर्वप्रथम तथा सर्वगुण सम्पन्न दलित सम्राट रावण तथा सर्वश्रेष्ठ दलित सम्राट अशोक को दलित सदा याद रखें. शंबर, पिप्रु, करंज जैसे योद्धाओं को न भूलें. इन्हें भूलना दलितों की खता है.

तरस : तरस का अर्थ दया करना भी होता है मगर गुरू रैदास ने अपने पद में तरस का प्रयोग इस मकसद सें किया है कि बेगमपुरा में दलितों की ऐसी दयनीय हालत नहीं होगी कि किसी को उन पर तरस खाना पड़े. अपने जमाने में दलितों की हालत उन्होंने देखी और भोगी थी. इसीलिए उन्होंने कहा था : दारिद देख कर हर कोई हंसे ऐसी दसा हमारी!

दलित दरिद्र और अहसाय क्यों हैं. दलित इसलिए दरिद्र हैं क्योंकि ब्राह्मणों के सभी ग्रन्थ एक सुर में चिल्लाते हैं कि इनको दबा कर रखो. ब्राह्मणों के सारे भगवान उन्हें शिक्षा देते हैं कि दलितों को मसल दो. अगर दलित उठ गये तो ब्राह्मणों का नाश हो जाएगा. वेद सें लेकर संकरभाष्य तक तथा ब्रह्मा सें लेकर गांधी तक दलितों की हालत दयनीय बनाने में ही लगे रहे हैं. ब्राह्मणधर्म की सबसें प्राचीन पुस्तक ऋग्वेद मेंशूद्रों को पैरों सें पैदा हुआ बताया गया था और संकर ने अपने भाष्य तक में दलितों के विरुद्ध जहर उगला. ब्रह्मा को ऊंचे नीचे वर्णों में आदमी पैदा करने वाला बताया गया तो गांधी ने पूना पैक्ट में दलितों का खून पिया. इन दोनों के बीच में असंख्य ब्राह्मणिक सन्त, राजा, समाज सुधारक और पता नहीं क्या क्या पैदा हुए लेकिन सभी ने दलितों के विरुद्ध आग ही लगाई.

मनु जैसे पिशाचों ने दलितों पर इस कदर जुल्म किए कि शैतान की रूह भी कांप उठे. नतीजा यह हुआ कि राजस्थान गुजरात के गांवों में जब टुच्चा सा ठाकर गली सें निकलता था तो दलितों को अपनी चारपाई सें उठ कर जमीन पर बैठना पड़ता था. मालाबार के एरिया में दलित औरतों को अपनी छातियां बिना ढांके बाजार सें गुजरना पड़ता था. शिवा के पेशवाओं के राज्य में दलितों को अपने पैरों के पीछे झाड़ू बांध कर चलना पड़ता था ताकि उनके पैरों के निशान मिट जाएं और किसी ब्राह्मण का पैर उनके कदमों के निशान पर न पड़ जाए. आज दलितों की हालत इस कदर तरस खाने योग्य हो गई है कि बहुतेरे दलित अपने बाप का गोत्र भी अपने नाम के पीछे बदल कर लगाते हैं.

इसलिए उनकी दयनीय हालत देख कर रैदास जी को आजादी का बिगुल बजाना पड़ा. उनके हमसहरी सतगुरु कबीर ने उनका पूरा साथ दिया. निश्चित रूप सें दलित उनके साथ लगे थे मगर ब्राह्मण बहुत शातिर है उन्होंने गुरू रैदास की हत्या कर दी. उनकी हत्या के साथ ही उनका आंदोलन समाप्त कर दिया गया. अगर उनके

जमाने में दलित आज की तरह चेतन होते तो ... तो आज भारत सें जाति भेद, छूआछात कभी का नष्ट हो चुका होता. दलितों के कातिल आज भगवान नहीं कहा रहे होते. कहावत है कि बिखरे हुए बेरों को कुछ नहीं बिगड़ा होता. अतः जब भी दलित इक्कठा होंगे रैदास जी का सपना सच हो जाएगा. उनकी हालत तरस खाने योग्य नहीं रहेगी.

जवाल : जवाल का अर्थ है पतन या हानि. व्यापार अथवा शरीर में हानि लाभ चलता ही रहता है. गुरू रैदास का शरीर अथवा व्यापार में हानि की चिंता नहीं थी. उन्हें चिन्ता थी तो धर्म और समाज में हो रहे पतन की. उन्होंने अपनी बाणी में बार बार धर्म के नाम पर किए जा रहे अनाचार के विरुद्ध आवाज उठाई. सामाजिक पतन के विरुद्ध लोगों को जागृत किया.

ब्राह्मणधर्म को देखें तो उसमें नैतिकता के लिए कोई स्थान नहीं है. उस धर्म का नैतिक रूप में इतना पतन हो चुका है कि अपनी बेटी सें बलात्कार करने वाले को वहां भगवान कहा जाता है, सृष्टिकर्ता कहा जाता है. अपनी मामी को उधाल ले जाने वाले को भगवान कहा जाता है. अपनी पूरे दिनों की गर्भवती पत्नि को जंगल में फिकवाने वाले को भी भगवान कहा जाता है. वेश्याओं के पीछे राल टपकाने वालों को वहां ऋषि कहा जाता है. अपनी माँ को ताड़न को अधिकारी कहने वाले को वहां सन्त कहा जाता है. यह जवाल है पतन है.

गुरू रैदास ऐसे पतन सें रहित बेगमपुरा बसाने की बात करते हैं जहां धर्म के नाम पर अनैतिकता और अनाचार न परोसा जाए. वे श्रमण संस्कृति के कर्णधार थे. भगवन बुद्ध ने श्रमण संस्कृति की नींव रखी थी. वे दुनिया के पहले पुरुष थे जिन्होंने नैतिकता और सदाचार को धर्म माना. धर्म के नाम पर किए जा रहे कर्मकांड और पाखण्ड का उन्होंने जबरदस्त खण्डन किया. नतीजा यह हुआ कि ब्राह्मणधर्म का भारत सें लगभग नाश हो गया था. लोगों ने धर्म के असली रूप को पहचाना. गुरू रैदास चाहते हैं कि उनके बेगमपुरा में भी लोग सदाचार और नैतिकता को ही धर्म मानें. ब्राह्मणिक अनाचार को तिलांजलि दें.

प्राचीन काल सें ही ब्राह्मणों ने धर्म के नाम पर अनाचार फैला रखा है. उनके अनुसार आदमी कुछ भी कुकर्म करे कुछ भी पाप करे, मात्र तीर्थ नहाने और ब्राह्मणों को दान देने सें उसके सारे पाप उतर जाते हैं तथा वह स्वर्ग जाता है. ऐसी बातों की वजह सें समाज को नैतिक पतन हो गया. काशी जैसी नगरी चोरों ठगों लुटेरों का गढ़ बन गई. आज भी वहां के पण्डे लोगों को इसी विश्वास पर लूटते हैं कि गंगा में स्नान करने सें उनके पाप धुल जाते हैं. ब्राह्मणों ने पाप धुलने के ऐसे रास्ते बता रखे हैं कि स्वयं पाप भी को भी अपने आप पर शर्म आ जाए.

- पाप धुलाने का एक रास्ता है अश्वमेध यज्ञ में मुख्य रानी का घोड़े के साथ समागम कराना. ब्राह्मण ऐसे कुकर्म को धर्म का काम और पाप भगाने वाला बताते हैं.
- रामायण में वर्णन है कि अश्वमेध यज्ञ में जब कौषल्या ने तीन वार करके घोड़े को काट दिया तो ब्राह्मणों ने घोड़े की चर्बी निकाल कर यज्ञ की लपटों में उसे भूना. चर्बी भूनने सें जो गंध निकली उसे सूंघने सें दसरथ के पाप धुल गए.
- भागवत में आसान तरीका है कि कोई कितना बड़ा पापी हो अगर मरते समय वह "ह" कह दे तो उसके सारे पाप धुल जाते हैं. उसकी "ह" सुन कर ब्राह्मणों का भगवान स्वयं आता है और उसे अपने साथ स्वर्ग ले जाता है.
- जीते जी पाप धोने हों तो कृष्ण रास्ता बताता है कि अगर कोई सारी दुनिया के सारे पापियों सें भी बड़ा पापी हो बस उसकी शरण में चला जाए तो उसके सारे पाप घुल जाते हैं. (गीता 4.36)

सबसें अहम बात यह है कि कोई भी ब्राह्मण ग्रन्थ पाप न करने की सलाह नहीं देता. सबके सब केवल पाप करके उसकी सजा सें बचने का रास्ता बताते हैं. यह तो ब्राह्मणधर्म में पाप करके उसकी सजा सें बचने के रास्ते हैं. ब्राह्मणधर्म में तो ऐसे अनेकों कुकर्म हैं जो समाज में महापाप माने जाते हैं मगर वहां धर्म कहलाते हैं. उदाहरणत :

1. स्त्री अपने यारों सें समागम करे तो उसे पाप नहीं लगता.
2. ब्राह्मण यज्ञ में बलि (पशु काट कर) देकर दूषित नहीं होता.
3. मल मूत्र त्यागने सें पानी दूषित नहीं होता.
4. शूद्रों पर जुल्म करने सें कोई दूषित नहीं होता.

जिस समाज या धर्म में उपरोक्त कुकर्म करने सें ही आदमी दूषित नहीं होगा तो समाज का नैतिक पतन होना तो निश्चित ही है. जब 'ह' कहने सें पाप धुल जाएंगे, जब कृष्ण की शरण में जाने सें पाप धुल जाएंगे, भुनी चर्बी की गंध सें पाप धुल जाएंगे, स्त्रियां राधा की तरह गैरों सें रंगरलियां मनाने सें दूषित नहीं होगी तो उस समाज

में तो जवाल क्या महाजवाल आएगा. पण्डों द्वारा पशुओं की बलि भी देने पर सतगुरु कबीर ने कहा था : **पण्डे निपुण कसाई, साधो! पण्डे निपुण कसाई!!** सभी दलित सन्तों ने धर्म के नाम पर किए जा रहे इन कुकर्मों का विरोध किया. लोगों को इस पाप पूर्ण आचरण के विरुद्ध लामबन्द किया. इसीलिए गुरू रैदास ने बेगमपुरा बसाने की बात की ताकि ऐसे धर्म के नाम पर वहां पाखण्ड कुकर्म और अनाचार न हो.

कायम दायम सदा पातशाही : गुरू रैदास का वचन है कि जब एक बार दलित शासन आ गया अर्थात उनकी सत्ता कायम हो गई तो फिर यह **सदा के लिए** बनी रहेगी!! **यह एक सच्चे सन्त के वचन हैं**. यहां गुरू रैदास बादशाही नहीं चाहते बल्कि पातशाही चाहते हैं. वे बादशाही यानि मात्र राजनीतिक सत्ता प्राप्ति की बात नहीं करते बल्कि पातशाही यानि न्याय सच्चाई सदाचार पर आधारित सत्ता चाहते हैं.

दलित बादशाहों को छोड़ कर लगभग हर बादशाह निरंकुश और जालिम था : ब्राह्मण पेशवा राजाओं की तरह जो ऐयाशी करने के लिए जनता सें चौथ वसूलते थे तथा अंग्रेजों के तलवे चाट कर उनसें पेंशन पाते थे ताकि जनता अंग्रेजों की गुलाम बनी रहे. या लक्ष्मी बाई और उसके पति जैसे होते थे जो सारी उम्र अंग्रेजों के तलवे चाटते रहे. जब तक लक्ष्मी का पति जिन्दा रहा, भारतीयों के विरुद्ध अंग्रेजों को साथ देता रहा. जब वह नपुत्रा मर गया तो लक्ष्मी ने किसी लड़के को गोद ले लिया. लक्ष्मी ने अंग्रेजों के तलवे चाटे कि उसके पति की सेवाओं का ध्यान करते हुए वे उसे तथा उसके दत्तक पुत्र को 'राजा' बना रहने दें तथा उनकी पेंशन चालू रखें लेकिन **दलित वीरांगना झलकारी बाई को यह स्वीकार नहीं था कि विदेशी उनकी भूमि पर पांव रखें. उन्होंने लोगों को इक्कठा किया और अंग्रेजों पर धावा बोल दिया.** घमासान युद्ध हुआ. लक्ष्मी को अपनी बचाने की फिक्र हो गई. तब **वीरांगना झलकारी बाई ने लक्ष्मी को साधारण कपड़ों में झांसी सें बाहर निकाला तथा स्वयं उसके कपड़े पहने कर अपनी झांसी की रक्षा करते हुए शहीद हो गईं.**

गुरू रैदास जानते थे कि भारत का निर्माण केवल और केवल दलितों ने किया है. सिन्धु सभ्यता सें लेकर आज तक भारत की तमाम बिल्डिंगें, तमाम सड़कें, तमाम कारखाने दलितों की मेहनत का फल हैं. यहां तक कि जिन मंदिरों में उन्हें घुसने नहीं दिया जाता वे भी दलितों ने ही बनाये हैं. आज के समय में भी तमाम मोटर गाड़ियां उनके खून पसीने की बदौलत ही बन पाई हैं. मंदिर में घण्टे बजाने सें या यज्ञ में पशु मार कर खाने सें भारत का निर्माण नहीं हुआ है. माननीय राजशेखर ने सही कहा है कि अपनी मेरिट की डींगें मारने वाले किसी सवर्ण ने आज तक भारत में एक कार तक तैयार नहीं कर पाया है.

गुरू रैदास दलितों के हौसले और बहादुरी सें भी परिचित थे. वे जानते थे कि सदियों की गुलामी और जुल्म सह कर भी दलित अपनी संस्कृति नहीं भूले हैं. दलित जानते हैं कि ब्राह्मण वर्ग ने उनकी यह दुर्दशा की है. वे सुबह उठते ही अथवा काम पर जाते वक्त ब्राह्मण का मूंह देखना अशुभ मानते थे. अब भी दलित ब्राह्मण को अशुभ ही समझते हैं. दलितों में अधिकतर कर्मकांड बिना ब्राह्मण के ही पूरे किए जाते हैं. इसलिए गुरू रैदास का कहना है कि ऐसे दृढ़ दलितों के हाथ में सत्ता आकर फिर सें नहीं जाएगी.

एक बात और भी हैरान करने वाली है कि जब तक भारत पर दलितों का राज रहा उनके पास अतुलनीय सोना रहा. उनके तमाम राज्य सोने के भण्डारों सें भरपूर रहे. सिन्धु सभ्यता अर्थात महाराज रावण की लंका को सोने की नगरी कहा जाता था, हरिण्यकशिपु का अर्थ है सोने के पर्वत वाला, नाग महाराज तक्षक के पास अतुलनीय हीरे जवाहरात तथा सोना था. नन्द वंश तथा मौर्य राज्य में सोने की मुहरें चलती थीं. लेकिन जैसे ही ब्राह्मण हत्यारे पुष्यमित्र शुंग ने दलित शासन का अन्त किया मनु जैसे पिशाचों ने नियम बना दिए कि दलित केवल लोहे के गहने पहनेंगे तथा मिट्टी के बर्तनों में ही खाना खाएंगे. (मनु अध्याय 10)

अतः गुरू रैदास ने आहवान कया कि दलित अपना खोया राज्य पुनः बसाएं. जब उनका राज आएगा वह न केवल धन धान्य सें स्मृद्ध होगा बल्कि नैतिकता और सदाचार पर भी आधारित होगा तथा अजर अमर राज होगा. यानि **दलितों की पातशाही** होगी!!

दोम न सोम, सब एक सो आही : सभी दलितों की तरह गुरू रैदास भी ब्राह्मणों की गुलामी सें दुखी थे. बिना दोष के दलितों को दी जा रही सजा सें उनका मन बगावत पर उतारू हो जाता था. **जब सें दुनिया बनी है तब सें लेकर आज तक ब्राह्मणों में कोई ऋषि कोई मुनि कोई महात्मा कोई संकर कोई जगदगुरू कोई अवतार ऐसा पैदा ही नहीं हुआ जो दलित सन्तों – रैदास, कबीर की बराबरी तो छोड़ो उनके पासंग में भी आ सके.** लेकिन अपनी जाति के कारण उन्हें गले सड़े घटिया ब्राह्मणों सें भी नीचा माना गया.

ब्राह्मणधर्म ने अपने जन्म सें ही लोगों को तीन वर्गों में बांट रखा है. पहला वर्ग द्विज कहलाता है जिसमें वे जातियां शामिल हैं जिनका उपनयन संस्कार होता है अर्थात वे जातियां जो जनेऊ पहनती हैं. जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय

और वैश्य. भारत की 8 सें 10 प्रतिशत आबादी इनकी है. उनके बाद दूसरा वर्ग है शूद्रों का जिनका उपनयन संस्कार नहीं होता यानि जो जनेऊ धारण नहीं करते. भारत की आधी आबादी इन्हीं की है. तीसरा वर्ग अछूतों का है जो न केवल जनेऊ धारण नहीं करते बल्कि उन्हें देखना और छूना भी पाप माना जाता है. भारत की 35 प्रतिषत आबादी इनकी है. अतः कुल मिला कर 8–10 प्रतिशत लोग शेष 90 प्रतिषत लोगों को नीच बता कर उनका सदियों सें शोषण करते आ रहे हैं.

भारत में जाति प्रथा तथा ऊंच नीच का चक्र ब्राह्मणों ने चलाया है. इसलिए उसने स्वयं को सबसें ऊपर रखा है. उनसें नीचे क्षत्रिय हैं जिनका काम मात्र जाति प्रथा को बनाए रखना तथा ब्राह्मणों की रक्षा करना है. **यह कोरी गप्प है कि क्षत्रियों का काम राज करना होता था क्योंकि आज तक भारत में एक भी राजा क्षत्रिय नहीं हुआ. क्षत्रियों को तो ब्राह्मण परशु ने सदियों पहले ही काट कर खत्म कर दिया था.** किस्सों कहानियों में अयोध्या या हस्तिनापुर जैसे गांवों के सरपंचों जैसे राजाओं को सम्राट बताने सें वे भारत के राजा नहीं बन जाते. **इतिहास में कोई राजा ऐसा नहीं हुआ जिसने भारत पर शासन किया हो और जो क्षत्रिय हो.** जिन विदेशी हमलावरों ने ब्राह्मणों की पुरोहिताई स्वीकार कर ली ब्राह्मणों ने उन्हें क्षत्रिय घोषित कर दिया. राजपूतों के बारे में इतिहासकारों ने यही मत व्यक्त किये है.

एक अन्य बात भी गौरतलब है कि अलबरूनी के समय यानि अब सें लगभग एक हजार साल पहले वैश्य तथा शूद्रों में कोई विशेष अन्तर नहीं होता था. उनमें रोटी बेटी का रिश्ता भी होता था. केवल धोबी, नाई, चमार, डोम और भंगी जातियों के लोगों को नीचा समझा जाता था. शायद यह परिपाटी गुरू रैदास के समय तक भी चलती आ रही थी. इसीलिए उन्होंने केवल दूसरे और तीसरे दर्जे की ही बात की है. गीता भी वैश्य और शूद्र दोनों को एक समान पापयोनि बताती है. (9.32)

गुरू रैदास के आदेश पर ही बाबा साहिब ने भारतीय संविधान में सभी भारतीयों को एक जैसा दर्जा दिया. उन्होंने भारतीय संविधान में निम्न प्रावधान बनाएः

* **धारा 14** : सभी भारतीय एक बराबर हैं. सरकार सभी को एक समान समझेगी तथा कानून सबके लिए बराबर होगा.
* **धारा 15** : किसी भी व्यक्ति सें उसके लिंग, धर्म, जाति, नस्ल तथा जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा.
* **धारा 16** : सरकारी नौकरियां देने में किसी सें जाति, धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा. दलितों के लिए पद अलग सें आरक्षित किए जाएंगे.
* **धारा 17** : छूआछात करना अपराध घोषित किया गया.
* **धारा 23** : बेगार प्रथा अपराध घोषित की गई. बिना मेहनताना दिए काम कराना अपराध करार दिया.

आधी सदी सें अधिक बीत जाने पर भी तथा इतने कानून बनने के बावजूद भी आज तक भारत सें जाति की ऊंच नीच तथा छूआछात समाप्त नहीं हुई है. कारण एक ही है. संविधान बनने सें पहले तथा बनने के बाद आज तक सत्ता ब्राह्मण के हाथ में ही रही है. अतः आज तक भारत के ब्राह्मण प्रधान मन्त्री और राष्ट्रपति उन संकराचार्यों के पैरों में अपना माथा रगड़ते रहे हैं जो कहते हैं कि दलित कभी भी ब्राह्मण के बराबर नहीं हो सकता. वे उस धर्म के प्रधान हैं जो कहता है कि दलितों को कुत्ते सें भी बदतर समझा जाए. अतः जब भी दलितों पर जुल्म हुए, कोई कार्यवाई नहीं की गई क्योंकि उनके धर्म ग्रन्थ यही आदेश देते हैं कि दलितों को कुचला जाना चाहिए. संविधान बना देने के बाद बाबा साहिब ने कहा था कि मैने जो मंदिर बनाया था उस पर शैतानों ने कब्जा कर लिया है. **जब तक दलित अपनी सत्ता बना कर छूआछात की आग लगाने वाले ऐसे धूर्त संकराचार्यों को सजा नहीं देते तब तक उनका कल्याण नहीं हो सकता. तब तक उनके साथ ऐसे ही जुल्म होते रहेंगे. इसी लिए गुरू रैदास ने कहा थाः**

अछूत राज बिछड़े दुख पाया, ऐसी दशा हुई हमारी!!

इसलिए गुरू रैदास ऐसा बेगमपुरा बसाना चाहते हैं जहां दलितों का शासन हो. जहां कोई भी दूसरे तथा तीसरे दर्जे का न कहलवाए. सबके सब आदमी केवल एक ही दर्जे के गिने जाएं. केवल गुणों के आधार पर किसी को भला या बुरा माना जाए. गुरू रैदास ने इस बीमारी का एक ही हल बताया कि अपनी छिनी हुई सत्ता फिर सें हासिल करो. अपना बेगमपुरा बसाओ जहां कोई भी आदमी मात्र जाति के कारण दोम यानि दोयम अर्थात दूसरे दर्जे का और न ही सोम यानि तीसरे दर्जे का कहलाएगा.

आबादान सदा मसहूर : कुछ लेखकों ने "आबादान रहम औजूद" शब्दों का प्रयोग किया है. उन्होंने अर्थ किया है कि बेगमपुरा में जीविका के साधन न्यायसंगत होंगे. रोजी रोटी रहम दया के साधनों सें कमाई जाएगी. लेकिन गुरू ग्रन्थ साहिब में "आबादान सदा मसहूर" ही आया है. सो हमने इसे ही प्रामाणिक माना है. गुरू रैदास का मानना है कि जब दलित राज आएगा तो वह वैसे ही प्रसिद्धी प्राप्त करेगा जैसे सिन्धु सभ्यता अर्थात महाराज रावण की लंका ने दुनिया भर में प्रसिद्धी प्राप्त की थीं. बेगमपुरा प्राचीन दलित नगरियों जैसे नालंदा तक्षशिला पाटलिपुत्र की तरह पूरी दुनिया भर में मसहूर होगा.

ब्राह्मणिक नगरियों की स्थिति ऐसी है कि दक्षिण भारत की नगरियों को कोई उत्तर भारत में नहीं जानता तथा यहां की नगरियों को उधर कोई नहीं जानता. ब्राह्मणधर्मियों की नगरियां हैं काशी, प्रयाग, मथुरा, पुरी आदि. उनकी कोई भी नगरी किसी अच्छे काम के लिए प्रसिद्ध नहीं हैं. काशी या बनारस को ठगों की नगरी कहा जाता है जहां मरने पर, ब्राह्मणों का दावा है कि आदमी स्वर्ग जाता है. अतः काशी नगरी मौत के व्यापार के लिए प्रसिद्ध है. ब्राह्मणधर्म में मरने के बाद ब्राह्मण को दान दक्षिणा देनी पड़ती है. अतः जितने ज्यादा लोग स्वर्ग जाने के लिए वहां आकर मरेंगे ब्राह्मणों का व्यापार उतना ही फले फूलेगा.

प्रयाग में भी लोग आत्महत्या करने आते थे क्योंकि ब्राह्मणिक धर्म की मान्यता है कि संगम में डूब कर जो मरेगा सीधा स्वर्ग जाएगा चाहे उसने कितने भी पाप कर रखे हों. अल्लाहबाद अर्थात प्रयाग में तीन नदियों का संगम बताते हैं : गंगा जमना और सरस्वती. **ब्राह्मणधर्म की बड़ी गप्पों में सें एक गप्प यह भी है कि सरस्वती कभी अल्लाहबाद सें होकर निकलती थी तथा वहां आकर तीनों मिलती थीं.** सरस्वती को सूखे हुए अढाई हजार साल हो गए तथा जब कभी भी वह बही मात्र **पंजाब** में बही. उसका प्रयाग में आना किसी भी ढंग सें सम्भव ही नहीं है. पुरी नंगी मूर्तियों वाले मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है. मथुरा वृंदावन कृष्ण की ऐशगाह के लिए प्रसिद्ध है. कुरुक्षेत्र जुआरी परिवारों के लड़ने मरने के लिए प्रसिद्ध है. अतः उनकी सभी नगरियां कुख्यात हैं.

गुरू रैदास कहते हैं बेगमपुरा की नगरियां ऐसी नहीं होंगी बल्कि बेगमपुरा वैसे ही मषहूर होगा जैसे दलितों के नगर अपनी आन और शान के लिए प्रसिद्ध थे. सिन्धु सभ्यता जैसी पानी और सीवरेज की व्यवस्था आज के अमीर देशों अमरीका इंगलैंड में भी मौजूद नहीं है. जब सिन्धु सभ्यता के लोग घर के अन्दर बने शौचालयों का प्रयोग करते थे उस समय ब्राह्मण गंगा किनारे पेट साफ करके फतवा देते थे कि गंगा जमना आदि के पानी में मल मूत्र करने सें उनका पानी गंदा नहीं होता. इसलिए आज तक अनेकों नगरों के सीवर का पानी उनकी गंगा और जमना में गिरता है. जहां बनारस ठगी के लिए माना जाता है महाराजा बलि की नगरी इमानदारी के लिए प्रसिद्ध थी. भागवत तक इस बात के गवाह हैं कि उनकी नगरी में कोई घर या दुकान को ताला नहीं लगाता था. औरत अगर आधी रात को भी गहनों सें सज कर घर सें निकलती थी तो उसे अपी इज्जत या गहनों को कोई डर नहीं होता था. ब्राह्मणिक देवों सें यह सहन नहीं हुआ और उनकी हत्या कर दी गई.

सारनाथ नगरी में भगवन बुद्ध ने मानवता का संदेश दिया. दुखों सें छुटकारा पाने का रास्ता बताया. सदाचार को जीवन का आधार बनाने का आहवान किया. वहीं कृष्ण ने कुरुक्षेत्र में भाई के हाथों भाई मारने का संदेश दिया. जहां नालंदा और तक्षशिला में बुद्ध धर्म के अध्ययन के लिए सभी धर्मों जातियों नस्लों व क्षेत्रों के लोग आए वहीं हस्तिनापुर में महावीर एकलव्य को धूर्त द्रोण ने जाति के आधार पर शिक्षा देने सें मना कर दिया लेकिन जब उन्होंने स्वयं तीर चलाना सीखा तो उसी हरामी द्रोण ने उनका अंगूठा काट लिया.

अतः गुरू रैदास का आहवान है कि दलित फिर सें बेगमपुरा बसाएं जहां नालंदा, तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय खुलें तथा लंका जैसी सिन्धु अर्थात दलित सभ्यता फिर सें बने तथा दुनिया भर में जिसका नाम हो. यह सच्चे सन्त का वचन है कि जिस दिन दलित बेगमपुरा बना लेंगे वह वैसे ही मशहूर होगा जैसे सिन्धु सभ्यता है. उसकी स्मृद्धि और सदाचार दुनिया भर में मशहूर होगी.

वहां गण बसैं मामूर : गुरू रैदास के यह शब्द राजनीतिक ज्ञान की **चरम सीमा** हैं. उन्होंने पूरे राजनीतिक दर्शन को गागर में सागर के अनुरूप पेश कर दिया है. उनके अनुसार बेगमपुरा में दो चीजें होंगीं :

1. **वहां गण बसेंगे.**
2. **वहां गण मामूर सें बसेंगे.**

गण : गण का अर्थ है कबीले या छोटे राज्य. प्राचीन भारत में सिन्धु सभ्यता सें लेकर मौर्य काल तक भारत में अनेकों गणराज्य थे. बुद्धकाल में लिच्छवी, शाक्य, मल्ल आदि प्रसिद्ध गण थे. उनका एक निश्चित क्षेत्र में राज्य होता था तथा उनका राजा निश्चित समय के बाद जनता द्वारा चुना जाता था. बुद्ध के पिता भी शाक्य गण के लोगों द्वारा राजा चुने गए थे. जहां भी कोई पेचीदा मसला आता था, वे लोग बाकायदा वोट द्वारा उसका फैसला

करते थे. सिद्धार्थ के घर त्याग का फैसला भी परोक्ष रूप में वोट के आधार पर ही हुआ था. युवा सिद्धार्थ ने अपने गणराज्य सें पड़ोसी राज्य सें युद्ध न करने की अपील की थी. इस मुद्दे पर वोट डाले गए. उनकी बात नहीं मानी गई तो उन्होंने सन्यास लेना स्वीकार किया.

विश्व भर में भारत पहला देश है जहां गणराज्य बने व पनपे तथा दुनिया में भारतीय पहले लोग हैं जिन्होंने लोकतन्त्र व्यवस्था अपनाई. सिन्धु सभ्यता के तमाम नगरों में कहीं भी राजा का महल नहीं मिला है जो यह दर्शाता है कि वहां भी बुद्धकाल की तरह जनता का ही शासन यानि गणराज्य था. बुद्धकाल में वैशाली, मिथिला, केसपुत, कलिंग, पावा कपिलवस्तु, कुसीनगर, आदि अनेकों गणतंत्र थे. **इनमें सें अधिकतर गणतंत्र उन लोगों के थे जिन्हें आजकल दलित जाति वाले कहा जाता है.** इस लोकतांत्रिक तथा गणराज्यों की व्यवस्था को ब्राह्मणिक व्यवस्था ने नष्ट कर दिया. ब्राह्मण ग्रन्थों ने गणराज्यों की बजाए चक्रवर्ती राजा बनने की सलाह दी. बड़े राजाओं सें अश्वमेध यज्ञ करा कर छोटे गणराज्यों को नष्ट करवाया.

गुरू रैदास फिर सें बेगमपुरा में गणराज्य स्थापित करने का आहवान करते हैं जहां हर छोटा बड़ा अपनी राय दे सकता है. वहां राम जैसे राजा नहीं होंगे जो अपनी पत्नि तक को बिना कसूर बताए जंगल में फिंकवा देंगे और न ही उसकी तरह ज्ञान बांटते हुए सन्तों का गला काटेंगे. वहां सिद्धार्थ गौतम के गणराज्य की तरह वोट तथा आपसी सलाह मशवरे सें फैसले किए जाएंगे.

एक बात और भी है. महात्मा रावण को चाहे निरंकुश शासक की तरह चित्रित किया जाता है मगर सच्चाई यही है कि उन्होंने सीता हरण सें लेकर हनुमान को सजा देने तक के सारे फैसले अपने मन्त्री परिषद की राय सें किए थे जबकि राम ने सारे फैसले अकेले करके लक्ष्मण को आदेश दिए कि वह उन पर अमल करे. पूरी रामायण में कही जिक्र नहीं है कि राम ने कभी भी अपने भाईयों या मन्त्रियों सें राय लेकर कोई काम किया हो. गुरू रैदास ऐसा रामराज्य नहीं चाहते थे. बुद्ध की तरह उन्हें गणतन्त्र शासन प्रणाली पसन्द थी.

मामूर : मामूर यानि मामूल जिसका अर्थ है "न्याय पर आधारित". आज सें छः सौ साल पहले जब राजा का शब्द ही कानून होता था तथा ब्राह्मण राजा के भी सिर पर सवार होता था, उस समय कानून और न्याय की बात करना अपने आप में एक विलक्षण मिसाल है. कहावत है कि जिसके न पैर बिवाई, वो क्या जाने पीर पराई! गुरू रैदास ने दलितों के साथ अत्याचार होते हुए देखा था तथा स्वयं भुगता भी था. अतः उन्होंने न्याय और कानून के शासन का आहवान किया. **आज सें छः सौ साल पहले अगर किसी ब्राह्मण ने Rule of Law अर्थात कानून के शासन की बात कर दी होती तो उसे गांधी की तरह पूरी दुनिया का बापू घोषित कर दिया गया होता. अगर कहीं किसी अंग्रेज ने ऐसी बात कह दी होती तो अंग्रेजों ने उसे फादर ऑफ पॉलिटिक्स अर्थात राजनीति का पिता बना दिया होता.** यह तो दलितों की ही कमजोरी है कि वे ही अपने विद्वानों को सही इज्जत नहीं दिलवा पाए. सिकन्दर जहां भी गया उसने मार काट करने और खून बहाने के सिवाय कुछ नहीं किया मगर अंग्रेज इतिहासकार उसे महान बताते हैं. महाभारत में सही कहा गया है कि ताकतवर और विजेता की बात कमजोर आदमी धर्म की तरह सत्य मान लेते हैं. इसलिए अंग्रेजों ने सिकन्दर को महान बना दिया. ब्राह्मणों में कोई ऐसा पैदा हो जाता तो वे भी उसे महान बना देते.

कुछ विद्वानों ने "मामूर" की जगह "माबूद" शब्द का प्रयोग किया है जिसका अर्थ है सर्व सम्पन्न और प्रभुताशाली. अतः गुरू रैदास के अनुसार **बेगमपुरा खुशहाल, आजाद और शक्तिशाली देश होगा**. उनका देश किसी विदेशी कौम का गुलाम नहीं होगा, गरीब नहीं रहेगा तथा अपने फैसले स्वयं करने वाला होगा. ये गुरू रैदास के शुद्ध राजनीतिक विचार हैं. इन्हें बिना कारण सें कुछ लेखक भगवान की भक्ति सें जोड़ते हैं.

कानून का शासन : (Rule Of Law) कानून का शासन का अर्थ है कि सबके लिए एक जैसा कानून होगा. इसका अर्थ है कि चोरी करने वाले ब्राह्मण और चाण्डाल को एक जैसी सजा मिलना. मनुस्मृति में ब्राह्मण को सजा देने की मनाही की गई है लेकिन शूद्र को बिना कारण सें भी मार पिटाई करने का प्रावधान किया गया है. तुलसी ने तो अपनी माँ बहन (नारी) और शूद्र को मारने पीटने का स्पष्ट आदेश दिया है. गुरू रैदास ने अपने बेगमपुरा में कानून के शासन की बात की है. उन्होंने कहा कि उनके बेगमपुरा में न्याय और कानून के शासन पर आधारित राज्य व्यवस्था होगी. वे बोले :

रैदास बामण और चण्डाल में नाहिं अन्तर जान!
दोनों में एक ही रक्त मांस है दोनो एक समान!!

ब्राह्मण क्योंकि कानून बनाने वाले थे अतः उन्होंने स्वयं को कानून सें ऊपर रखा. उन्होंने नियम बनाया कि जैसे आग सब कुछ खाकर भी शुद्ध बनी रहती है वैसे ही ब्राह्मण कुछ भी खाकर तथा कुछ भी अपराध करके पवित्र बना रहता है. अनेकों स्मृतियों ने ब्राह्मण को भूदेव यानि धरती का मालिक घोषित कर दिया. अतः उसे धरती पर

किसी द्वारा भी सजा देने सें मनाही की गई. ब्राह्मण को मारना सबसें बड़ा पाप करार दे दिया गया. सो वह कितने भी कत्ल कर दे उसे फांसी पर नहीं लटकाया जा सकता था. उसके लिए अधिकतम सजा देश निकाला था. गुरू रैदास ने न केवल ब्राह्मणों की सत्ता को चुनौती दी बल्कि उन्हें बाकी आम आदमी की तरह ही उसके गुनाहों की सजा देने की भी बात कही. उन्होंने साफ कहा :

रैदास ब्राह्मण न पूजिए जो होवै गुणहीन!
पूजै चरण चण्डाल के जो होवे गुण प्रवीण!!

अगर भारत में कानून का शासन होता तो वीर एकलव्य का अंगूठा का काटने वाला द्रोण जेल में कम सें कम सात साल तक चक्की पीसता. उसके नाम पर सर्वश्रेष्ठ अध्यापक का पुरस्कार नहीं बनाया जाता. कृष्ण लड़ाई उकसाने व लोगों को मरवाने का दोषी पाया जाता और धारा 302 के अधीन मौत या उम्रकैद की सजा पाता. राम को महात्मा शम्बूक के कत्ल के जुर्म में फांसी लटका दिया गया होता. ब्रह्मा को अपनी बेटी सें नाजायज सम्बंध बनाने पर जेल भेजा गया होता. विष्णु को वृंदा सें बलात्कार करने व हत्या करने के दोष में फांसी लटका दिया गया होता. इन्हीं बातों सें समाज को बचाने के लिए गुरू रैदास ने न्याय पर आधारित बेगमपुरा बसाने की बात की है जहां कुकर्म करने वाले देवता नहीं कहे जाएंगे बल्कि शैतान कहे जाएंगे तथा अपने कुकर्मों की सजा भी पाएंगे.

गण बसैं : प्राचीन काल में भारत में अनेकों गण थे. आज भी भारत में अनेकों राज्य हैं तथा समय समय पर स्थानक आवश्यकताओं के अनुसार और अधिक राज्य बनाए जा रहे हैं. गुरू रैदास ने भी यही कहा है कि उनके बेगमपुरा में अनेकों गण होंगे परन्तु बेगमपुरा एक ही रहेगा. गुरू रैदास के इसी आदेश पर अमल करते हुए बाबा साहिब ने संविधान में ऐसी व्यवस्था की है कि भारत एक ही रहेगा मगर उसमें अनेकों गण यानि राज्य होंगे.

एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य है कि गुरू रैदास ने कहा है कि **गण "बसेंगे"** उन्होंने यह नहीं कहा कि बेगमपुरा में गण "रहेंगे". रहने और बसने में अन्तर है और जमीन आसमान का अन्तर है. किसी घर में किराएदार मात्र रहता है बसता नहीं. बसने का अर्थ है कि किसी स्थान को अपना बना कर, अपना समझ कर वहां पक्के तौर पर रहना. बाबर यहां आकर रहा था लेकिन मुस्लिम यहां आकर बस गये थे. उन्होंने न केवल भारत को अपनाया बल्कि भारतीय, संस्कृति, जुबान और रीति रिवाज भी अपनाए. उन्होंने न केवल यहां की जुबान व रीति रिवाज अपनाए बल्कि अपनी जुबान और रीति रिवाज भी भारत को दिए. फारसी और हिन्दी का मेल करके उर्दु जुबान बनाई. अंग्रेज यहां रहते थे और वे तब तक रहे जब तक उन्हें यहां रहना लाभकारी लगा. वे भारत में कभी नहीं बसे. आज के दिन इराक में अमरीकी सैनिक रह रहे हैं, बस नहीं रहे.

गुरू रैदास ने आहवान किया है कि सभी गण भारत यानि बेगमपुरा में बसें. उसे अपना समझें तथा स्वयं को उसका समझें. उन्होंने महाभारत की तरह यह शिक्षा नही दी कि जो तगड़ा राजा आए उसी के तलवे चाटने लग जाओ. उन्होंने कहा यहां बसो. जब आप बस रहे हो तो कोई बाहर का आकर आपके घर पर हकूमत नहीं कर सकता. किसी आदमी को कोई उसके घर सें निकाले तो वह मरने मारने को तैयार हो जाता है क्योंकि वह अपने घर में बस रहा होता है. गुरू रैदास ऐसे ही गण बसते देखना चाहते हैं कि अगर कोई विदेशी हमलावर आए तो महाभारत के कहे अनुसार उसके तलवे न चाटे जाएं बल्कि उसे अपने बेगमपुरा सें बाहर खदेड़ा जाए! यही गुरू रैदास और उनके हमसहरियों का संदेश है.

वहां सैर करो जहां जी भावै, महरम महल न कोय अटकावै : गुरू रैदास चाहते थे कि ऐसा बेगमपुरा बसे जिसके रहने वाले कहीं भी बिना रोक टोक के घूम फिर सकते हों. उनके ऊपर कहीं भी आने जाने की कोई पाबंदी न हो. इसलिए गुरू रैदास ने दलितों सें आहवान किया कि वे अपना बेगमपुरा बसाएं जहां वे जैसा जी चाहे वहीं घूम फिर सकें. उन्हें कोई कानून, कोई दरोगा, कोई ठाकर, कोई ब्राह्मण रोकने की हिम्मत नहीं करे. वे किसी भी घाट, कूंए, धर्मशाला, बाजार आदि में बिना जाति बंधन के घूम सकें.

बाबा साहिब ने उन्हीं का आदेश मानते हुए भारतीय **संविधान की धारा 19** में सभी नागरिकों को यह मौलिक अधिकार दिया कि वे भारत में कहीं भी आ जा सकते हैं. लेकिन जैसा कि बाबा साहिब ने कहा संविधान रूपी मंदिर बनाते ही उस पर शैतानों का कब्जा हो गया है. अतः आज भी संविधान की बजाए उन शैतानों द्वारा बनाई गई स्मृतियों के कानून भारत में लागू हैं जो यह कहते हैं कि शूद्रों को कूंए तक मत आने दो, घाट पर मत आने दो, बाजार में सें बारात और जुलूस मत निकालने दो. उन्हें देसी घी, मिठाइयां मत खाने दो. इसलिए संविधान में समानता का अधिकार मिलने तथा घूमने फिरने की आजादी होने के बावजूद दलितों पर आज भी पाबंदियां बरकरार हैं. अनेक स्थानों पर वे आज भी अपने दूल्हे को घोड़े पर बैठा कर नहीं घूम सकते. अनेकों ऐसे घाट, मंदिर और

बस्तियां हैं जहां वे जा नहीं सकते. अगर वे जाएं तो उनके साथ मार पीट की जाती है. उन्हें जान सें मार देने के यत्न भी किए जाते हैं.

बाबा साहिब ने क्योंकि संविधान द्वारा भारतीयों को कहीं भी आने जाने की आजादी दी है इसलिए आम भारतीय को इस अधिकार के महत्व का अधिक आभास नहीं होता. दुनिया में आज भी ऐसे अनेकों देश हैं जहां के नागरिक अपने ही देश के एक शहर सें दूसरे शहर नहीं जा सकते. इसके लिए उन्हें सरकार सें बाकायदा परमिट लेना पड़ता है. अंग्रेजों के समय पूर्वी राज्यों में भी जाने सें पहले परमिट लेना पड़ता था. यह नियम अब तक लागू था. लेकिन आज सें छः सौ साल पहले गुरू रैदास ने ऐसा देश बनाने का आहवान किया कि जहां किसी को कहीं भी जाने की पाबंदी न हो. यह वाकई उनके राजनीतिक दर्शन के परिपक्व होने का सूचक है.

अब मोहि खूब वतन गहि पाई वहां खैर सदा मेरे भाई : गुरू रैदास और गुरू कबीर ने ब्राह्मणिक ग्रन्थों का गहराई सें अध्ययन किया था. इसलिए उन्हें पता था कि **सिन्धु सभ्यता दलितों का प्राचीन बेगमपुरा** है. वे यह भी जानते हैं कि हमारे प्राचीन बेगमपुरा को इन ब्राह्मणिक आर्यों ने नष्ट किया है. वे कहते हैं कि अब उन्हें अपने असली वतन की गहराई सें समझ आ गई है कि प्राचीन काल में दलितों का देश कैसा था. उन्हें अब यह भी समझ आ गई है कि उन्होंने भविष्य में कैसा देश बनाना है. प्राचीन भारत के तमाम असुर, नाग, द्रविड़, रक्षक आदि गणों के गौरवमयी राज्य दलितों के पूर्वजों के राज्य हैं. ब्राह्मण क्योंकि अकेली ऐसी जात है जो पढ़ लिख सकती थी. अतः उन्होंने मनमाने ढंग सें इन सब गणों के इतिहास में गड़बड़ की है. उदाहरणत :

असुर : असुर का अर्थ है शराब न पीने वाले लोग. वे लोग वैसे ही थे जैसे आजकल पंजाब हरियाणा में "राधास्वामी" तथा "सच्चा सौदा" पंथ के लोग होते हैं जो शराब और मीट के हाथ तक नहीं लगाते. आर्यों की सबसें प्राचीन पुस्तक ऋग्वेद सें लेकर सत्यार्थ प्रकाश तक में सोम के गुण गाए गए हैं. सोम एक प्रकार की शराब या नशीला पेय होता था जिसे आर्य यज्ञ के दौरान छक कर पीते थे.

आर्य स्त्री पुरुष आग जला कर उसके चारों ओर बैठ कर सोम नामक शराब पीते थे, साथ में उसी आग में पशुओं का माँस भून कर खाते थे. यह बिल्कुल ऐसा ही है जैसे आज कल लोग ठेके के साथ बने अहाते में बैठ कर शराब पीते हैं तथा वहीं तन्दूर में भूने हुए मुर्गे खाते हैं. आर्य ऐसे ही खा पीकर नशे में मदमस्त होकर वहीं खुले में सबके सामने रति क्रिया करते थे. राजवाड़े के अनुसार **इन तीनों क्रियाओं को इक्कठे रूप में यज्ञ कहा जाता था**. यज्ञ असल में सामूहिक रूप में बच्चे पैदा करने का आयोजन होता था.

आर्यों का मानना था कि सोम पीने सें मर्दानगी बढ़ती है, शरीर में वीर्य बनता है तथा मैथुन की शक्ति बढ़ती है. सोम के नशे में धुत होकर वे लोग वहीं यज्ञ वेदी के पास, सब रिश्ते भुला कर व्यभिचार करते थे. ऋग्वेद में ऐसे ही पिता द्वारा अपनी पुत्री सें किए गए व्यभिचार को "शोभन कार्य" कहा गया है जिसे देख कर ब्राह्मणिक देवता खुश हुए थे. इस व्यभिचार सें रूद्र पैदा हुआ था.

असुर वे लोग थे जो सुरा नहीं पीते थे. वे आर्यों द्वारा किए जाने वाले ऐसे अनाचार का विरोध करते थे. अतः असुर राजाओं और आर्य देवों में लड़ाइयां होती रहती थीं. ऋग्वेद ऐसी लड़ाईयों के किस्सों सें भरा पड़ा है. भगवन बुद्ध ने जब अपना धर्म चलाया तो उन्होंने भी शराब को सबसें घातक नशा बताया. अतः **शराब न पीने वाला आम भारतीय, जिसे ब्राह्मणिक ग्रन्थ असुर कहते थे, बुद्ध धर्म में शामिल हुए. ब्राह्मणिक ग्रन्थों में जिक्र है कि निरंजन यानि भगवन बुद्ध ने असुरों की सेना बना कर ब्राह्मणिक देवों सें संघर्ष किया.**

भगवन बुद्ध सें लेकर आज तक सभी श्रमणिक सन्तों ने शराब न पीने की नसीहत दी जबकि ब्राह्मण ग्रन्थ आज भी सोम की स्तुति सें भरे पड़े हैं. आज भी उनके काली मंदिरों में शराब मीट कर चढ़ावा चढ़ता है. अतः शराब सें परहेज करने वाले सन्त वास्तव में असुर संस्कृति के वारिस हैं.

रक्षक : बाबा साहिब के अनुसार आर्य किसी जाति का नाम नहीं है बल्कि यह एक संस्कृति को मानने वाले लागों का नाम है जो "खाओ, पीओ और ऐश करो" की संस्कृति में विश्वास रखते थे. ब्राह्मण ऋषि और देव इसके कर्णधार थे. ऐसे आम ब्राह्मण भी थे जो इस अनाचार सें दुखी थे. उनके धर्मग्रन्थों में अनेकों बार ऐसे प्रसंग आए है जहां ऐसे अनाचारी देवों और ब्राह्मण ऋषियों के विरुद्ध आम लोगों ने आवाज उठाई. उनमें बहस भी हुई लेकिन अंत में देवों के आगे उनकी हार हो गई. इस तरह अनाचारी देवों और ब्राह्मण ऋषियों ने खुल कर यज्ञों में शबाब और कबाब का प्रयोग किया.

ऐसे समय में महाराज रावण ने आम लोगों को राहत दी जब उन्होंने ऐसे अनाचारी देवों और ब्राह्मण ऋषियों की नाक में नकेल डाली. उनसें पहले निमि जैसे कई राजा ब्राह्मणों का विरोध करने पर मारे जा चुके थे. जब महाराज रावण ने गद्दी संभाली तो उन्होंने सबसें पहला काम यही किया कि उन्होंने पूरे भारतवर्ष में इस प्रकार

के अनाचारपूर्ण यज्ञों पर पाबंदी लगा दी. ऐसे यज्ञों को उन्होंने **"छिद्र वाले यज्ञ" यानि अनैतिक यज्ञ** का नाम दिया. आचार्य चतुरसेन के अनुसार महाराज रावण आस्ट्रेलिया सें लेकर भारत, अफगानिस्तान सें लेकर जापान तक के एरिया के महाराजा थे. ब्राह्मणधर्म की खाओ पीओ और ऐश करो की नीति की जगह **उन्होंने रक्ष संस्कृति की स्थापना की. रक्ष संस्कृति का नारा था "वयम रक्षाम" अर्थात हम रक्षा करेंगे. रक्ष संस्कृति को अपनाने वालों को "रक्षक" कहा जाता था. वे निरीह पशु पक्षियों तथा कमजोर लोगों की यज्ञ में काटे जाने सें रक्षा करते थे.** ब्राह्मण गन्थों में इन्हीं रक्षकों को राक्षस बताया गया है.

लंकावतार सुत के अनुसार महाराज रावण ने भगवन बुद्ध सें धर्म और सदाचार पर लम्बा वार्तालाप किया था. उन्होंने ब्राह्मणधर्म त्याग कर बुद्ध धर्म अपनाया था. **महाराज रावण सच्चे बौद्ध थे.** अतः वे हर प्रकार के अनैतिक कार्यों के विरुद्ध थे. धर्म के नाम पर लोगों सें धोखा करने वालों को वे बख्शते नहीं थे. **बुद्ध धर्म में पापपूर्ण हिंसा का उत्तर हिंसा सें देना पाप नहीं माना जाता.** इसलिए उनके रक्षक उन ऋषियों को उसी यज्ञ की आग में झोंक देते थे जिस आग में वे पशु भून कर सोम के साथ खाते थे. **दसरथ ने राम को पैदा करने के लिए जो यज्ञ किया था उसमें 300 सें अधिक पशु काट कर यज्ञ की आग में भून कर खाए गए थे. दसरथ ने विशेष प्रबन्ध किए थे कि "रक्षकों" को इस बात की खबर न लगे वर्ना वे छिद्र वाले यज्ञ नष्ट करने आ जाते.**

महात्मा रावण ने "यज्ञ" का सिस्टम समाप्त करके हवन करने का नियम बनाया. आज जो हम घरों में हवन करते हैं यह सब महात्मा रावण की ही देन है. उनकी लंका ही सिन्धु सभ्यता है जिसकी सृजना दलितों ने की थी. सिन्धु सभ्यता के नगरों की खुदाई में हजारों मुहरें मिली हैं जिनमें पशुओं के चित्र हैं. **किसी भी मुहर में पशु बलि का चित्र नहीं है.** इस प्रकार दलितों का सिन्धु सभ्यता यानि महात्मा रावण सें सीधा सम्बंध है. गुरू रैदास फिर सें सिन्धु सभ्यता बसाना चाहते थे.

दस्यु : जब गुरू रैदास ने कहा : नरपत एक सिंहासन सोया सपने भया भिखारी, अछूत राज बिछड़े दुख पाया, सोई दशा हुई हमारी!! तो उनका सीधा सीधा संकेत इस बात की ओर था कि कभी दलित पूर्वजों ने सिन्धु सभ्यता बसाई थी जिसके भवनों, खेतों खलिहानों के वे मालिक थे. **सिन्धु सभ्यता में मिली मुहरों को पढ़ने वाले विद्वानों के अनुसार मुहरों पर जहां "दस्यु" शब्द लिखा गया है उसका अर्थ है जमीन का मालिक! यह सही भी है. सिन्धु सभ्यता के लोग यानि दलित वहां की जमीन और खेतों के मालिक होते थे. आर्य आवारा घूमते थे. जैसे घर में घुसने वाले आवारा कुत्ते को दुत्कार कर भगा दिया जाता है वैसे ही सिन्धु वासी उन आर्यों को खदेड़ देते थे जो उनकी जमीन में घुस आते थे. जैसे कामरेडों के लिए पूंजीपति का अर्थ है खून चूसने वाला कारखाने का मालिक, वैसे ही आर्यों के लिए दस्यु का अर्थ था दुत्कार कर भगाने वाला जमीन का मालिक. दुत्कारने वाला कभी किसी को अच्छा लगता ही नहीं है. अतः दस्यु का अर्थ बुरा आदमी बन गया.**

सिन्धु सभ्यता क्योंकि दलित सभ्यता है इसलिए दस्यु शब्द आर्यों ने सीधे तौर पर दलितों के लिए प्रयोग किया है जो उन्हें दुत्कार कर भगा देते थे. जब गुरू रैदास अपना वतन बसाने की बात करते हैं तो वे फिर सें सिन्धु सभ्यता बसाने की बात करते हैं जिसमें जमीन के मालिक दलित थे जिन्हें आर्य लेखक दस्यु कहते हैं. जैसे गंवार का वास्तविक अर्थ है गांव का रहने वाला लेकिन आजकल इसका प्रयोग बेवकूफ के लिए किया जाता है. वैसे ही दस्यु का वास्तविक अर्थ जमीन का मालिक है जो अपनी जमीन गैरों सें बचाने के लिए उन्हें खदेड़ देता है. सिन्धु सभ्यता के दस्युओं यानि दलितों का आर्यों को खदेड़ना कामयाब नहीं हुआ. तब सें लेकर आज तक आर्य संस्कृति के लोग दलितों की जमीन पर कब्जा किए बैठे हैं. गुरू रैदास अपनी बाणी में दलितों सें यही आहवान करते हैं कि वे अपना वतन फिर सें बसायें.

नाग : नाग कुल भारत का प्राचीनतम शासक खानदान है. नाग जाति के लोग अत्याधिक स्वाभिमानी यौद्धा होते थे. **भारत का इतिहास उन्हीं के राज सें शुरू होता है तथा उन्हीं के राज के साथ समाप्त हो जाता है. अखण्ड भारत के प्रथम शासक नाग वंशी थे. अशोक सम्राट भी नागवंशी थे. ब्राह्मण ग्रन्थों में उन्हें शूद्र बताया गया है. बुद्ध धर्म अपनाने वाले प्रथम लोगों में सें नाग वंशी भी थे. इसीलिए नागवंशी लोगों को श्रद्धा सुमन अर्पित करने के लिए बाबा साहिब ने उन के नाम पर बसाए गए शहर नागपुर को धर्म परिवर्तन के लिए चुना.**

ब्राह्मणवादी लेखक इतिहास को बिगाड़ने में अपनी धूर्तता दिखाते आए हैं. अतः उन्होंने नाग का अर्थ सांप बना दिया. एक मानव जाति को सर्प बना दिया. कृष्ण और अर्जुन ने मिल कर खाण्डव वन में रहने वाले नाग जाति के हजारों स्त्री पुरुष और बच्चे जला कर मार डाले लेकिन कहानी बना दी कि उन हत्यारों ने सर्प मारे!!

नागवंशी बुद्ध धर्म को मानने वाले थे. इसलिए उन लोगों को धर्म के नाम पर किए जा रहे अनाचार सें नफरत थी. महाराज रावण की तरह उन्होंने भी हिंसक और अश्लील यज्ञ बन्द करवा दिए थे. अगर कौटिल्य की

कहानी सत्य मान लें तो नागवंशी सम्राट नन्द ने ही उसे दुत्कार कर अपने दरबार सें निकाला था. कथा के अनुसार उसने नागवंश को समाप्त करने की कसम खाई मगर उसे पूरे भारत में एक भी क्षत्रिय नहीं मिला जो नागों के विरुद्ध उसका साथ दे सकता. अंततः उस ब्राह्मण कौटिल्य को नागवंश के ही वंशज चन्द्रगुप्त के तलवे चाटने पड़े कि वह उसका साथ दे. उसने नागवंश के एक परिवार के राज्य को तो अन्त कर दिया लेकिन सत्ता फिर भी दलितों के हाथ ही रही. गुरू रैदास जब **"कायम दायम सदा पातशाही"** की बात करते हैं तो ऐसी ही अनवरत दलित सत्ता की कामना करते हैं.

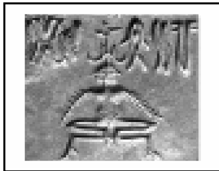
अब मोहे खूब वतन गह पाई : वतन अर्थात बौद्ध भारत : गुरू रैदास का कहना है कि अब उन्हें अपने वतन की पूरी पहचान हो गई है. उनकी बाणी इस बात की साक्षी है कि वे बौद्धमय भारत को ही अपना वतन अर्थात अपना बेगमपुरा मानते थे. आदि काल यानि सिन्धु सभ्यता सें लेकर मौर्य काल तक का समय भारत का स्वर्ण काल था जब भारत में बुद्ध धर्म की ध्वजा फहराती थी. गुरू रैदास इसे ही बेगमपुरा कहते हैं. गुरू रैदास उन्होंने अपनी बाणी में बुद्ध धर्म के सभी आदर्शों को अपनाने का आहवान किया है. निर्वाण को परम पद बताया है. उन्होंने निरंजन के रूप में भगवन बुद्ध की स्तुति की है. उन्होंने अपनी बाणी में यह बात पूरी तरह मानी है कि उनका बेगमपुरा पुराने समय में यानि **सिन्धु सभ्यता सें लेकर मौर्य काल तक**, सन्तों सें परिपूर्ण था. वे बोले :

हम बड़ कबि, कुलीन, हम पंडित हम जोगी सन्यासी!
ज्ञानी, गुणी, सूर, हम दाते, यह बुद्धि कभी न नासी!!

यह एक सच्चाई है कि आज तक जितने भी सन्त हुए हैं वे सब के सब दलित जातियों सें हुए हैं. उनके हमसहरी गुरू कबीर स्पष्ट घोषणा करते हैं कि **आज तक एक भी सन्त ब्राह्मण जाति सें नहीं हुआ तथा आज तक ब्राह्मणधर्म में एक भी सन्त पैदा नहीं हुआ.** सन्त परम्परा शुरू हुई भगवन बुद्ध सें जिन्होंने दुनिया में सबसें पहले ऐलान किया कि धर्म का अर्थ कर्मकांड नहीं है बल्कि व्यक्ति का सदाचार है. अतः जब गुरू रैदास सन्तों की बात करते हैं तो वे सीधे सीधे भगवन बुद्ध और उनकी श्रमण परम्परा का जिक्र करते हैं जो सिन्धु काल सें लेकर अब तक बहती चली आ रही है. गुरू रैदास उसी सिन्धु कालीन "बिछड़े हुए अछूत राज" को फिर सें बसाने का आहवान करते हैं.

<u>सिन्धु सभ्यता बौद्ध धर्मी सभ्यता थी क्योंकि</u> :

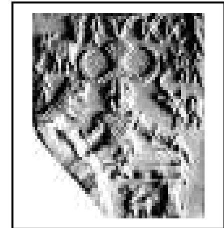
1. **आर्यों की प्राचीनतम पुस्तक ऋग्वेद में इस बात का जिक्र बार बार आया है कि उनके राजा इन्द्र ने सिन्धु वासियों को मारा तथा उनके नगर नष्ट कर दिए क्योंकि वे आर्यों के धर्म, रीति रिवाजों और कर्मकांडों को नहीं मानते थे. वे आर्यों सें भिन्न धर्म यानि बुद्ध धर्म को मानने वाले थे.**
2. **सभी विद्वान यह मानते हैं कि आर्यों ने सिन्धु सभ्यता नष्ट की है. अगर सिन्धुवासी आर्य संस्कृति या आर्य धर्म को मानने वाले होते तो इन्द्र को उनके नगर नष्ट करने की आवश्यकता नहीं थी तथा उसे वहां के निवासियों को भी मारने की आवश्यकता नहीं थी. जैसे ब्राह्मण संकर ने बौद्धों का कत्लेआम किया वैसे ही इन्द्र ने सिन्धुवासी बौद्धों का कत्ल किया था.**
3. **सिन्धु सभ्यता की लिपि को पढ़ा गया है. वहां मिली अनेक मुहरों पर "भगवान ने मार को भगाया" लिखा है. बुद्ध बनने के लिए सिद्धार्थ ने अंतिम चरण में "मार को भगाया" था. उन्होंने मार अर्थात काम वासना पर विजय प्राप्त की थी. बिना मार को भगाए कोई भी व्यक्ति बुद्ध नहीं बन सकता. सिन्धु सभ्यता में बुद्ध तथा धर्म चक्र की मुहरें मिलना यह सिद्ध करती हैं कि वहां के निवासी बौद्ध धर्मी थे.**



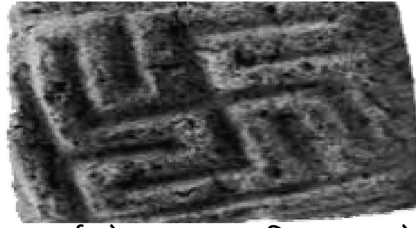
(मुहरें जिन पर लिखा है 'भगवान ने मार को दबाया')



(धर्म चक्र तथा चार सत्य दर्शाती मुहरें)



(जंगल में जानवरों के साथ बोधिसत्व)



(हड़प्पा में मिली बुद्ध धर्म के "सात्या" यानि "सत्य" के निशान वाली मुहर)

धर्म चक्र तथा उसके आसपास बने चार पट्टियों के निशान भगवन बुद्ध के चार महान सत्यों तथा उनके द्वारा चलाए गए धर्म परिवर्तन के चक्र को दर्शाते हैं. इन मुहरों पर जिन जानवरों के चित्र हैं वे वही हैं जो अशोक स्तम्भ के चार शेरों वाली मूर्ति के नीचे बने हुए हैं.

सबसें महत्वपूर्ण बात यह है कि उस मुहर पर लिखा है "भगवान ने मार को भगाया". यह किसी को बताने की जरूरत नहीं कि किस "भगवान" ने "मार" को भगा कर बुद्धत्व प्राप्त किया था. यह भी किसी को बताने की आवश्यकता नहीं कि यह चक्र भगवन बुद्ध द्वारा चलाये गए "धर्मचक्र प्रवर्तन" का ही निशान है.

सिन्धु सभ्यता के नगरों के खण्डहरों सें जो मुहरें मिली हैं उनमें "सत्य" जिसे राजस्थानी गुजराती भाषा में "सात्या" भी कहा जाता है, की मुहरें भी मिली हैं. राजस्थान के अधिकतर घरों में विशेषकर दलित परिवारों में आज भी पुत्र पैदा होने पर सात्या लगाना तथा धर्म चक्र बनाना अनिवार्य है.



हड़प्पा में मिली मुहर जो यह दर्शाती हैं कि जिसके सिर पर धर्म चक्र का साया हो, मुसीबतें उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं. इस मुहर में एक स्त्री धर्म चक्र के साये में दो शेरों सें एक साथ जूझ रही है. नीचे हाथी का चित्र है. भगवन बुद्ध के जन्म के साथ "हाथी" का रिश्ता सभी जानते हैं. अतः यक मुहर यह दर्शाती है कि बुद्ध और उनके धर्मचक्र की छत्रछाया में रहने सें हर मुसीबत सें संघर्ष करने की शक्ति आ जाती है.

ऐसे ही हड़प्पा के एक घर के खण्डहरों में दरवाजे पर लगाने वाली एक पट्टी मिली है जिसमें धर्म चक्र के निशान बने हुए हैं.





बिना सिर के पाई गई यह मूर्ति क्या भगवन बुद्ध की नहीं है? कौन हिन्दू देव या भगवान है जो ऐसा चीवर धारण करता है? कौन ब्राह्मणिक भगवान इस ध्यान मुद्रा में बैठता है? अगर यह ब्राह्मणिक देव या भगवान है तो इसका सिर सिन्धु सभ्यता के नगर में किसने और क्यों तोड़ा?



यह भगवन बुद्ध की साबुत यानि पूरी मूर्ति है जो आजकल आम पाई या बनाई जाती है. सिन्धु सभ्यता में पाई गई टूटी हुई मूर्ति तथा आजकल पाई जाने वाली मूर्तियों की बनावट में आधारभूत समानताएं हैं. दोनों प्रकार की मूर्तियों की बनावट तथा वस्त्रों में गहरी समानताएं हैं. दोनों प्रकार की मूर्तियों में बुद्ध "चीवर" धारण किए हुए हैं तथा "ध्यान" लगाए हुए है. यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है कि किसी भी अन्य धर्म विशेषकर ब्राह्मणधर्म का कोई भी भगवान "चीवर" धारण नहीं करता है. जैन महावीर की भी ध्यानरत मूर्तियां मिलती हैं मगर वे हमेशा बिना चीवर यानि नंगे बदन पाये जाते हैं. अतः सिन्धु सभ्यता के खण्डहरों में पाई गई उपरोक्त मूर्ति भगवान बुद्ध की ही है. इस बात सें सिन्धु वासियों का बौद्ध होना स्वतः सिद्ध है जो हत्यारे पुष्यमित्र के शिकार बने.



यह मोहनजोदड़ो का खण्डहर है. इसके बीच वाली सबसें ऊँची इमारत एकदम बौद्ध स्तूप जैसी दिखती है. तथाकथित इतिहासकार अपनी धूर्तता या नासमझी के कारण इसे ऐसा नहीं कह पाए. स्तूप का शाब्दिक अर्थ है : मृत व्यक्ति की अस्थियों पर बना ऊँचा भवन". मोहनजोदड़ो का स्थानिक सिन्धी भाषा में अर्थ भी यही है : मृत का टीला. निश्चित रूप सें यह बौद्ध स्तूप है, सांची के स्तूप की तरह लंका नगरी में भगवन बुद्ध की अस्थियों पर बनाया गया स्तूप है यह.

4. हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के नगरों की बनावट बिल्कुल वैसी ही है जैसी रामायण में लंका की बताई गई है. रामायण के सुन्दर कांड में लंका नगरी का वर्णन पढ़ कर ऐसे लगता है जैसे भगवान वाल्मिकी ने हड़प्पा और मोहनजोदड़ो नगरों का ही वर्णन किया है. लंका के सम्राट महाराज रावण थे. लंकावतार सुत के अनुसार महाराजा रावण बौद्ध थे. आचार्य चतुरसेन के अनुसार उन्होंने आर्य संस्कृति के विरोध में "रक्ष संस्कृति" की स्थापना की थी. भगवन बुद्ध की शिक्षाओं के अनुरूप उन्होंने हिंसक यज्ञ बन्द करके हवन की प्रथा चलाई थी. इसीलिए राम नामक आर्य ने उनकी हत्या कर दी. महात्मा रावण का बौद्ध होना यह सिद्ध करता है कि सिन्धु सभ्यता के लोग बुद्ध धर्म को मानने वाले थे.

5. गुरू रैदास तथा अन्य दलित सन्त तथा विद्वान भी बार बार यही दोहराते हैं कि दलित जातियों में सें आदि काल सें लेकर अब तक अनेक लोग सन्त, सन्यासी हुए हैं तथा कोई भी दलित सन्त ब्राह्मणवाद को मानने वाला नहीं हुआ. सभी के सभी श्रमण धर्म को मानने वाले थे. यह सन्त परम्परा आदि काल यानि सिन्धु सभ्यता काल सें अनवरत चली आ रही है. जब गुरू रैदास कहते

हैं "हम बड़ कबि, कुलीन" तथा "अछूत राज बिछड़े दुख पाया" तो वे सीधे स्पष्ट रूप में सिन्धु सभ्यता सें लेकर मौर्य काल तक के दलित राज की बात करते हैं जो दलितों सें छीन लिए गये हैं.

6. सभी विद्वानों ने यह माना है कि सिन्धु सभ्यता के नगरों में किसी राजा का शासन नहीं था बल्कि वहां गणतन्त्र था. गणतन्त्र का अर्थ है ऐसी शासन व्यवस्था जहां राजा जनता द्वारा चुना जाता था तथा हर महत्वपूर्ण काम के लिए जनता की राय जानी जाती थी तथा उसी अनुसार काम किया जाता था. यही गण व्यवस्था हम बुद्ध काल में पाते हैं जहां नगर पंचायत ही शासन व्यवस्था देखती थी. यह बहुत अहम बात है कि सिर्फ दलितों (एस सी तथा बी सी) जातियों में ही पंचायतें होती हैं. यह पंचायतें जाति बहिष्कार करने सें लेकर शारीरक दण्ड देने तक का कार्य करती हैं. दलितों में यह पंचायत का सिस्टम एक दिन में नहीं बना है बल्कि हजारों सालों सें सिन्धु काल सें ही चला आ रहा है. दलितों में पंचायत प्रथा का होना यह सिद्ध करता है कि वे सिन्धु सभ्यता के वारिस हैं तथा वे आज तक अपनी संस्कृति को नहीं भूले हैं.

7. बाबा साहिब के अनुसार अछूतपन का एक कारण उनका बौद्ध होना भी है. अतः दलितों में सिन्धु काल की तरह पंचायत व्यवस्था होना तथा उनका प्राचीन काल में बौद्ध होना यह सिद्ध करता है कि दलितों की बसाई सिन्धु सभ्यता भी बौद्ध धर्मी थी.

8. सभी विद्वानों ने यह माना है कि सिन्धु सभ्यता आर्य लोगों अर्थात ब्राह्मणधर्मियों की सभ्यता नहीं है तथा सिन्धु सभ्यता के बनाने वाले लोग शूद्र और व्यापारी थे. सभी विद्वानों ने यह माना है कि गणतन्त्र शासन व्यवस्था आर्यों में नहीं होती थी. उनके राज्यों में राजा भगवान होता था तथा ब्राह्मण भगवान सें भी बढ़कर होता था. भगवन बुद्ध के जन्म स्थान तथा आसपास के सभी शहरों में गणतन्त्र व्यवस्था थी. अतः सिन्धु सभ्यता के लोग श्रमण धर्म तथा श्रमण संस्कृति को मानने वाले थे.

9. सिन्धु सभ्यता के अंतिम काल की मुहरों में पीपल के पेड़ के चित्र पाये गए हैं. यहां घ्यान देने योग्य बात यह है कि किसी भी ब्राह्मण ग्रन्थ में पीपल की महिमा का वर्णन नहीं है न ही पीपल के पेड़ को पूजने की बात कही गई है जबकि बौद्धों के लिए पीपल सबसें पवित्र पेड़ है क्योंकि इसी पेड़ के नीचे उन्हें ज्ञान मिला था. आज भारत में करोड़ों लोग पीपल की पूजा करते हैं. इसका सीधा सा अर्थ है कि वे लोग कभी बौद्ध होते थे.

10. सिन्धु सभ्यता में पत्थर की लिखी हुई मुहरें मिली हैं. सर्व प्रसिद्ध बौद्ध सम्राट अशोक ने भी पत्थर पर बौद्ध शिक्षाएं लिखवाई. इन बातों में समानता यह दर्शाती है कि सम्राट अशोक को यह कला विरासत में मिली थी. आर्यधर्मियों के ग्रन्थों का एक भी वाक्य पत्थर पर लिखा नहीं मिला है. अतः पत्थर पर लिखने की संस्कृति बौद्धों की है आर्यों की नहीं.

11. सिन्धु सभ्यता के घरों के फर्श गोबर, चिकनी मिट्टी तथा काली मिट्टी के घोल सें बनाए जाते थे तथा उसी सें लीपे पोते जाते थे. यह परम्परा आज भी दलित समाज में मौजूद है. यहां तक कि जो लोग पक्के घरों में पक्की फर्शों वाले घरों में रह रहे हैं वे भी उत्सव के समय शगुन के तौर पर इस प्रकार सें लिपाई पुताई अवश्य करते हैं.

12. सिन्धु सभ्यता के लोग अपने मृत लोगों की अस्थियां बहुत आदर पूर्वक घर में रखते थे. आजकल अस्थियां तो घर में नहीं रखीं जातीं मगर एक आश्चर्यजनक बात अवश्य पाई जाती है कि जब दशहरे वाले दिन महात्मा रावण का पुतला जलाया जाता है तो उनकी "अस्थियां" लोग अपने घरों में ले जाकर रखते हैं ताकि वे बुराई सें बचे रहें!! इन दोनों परम्पराओं का कोई न कोई सम्बंध अवश्य है.

कुछ धूर्त लोग इन मुहरों पर बने चित्र को शिव का चित्र बताने की धूर्तता करते हैं तथा कुछ अन्जान या बेअक्ल लोग उनकी बात को सच मान कर प्रचार करने में लग जाते हैं कि इन मुहरों पर शिव का चित्र बना हुआ है. इन मुहरों पर शिव का चित्र होना शत प्रतिशत झूठ है क्योंकि :

1. मुहरों के ऊपर लिखा है कि भगवान ने मार अर्थात काम वासना को दबाया. "काम" ब्राह्मणधर्म के चार मुख्य स्तम्भों में सें एक है. उनके ब्रह्मा सें लेकर संकराचार्य तक सभी लोग काम वासना में लिप्त रहे हैं. ब्रह्मा ने वासना में अन्धे होकर अपनी बेटी पोतियां नहीं बख्शीं तो संकर ने बिना बच्चे पैदा किए काम का आनन्द लेने के गुर बताए. अतः जिस मुहर पर काम को दबाने की बात की गई

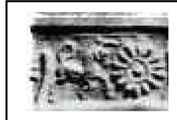
हो वह ब्राह्मणधर्म के किसी भी भगवान की हो ही नहीं सकती. अगर उनका अपना ही भगवान काम वासना को दबा देगा तब तो उनके धर्म का एक चरण ही दब जाएगा और उनका धर्म लंगड़ा हो जाएगा. वासना को दबाने का "अधर्म" तो उनके किसी भगवान ने नहीं किया.

2. सभी ब्राह्मण गन्थ ऐसे किस्सों सें भरे पड़े हैं कि शिव हमेशा ही पार्वती के साथ काम रत रहता था. वासना में लिप्त रहने के कारण ही उसे लिंग बनना पड़ा था. उसके द्वारा कामदेव को जलाने का किस्सा वैसा ही है जैसे गांधी का मरणव्रत करना. गांधी ने सैंकड़ों बार मरणव्रत किए होंगे मगर मरा एक बार भी नहीं. वैसे ही शिव ने कामदेव को "जला" दिया मगर उसकी काम वासना कभी नहीं मरी. वह सदा ही काम वासना में लिप्त रहा. अतः "मार को भगाने" वाली तथा ध्यान साधना वाली कोई भी मुहर उसकी नहीं है. वे सब की सब बुद्ध की हैं.

3. काम को वास्तव में भगवन बुद्ध ने ही हराया था. काम अर्थात मार को हरा कर ही वे बोधिसत्व सें बुद्ध बने थे. अतः जिन मुहरों पर "भगवान ने मार को भगाया" लिखा है, वह सिर्फ और सिर्फ भगवन बुद्ध के लिए लिखा गया है. इस मुहर को किसी भी ब्राह्मणवादी भगवान सें जोड़ना धूर्तता है. जो व्यक्ति काम वासना में इतना लिप्त रहा हो कि वह आज भी लिंग के रूप में उसके भक्तों द्वारा पूजा जा रहा हो तो उसके चित्र के साथ तो ऐसा लिखा जा ही नहीं सकता कि उसने मार यानि काम को भगाया.

4. सबसें अहम बात यह है कि जब सिन्धु सभ्यता पनपी शिव का कहीं अता पता भी नहीं था. उसकी कल्पना बुद्ध सें बहुत बाद में की गई. बौद्ध जातक कथाओं तक में शिव का जिक्र नहीं है. यह कथाएं बुद्ध सें सैंकड़ों सालों बाद लिखी गईं. तीन वेद भगवन बुद्ध के समय बनाए गए थे. चौथा अथर्व वेद उनके बाद में बनाया गया. चारों वेदों में शिव का नाम भी नहीं है. अतः सिन्धु सभ्यता के समय शिव का होना ही असम्भव है.

5. शेर का बौद्ध धर्म सें गहरा सम्बंध है. बुद्ध के साधना काल के चित्रों में शेर को उनके आसपास बैठे या घूमते दिखाया गया है. अशोक सम्राट ने उन्हीं का अनुसरण करते हुए बौद्ध धर्म के प्रतीक के रूप में चार शेरों वाली मूर्ति बनवाई जो आज भारत सरकार का राष्ट्रीय चिन्ह है. इसके विपरीत शिव शेर को मार कर उसकी खाल पर बैठा मिलता है. सिन्धु नगरों में शेर की अनेकों मुहरें मिली हैं. कहीं पर भी उसका शिकार करते हुए नहीं दिखाया गया है.



उदाहरणतः इस मुहर में एक शेर भगवन बुद्ध के धर्म चक्र के साथ है. शेर का धर्म चक्र के साथ होना यह दर्शाता है कि वह उस धर्म चक्र की रक्षा कर रहा है. उस शेर के मनोभाव सें लग रहा है कि वह धर्म चक्र को आगे बढ़ा रहा है. अतः दोनों ही स्थितियों में शेर बुद्ध धर्म के पक्ष में कार्य रत है.

6. बैल शिव का खास–म–खास है लेकिन सिन्धु सभ्यता में बैल को मारते हुए की मुहरें मिली हैं.



इस मुहर में सबसें खास बात यह कि इसके एक छोर पर वही "योगी" बैठा है तथा दूसरे छोर उसकी नजरों के सामने ही एक बैल को मारा जा रहा है. अतः यह कैसे सम्भव है कि शिव के सामने ही उसके खासमखास को मार दिया जाए. अतः यह योगी शिव हो ही नहीं सकता. अब भी कोई इसे शिव बताने की धूर्तता करे तो ऐसे लोगों पर लानत है !!

7. शिव के किस्से के अनुसार एक बार जब वह कुछ सालों बाद अपने घर आया तो पार्वती जनित गणेश ने उसे अन्दर नहीं घुसने दिया. हैरानी की बात यह है कि दोनों भगवान बताए जाते हैं लेकिन शिव को यह पता नहीं था कि गणेश उसका बेटा लगता है तथा गणेश को यह पता नहीं था कि उसकी माँ का पति होने के कारण वह उसका पिता लगता है. खैर बड़े भगवान को गुस्सा आ गया और उसने बालक गणेश का सिर काट दिया. हमने बहुत किस्से पढ़े हैं लेकिन दुनिया के किसी धर्म में ऐसा "भगवान" नहीं मिला जो मासूमों का सिर ही काट देता हो. सिन्धु सभ्यता के सुसभ्य और सुसंस्कार्य लोगों पर ऐसा लांछन नहीं लगाया जा सकता कि वे लोग ऐसे हत्यारे को भगवान मानते थे.

सिन्धु सभ्यता का "अन्त" : एक शैतानियत भरा झूठ

महाभारत में शिक्षा दी गई है कि जब आपके राजा सें ज्यादा ताकतवर राजा आपके देश पर हमला करे तो उस हमलावर राजा का स्वागत किया जाना चाहिए ताकि वह जीतने के बाद आपको दुखी न करे क्योंकि कहा जाता है कि दूध देने वाली गाय को कोई तंग नहीं करता. जब अंग्रेजों ने भारत पर अपना कब्जा कर लिया तो महाभारत की शिक्षाओं के अनुरूप ब्राह्मणधर्मी उनके तलवे चाटने में लग गए. समाज में केवल ब्राह्मण ही पढ़े लिखे हो सकते थे. अतः अग्रेजों को पढ़े लिखे वफादार दास मिल गए. सिन्धु सभ्यता की खोज एक अंग्रेज महोदय मार्शल ने की. उनका वास्ता केवल पढ़े लिखे ब्राह्मणों सें पड़ा था जिनकी सभ्यता और संस्कृति सिन्धु सभ्यता यानि दलित बौद्ध सभ्यता सें बिल्कुल भिन्न थी. अतः जब मिस्टर मार्शल ने मोहनजोदड़ो की खुदाई की तो उन्हें लगा कि यह इस सभ्यता को बनाने वाले सारे लोग मारे जा चुके हैं तथा इस सभ्यता को मानने वाला कोई बाकी नहीं बचा है. उनके पढ़े लिखे दासों (ब्राह्मण इतिहासकारों) ने दूध देने वाली गाय की नीति के अनुरूप, अपने मालिक की बात का समर्थन किया. अतः सभी अग्रेज व विदेशी विद्वान यह मान बैठे कि यह सभ्यता नष्ट हो गई, इसे बनाने वाले, इसे मानने वाले सभी नष्ट हो गए. **इतिहास के साथ यह शैतानियत भरा झूठ बोला गया**.

क्योंकि यह सभ्यता नष्ट नहीं हुई है. इसको बनाने वाले **आज भी** भारत भर में फैले पड़े हैं. राजस्थान और उसके साथ लगते इलाकों के लोग अभी तक नहीं भूले होगे कि अब सें 20–30 साल पहले तक राजस्थानी औरतें माटी के बिल्कुल वैसे ही खिलौने बना कर बेचने आती थीं जैसे सिन्धु सभ्यता के नगरों के खण्डहरों में मिलते हैं. आज भी राजस्थान के दलित परिवारों में माटी के वैसे ही बर्तन मिलते हैं जिनमें वे आटा गूंथते हैं, सब्जी बनाते हैं तथा पानी भरते हैं जैसे सिन्धु सभ्यता में पाये जाते थे. अगर इन बर्तनों को सिन्धु सभ्यता के बर्तनों के साथ रख दिया जाए तो कोई भी उन्हें अलग नहीं कर पाएगा. आज भी गुजरात राजस्थान में अनेकों गांव व दलित बस्तियां ऐसी मिल जाएंगी जो देखने में एकदम सिन्धु सभ्यता के नगर लगते हैं.

सबसें अहम बात आज भी अनेकों दलित जातियों में उत्सवों के समय **"देव माण्डने"** की क्रिया की जाती है. दीवार पर "देव" बनाए जाते हैं. वह आकृति लगभग वैसी ही होती है जैसे सिन्धु सभ्यता के नगर हों. यह आकृति इस प्रकार सें बनाई जाती है : एक परकोटा बनाया जाता है, उसमें एक दरवाजा बनाया जाता है, द्वार पर दोनों ओर एक एक द्वारपाल बनाया जाता है. परकोटे के अन्दर पाँच देव, एक कूंआ, चारपाई, कढ़ाई, लौटा, थाली, मछली आदि बनाए जाते हैं. ऐसा ही सिन्धु सभ्यता के नगरों में मिला है.

सीधा सा सवाल है कि अगर इन दलित जातियों का सिन्धु सभ्यता सें सम्बंध नहीं है तो इनके देव माण्डने में उस सभ्यता की झलक क्यों दिखाई पड़ती है. **क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि "देव माण्डने" में पाँच देव बनाए जाते हैं, पंचायत में पाँच पँच होते हैं जिन्हें पाँच परमेश्वर भी कहा जाता है और केवल दलित जातियों में ही पंचायतें होती हैं!! इसका सीधा सा अर्थ यह हुआ कि दलित जो देव माण्डने की रस्म करते हैं उसमें असल में वे अपने प्राचीन इतिहास को याद करते हैं. उनके नगरों में कोई राजा नहीं होता था बल्कि पाँच पँच यानि पंचायतें ही नगर का शासन चलाती थीं. देव माण्डने में यही पाँच देव बनाए जाते हैं. यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि ब्राह्मणों तथ अन्य तथाकथित ऊंची जातों में जातिगत पंचायतें नहीं होतीं. केवल दलितों की ही पंचायतें होती हैं जो प्राचीन काल के नगर पंचायतों की तरह जुर्माना लगाने व शारीरिक दण्ड देने का काम भी करती हैं.**

इतिहास के साथ एक भद्दा मजाक घटिया किस्म के इतिहासकारों ने किया है. उन्होंने यह प्रचारित कर दिया है कि आर्य "जाति" के लोग बाहर सें आए और अब सें 3500–4000 साल पहले उन्होंने सिन्धु सभ्यता को नष्ट कर दिया. भारत के इतिहास की यह मामूली घटना नहीं है कि पूरा एक साम्राज्य समाप्त कर दिया गया तथा उसकी जगह नया साम्राज्य स्थापित कर दिया गया मगर कहीं अता पता ही नहीं है कि जिनका साम्राज्य नष्ट हुआ वे लोग कौन थे. ऐसा मान लिया गया कि इस सभ्यता के मानने वाले सब के सब मारे गए, कोई भी नहीं बचा!!

क्या यह हैरानी की बात नहीं है कि किसी भी पुराण में यहां के लोगों तथा यहां के राजाओं को मारने का तथा नगरों को नष्ट करने का वर्णन नहीं है. सबसें खास बात है कि इतिहास में इतनी बड़ी दुर्घटना घटित हो गई और बौद्ध साहित्य तक में इसका जिक्र भी नहीं है. बुद्ध वचनों में ब्राह्मण–क्षत्रिय संघर्ष की झलक तो मिलती है मगर सिन्धु सभ्यता के नष्ट होने की कोई जिक्र भी नहीं मिलता है. **यह बात मन को झझकोर देती है कि पूरा भारत नष्ट कर दिया गया और बुद्ध को इसका पता भी नहीं था. या फिर बुद्ध को पता होने के बावजूद वे इस त्रासदी पर चुप्प रहे! यह बात अविश्वनीय लगती है!!**

इस बात का सीधा सा अर्थ है कि इन घटिया इतिहासकारों ने इतिहास के साथ ही धोखा किया है**. वास्तव में सिन्धु सभ्यता के नगरों को बुद्ध के बाद नष्ट किया गया.** यह नगर वैसे ही गण राज्य थे जैसे भगवन बुद्ध के

समय वैशाली जैसे गणराज्य होते थे. इन नगरों के लोग आदि काल सें ही बौद्ध थे. उनकी मुहरों में बुद्ध के चित्र मिले हैं. घटिया इतिहासकार इन्हें शिव के चित्र बताते हैं जबकि सच्चई यह है कि जिस समय यह नगर पनपे शिव पैदा भी नहीं हुआ था. उसकी कल्पना भी नहीं की गई थी.

वास्तव में जब हत्यारे पुष्यमित्रशुंग के गिरोह ने भारत भूमि पर सें बौद्धों का कत्ल किया और बौद्ध चैत्य नष्ट किए तो सिन्धु सभ्यता के यह नगर भी उनकी क्रूरता का शिकार होने सें नहीं बच सके. **अतः सिन्धु सभ्यता को नष्ट करने वाला हत्यारा ब्राह्मण पुष्यमित्रशुंग था जिसने बुद्ध के लगभग 500 साल बाद इस दलित सभ्यता को तहस नहस कर दिया. उसी की करतूतों को ही इन्द्र और विष्णु के नाम सें कहानियां बना कर प्रचारित किया गया.** यह वही समय था जब सारे इतिहास का घालमेल कर दिया गया. सिन्धु सभ्यता को नष्ट करने के असली इतिहास की जगह पुराणों में हरिण्यकशिपु, जालंधर, बली आदि की कहानियां बना दी गईं. यह लोग असल में इस सभ्यता के नगरों के शासक थे.

गुरू रैदास इस सच्चाई के जानकार थे कि उनका प्राचीन बेगमपुरा यही सिन्धु सभ्यता थी जहां लोग मानव धर्म का पालन करते थे, बिना भेदभाव, बिना डर भय के रहते थे. जहां बड़े बड़े गण गुणी शूर और दाता पैदा हुए हैं तथा यह वही अछूत राज है जिसके बिछड़ने पर दलितों की ऐसी दशा हो गई है : **दारिद देख हर कोई हंसे ऐसी दसा हमारी** लेकिन गुरू रैदास इसका हल बताते हैं. वे कहते हैं **अब मोहि खूब वतन गहि पाई** कि अब उन्हें **अपने वतन** की गहराई सें समझ आ गई है कि सिन्धु सभ्यता ही उनके बौद्ध पूर्वजों का वतन है. अब अगर दलित अपने दारिद सें छुटकारा पाना चाहते हैं तो फिर सें अपना बेगमपुरा बसायें!!

गुरू रैदास यह वचन देते हैं कि बेगमपुरा में सदा और सबकी खैर होगी. सबका भला होगा. यह सन्त के वचन हैं जो कभी निष्फल नहीं जाते. सन्त रैदास ने कहा है तो यह सच होकर ही रहेगा. राजनीतिक दृष्टिकोण सें देखें तो इसका अर्थ है कि गुरू रैदास "सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय" की तर्ज पर राज्य स्थापित करना चाहते हैं.

कहने को तो ब्राह्मणवादी भी वसुदैव कुटुम्बम का शोर करते हैं. वे दावा करते हैं कि इसका अर्थ है कि सारा विश्व ही एक परिवार है. लेकिन असलीयत में ऐसा नहीं है. ब्राह्मणधर्म में तो उन्हीं के धर्म को मानने वालों को, उन्हीं के देवों को अपना भगवान कहने वालों को "आदमी" तो क्या जानवर सें भी बदतर माना जाता है. कुत्ते बिल्लियां उनके रसोई तक जा सकते हैं मगर भंगी चमार उनके घर के अन्दर पांव नहीं रख सकते!! ऐसा है उनका वसुदैव कुटुम्बम!! गांधी की तरह हजार बार मरण व्रत करके एक बार भी न मरने जैसा!! इसलिए गुरू रैदास ढोंगपने सें दूर वास्तविक बहुजन हिताय बहुजन सुखाय वाला बेगमपुरा राज्य स्थापित करना चाहते हैं.

कहे रैदास खालस चमारा, जो हमसहरी सो मीत हमारा : गुरू रैदास सीधे सपाट शब्दों में बिना हेर फेर के ऐलान करते हैं कि जो चमार यानि दलित के साथ बेगमपुरा में हमसहरी बनना चाहता है वही उनका मीत है. इन लाइनों में गुरू रैदास बहुत गहरी बात कहते हैं. वे स्पष्ट कहते हैं कि वे खालस चमार हैं, शुद्ध दलित हैं. वे न अब ब्राह्मण हैं न पहले थे और न बनना चाहते हैं. वे दलितों के लिए ही बेगमपुरा बसाना चाहते हैं. जो भी ब्राह्मण बनिया क्षत्रिय या अन्य जाति का आदमी अपनी जाति की हेकड़ी भूल कर वहां बसना चाहे वही उनका हमसहरी हो सकता है यानि वहां बस सकता है. जाति अभिमानी के लिए वहां कोई स्थान नहीं है.

खालस का अर्थ है शुद्ध. शुद्ध यानि वह आदमी जो नेक कमाई करके खाता हो, सदाचारी हो, झूठ पाखण्डों सें दूर रहता हो. इसी आधार पर गुरू गोबिन्द सिंह ने खालसा पन्थ की स्थापना की जिसमें अन्याय के विरुद्ध मर मिटने वाले लोग शामिल हुए. यह कतई आश्चर्य की बात नहीं है कि खालसा पन्थ के सिरजन में जो पाँच प्यारे कुर्बानी देने को तैयार हुए वे सबके सब नीची अथवा दलित जातियों सें सम्बंध रखते थे. यह दुख की बात है कि आज वही सिख धर्म ब्राह्मणवाद के चंगुल में फंसता जा रहा है. जिन लोगों ने सिख धर्म के लिए कुर्बानियां दीं, जिन लोगों की बाणी को गुरू गोबिन्द सिंह ने "गुरू ग्रन्थ साहिब" माना, आज तथाकथित ऊँची जात वाले सरदार उन्हें "मजहबी चूहड़े" या "टेढ" कह कर दुत्कारते हैं.

ब्राह्मणधर्म में तो यह हाल उसके जन्म सें ही है. वहां तो दलित एकलव्य के अंगूठे और शम्बूक के सिर सदा सें ही काटे जाते रहे हैं. अनेकों बार ब्राह्मणधर्म के काले कानून अदालतों के सामने आए मगर वहां पर भी तो ब्राह्मणवादी ही बैठे हैं. उन्होंने कहा यह आस्था का सवाल है तर्क और कानून का नहीं. इसलिए अदालत इसमें दखल नहीं दे सकतीं. लेकिन वही जॅज ऊँची जात वाले बलात्कारी को यह कह कर बरी कर देता है कि वह तो दलित महिला को छू भी नहीं सकता.

इसीलिए गुरू रैदास कहते हैं कि जो मन, वचन और कर्म सें खालस हों वे ही उनके हमसहरी बन सकते हैं. वे कहते हैं : **सांचा सुमरिन नाम बिसासा, मन वचन कर्म कहै रैदास!!** अर्थात मन वचन और कर्म सें सच्चाई में

विश्वास रखने वाला ही सच्चा आदमी है यानि खालस आदमी है. वही उनके हमसहरी बन सकते हैं. धर्म के नाम पर धोखा करने वाले उनके हमसहरी **नहीं** हो पाएंगे.

गुरू रैदास ने साथ में ही यह भी कहा है कि जो उनके हमसहरी हैं वही उनके मीत हैं. जो बेगमपुरा में उनके साथ बसने को तैयार है तथा जो बेगमपुरा बसाने में उनका सहयोगी है, वे ही उनके मीत हैं. जो बेगमपुरा को बसाने में उनका विरोध करेगा या असहयोग करेगा, वह उनका मीत नहीं है.

और जो बेगमपुरा बसाने में उनका सहयोग करेंगे तथा जो विरोध करेगे उनके लिए सन्त सिपाही रैदास के हमसहरी कबीर साहेब ने कह ही दिया है :

गगन दमामा बाजया, पड़या निशानै घाव,
खेत बुहारै सूरमा, मुझ मरने का चाव!!
सूरा सोई सराहिये, जो लड़ै दीन के हेत!
पुरजा पुरजा कट भोंय गिरे, तबहु न छोडे खेत!!

गुरू रैदास ने जैसा बेगमपुरा बसाने की कल्पना की थी बाबा साहिब ने भारतीय संविधान बना कर वैसा ही भारत बनाने की नींव रखी है. अब मात्र दलितों को अपना कर्त्तव्य पूरा करना है. दलित अपनी वोट की कीमत पहचानें. केवल उन्हीं को वोट दें जो तन मन धन सें बेगमपुरा बसाना चाहते हों. उन लोगों को वोट दें जो विधान सभाओं और संसद में जाकर जो दलितों सें गद्दारी न करते हों. गांधी पटेल जैसे लोगों के गिरोह ने बहुतेरे हाथ पांव मारे कि वोट का अधिकार केवल जमीन जायदाद वालों तथा पढ़े लिखे लोगों को ही मिले ताकि गरीब और अनपढ़ दलित समाज हमशा उनकी गुलामी ही करता रहे. यह बाबा साहिब की ही हिम्मत थी कि वे नेहरू को "हर एक लिए एक वोट" के लिए राजी कर पाये.

अब उस वोट के अधिकार सें कब उनके सिपाही बेगमपुरा बसाते हैं, यह उन पर ही निर्भर करता है. मान्यवर कांशी राम के आगमन के बाद सें दलित क्रांति में नया जोश आया है. सबसें बड़ी बात इसमें जोश के साथ होश भी है. चाहे ब्राह्मणधर्मियों ने दलित समाज के अनेकों सन्तों सिपाहियों का खून बहाया है लेकिन दलित समाज के सिपाही भगवन बुद्ध के मार्ग पर अग्रसर होकर बिना खून बहाए अपना बेगमपुरा फिर सें बसाने के लिए जुटे हुए हैं. गुरू रैदास का वचन पूरा होने सें कोई रोक नहीं सकता.

नमो बुद्धाय   जय भीम
कुलदीप तथा राज
18 अगस्त 2007

ऊपर